यूनानी राजनीतिक विचारधारा

हिन्दी समिति ग्रन्थमाला—१४७

यूनानी राजनीतिक विचारधारा

लेखक
प्रोफेसर टी० ए० सिनक्लेयर

अनुवादक
श्री विष्णुदत्त मिश्र
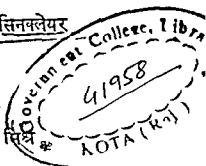
हिन्दी समिति
सूचना विभाग, उत्तर प्रदेश
लखनऊ

प्रस्तावना

हिन्दी और प्रादेशिक भाषाओं को शिक्षा के माध्यम के रूप में अपनाने के लिए यह आवश्यक है कि इनमें उच्च कोटि के प्रामाणिक ग्रन्थ अधिक से अधिक संख्या में तैयार किये जायें। भारत सरकार ने यह कार्य वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग के हाथ में सौंपा है और उसने इसे बड़े पैमाने पर सम्पन्न करने की योजना बनायी है। इस योजना के अन्तर्गत अंग्रेजी और अन्य भाषाओं के प्रामाणिक ग्रन्थों का अनुवाद किया जा रहा है। यह काम अधिकतर राज्य सरकारों, विश्वविद्यालयों तथा प्रकाशकों की सहायता से प्रारम्भ किया गया है। कुछ अनुवाद और प्रकाशन-कार्य आयोग स्वयं अपने अधीन करवा रहा है। प्रसिद्ध विद्वान और अध्यापक हमें इस योजना में सहयोग दे रहे हैं। अनूदित और नये साहित्य में भारत सरकार द्वारा स्वीकृत शब्दावली का प्रयोग किया जा रहा है ताकि भारत की सभी शिक्षा संस्थाओं में एक ही पारिभाषिक शब्दावली के आधार पर शिक्षा का आयोजन किया जा सके।

यूनानी राजनीतिक विचारधारा नामक पुस्तक हिन्दी समिति सूचना विभाग, उत्तर प्रदेश द्वारा प्रस्तुत की जा रही है। इसके मूल लेखक प्रो० टी० ए० सिंक्लेयर और अनुवादक श्री विष्णुदत्त मिश्र हैं। आशा है भारत सरकार द्वारा मानक ग्रन्थों के प्रकाशन सम्बन्धी इस प्रयास का सभी क्षेत्रों में स्वागत किया जायगा।

बी० एन० प्रसाद

अध्यक्ष, वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग,
शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार।

प्रकाशकीय

समस्त प्राचीन यूनान अनेक छोटे-छोटे नगर राज्यों से भरा था। तत्कालीन यूनानी राजनीतिक दार्शनिकों के लिए राजनीति शास्त्र एक व्यावहारिक विज्ञान था जिसका उद्देश्य राज्य का निर्माण करना तथा यह खोज करना था कि उसमें अच्छा जीवन किस प्रकार व्यतीत किया जा सकता है। उन्हें यह विदित हो गया था कि अव्यवस्था तथा बर्बरता के स्थान पर सभ्यता की स्थापना किस तरह की जा सकती है। उन्होंने पता लगा लिया था कि सभ्य समाज की स्थापना के लिए तीन आधार आवश्यक हैं—(१) जनता के भरण-पोषण का समुचित प्रबन्ध (२) जन-चरित्र तथा (३) राजनीतिक संस्थाएँ या संविधान। इस प्रकार सबसे पहले यूनान ने राजनीतिक विचारों को व्यावहारिक रूप देने का प्रयास किया, कुछ निर्दिष्ट सिद्धान्तों के अनुसार राज्य की स्थापना की तथा समाज को व्यवस्थित करने की दिशा में प्रयत्न किया। प्रारम्भ से ही यूनानियों ने राजनीतिक समस्याओं की ओर विशेष ध्यान दिया, राजनीतिक संस्थाओं का आविष्कार किया तथा सुचारु रूप से उन्हें चलाने का प्रयास किया। परिणामस्वरूप यूनान ने राजनीतिक दर्शन की दो स्पष्ट विशेषताएँ अर्जित कीं जो कभी भी पूर्ण रूप से लुप्त न हो सकीं, पहली विशेषता है, उस दर्शन का प्रधानतया व्यावहारिक दृष्टिकोण और दूसरी, एक आदर्श एवं पूर्ण राज्य स्थापित करने की अभिलाषा है। प्रो० टी० ए० सिनक्लेयर की प्रसिद्ध पुस्तक 'हिस्ट्री आफ ग्रीक पोलिटिकल थाट' में प्राचीन यूनानी राजनीतिक दार्शनिकों के ऐसे ही विचारों का अध्ययन प्रस्तुत किया गया है।

प्रस्तुत पुस्तक उपर्युक्त अंग्रेजी पुस्तक का हिन्दी रूपान्तर है जिसे सरल और सुबोध भाषा में यथावत रखने का प्रयास किया गया है। आशा है राजनीति शास्त्र के छात्रों तथा राजनीति शास्त्र से सम्बन्धित अन्य लोगों के लिए यह पुस्तक उपयोगी सिद्ध होगी।

लीलाधर शर्मा 'पर्वतीय'
सचिव, हिन्दी समिति।

भूमिका

मानव इतिहास का निर्माण करने वाली घटनाओं के कारणों में राजनीतिक विचारों का महत्त्व कम नहीं है। चाहे राजनीतिक विचार सदा कार्यान्वित नहीं भी हुए हों, फिर भी राजनीतिक दार्शनिकों के चिंतन ने महत्त्वपूर्ण सामाजिक एवं राजनीतिक परिवर्तनों को प्रेरणा प्रदान की है। इसमें सन्देह नहीं कि राजनीति के क्षेत्र में होने वाले मनुष्य के सभी कार्य-कलाप इसी पृष्ठभूमि पर सम्पादित हुए नहीं कहे जा सकते। उनके समस्त कार्यों को जन्म देने वाले जटिल सवेगों के अतिरिक्त, जनसमुदाय की भावनाएँ एवं तीव्र इच्छाएँ, व्यक्ति या समूह की कल्पनाएँ एवं महत्त्वाकांक्षाएँ होती हैं जिन्हें हम अनेक राजनीतिक घटनाओं के कारण रूप में देख सकते हैं और जो इस रूप में दार्शनिकों की कृतियों से कम नहीं हैं। राजनीतिक घटनाओं के ज्ञान में राजनीतिक विचारों का प्रमुख स्थान है और यूरोप के इतिहास को तो सचमुच ही राजनीतिक विचारों ने महत्त्वपूर्ण ढंग से प्रभावित किया है। इसका श्रेय यूनानियों को है अर्थात् इसी सीमा तक हम यह भी स्वीकार करना पड़ेगा कि यूरोप का वर्तमान जीवन यूनान के राजनीतिक दर्शन से प्रभावित है।

यूनान ने ही, राजनीतिक विचारों को सर्वप्रथम व्यवहार में लाने का प्रयास किया और कुछ निर्धारित सिद्धान्तों के अनुसार राज्य की स्थापना कर उनके जीवन को उक्त सिद्धान्तों के अनुरूप व्यवस्थित करने का यत्न किया। यह दूसरी बात है कि इस प्रयास में वे सदैव सफल नहीं हुए और विश्व इतिहास की दृष्टि से उनकी व्यावहारिक उपलब्धियाँ अल्पकालिक ही रहीं। इस विफलता का कारण प्रायः उस भौतिक और राजनीतिक शक्ति का अभाव था जो इन सिद्धान्तों को कार्यान्वित करने के लिए आवश्यक थी—भौतिक शक्ति अर्थात् तकनीकी साधन या प्रायोगिक विज्ञान और राजनीतिक शक्ति अर्थात् समझा-बुझा कर अथवा बल के आधार पर किसी राजनीतिक व्यवस्था को लागू करने का सुअवसर।

राजनीतिक दर्शन में यूनानियों की अत्यन्त महत्त्वपूर्ण कृति नगर राज्य है। समस्त यूनान असख्य छोटे-बड़े नगर राज्यों से भरा था जो अपनी संकीर्णता और स्वार्थ के कारण परस्पर संघर्षरत रहते थे। किन्तु हमारे लिए यूनानियों की प्रमुख देन यह नगर राज्य ही नहीं है यद्यपि यह उनकी उत्कृष्ट उपलब्धि थी। हम मुख्यतः उन यूनानी विचारकों के प्रति ऋणी हैं जिन्होंने राजनीति शास्त्र को जन्म दिया। उनके लिए राजनीति शास्त्र एक व्यावहारिक विज्ञान था जिसका उद्देश्य राज्य का निर्माण करना

तथा यह खोज करना था कि उसमें अच्छे से अच्छा जीवन किस प्रकार व्यतीत किया जा सकता है कि वर्तमान युग में सिद्धान्त और कार्य के बीच का अन्तर असाधारण अधिक विस्तीर्ण हो गया है। ऐसी दशा में हम इन यूनानी विचारकों के विशेष रूप से आभारी हैं कि उन्होंने कार्य करने के पूर्व उसके विभिन्न पक्षों पर अच्छी तरह विचार कर उनकी आत्मा का सन्निपात किया। यह एक ऐसा आदर्श रहा है¹ जिसे राजनीति के विरोध मन में न तो कभी पूर्ण रूप से अपनाया जा सका और न कभी पूर्ण रूप से भुलाया ही जा सका। जहाँ तक इन विचारकों के व्यावहारिक उपदेशों का सम्बन्ध है हम इनके कारण उनके उतने ऋणी नहीं हैं जितने ही राजनीतिक दर्शन की दृष्टि में कभी-कभी वे महत्त्वपूर्ण रहे हैं।

सभ्यता का यह एक स्वाभाविक सिद्धान्त है कि कोई भी महत्त्वपूर्ण कार्य करने के पूर्व आवश्यक जानकारी इकट्ठा कर ली जाय तथा उस सम्बन्ध में यथेष्ट विचार विमर्श कर लिया जाय। यूनान के सभी श्रेष्ठ मनीषियों ने इस सिद्धान्त को स्थापित करने का प्रयास किया। उन्हें यह भली भाँति विदित हो गया था कि अव्यवस्था के स्थान पर व्यवस्था तथा बर्बरता के स्थान पर सभ्यता किस प्रकार स्थापित की जा सकती है और इस समस्या पर विचार करते समय इसके अंग के रूप में इस सिद्धान्त को ध्यान में रखना आवश्यक है। यह एक ऐसी समस्या है जिसे एक बार सुलझा लेने के पश्चात यह नहीं सोचा जा सकता कि समस्या सदा के लिए सुलझा गयी। २०वीं शती ने तो इस कथन की सत्यता को सन्देह के परे सिद्ध कर दिया है। मानव जाति की प्रत्येक पीढ़ी को, प्रत्येक देश व राष्ट्र को तथा प्रत्येक व्यक्ति को इस समस्या का सामना नये रूप में करना पड़ता है। हमारा यह तात्पर्य नहीं कि इस दिशा में किये गये विगत प्रयास वर्तमान के लिए सर्वथा असार हैं। इसके विपरीत पहले के इन प्रयासों से हमें कुछ सहायता ही मिल सकती है, विशेषकर उनसे जो पाश्चात्य सभ्यता के विकास की प्रारम्भिक अवस्थाओं के सम्बन्ध में किये गये थे।

इस बात की सम्भावना तो बहुत कम है कि राजनीतिक दर्शन के क्षेत्र में यूनानियों की प्राथमिकता तथा उनके महत्त्व को भुलाया जा सके। प्लेटो और अरिस्टाटल की रचनाओं की महत्त्वपूर्ण विशिष्टताएँ ही राजनीतिक दर्शन के क्षेत्र में यूनान के नाम को अमिट रखने के लिए पर्याप्त हैं। प्रायः सभी राजनीतिक विचारकों ने इन महापुरुषों की महत्ता स्वीकार की है यद्यपि उनमें से कुछ ने एक का समर्थन किया तो कुछ ने दूसरे का। फिर भी यूनान के राजनीतिक विचार के सम्बन्ध में यह खतरा अवश्य है कि इन महापुरुषों की महत्ता के कारण सामान्य एवं कम प्रतिष्ठा प्राप्त यूनानी विचारकों की

---

१ Thucydides ii ४० (pericles)

ओर हमारा ध्यान न जा सके तथा राजनीतिक दर्शन अध्ययन करने वाले लोगों में से कुछ के मस्तिष्क में यह भ्रम उत्पन्न हो जाय कि यूनानी राजनीतिक विचारधारा का क्रम प्लेटो से ही प्रारम्भ होता है और अरिस्टाटल तक समाप्त हो जाता है। हमने अध्यायों में इस विषय का सविस्तार प्रस्तुत करके तथा पाठकों का ध्यान प्लेटो से पूर्व और अरिस्टाटल के पश्चात् के राजनीतिक विचारकों की ओर आकृष्ट करने का प्रयास किया गया है। चूंकि सोफिस्ट्स ने स्वयं ऐसा कुछ भी नहीं लिखा जो हमें उपलब्ध हो सके और प्राक्-सुकरातीय और सोफिस्टों की उपलब्ध रचनाएं भी नहीं के ही बराबर हैं। इसलिए प्लेटो के पूर्व के विचारकों का अध्ययन कठिन और कष्टसाध्य हो जाता है। डाइकार्कस (Dicaerchus) तथा अन्य यूनानी गद्य-लेखकों की रचनाओं की क्षति हो जाने के कारण यही कठिनाई अरिस्टाटल के बाद के यूनानी विचारकों के अध्ययन के सम्बन्ध में भी उपस्थित होती है। किन्तु यदि सभ्यता की सुरक्षा हेतु यह आवश्यक है कि प्रत्येक पीढ़ी अपनी सांस्कृतिक एवं पैतृक सम्पत्ति के आधार को समझे तो इसमें कोई सन्देह नहीं है कि यह कार्य बार-बार प्रारम्भ करने योग्य है।

जैसा कि विदित है, यूनानी लोग सभ्यता के खतरों को निरंकुशता के विरोध रूप में देखते और समझते थे और उनके अनुसार बर्बरता निरंकुशता के लक्षण थे—दासता, न्याय की सुविधा का अभाव और राजनीतिक अस्थिरता। क्रीसस (Croesus) के राज्यकाल में लिडिया (Lydia) की सम्पत्ति एवं संस्कृति तथा फारस (Persia) और मीडिया (Media) के साम्राज्य के शासन को यूनानी लोग वैयक्तिक स्वतन्त्रता तथा विधि नियम के अभाव के कारण तुच्छ समझते थे। निःसन्देह वे यह बात भली भाँति जानते थे कि निरंकुशता के दोष केवल प्राच्य सम्राटों तक ही सीमित नहीं है वरन यूनानी भी विधि तथा स्वतन्त्रता के सिद्धान्तों की अवहेलना कर सकते हैं और वास्तव में ऐसा किया भी है। सचमुच चूंकि यूनानी स्वयं सम्पत्ति और शक्ति के अधिक लोलुप थे, इसलिए वे इस लोलुपता से उत्पन्न होने वाले संकट को भली भाँति समझते थे और इसके दुष्परिणामों से आशंकित रहते थे। ऐसा सर्वप्रिय नेता जो योग्य किन्तु सिद्धान्तहीन होता था और अपना एकाधिपत्य स्थापित करने में सफल हो जाता था यूनानियों के लिए घृणा और प्रशंसा दोनों का पात्र होता था। अपने देशवासियों के सम्बन्ध में थ्रेसीमेकस (Thracy machus) का यह कथन किंचित मात्र अतिरंजित नहीं है कि अत्याचारी के अन्याय से वे (यूनानी) इसलिए नहीं घृणा करते थे कि उन्हें डर था कि वे स्वयं भी इस प्रकार का कार्य कर सकते हैं अपितु इसलिए कि ऐसे कार्यों का दुष्परिणाम उन्हीं को भुगतना पड़ेगा (प्लेटो, रिपब्लिक १३४४) इसी प्रकार समानता के सिद्धान्त के प्रति उनका मोह मुख्यतया उनकी ईर्ष्या की प्रवृत्ति का ही परिणाम था। यूनानी यह नहीं देख सकता था

कि कोई ना एसा व्यक्ति जो उसमे किसी भी अर्थ मे श्रेष्ठ नहीं है धन और प्रतिष्ठा अर्जित कर सके। अपने भाग से अधिक प्राप्त करने की आलोचना यूनानी इसलिए करता था कि एसा कर मनुष्य का गुप्त आशा वह स्वय अपने हृदय मे रखता था। यह एक एसा पाप था जो उनके समस्त जीवन पर छाया रहता था और जो 'प्लओनक्सीन' एक शब्द द्वारा व्यक्त किया जा सकता था। इस प्रकार यूनानी राजनीतिक विचारक मानव स्वभाव के कुछ एसे प्रबल तत्त्वो से परिचित थे जो सामाजिक सामंजस्य तथा इसमे सर्वाधिक व्यवस्था एव सामञ्जस्य के आदर्शों के प्रतिकूल जान थे। इसलिए मनोविज्ञान तथा राजनीति के सम्बन्ध की उपेक्षा करने अथवा मानव स्वभाव को देखते हुए उससे अधिक आशा करने की त्रुटि मे यूनानी विचारक बच रहे। तत्कालीन समाज के दोषो का जो तीक्ष्ण विश्लेषण प्लेटो ने प्रस्तुत किया उसके बहुत पहले से यूनानी यह बात जानते थे कि भ्रष्टचरित्रता का अर्थ होगा भ्रष्ट राजनीति और उसी तरह जैसे कुप्रबन्ध का परिणाम घर मे भोजन का अभाव होता। उनके अनुसार जिस प्रकार अच्छा गठन (Constitution) शरीर को रोगो से लड़ने की शक्ति प्रदान करता है उसी तरह अच्छा सविधान (Constitution) एक राज्य को आतरिक एव बाह्य शत्रुओ को पराजित करने की शक्ति देता है। इस प्रकार अपने इतिहास के प्रारम्भ मे ही उन्होंने यह पता लगा लिया था कि सभ्य समाज तीन आधारों पर ही खड़ा हो सकता है—जनता के भरण-पोषण का पर्याप्त प्रबन्ध, जनचरित्र और राजनीतिक संस्थाएँ या सविधान। आजकल अर्थशास्त्र, आचार शास्त्र तथा राजनीति शास्त्र के अतर्गत इन तीनो आधारो का पृथक-पृथक अध्ययन करने की प्रवृत्ति है किन्तु यूनानी विचारको ने इस प्रकार का विभाजन नही किया था। उनके अनुसार मनुष्य के व्यवहार तथा वस्तुओ और पूँजियो का अध्ययन उसी प्रकार विधान (Constitution) के विभिन्न रूपो का अग है। यह दूसरी बात है कि समय-समय पर एक पक्ष की अपेक्षा दूसरे पर अधिक बल दिया गया, केवल अरिस्टाटल ने इन तीनो पक्षो को उचित महत्त्व दिया। ५वी शती के पूर्वार्ध मे सविधानो को अधिक महत्त्व दिया गया, सोक्रेटीज ने मनुष्य के चरित्र को अधिक महत्त्वपूर्ण बताया, प्लेटो ने इन दोनो पक्षो पर भली भाति ध्यान तो दिया किन्तु आर्थिक पक्ष की उपेक्षा की यद्यपि उसके सम कालीन विचारक अर्थशास्त्र के महत्त्व के प्रति जागरूक हो रहे थे—(Xenophon के Ways and Means तथा Aristophanes के Plutus को देखने से तो यही विदित होता है)।

दूसरी ओर इस बात से सभी सहमत थे कि वास्तव मे सभ्य जीवन नगर (पॉलिस) से सम्बन्धित होकर ही व्यतीत किया जा सकता है। नगर की यूनानी कल्पना आधुनिक शहरी सम्भ्यता से भिन्न था। उस समय का यूनानी नगर बहुत बड़ी

सख्या वाले नगार और तीन दर्जे का होना या तथा वह अपनी स्वतन्त्र भू भाग रखता था जिसके किसी भी भाग में वहाँ का नागरिक रह सकता था। यूनानी नगर अर्थात् पालिस' की तीन मुख्य बाह्य विशेषताएँ थी —(१) विस्तार इतना हो कि शासन प्रबन्ध का समुचित व्यवस्था की जा सके किन्तु इतना विस्तृत न हो कि इसके सदस्य एक दूसरे से अपरिचित रहें, (२) आर्थिक स्वाधीनता (आत्म निर्भरता) नगर के पास इतनी भूमि हो कि निवासियों का भरण-पोषण हो सके। यह कहने की आवश्यकता नहीं कि यह समस्या सदा बनी रही। नगर फले और बढता हुई जनसंख्या इस आर्थिक व्यवस्था का प्राय असन्तुलित कर देती थी। इसका राजनैतिक परिणाम भी गम्भीर होता था। बड़े नगर राज्यों के निवासी भी भुखमरी की काली छाया में जीवन व्यतीत करते थे। एजियन सागर में सामुद्रिक डाकुओं के उन्मूलन के पश्चात भी स्थिति में अधिक सुधार नहीं हुआ क्योंकि आयात की गयी वस्तुओं का मूल्य देना पड़ता था और केवल सुदूर स्थित सीथिया तथा मिस्र एक देश ही खाद्य सामग्री का निर्यात करने की स्थिति में थे। व्यापार भी छोटे पैमाने पर ही होता था। कारिन्थ में निर्यात के लिए पर्याप्त मात्रा में मिट्टी के बर्तन तैयार किये जा सकते थे और एथेन्स अपनी आवश्यकता पूर्ति के बाद बचे हुए जैतून के तेल के बदले काले सागर के देशों से अनाज माँग सकता था। किन्तु अधिकांश नगर इतने भाग्यशाली नहीं थे कि वे भी इस प्रकार सामग्रियों का आदान प्रदान कर सकते। (३) राजनैतिक स्वतन्त्रता यह नगर के लिए सबसे महत्त्वपूर्ण विशेषता थी। यद्यपि इसकी रक्षा के लिए जो भीषण संग्राम यूनानियों को करना पड़ा उसके बाद ही धीरे धीरे इसका लोप होता गया, फिर भी प्रारम्भिक काल के यूनानी इस सिद्धान्त के कट्टर उपासक थे। उनकी दृष्टि में वास्तविक नगर राज्य किसी दूसरे राज्य अथवा विदेशी सत्ता की अधीनता नहीं स्वीकार कर सकता था। ऐसी स्थिति स्वीकार करने के लिए बाध्य होने को वे अपमान समझते थे और अपने नगर की स्वतन्त्रता के अभाव को उसी भाँति महसूस करते थे जैसे वैयक्तिक स्वतन्त्रता के अभाव को। इस स्थिति को वे दासता की संज्ञा देते थे। आन्तरिक शासन का कोई भी रूप हो सकता था। इससे नगर की प्रतिष्ठा में कोई अन्तर नहीं आता था। किन्तु शासन के रूप को चुनने और बदलने के अधिकार की रक्षा के लिए एजियन द्वीपों और एशिया माइनर के तट पर बसे यूनानी नगर राज्यों ने निरंतर संघर्ष किया। यह दूसरी बात है कि इस संघर्ष में वे सदैव सफल नहीं हुए।

इस संदर्भ में यह स्मरण रखना चाहिए कि प्राचीन यूनान की सभी जातियों में नगर राज्य की ये तीनों विशेषताएँ नहीं उपस्थित थीं। मुख्य भू भाग के विस्तृत क्षेत्रों जैसे पेलोपोनीज का आन्तरिक भाग, थसली का मैदानी भाग और उत्तर पश्चिम के पृष्ठ देश में लोग अधिकांशतया नगरों में न रह कर असुसंगठित ग्रामों और जातियों के

समूह के रूप में रहते थे। मध्य भू भाग के बाहर द्वारा और मिस्र, एशिया इटली तथा अन्य स्थानों में उपनिवेशाय भाग में नगर में रहने वालों जातियों का ही प्रधानता रही। असम्ब नागरीय क्षेत्र के निवासियों के जीवन और वाद विवाद का महत्वपूर्ण विषय नगर राज्य ही है। इस क्षेत्र में एम राज्यों का बहुलता था। रोड्स (Rhodes) एक छोटे द्वीप में भी दो नगर राज्य थे। विस्तार एवं शक्ति की दृष्टि से इन अन्य प्रकार से भी इन राज्यों में बड़ी असमानता थी। किन्तु अधिकांश नगर राज्य छोटे और कमजोर थे। ऐसी स्थिति में अध्ययन की दृष्टि से एक या दो नगर राज्यों का प्रतिनिधित्व करने वाले उदाहरणों के रूप में नहीं चुना जा सकता। किन्तु यूनानी नगर राज्यों के सम्बन्ध में विचार करते समय हमारा ध्यान स्वाभाविक रूप से एथेन्स और स्पार्टा की ओर जाता है। कारण यह है कि वहाँ के जीवन से हमारा पर्याप्त परिचय है। फिर भी इन दोनों में से किसी को भी हम यूनानी नगर राज्यों का प्रतिनिधित्व करने वाले उदाहरण नहीं मान सकते। एथेन्स एटिका साधारण राज्यों की अपेक्षा कहीं अधिक बड़ा था। उसके लिए यह सम्भव नहीं था कि अपनी जनसंख्या का भरण-पोषण केवल अपने यहाँ उत्पन्न होने वाली वस्तुओं से कर सके। स्पार्टा के समाज के सैनिक जीवन और उसकी अपरिवर्तनशीलता के अतिरिक्त अन्यत्र नहीं मिलती। इसलिए जब प्रारंभिक उदाहरण का सर्वथा अभाव हो किसी को भी उदाहरण के रूप में चुना जा सकता है। अरिस्टाटिल ने १५८ नगर राज्यों की शासन-व्यवस्था का अध्ययन करना उचित समझा। हम केवल यह धारणा बना सकते हैं कि यूनान असंख्य छोटे छोटे नगरों और द्वीपों का देश था और प्रत्येक नगर और द्वीप अपनी स्वतन्त्रता तथा प्रभुसत्ता अक्षुण्ण रखने को तत्पर था।

सप्रभु सत्ताधारी राज्य की कल्पना ही इन असंख्य नगर राज्यों की संयुक्त देन है जो हमें मिली है यद्यपि यह कहना कठिन है कि यह कल्पना हमारे लिए हितकर सिद्ध हुई है अथवा अहितकर। इन नगर राज्यों के लिए सभ्य जीवन की जो व्यवस्था वे करना चाहते थे वह कभी सुन्दर और स्थायी न हो सकी तथा उनकी प्रभु सत्ता का लुप्त होना भी अनिवार्य हो था। फिर भी किसी ने इस कथन का खंडन नहीं किया है कि प्राचीन यूनानी नगर (पालिस Polis) व्यवहार तथा सिद्धांत दोनों की दृष्टि से आधुनिक 'राज्य' (State) का प्रजनक तथा प्रवर्तक रहा है। सिद्धान्ततः तो यह कथन विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। आधुनिक राजनीतिक दर्शन मुख्यतया 'राज्य' की संकल्पना पर ही आधारित है और 'राज्य' की यह संकल्पना यूनानी 'नगर' की कल्पना का ही विकास है। अतएव इसी सत्य का स्मरण रखने के लिए संयुक्त शब्द 'नगर राज्य' (City State)निर्मित किया गया। यूनानी तो नगर तथा राज्य दोनों शब्दों के लिए 'पालिस' शब्द का ही प्रयोग करते थे और

इससे सम्बन्धित 'पोलिटिस' नगर का रहने वाला तथा 'पोलिटिका' नगरनीति अर्थात् राजनीति का प्रयोग उन लोगों तथा उनके कार्यों के लिए नहीं हो सकता था जो नगर राज्य के सदस्य नहीं होते थे चाहे वे यूनानी हों अथवा विदेशी यूनानी—जिन्हें बारबेरियन (बर्बर) शब्द से सम्बोधित करते थे। इसके विपरीत, कृषि प्रधान समुदाय भी जिसके अधिकांश निवासियों के जीविकोपार्जन का साधन कृषि मात्र हो यूनानी नगर (पालिस) की श्रेणी में आ सकता था।

यह विवादस्पद हो सकता है कि नगर राज्य में क्षेत्र को इस प्रकार सीमित करना राजनीतिक दर्शन के विकास की दृष्टि से हितकर रहा है अथवा अहितकर, किन्तु कदाचित यह कहना सत्य है कि इस सीमा के अभाव में यूनानी राजनीतिक विचारधारा का विकास इस तीव्र गति से न हो पाता। नगर राज्य की उत्पत्ति का जो भी मूल स्रोत रहा हो, इस संस्था में उनकी स्थापना यह सिद्ध करती है कि प्रारम्भ में ही यूनानियों ने राजनीतिक समस्याओं की ओर विशेष ध्यान दिया, राजनीतिक संस्थाओं का आविष्कार किया तथा उन्हें सुचारु रूप से चलाने का प्रयास किया। इसके परिणाम स्वरूप यूनानी राजनीतिक दर्शन में दो स्पष्ट विशेषताएँ आ गई थीं जो कभी भी पूर्ण रूप से लुप्त न हो सकीं। पहली विशेषता, इस दर्शन का प्रधानतया व्यावहारिक दृष्टिकोण है और दूसरी, एक आदर्श अथवा पूर्ण राज्य स्थापित करने की अभिलाषा। आधुनिक राजनीतिक विचार इस पहली विशेषता को छोड़ कर सक्रिय राजनीति से पृथक् होता जा रहा है और अपने को 'राजनीतिक सिद्धान्त (Political Theory) को संज्ञा देता है। इसके अध्ययन का मुख्य विषय राज्य है और यह अध्ययन प्राय इस प्रकार का होता है जैसे राज्य स्वयं अपने में महत्वपूर्ण है और उसका अपना स्वयं का विशिष्टत्व है। अध्ययन की इस दिशा को कभी कभी तो ऐसे प्रश्नों से प्रारम्भ किया जाता है जैसे 'राज्य क्या है?' जो सर्वथा विषय के परे प्रतीत होते हैं। कोई यूनानी विचारक इस प्रकार के प्रश्नों से अपना चिन्तन नहीं प्रारम्भ कर सकता था। कालान्तर में जब उन्होंने अपने पूर्वजों द्वारा निर्मित राजनीतिक संस्थाओं पर विचार करना प्रारम्भ किया तो उन्होंने ऐसे प्रश्नों की ओर ध्यान दिया जैसे 'राज्य की उत्पत्ति कैसे हुई?' 'इसका क्या प्रयोजन है?' किन्तु उनकी दृष्टि में, राजनीतिक दर्शन की समस्याएँ मुख्यतया व्यावहारिक ही रहीं। जिन प्रश्नों ने यूनानियों को विचार के लिए निरंतर प्रेरित किया, वे थे राज्य का सबसे अच्छा प्रकार क्या है? उसका सबसे अच्छा विस्तार क्या है, स्थान क्या है? कौन शासन व्यवस्था अथवा संविधान सर्वश्रेष्ठ है? अधिकार किसके हाथ में होना चाहिए और ऐसे व्यक्तियों की क्या संख्या होनी चाहिए। नागरिक कौन होंगे, उनके आचरण सम्बन्धी नियम क्या होंगे तथा नागरिकों की श्रेणी में प्रवेश पाने के क्या नियम होंगे? यूनानी विचारकों के सम्मुख 'शासक और शासित', 'कुछ और बहुत

प्राय विरोधी के रूप में निरूपित हैं किन्तु आधुनिक विचारधारा के 'राज्य' और व्यक्ति को जो विरोधी स्वरूप हम देखते हैं वह उनमें कहीं नहीं मिलता। उनके लिए तो यह नगर और नागरिक को विरोधी के रूप में प्रस्तुत करने के समान होता और यह खोज उसी प्रकार मूर्खतापूर्ण होती जैसे मुर्गी तथा अण्डे को विरोधी के रूप में प्रस्तुत करना। यूनानी संविधान के आदि निर्माताओं ने इन सभी प्रश्नों पर स्पष्ट रूप से विचार नहीं किया किन्तु किसी नगर अथवा उपनिवेश की स्थापना करते समय इन प्रश्नों का उठना तथा उनका किसी प्रकार का उत्तर खोजना स्वाभाविक था। इसलिए यूनानियों के लिए ये प्रश्न कभी भी केवल सैद्धान्तिक प्रश्न के रूप में नहीं आये। नगरों की स्थापना के महान् युगों की समाप्ति के बाद तथा उपनिवेशीकरण के द्वितीय काल के धीमे हो जाने पर भी राजनीतिक परामर्शदाताओं के लिए पर्याप्त अवसर उपलब्ध था। प्राय संविधान अधिक दिनों तक न चल पाते थे। नयी पीढ़ी के लोग सत्ता प्राप्त करने वाले नये दल इन प्रश्नों का नया उत्तर चाहते थे। ईसा पूर्व छठी और सातवीं शताब्दी के साहित्य का जो भी थोड़ा अवशेष प्राप्त है उसमें यूनानी राज्यों के अस्थिर राजनीतिक जीवन, बारम्बार उद्वेलन, कटु संघर्ष तथा व्यवस्था पुनःस्थापित करने के लिए तानाशाहों के प्रयास की बात स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है। तथापि यह सब होते हुए भी यूनानियों ने नगर राज्यों की महत्ता के प्रति अपनी आस्था नहीं छोड़ी और बर्बर अथवा अर्ध-बर्बर जीवन की तुलना में नगर राज्यों के जीवन को वे सदैव अधिक श्रेष्ठ समझते रहे।

आदर्श राज्य की खोज जो प्रथम दृष्टि में सुदूर स्यावहारिक दृष्टिकोण से असंगत प्रतीत हो सकती थी वस्तुत उसी का एक अंग थी और उसका उद्भव भी उन्हीं परिस्थितियों के बीच हुआ। ईसा पूर्व सातवीं और आठवीं शताब्दियों में स्थापित सभी नगर उपनिवेश ही थे। अधिक जनसंख्या, भोजन की न्यूनता, राजनीतिक विद्वेष अथवा कुण्ठित महत्त्वाकांक्षा के कारण प्रायः एक राज्य के कुछ लोग किसी के नेतृत्व में अपने को संगठित कर लेते थे और बाहर जाकर एक नये स्वतन्त्र नगर की स्थापना करते थे। उपयुक्त स्थान प्राप्त कर लेने तथा वहाँ के निवासियों की भूमि का अपहरण करके उन्हें भगा देने के बाद किसी नगर राज्य विधायक की सहायता से इस नवीन नगर के लिए संविधान और विधि-व्यवस्था की रचना की जाती थी। यूनान के प्रारम्भिक इतिहास के तथाकथित सात बुद्धिमानों की प्रतिभा मुख्यतया राजनीतिक ही थी। विधि निर्माता विधायक के रूप में इनमें से कुछ बुद्धिमानों की बहुत अधिक माँग थी। इस प्रकार के किसी विधायक की सेवा उपलब्ध कर लेने के बाद नेता का कार्य केवल उसको यह आदेश देना रह जाता था कि हमारे लिए तुम सबसे श्रेष्ठ राज्य की रचना करो। इस प्रकार हम देखते हैं कि यूनान में एक सर्वथा नये राज्य

अध्याय १

होमर

होमर की कविताओं में वर्णित घटनाएँ, जहाँ तक वे ऐतिहासिक हैं, अधिकांशतया १२०० ई० पू० के आसपास की हैं। स्वयं कविताएँ सम्भवतः पर्याप्त समय बाद ही लिखी गईं।[1] किन्तु उनमें ट्राय के युद्ध के समय की ही नहीं उससे पूर्व की परम्पराएँ भी सुरक्षित हैं। इन कविताओं के रचनाकाल तथा उनमें वर्णित प्रारम्भिक घटनाओं और विशेषताओं के बीच कम से कम ५०० वर्षों का अन्तर रहा होगा। इस काल में माइसीनियन सभ्यता का ह्रास, ट्राय का युद्ध, डोरियाई आक्रमण तथा और न जाने कितनी उथल-पुथल हुई। होमर की कविताओं में इन शक्तियों द्वारा प्रभावित सामाजिक, राजनीतिक और भाषा-सम्बन्धी परिवर्तन प्रतिबिम्बित अवश्य होते हैं किन्तु इनके आधार पर किसी प्रकार के सामाजिक अथवा साहित्यिक इतिहास का निर्माण करना सम्भव नहीं है। इतना अवश्य कहा जा सकता है कि यद्यपि इस सम्पूर्ण दीर्घकाल की मुख्य घटनाओं को दर्शाने का प्रयास इन रचनाओं में किया गया है फिर भी प्रारम्भिक काल अथवा १००० ईसा पूर्व की घटनाओं को ही प्रधानता दी गई है। १००० ई० पू० और ८०० ई० पू० के मध्य का काल सम्पूर्ण प्राचीन इतिहास में अन्धकार का युग है। कवि ने जानबूझ कर अपने कथानकों को प्राचीन युग के सन्दर्भ में प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। इस प्रयास में वह पूर्णरूपेण सजग और सफल हो सका है ऐसा नहीं कहा जा सकता। इस प्रकार के प्रयास महाकाव्यों के समस्त साहित्य में मिलते हैं। होमर के महाकाव्यों का राजनीतिक पक्ष तो इस प्रकार के प्रयासों से भरा है। परिणामस्वरूप इनमें हमें निकट अतीत का चित्र न मिलकर सुदूर अतीत की झाँकी ही मिलती है। इस सम्बन्ध में आज भी शास्त्रीय युग के यूनानी और हममें कोई विशेष अन्तर नहीं है। अपने प्रारम्भिक इतिहास का ज्ञान प्राप्त करने के लिए वह भी होमर की कविताओं और परम्परा से चली आने वाली पौराणिक कहानियों की सहायता लेता था। फिर भी हमारी स्थिति कुछ अच्छी है। हमें यह मालूम है कि यूनान के प्रारम्भिक इतिहास का यह युग अपेक्षाकृत दीर्घकाल का है। इसके अतिरिक्त पुरातत्त्व विज्ञान की सहायता

---

१ यह कहने की आवश्यकता नहीं कि इनके रचना-काल की तिथि अभी भी पर्याप्त विवाद का विषय बनी हुई है।

प्राप्त हो जाने के कारण माइसीनियन सभ्यता के बारे में हमारा ज्ञान शास्त्रीय (क्लासिकल) युग की यूनानी के ज्ञान की अपेक्षा कहीं अधिक है। इसलिए पाँच शताब्दियों की घटनाओं को एक में मिलाकर देखने की भूल से हमें बचना चाहिए।

हमारे लिए यह महत्त्वपूर्ण नहीं है कि होमर की कविताओं के आधार पर उस समय के यूनानियों ने प्रागैतिहासिक युग की घटनाओं के सम्बन्ध में क्या धारणाएँ निर्धारित किया। हम तो यह जानना चाहते हैं कि प्रारम्भ में इन कविताओं का गहन अध्ययन करनेवालों ने होमर से किन राजनीतिक विचारों का ग्रहण किया। राजनीतिक सगठनों से मिलते-जुलते चार उदाहरण इन कविताओं में मिलते हैं। दो 'ईलियड' में तथा दो ओडिसी में। ओडिसी में मिलने वाले राजनीतिक सगठनों के दोनों रूप न तो अधिक विस्तार के साथ प्रस्तुत किए गये हैं और न अधिक निश्चयपूर्वक ही हैं। चारों उदाहरण इस प्रकार हैं (१) इथाका (Ethaca) का साम्राज्य (२) स्केरिया (Scheria) का काल्पनिक साम्राज्य (३) ट्राय का नगर और (४) अगममनन (Agamemnon) का आधिपत्य। ये संस्थाएँ परस्पर भिन्न हैं और इनमें से कोई भी दो एक सी नहीं है। वन पहले दो प्रकार की संस्थाओं में जो ओडिसी का देन है कुछ समानता है। ये एजियन प्रदेश के होकर सुदूर पश्चिम की संस्थाएँ हैं। ट्राय का नगर एशियाई अधिक है यूनानी कम। किन्तु इसका विवरण एक यूनानी द्वारा दिया गया है और वह भी एक यूनानी कवि द्वारा। ऐसी दशा में इसके राजनीतिक सगठन के बारे में प्रामाणिकता निर्धारित करना सम्भव नहीं। इन विभिन्न संस्थाओं में समानता केवल इतनी है कि सभी में राजा, अभिजात्य वर्ग और साधारण जनता में जनसंख्या का विभाजन मिलता है। यह विभाजन कुछ आगे की वस्तुस्थिति का आभास देता है जब यूनानी विचारक एक कुछ और बहुत की समस्या पर विचार करने लगे थे। किन्तु होमर की कविताओं में यह आभास नहीं मिलता कि राजनीतिक सत्ता वास्तव में किसके हाथ में थी। फाशियन (Phaeacians) के द्वीप (Scheria) में जहाँ ओडीसियस (Odyss eus) जाता है एल्सिनस (Alcinous) राज करता है किन्तु उसके हाथ में अधिक सत्ता नहीं है। उसे अपने 'नेताओं और परामर्शदाताओं' की सदिच्छा पर निर्भर रहना पड़ता है और इन्हें भी राजा के चुनाव का अधिकार प्राप्त है। इथाका के राजा आडीसियस की स्थिति कुछ विचित्र सी है।[1] उसके पिता लेर्टीज (laertes) ने पर्याप्त समय पूर्व से अवकाश ग्रहण कर लिया है किन्तु ओडीसियस की अनुपस्थिति में न तो वे स्वयं न कोई दूसरा व्यक्ति ही उसके स्थान पर राज कार्य सम्भालता है। यह

१ देखिए G Finsler, Homer[3] १ २, १३४ ff

भी सम्भव प्रतीत होता है कि यदि ओडीसियस की पतिव्रता पत्नी पेनेलोप उन प्रणयियों में से जो उससे विवाह के लिए इच्छुक थे किसी को स्वीकार कर लेती तो उसका वह नया पति इथाका का सम्राट भी हो जाता। ओडीसियस का पुत्र टेलीमेकस (Telemachus) वंश-परम्परा के आधार पर राजा बनने का अधिकार प्रस्तुत करता है किन्तु वह स्वयं इस बात को स्वीकार करता है कि यह कोई निर्विवाद अधिकार नहीं है क्योंकि इथाका में अन्य राजा नवयुवक भी हैं जो ओडीसियस के पद के लिए अपना अधिकार प्रस्तुत कर सकते हैं।[1] ट्राय में राजा के रूप में प्रायम (Priam) की स्थिति निर्विवाद एवं अधिक सुदृढ़ है किन्तु युद्ध के कारण प्रायम का पुत्र हेक्टर (Hector) अपने पिता की अपेक्षा अधिक शक्तिशाली है।

यूनान के सम्बन्ध में भी यह निश्चित करना कठिन हो जाता है कि ट्रॉय के युद्ध के सन्दर्भ में यूनानी संगठन का जो चित्र मिलता है वह युद्धरत सेना के संगठन का चित्र है अथवा राजनीतिक संगठन का एक अस्पष्ट चित्र है। सैनिक संगठन की व्यवस्था इस प्रकार थी—मुख्य सेनापति, रथ-सवार योद्धा-नायक और साधारण सैनिक 'लाओइ' जो गदा और तीर धनुष से युद्ध करते थे। किन्तु यह वर्गीकरण मुख्यतया सामाजिक है, सैनिक दृष्टिकोण से यह अन्तर केवल प्रासंगिक है। नेस्टर (Nestor) ने जाति और भाईचारे के आधार पर सेना का संगठन करने का प्रयास किया किन्तु इस ओर किसी ने ध्यान न दिया और उसका प्रयास विफल रहा। इसके विपरीत कितने ऐसे उद्धरण मिलते हैं जिनसे यह ज्ञात होता है कि अगामेमनन (Agamemnon) की शक्ति केवल इसलिए न थी कि वह मुख्य-सेनापति था बल्कि इसलिए भी थी कि सम्पूर्ण राजसत्ता उसके हाथ में था। यह दूसरी बात है कि ऐतिहासिक काल के स्पार्टा के राजाओं की भाँति युद्धकाल में उसने अपने हाथों में कुछ अधिक शक्ति कर ली हो जिसका साधारण शान्ति काल में वह अधिकारी न रहता रहा हो। किन्तु 'इलियड' में अपनी आज्ञा का पालन करा सकने का उसका अधिकार सामरिक आवश्यकता पर न आधारित होकर इस बात पर आधारित है कि भविधान ने उसे वह पद प्रदान किया है साथ ही वह राज्य की प्रभु सत्ता का प्रतीक अर्थात् राज-दण्ड उसके हाथों में है। वह राज-दण्ड (राजसत्ता का प्रतीक) वाहक सम्राट था और उसका विस्तृत साम्राज्य यूनान के मुख्य भू-भाग तथा द्वीपों तक फैला था। इस कारण अन्य राजाओं की अपेक्षा वह अधिक आदर और सम्मान का पात्र था। नेस्टर (Nestor), एकिलीज (Achilles), ओडीसियस (Odysseus) आदि भी राजा थे और इन सभी का अपना अपना राज्य था। किन्तु निश्चित रूप से यह

१ Odyssey १ ३९४ ff
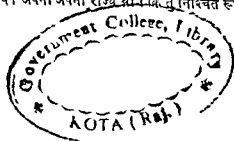
ना कहा जा सकता कि उनके पद का क्या आधार था। इन राजाओं और अगमेमनन (Agamemnon) का सम्बन्ध प्रजा और राजा का सम्बन्ध नहीं था क्योंकि वे सब स्वयं राजा थे और सामरिक धार्मिक एवं न्याय सम्बन्धी सभी अधिकारों का प्रयोग करते थे। ये राजा अरिस्टाटल का चतुर्थ श्रेणी के राजाओं अर्थात् नायक वर्ग में थे।[1] किन्तु, अगमेमनन के प्रति इन सभी को कुछ कर्तव्यों का पालन करना पड़ता था उनके एक आज्ञा से वे युद्ध में उसकी सहायता करने के लिए बाध्य हो जाते थे। इतना ही नहीं इस प्रकार के आज्ञा की अवहेलना करने पर अगमेमनन इन्हें आर्थिक दण्ड भी दे सकता था। किन्तु युद्ध के लिए रसद की व्यवस्था करना भी सहायता में शामिल था। एक ऐसा उदाहरण ईलियड में मिलता है।[2] शान्तिकाल में अगमेमनन और इन राजाओं के सम्बन्ध के विषय में कुछ कहना कठिन है। हाँ इतना स्पष्ट है चूँकि इन्हें स्वयं अपने राज्य का प्रबन्ध करना रहता था इसलिए ये अगमेमनन के अनुगामी नायकों और दरबारियों की भाँति तो नहीं ही रहते रहे होंगे। वस्तु अगमेमनन के साथ हमेशा उठने बैठनेवालों का एक दल भी था जैसे चौथी शताब्दी में मेसीडन (Macedon) के फिलिप के दरबार में साथ उठने बैठनेवालों का एक दल रहता था। किन्तु ये स्वतन्त्र राजा न होते थे और न नन्हें राजा अलसिनस (Alcinous) के परामर्शदाताओं की ही भाँति थे। वह अगमेमनन के साथ रहनेवाले सभासदों एवं हाँ-हुजूरी करनेवाले लोगों का एक दल था जो अगमेमनन के साथ भोजन करते और उसके वैयक्तिक अंगरक्षकों की भाँति रहते थे। यूनान के छोटे राजाओं के दरबार में भी इस प्रकार के सभासद रहते थे यद्यपि उनकी संख्या कम होती थी। एकिलीज के साथ पैट्रोक्लस (patroclus) इसी भाँति रहता था। इसी प्रकार की कितनी पहेलियाँ उस समय आ सामने आती हैं जब हम विभिन्न राजाओं तथा अगमेमनन की अपनी प्रजा द्वारा प्रस्तुत मण्डल और अगमेमनन के सम्बन्ध पर विचार करते हैं। एकत्रित सेना के सम्मुख उसके भाषणों से यह नहीं प्रतीत होता कि युद्ध के पूर्व एक सेनाध्यक्ष अपनी सेना को आदेश दे रहा है। अन्य लोगों को भी अपना विचार व्यक्त करने का अवसर दिया जाता है। शत्रु के सन्देशवाहक का स्वागत इस सभा में ही होता है और वह न तो अगमेमनन को सम्बोधित करता है और न उपस्थित जनसमूह को ही। वह केवल सरदारों को ही सम्बोधित करता है जो सम्भवतः अभिजात वर्ग के लोग रहे होंगे।

होमर से सम्बन्धित अन्य प्रश्नों की भाँति उपर्युल्लिखित समस्याएं इतिहासकारों तथा होमर की रचनाओं का अध्ययन करनेवालों के लिए पर्याप्त विवाद का विषय रही

---

१ Aristotle, Politics III १२८ b अध्याय ११ देखिए।

२ Iliad XXIII २९७

है। किन्तु राजनीतिक विचार के विद्यार्थी के लिए महत्त्वपूर्ण बात यह है कि होमर-युग का यूनानी नवयुवक अपने जीवन के प्रारम्भिक वर्षों में ही इस संयुक्त राजनीतिक चित्र को यूनानी जाति के इतिहास के रूप में स्वीकार करता जाता था। इस प्रकार वह एक ऐसी सामाजिक एवं राजनीतिक स्थिति से परिचय प्राप्त कर लेता था जो उसकी समकालीन स्थिति से भिन्न होते हुए भी स्पष्ट रूप से सम्बन्धित थी। जिन साम्राज्यों के राजदण्ड धारण करनेवाले राजाओं का युग तो ईसा पूर्व ६ठी शताब्दी से पूर्व ही समाप्त हो चुका था साथ ही अधिकांश छोटे राज्य भी यूनान के राजनीतिक चित्र से विलीन हो चुके थे। ट्रॉय और माइसीनी के ध्वंसावशेष मात्र रह गये थे। किन्तु आर्गस, एथेन्स, स्पार्टा और इथाका अब भी कायम थे यद्यपि उनके रूप में पर्याप्त परिवर्तन हो चुका था। ऐसी दशा में इस काल का यूनानी नवयुवक नगरों और द्वीपों का भ्रमण करने के बाद तुलनात्मक राजनीति के अध्ययन के लिए अच्छी तरह तैयार हो जाता है और जब विधि एवं न्याय सम्बन्धी प्रश्नों से उसका पहला परिचय होता है तो इलियड की १८वीं पुस्तक का स्मरण उसे हो जाता है और हेफैस्टस (Hephaestus) द्वारा एकिलीज के लिए निर्मित वैजयन्ती पर चित्रित अन्वीक्षा का प्रसिद्ध दृश्य उसके सम्मुख आ जाता है। किन्तु अन्वीक्षा की प्रक्रिया के महत्त्व को समझने में उसे भी वही कठिनाई होती थी जो आज हमें होती है। इतना ही नहीं इस बात को देखकर कि न्याय की व्यवस्था में राजा कोई भाग नहीं ले रहा है वह अचम्भित हो सकता है।[1] किन्तु बाजार में एकत्रित भीड़ को वह पहचान लेगा और मानव हत्या से सम्बन्धित रीति-रिवाज में हुए परिवर्तनों पर भी उसका ध्यान जायगा। उसके समय के नगर राज्यों और होमरकालीन नगरों में पर्याप्त अन्तर था। फिर भी उसे यह आभास हो सकता है कि इन दोनों संस्थाओं के उत्तराधिकारी यूनानी नवयुवक ही हैं, विदेशी बर्बर नहीं। संरचना के मौलिक तत्त्वों की रक्षा होमरकालीन नगरों ने भी उतनी ही की थी जितनी कि

---

१ अरिस्टाटेल के अनुसार तो होमरकालीन यूनान में न्याय की व्यवस्था करना राजा का कर्तव्य था (Pol iii १२८५b १०) किन्तु उसका यह विचार भ्रामक हो सकता है, अधिकांश प्रमाणों से यही संकेत मिलता है कि न्याय एक व्यक्ति के हाथ में न होकर कई व्यक्तियों की एक संस्था का उत्तरदायित्व था।
देखिए—G Finsler, Homer[3] १, २ पृ० १३८ और M P Nilsson, Homer and Mycenae pp २२३ २२४ एकिलेज की वैजयन्ती के अन्वीक्षा के दृश्य के लिए देखिए R J Bonner and Gertrude Smith, Administration of Justice from Homer to Aristotle (१९३०) vol १, pp ३१ ३४

शास्त्रीय युग के नगर राज्यों में। शिक्षा द्वारा शास्त्रीय युग के यूनानी नवयुवकों में यह विश्वास उत्पन्न किया जाता था कि कवि महान् शिक्षक और सभ्यता का प्रवर्तक होता है तथा सभ्यता के प्राथमिक सिद्धान्तों का ज्ञान वे होमर से ही प्राप्त करते थे। असभ्य और विशालकाय साइक्लोप्स (Cyclops) तथा उनकी जाति का जो चित्र होमर ने प्रस्तुत किया है वह असभ्य जातियों का प्रतिनिधि चित्र प्रतीत होता है। खेती करना वे नहीं जानते थे, देवताओं का किञ्चित मात्र आदर वे नहीं करते थे, अन्य व्यक्तियों की भाँति वे एक साथ नहीं रह सकते थे और परस्पर एक दूसरे से अलग रहने का प्रयत्न करते थे। उनके समाज में विधि और नियम का सर्वथा अभाव था। पत्नी और परिवार पर वे निरंकुश अधिकार रखते थे। वाद-विवाद, विचार-विमर्श आदि के लिए सार्वजनिक स्थानों की कोई व्यवस्था न थी और न न्याय और आचरण की कोई उचित रीति ही थी (Odyssey ix ११२)

होमर की कविताएँ सभी यूनानियों को चाहे वे बड़े नगरों में रहते हों अथवा छोटे ग्रामों में सार्वजनिक विरासत के रूप में उसी प्रकार से मिली थीं जैसे महान् देवता और पौराणिक कथाएँ। यद्यपि यूनानी भाषा की कई बोलियाँ थीं फिर भी उनका अन्तर साधारण वार्तालाप में बाधक नहीं हो सकता था। सभी स्थानों के यूनानी एक दूसरे की बात समझ सकते थे और यूनानी भाषा की एक करनेवाली विविधता में व्याप्त एकता से भली भाँति परिचित थे। एकता का यही आभास उन्हें अपनी यूनानी भाषा को विदेशियों की भाषा से पृथक समझने में सहायता देता था। विदेशियों की अयूनानी भाषा को वे बार-बार (bar bar) की संज्ञा देते थे और अव्यवहार्य समझते थे। इसी बार-बार के आधार पर विदेशियों को बर्बर (बरबराई) कहा जाने लगा और बर्बर और असभ्य पर्यायवाची शब्द हो गये। होमर की भाषा की जो भी व्युत्पत्ति हो यूनानी भाषा की एकता को दृढ़ करने में यह पर्याप्त सहायक हुई। यद्यपि यह बोल-चाल की भाषा न थी फिर भी मृतभाषाओं की श्रेणी में यह नहीं आती थी। लिखित गद्य अथवा कविता की भाषा के विकास के पूर्व[1] साहित्यिक अभिव्यक्ति की यही एकमात्र भाषा थी। महाकाव्यों की रचना के लिए तो लगभग एक हजार वर्षों तक इसी भाषा का प्रयोग होता रहा। हमारे विषय के अध्ययन की दृष्टि से भी होमर की भाषा का महत्त्व कम नहीं है। शब्दों का प्रभाव विचारों पर भी पड़ता है और राजनीतिक शब्दावलि तथा राजनीतिक इतिहास से यूनान के प्रारम्भिक विचारकों का प्रथम परिचय होमर की कविताओं के माध्यम से ही होता है। अतः अब हम इलियड और ओडेसी में प्रयुक्त कुछ

---

१ वह लिखित पद्य है।

महत्त्वपूर्ण राजनीतिक शब्दों की ओर ध्यान देंगे। सबसे महत्त्वपूर्ण शब्द तो 'पोलिस' ही है। होमर की रचनाओं में इस शब्द का प्रयोग 'नगर' के अर्थ में किया गया है, राज्य के अर्थ में नहीं। अरिस्टाटल के इस कथन में कि शासक एवं शासितों में सम्बन्ध का आधार पारस्परिक सुरक्षा है तत्कालीन भाषा का प्रयोग अवश्य किया गया है किन्तु इसमें एक ऐसा तथ्य भी सुरक्षित है जो थुसाडाइडीज (Thucydides) को भली भाँति ज्ञात था। और यह तथ्य है कि प्रारम्भिक पोलिस का निर्माण मुख्यतया सुरक्षा के प्रयोजन से होता था और प्रारम्भ में इस शब्द से सुरक्षित स्थान का बोध होता था। सुरक्षित रखने के लिए कभी-कभी दुर्ग रचना की जाती थी और जैसा कि होमर के वर्णनों से पता चलता है इन नगरों को ऐसे स्थानों पर बसाया जाता था जहाँ सीधी या खड़ी चढ़ाई के कारण प्रवेश सुगम न हो और भौगोलिक स्थिति ही दुर्ग का काम करे। होमर के ग्रन्थों तथा पुरातत्त्व सम्बन्धी खोजों से ज्ञात होता है कि होमर द्वारा वर्णित नगरों में सड़कों तथा भवनों की समुचित व्यवस्था थी और वे सुरक्षा तथा आवास दोनों प्रयोजन से बनाये जाते थे। इन नगरों के निवासी नागरिक (पोलिटिआ) कहलाते थे और राजा की भाँति इन्हें भी निवास तथा नगर की सुरक्षा का विशेषाधिकार प्राप्त था। स्पष्ट है कि राज्य की सुरक्षा नागरिक का प्रथम कर्तव्य होता था। नागरिकता के अधिकार और राज्य के लिए अस्त्र धारण करने की क्षमता का परस्पर सम्बन्धित समझने की प्रथा पर्याप्त समय तक यूनानी विचारधारा का अंग बनी रही। होमर के समान में इस वर्ग की संख्या कम है। केवल सामन्त और प्रजनन ही इस वर्ग में आते हैं। वृद्ध प्रायम (Priam) अपने कुछ नागरिकों के साथ एकिलीज से मिलने गया था। यूनानी शब्द 'पोलिटिस' का अंग्रेजी पर्याय Citizen (नागरिक) अधिक व्यापक शब्द है और इसका प्रयोग कुछ भ्रम उत्पन्न कर देता है। यूनानी उक्त शब्द का सीमित अर्थ में ही प्रयोग करते थे और इससे हम यूनानी राजनीतिक विचारधारा की दो विशेषताओं को समझने में सुविधा होती है। प्रथम जनतन्त्रात्मक तथा कुलीनतन्त्रात्मक दोनों प्रकार के नगर राज्य अपने नागरिकों की संख्या वृद्धि से घबराते थे, द्वितीय यूनानी राजनीतिक विचारधारा में नागरिकता के निर्धारण की विधि पर विशेष महत्त्व दिया जाता था। होमर की भाषा में पोलिस और एस्टू का अन्तर स्पष्ट है। पोलिस में नागरिक रहते थे और एस्टू उन लोगों का निवासस्थान था जो नागरिक की श्रेणी में नहीं आते थे। हम लोग इन दोनों शब्दों के लिए नगर (Town or city) का ही प्रयोग करते हैं। शास्त्रीय काल के यूनानी भी साधारणतया इन दोनों शब्दों के अन्तर की ओर ध्यान नहीं देते थे। किन्तु दोनों शब्दों को पर्यायवाची न समझने की प्रथा सर्वथा समाप्त नहीं हो पायी थी। उस काल में भी 'पोलिस' का प्रयोग प्रायः

केन्द्रीय उच्च गढ़ी दुर्ग या दुर्ग अथवा 'एक्रोपोलिस' के लिए किया जाता था। यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है यद्यपि इसे सिद्ध करना कठिन होगा कि लाओस या डेमाज (जिसका अंग्रेजी पर्याय People है) का तात्पर्य नगर के बाहर देहात में रहनेवालों से था। इसके विपरीत अभिप्राय था उन लोगों से जो नगर पोलिस में रहते थे किन्तु राजनीतिक दर्शन की शब्दावली में इस शब्द का कोई विशेष महत्त्व नहीं है।

डेमाज की समस्या से स्थिति सर्वथा भिन्न है यद्यपि अंग्रेजी में इस शब्द का अनुवाद भी People (जन) ही किया जाता है। पोलिस की भाँति डेमाज भी मूलतया स्थान-सूचक शब्द प्रतीत होता है क्योंकि 'डेमा' शब्द का अर्थ देश ही हो सकता है। इसलिए इसका अर्थ नगर और उसके निवासी न होकर नगर और देहात ही होगा। देहात में पोलिस की चहारदीवारी के बाहर का पूरा इलाका शामिल था। चूँकि डेमाज का तात्पर्य पोलिस के बाहर के इलाके से था इसलिए धीरे धीरे इसका प्रयोग देहात में रहने वालों के लिए किया जाने लगा। इस प्रकार यद्यपि होमर की रचनाओं में पोलिस का प्रयोग समूहवाचक संज्ञा के रूप में नगर के निवासियों के लिए कदाचित् ही हुआ है किन्तु नगर के बाहर रहनेवालों के लिए डेमाज का यह प्रयोग प्रायः मिलता है। इसी प्रकार के प्रयोगों के परिणामस्वरूप कुछ समय बाद डिमोस एथेन्स का अर्थ देश का व्यक्ति न होकर जनता का व्यक्ति हो गया और इस शब्द के महत्त्वपूर्ण इतिहास का प्रारम्भ हुआ। इस शब्द का मूल अर्थ तो प्रायः लुप्त हो गया है केवल deme शब्द के एटिक और एजियन प्रयोग मिलते हैं और इन प्रयोगों में इस शब्द का अर्थ जिला होता है। पोलिस और डेमाज के प्रयोग और अर्थ की परम्परा से भिन्न अगोरा है। प्रारम्भ में यह शब्द स्थान सूचक न होकर सभा का बोध कराता था और बाद में इसका प्रयोग सभा के स्थान के लिए होने लगा। यूनान के नागरिक जीवन का यह आवश्यक अंग था और जैसाकि पहले कहा जा चुका है सभा के स्थान का उचित प्रयोग सभ्य समाज का लक्षण माना जाता था। ऐतिहासिक युग में यूनानी भी अगोरा (Agora) में केवल क्रय विक्रय हेतु ही नहीं एकत्रित होते थे बातचीत के लिए भी इस स्थान का महत्त्व स्वीकार किया जा चुका था। युद्ध काल हो अथवा शान्तिकाल सभा करना यूनानी नागरिक जीवन का एक आवश्यक अंग था। यूनानी नगर राज्यों के सामाजिक जीवन में इसका विशेष स्थान था। यहाँ इस बात का भी उल्लेख किया जा सकता है कि एथेन्स राज्य की जातियों और उपजातियों के लिए भी महाकाव्यों की जनभाषा में सजातीय शब्द मिलते हैं। जातिवाद में सम्भवतः इनका कुछ सामाजिक महत्त्व रहा हो किन्तु इलियड में इनका उल्लेख नहीं

आधार सर्वथा नैतिक या धार्मिक ही था। व्यक्ति अथवा वर्ग विशेष के आचार रीति और रिवाज भी डाइक के अन्तर्गत आ सकते थे। सहज स्वाभाविक कार्य और कर्त्तव्य में एकरूपता स्थापित करने की प्रक्रिया न तो उस युग में पूर्ण हुई थी और न कभी पूर्ण हो सकता है। यह प्रक्रिया तो अविरामगति से चली जा रही है और मनुष्य का अधिकांश राजनीतिक आचरण इसी बात पर निर्भर करेगा कि वह किस मात्रा में इस प्रकार की एकरूपता स्थापित करने में आस्था रखता है।

डाइक और थेमिस का प्रायः संयुक्त प्रयोग किया जाता है और उनका मान व्यक्ति की सभ्यता एवं संस्कृति का लक्षण माना जाता है। दोनों शब्दों का तात्पर्य है कि स्थापित मान्य ढंग ही सम्यक् ढंग है। किन्तु इन दोनों शब्दों में अन्तर है। थेमिस की अपेक्षा डिके का महत्त्व और अधिकारक्षेत्र सीमित है। वास्तव में दोनों शब्दों के अधिकार क्षेत्र पृथक् हैं। जहाँ तक डाइक का सम्बन्ध है यह आंशिक रूप से सर्वसाधारण द्वारा मान्यता पर तथा आंशिक रूप से राजा अथवा सामन्त या वयोवृद्ध जो भी निर्णय दें उन पर आधारित है। किन्तु थेमिस की मान्यता इसलिए है कि उसका आधार दैविक है। मनुष्यों में इस आधार का वाहक राजा ही हो सकता था। इस प्रकार थेमिस निर्धारित करने, कार्यान्वित करने तथा तत्सम्बन्धी निर्णय देने का अधिकार केवल ईश्वर या राजा को प्राप्त था। राजा भी उसी समय थेमिस का उच्चारण कर सकता था जब उसके हाथ में राजदण्ड हो क्योंकि राजदण्ड से ही उसे यह दैविक अधिकार प्राप्त होता था। जैसे जैसे राजा की सत्ता क्षीण होती गई और सामन्तों का प्रभाव बढ़ता गया डाइक और थेमिस का अन्तर भी लुप्त होता गया क्योंकि यह सामन्तों के लिए लाभप्रद था। डाइक की व्यवस्था करनेवाले तथा इससे सम्बन्धित निर्णय देने वाले भी यह महसूस करने लगे कि वे भी ज़ियूस[1] (Zeus) के आदेशों का पालन करा रहे हैं। इस प्रकार की धारणा उनके हित में भी थी। फिर भी इन दोनों शब्दों का अन्तर वास्तविक था। होमर ने भी थेमिस को एक देवी के रूप में प्रस्तुत किया है दैविक सत्ता की मूर्ति के रूप में। डिके को देवी का यह पद नहीं मिल सका है। हीसियड के पूर्व तक किसी ने डिके को यह स्थान नहीं दिया। हीसियड ने ही सर्वप्रथम डाइक को देवी के रूप में प्रस्तुत किया। ऐसे कार्यों का करना जो थेमिस के अन्तर्गत आते हैं जैसे माता पिता का आदर करना और ऐसे कार्यों से बचना जो थेमिस के प्रतिकूल थे जैसे अपरिचितों और अतिथियों का अपमान करना ऐसे कर्त्तव्य माने जाते थे जिनका आधार दैवी था। हीसियड ने डाइक को भी इसी स्तर तक उठाकर यह सिद्ध करने का

---

१ Iliad १ २३८–९

प्रचार किया कि मत्युलोक के मानव 'ईश्वर' की अवहेलना करने के कारण देवताओं की दृष्टि में दोषी हैं। थेमिस को हेसियड ने पदच्युत नहीं किया। इस तरह वह राजनीतिक गुणों की जननी स्वीकार करता था। उसने केवल 'सम्यक' (Right) की धारणा का विस्तार और परिवर्तन करके 'नगर' (पॉलिस) में उसे सम्मिलित कर लिया। इसके विपरीत राजनीतिक विचार के रूप में थेमिस का विकास नहीं हो पाया और राजाओं तथा परम्परागत शक्ति के ह्रास होने के साथ-साथ इसकी सत्ता भी कम होती गई। नवीन नागरिक के अभ्युत्थान, देवी अधिकार एवं राजसत्ताधारी राजाओं द्वारा जारी किये गये थेमिस न होकर विधायकों और न्यायविदों द्वारा निर्धारित विधि और आदेश हुए।

यूनान के राजनीतिक दार्शनिकों को राजनीतिक विचारों की जो पैतृक सम्पत्ति प्रागैतिहासिक यूनान से मिली उसमें कुछ विचारधाराओं का ऊपर उल्लेख किया गया है। वीरकाल के समाज, जनता और शासकों का जो चित्र होमर ने प्रस्तुत किया है उसमें कुछ अनैतिहासिक त्रुटियाँ तथा असंगत तत्त्व अवश्य मिलते हैं, तथापि लोगों के मानस पटल पर यह चित्र ऐतिहासिक और दार्शनिक दोनों विशेषताओं के रूप में अमिट बना रहा। 'होमर' के नायक एकिलीज को फीनिक्स ने जो पथप्रदर्शक सिद्धान्त दिया था उसे यूनानी सदा याद रखते थे। वह सिद्धान्त था—'श्रेष्ठता को ही सदैव अपना लक्ष्य मानो और दूसरों से अधिक उत्कृष्ट बनो।' बाद के यूनानियों ने तो इस सिद्धान्त को आसानी से सामाजिक जीवन से नागरिक जीवन में भी हस्तान्तरित कर लिया यद्यपि इसका परिणाम अच्छा नहीं हुआ (देखिए—अध्याय ५)। यह सच है कि स्वाधीनता की तीव्र चाह, अत्याचार से भय, सुव्यवस्थित स्वाधीनता में आस्था अथवा नगर राज्य की अन्य विशेषताओं को यूनानियों ने होमर से नहीं सीखा। और यह भी सच है कि आधुनिक राजनीतिक चिन्तन प्रत्यक्ष रूप से होमर का विशेष ऋणी नहीं है। फिर भी, यूनानी राजनीतिक विचारकों के लिए होमर की कविताएँ विशेष महत्त्व की हैं। राजनीतिक विचार के इतिहास की प्रारम्भिक अवस्था में तो होमर की कविताओं का महत्त्व था ही, प्लेटो और अरिस्टॉटल ने भी अपनी रचनाओं में 'होमर' से पर्याप्त उद्धरण दिया है। स्पष्ट है कि ऐतिहासिक अन्वेषण मात्र की दृष्टि से उन्होंने ऐसा नहीं किया। बात यह है कि उनके समय में होमर की कविताएँ 'तद्विषयक साहित्य' के अंग थीं और बाद का विचारक उनकी उपेक्षा नहीं कर सकता था, चाहे वह उनकी पुष्टि अथवा खण्डन करे या न करे।

किया है। अन्तराष्ट्रीय सम्बन्धों में तो इस सिद्धान्त को निश्चयात्मक स्वीकृति मिल चुकी थी (देखिए—अध्याय ६) और जबकि हेसिएड ने स्वयं आन्तरिक मामलों में भी समाज में हिंसा और अव्यवस्था व्याप्त थी। उसके समय में शासक और न्यायाधीश यद्यपि अब भी वसिलीज राजवंशों के प्राचीन नाम से ही अपने को विभूषित करते थे किन्तु वीरगाथा वाले के राजकुमारों के राजगुणों का उनमें सर्वथा अभाव था। घूसखोरी भ्रष्टाचार और झूठी शपथ का बोलबाला था। इन न्याय विमुख न्यायाधीशों और अपने वक्तव्य विमल भाई परसीज (Perses) को सम्बोधित करते हुए हेसिएड ने यह उपदेश दिये हैं जो नीति और कृषि दोनों से सम्बन्ध रखते हैं। Works and Days में कवि ने बोशियन (Boetian) पहाड़ी के एक कृषक के श्रमसाध्य जीवन का स्पष्ट चित्र प्रस्तुत किया है। इस चित्र में उसकी सामाजिक और आर्थिक स्थिति का आभास मिलता है। पालिस शब्द का प्रयोग जिस ढंग से किया गया है उससे यह संकेत मिलता है कि साधारण राजनीतिक इकाई पालिस ही थी। शासन की समस्याओं के सम्बन्ध में यद्यपि उसने कुछ नहीं लिखा है, फिर भी शासन के आधारभूत सिद्धान्तों के प्रश्न पर वह हमें सन्दिग्धावस्था में नहीं रखता—यह वही सिद्धान्त है जो डाइक के सिद्धान्त के नाम से अब विख्यात हो चुका है। डाइक की परिभाषा तो हेसिएड की रचनाओं में नहीं मिलती किन्तु इसे मनुष्य और देवता के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। इसकी व्याख्या भी कवि की भाषा में ही की गई है। थलचर नभचर और जलचर समूहों से मानव समाज को पृथक करने का श्रेय डाइक को ही है क्योंकि पशु पक्षियों और मछलियों के समूह का आधार डाइक का सिद्धान्त नहीं होता है। सम्भवतः अथवा सही ढंग या न्याय ही डाइक है विधि विहीनता और हिंसा तथा अपने हाथ में कानून लेने की प्रवृत्ति के विपरीत डाइक का सिद्धान्त है। इस प्रवृत्ति को हेसिएड ने न्याय के विपर्यय के रूप में लिखा। आधुनिक भाषा में हम कहते हैं कि इस प्रवृत्ति के लोग सभी प्रकार के राजनीतिक समुदायों की जड़ पर आघात करते हैं। यह सच है कि उच्च पदस्थ और शक्तिशाली व्यक्ति विशेषकर जब वे मिलकर कार्य करते हैं बहुधा न्याय के विपरीत होते हुए भी सफलता प्राप्त कर लेते हैं किन्तु हेसिएड का कहना है कि उनकी यह सफलता क्षणिक ही होती है और कुछ समय पश्चात वे अवश्य विफल होंगे क्योंकि देवतागण बुरे कार्यों को देखते रहते हैं और उनके करनेवालों को दण्ड देते हैं। अरिस्टोफनीस (Aristophanes) के Clouds में न्याय और अन्याय के पक्षों के समर्थन में ही दी गयी दलीलों की भाषा का पूर्वाभास देते हुए हेसिएड कहता है "न्याय के मार्ग पर चलनेवाले व्यक्ति के लिए वह अवसरपूर्ण या घोर दुर्भाग्य का दिन होगा जब अन्यायी डाइक (न्याय) के अधिक अंश का भागी हो सकेगा"। इसके अतिरिक्त किसी भी नगर के लिए न्याय निश्चित रूप से एक वरदान

है, इसके अभाव में नगर में सुख और समृद्धि सम्भव नहीं हो सकते । इसलिए जिस समुदाय में न्याय और प्रशासन का अधिकार कुलीनों के हाथ में रहता है वहाँ के शासकों का उत्तरदायित्व तो और भी बढ़ जाता है, क्योंकि उनकी त्रुटियों से उनके जनसमूह को पीड़ित होना पड़ता है। यदि इस कुलीन वर्ग के शासक अपने इन न्यायोचित अधिकार का प्रयोग करते हैं जिसके अनुसार शासक तो मनमानी करते हैं और शासितों से सदा यह आशा की जाती है कि वह शान्ति और व्यवस्था बनाये रखेंगे, तो इस समाज में सुन्दर ढंग और न्याय कभी भी स्थापित न हो सकेगा। हीसिएड को अपने समय के कुलीन और भ्रष्ट शासकों में उत्तरदायित्व की यह भावना कहीं भी नहीं दिखाई दी। उसे यह आशा भी न थी कि ये शासक आगे चलकर उत्तरदायित्वपूर्ण व्यवहार कर सकेंगे। इसी कि उसने अपनी दूसरी पुस्तक Theogony' में लिखा है, "न्यायी शासक तो जियूस (Zeus) की देन हैं, ठीक उसी तरह जैसे अच्छे कवि अपोलो (Apollo) की। शासक और कवि दोनों को (Muses) से शिक्षा-दीक्षा और वरदान की अपेक्षा रहती है, क्योंकि जिस प्रकार कवि को संगीत और छन्द में निपुण होना चाहिए, उसी प्रकार शासन करनेवाले राजकुमार को वक्तृता में दक्ष होना चाहिए। उसके मुख से मधुर शब्द प्रवाहित होते हैं और जब वह न्याय और भक्ति से निर्णय देता है तो सभी लोग उसकी ओर आशा से देखते हैं।' होमर के नायक के लिए 'शब्दों का वक्ता' होने की आवश्यकता थी। हीसिएड के शासक के लिए इससे कहीं अधिक ऊँचे स्तर की वक्तृता की आवश्यकता है। वक्तृता और न्याय के घनिष्ठ सम्बन्ध का सर्वप्रथम संकेत हम हीसिएड में ही मिलता है। न्याय की दृष्टि से यह सन्तोषजनक ही रहा हो यह बात नहीं है। चौथी और पाँचवीं शताब्दी में बहुत से लोगों को इस पर खेद प्रकट करने के लिए बाध्य होना पड़ा।

हीसिएड की मृत्यु के उपरान्त (७०० ई० पू० के पहले) भी न्यायपूर्ण ईश्वर की व्यवस्था में सहायक देवता के रूप में न्याय की कल्पना कवियों को प्रेरणा प्रदान करती रही। यह क्रम तब तक चलता रहा जब एस्कीलस (Aeschylus) ने न्याय की एक राजनीतिक विचार के स्थान पर धार्मिक विचार का स्थान प्रदान किया। किन्तु एसकीलस के बाद की दो शताब्दियों में ऐसे विचारक हुए जिन्होंने न्याय को मनुष्य के आधार के रूप में स्थापित करने का प्रयास किया। यद्यपि इन विचारकों को अपने विचारों को कार्यरूप में परिणत करने का अवसर नहीं मिला फिर भी इस दिशा में चिन्तन का क्रम चलता रहा। छठी और सातवीं शताब्दियों में प्रायः सभी राज्यों में सामाजिक और राजनीतिक उथल-पुथल हुए। इस समय के व्यक्तियों ने आवश्यकता के दिशानिर्देश में ही राजनीतिक चिन्तन करना सीखा। असन्तुष्ट अथवा निष्कासित व्यक्तियों द्वारा उपनिवेश स्थापित करने की प्रक्रिया अभी समाप्त नहीं हुई थी। सब

युग का शाही नगर अगली सन्धाश्मी के नगरों से सर्वथा भिन्न था यद्यपि यूनानी दोनों को 'पोलिस' की ही संज्ञा देते हैं। अत, कहा जा सकता है कि नगर राज्य के उदय के पूर्व की शताब्दियाँ यूनानी राजनीतिक दर्शन की दृष्टि से अधिक महत्त्व नहीं रखतीं। यह स्वीकार किया जाता है कि हमारे पास कोई भी ऐसी सूचना अथवा साधन नहीं है जिसके आधार पर हम इस युग की राजनीतिक विचारधारा के विकास का अध्ययन कर सकें। फिर भी नगर राज्य के युग के पूर्व के यूनानी इतिहास का अध्ययन करने का प्रयास करने के लिए हम एक विशेष कारण से बाध्य होते हैं। और वह कारण है यूनानियों की शिक्षा में होमर की कविताओं का विशिष्ट स्थान।

राजनीतिक प्रश्नों पर किसी भी व्यक्ति का चिंतन मुख्यतया तीन बातों द्वारा निर्धारित होता है—उसके प्रारम्भिक जीवन का लालन-पालन और वातावरण तत्कालीन राजनीतिक परिस्थिति और विगत इतिहास का उसका ज्ञान। जिन राजनीतिक विचारकों के विचारों का अध्ययन इस पुस्तक में किया गया है उनके बारे में अधिकांशतया उपरिलिखित तीनों बातों में से पहले के सम्बन्ध में अत्यल्प सूचना मिलती है यद्यपि हम इस बात का आभास मिल जाता है कि उनका लालन-पालन भिन्न भिन्न वातावरणों में हुआ था। उदाहरणार्थ, प्लेटो (Plato) और पोलीबियस (Polybius) के वातावरण के अन्तर के सम्बन्ध में सन्देह नहीं हो सकता। तत्कालीन परिस्थिति के बारे में जानने के लिए अधिक सुविधा है यद्यपि इस सम्बन्ध में भी इन परिस्थितियों के वास्तविक प्रभाव के बारे में किसी निश्चय पर पहुँचने के लिए हम अनुमान का ही सहारा लेना पड़ता है। इसके अतिरिक्त, हम यह भी जानते हैं कि कितने ही विचारकों ने अपने नगर के अतिरिक्त अन्य नगर राज्यों में व्याप्त तत्कालीन परिस्थितियों का समझने का प्रयास किया। सबसे प्रारम्भिक विचारकों के लिए तो इस प्रकार का विभिन्न नगर राज्यों के संविधानों का तुलनात्मक अध्ययन अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हुआ। अत संविधानों का निरीक्षण करने हेतु सोलन द्वारा की गयी यात्राएँ ऐसी न थीं जो असाधारण समझी जायँ। हेरोडोटस (Herodotus) और प्लेटो की यात्राएँ भी अपने में महत्त्वपूर्ण थीं। विभिन्न प्रकार की शासन-व्यवस्थाओं का तुलनात्मक अध्ययन करना राजनीतिक विचारकों की एक पिटी पिटायी पद्धति हो गयी थी। यूनानी राजनीतिक विचार को होमर से प्रारम्भ करने की आवश्यकता का अनुभव तो हम तब करते हैं जब हम विगत इतिहास के ज्ञान को राजनीतिक चिन्तन में निर्माणकारी प्रभाव के रूप में लगते है। ईसा पूर्व चौथी शताब्दी के सभी राजनीतिज्ञों के विचार भिन्न भिन्न मात्रा में एक शताब्दी पूर्व यूनान और फारस के मध्य हुए युद्धों के ज्ञान से प्रभावित हुए हैं। किन्तु विगत घटनाओं का वह प्रभाव जो होमर की कविताओं के माध्यम से पड़ा अधिक व्यापक और स्थायी रहा। इसके अतिरिक्त, चूँकि प्रारम्भिक और अपरिष्कृत

अधिक निर्माणकारी युगों में इस प्रकार का प्रभाव ग्रहण करने की सम्भावना अधिक रहती है इसलिए होमर का यह प्रभाव सर्वाधिक दृढ़ रहा। स्पार्टा में लाइकरगस (Lycurgus) तथा थुरी (Thurli) में प्रोटेगोरस (Protagoras) तक जितने बुद्धिमान् व्यक्ति नगरों के लिए विधि-व्यवस्था की रचना हेतु आमंत्रित किये गये सभी की शिक्षा में होमर की रचनाएँ ही मुख्य रूप से अध्ययन का विषय रही थीं। 'इलियड' (Iliad) और 'ओडसी' (Odessey) का अध्ययन उन्होंने केवल एतिहासिक तथ्यों की जानकारी प्राप्त करने के लिए ही नहीं किया वरन् नैतिक सिद्धान्तों के लिए और पूर्वकालीन महापुरुषों के जीवन में देखे पड़ने वाले उस आचार-व्यवहार के लिए भी जो वर्तमान के अच्छे व्यक्तियों के लिए आदर्श या मानक का काम दे सके। कालान्तर में कुछ लोगों में इसकी तीव्र प्रतिक्रिया हुई और उन्होंने वीरगाथा युग की अपर्याप्त नैतिक मान्यताओं का परित्याग कर दिया किन्तु इतिहास और पुराण का काफी प्रभाव अब भी बना रहा। होमर की रचनाओं ने यूनानियों को एक ऐसे समाज का ज्ञान कराया था जो उनके समकालीन समाज से भिन्न होते हुए भी पूर्णतया अपरिचित न था। इस समाज का वर्णन होमर ने प्राचीन पद्धति की काव्य प्रधान भाषा में किया। साथ ही पोलिस एसे नये शब्दों का प्रयोग भी किया। होमर की रचनाओं में वर्णित समाज का चित्र पूर्णतया सुसंगत और सुव्यवस्थित तो नहीं है, किन्तु उसमें एक ऊपरी सामञ्जस्य अथवा एक्य अवश्य मिलता है। यद्यपि तीक्ष्ण विश्लेषण करने पर यह सामञ्जस्य अथवा एक्य स्थिर नहीं रह पाता, फिर भी उन रचनाओं में यूनान के इतिहास के वीर गाथा काल की राजनीतिक स्थिति का चित्र अवश्य मिलता है। अतएव अब हम अगले अध्याय में होमर की रचनाओं के सम्बन्ध में ही विचार करेंगे।

विषय-सूची

ही है और सुव्यवस्था (इयूनामिया) के सर्वथा प्रतिकूल है। यूनानिया के अनुसार सुव्यवस्था वह दशा है जिसमे विधि और व्यवस्था का आदर किया जाता है।[1] आवश्यकता वीर और बली व्यक्तियो की नहीं थी, अपितु बुद्धिमान और समझ-बूझ वाले व्यक्तियो की था जो विधायकों के कर्तव्यों का पालन कर सकते और सविधानो का निर्माण करते। प्रचलित विधियो के वर्गीकरण और प्रकाशन की भी आवश्यकता थी, किन्तु इस माँग की पूर्ति सदैव नहीं हो सकी।

उन लेखको मे से जिन्होने सुव्यवस्था को अपनी कविताओ का विषय बनाया हमे केवल दो के बारे मे कुछ ज्ञान प्राप्त हो सका है और ये हैं टरटियस (Tyrtaeus) और सोलन (Solon)। टरटियस ७वी शताब्दी का कवि था। उसने अधिकतर शोकगीत लिखे हैं। उसकी कविताओ ने स्पार्टावासियो को मेमनियन शत्रुओ का साहस से सामना करने की प्रेरणा दी। इस युद्ध ने स्पार्टा को पुनर्व्यवस्थित करने मे सहायता दी। इस प्रक्रिया का कुछ आभास हम टरटियस की पुस्तक 'यूनोमिया' (Eunomia) के अवशिष्ट खण्डो से मिलता है। किन्तु स्पार्टा के इतिहास पर इनका प्रभाव तथा लाइकरगस से (Lycurgus), जिसे होमर स्पार्टावासियो को कुशासन से सुशासन की ओर लाने का श्रेय देता है। इनका सम्बन्ध अज्ञात ही है। तथापि युद्ध के लिए आह्वान करनेवाले सदर्भों मे दो अनुच्छेद ऐसे हैं जो राजनीतिक दर्शन की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं। प्रथम अनुच्छेद तो वह है जिसमे यह दावा किया गया है कि स्पार्टा के एक सविधान को डल्फी के देवता (Delphic Oracle) की स्वीकृति प्राप्त है।[2] इस सविधान मे सर्वोपरि स्थान राजाओ को दिया गया है, किन्तु उनकी सहायता के लिए वरिष्ठ जनो और साधारण जनता के प्रतिनिधियो की सभाओ की व्यवस्था है और उन लोगो का यह कर्तव्य है कि वे (अपने से श्रेष्ठ लोगो द्वारा)[3] निर्धारित विधि का पालन करेगे। लाइकरगस अथवा एफास (Ephors) का कोई उल्लेख नही मिलता किन्तु राजनीतिक दर्शन की दृष्टि से जो बात महत्वपूर्ण प्रतीत होती

---

१ अध्याय के अन्त मे दी गई टिप्पणी का अवलोकन कीजिए।

२ डेल्फी का अपालो (Delphic Apollo) धार्मिक क्षेत्र के अतिरिक्त अन्य मामलो मे राज्यो के लिए विधि नहीं निर्धारित करता था। हा, कभी कभी वह विधायको की नियुक्ति अवश्य करता था। किन्तु, यह स्पष्ट है कि देवता की स्वीकृति उपयोगी समझी जाती थी और प्राय इसे प्राप्त करने का प्रयत्न किया जाता था।

३ श्रेष्ठ की व्याख्या सन्दिग्ध है। कृपया H T wade Gery, Class, Ouart xxxviii १९४४, p ६ देखिए।

है वह यह है कि इसमें हम एक नये प्रकार के संविधान की रूप रेखा मिलती है अच्छी व्यवस्था स्थापित करने का एक नया ढंग मिलता है जिसमें राजतन्त्र अभिजाततन्त्र और लोकतन्त्र का मिश्रित रूप प्रस्तुत किया गया है। शासन का संचालन करने के लिए राजा अभिजात वर्ग और नागरिकों की सभा जो सम्भवत वृहद् नहीं था की व्यवस्था की गई है। दूसरा अनुच्छेद उन अनेक अनुच्छेदों में से एक है जिसमें कवि युद्धक्षेत्र में प्रदर्शित होने वाले साहस की प्रशंसा करता है और इसे सर्वोच्च गुण बताता है किन्तु साथ ही अभिजात वर्ग के उन गुणों का हृास बताता है जो उस समय के साथ गुण होते हुए भी देश के लिए विशेष उपयोगी न थे। सलबूक उसका तात्पर्य व्यक्तिगत सौन्दर्य अच्छे वंश में जन्म सम्पत्ति यहाँ तक कि प्रभावपूर्ण वक्तव्य देने की क्षमता भी युद्धस्थल पर प्रदर्शित साहस की तुलना में हेय मान गये हैं। प्राचीन आदर्शों को पोलिस के हितों की पूर्ति करने के अनुकूल बनाना आवश्यक था। अच्छी व्यवस्था अथवा किसी भी राष्ट्रीय हित की प्राप्ति की दृष्टि से सलबूक के सौन्दर्य को जनोफेस (Xenophanes) ने भी व्यर्थ बताया है।

टरटियस से एक या दो पीढ़ी बाद एथेन्स के सोलन (Solon) के व्यक्तित्व में कवि और विधायक दोनों के कर्तव्यों का समायोजन हुआ। सोलन के पूर्व ड्रेको (Draco) ने तत्कालीन नियमों और विधियों का वर्गीकरण करके तथा उसे लोगों के सम्मुख प्रस्तुत करके सुव्यवस्था (Eunomia) की खोज करने की दिशा में महत्वपूर्ण कार्य किया था। किन्तु बाद के एथेन्सवासियों ने अपनी स्वतन्त्रता के संस्थापक के रूप में सोलन को ही स्वीकार किया ड्रेको को नहीं। यह कहना कठिन है कि एथेन्स की राजनीतिक प्रगति और सुधारों के लिए जो श्रेय सोलन को दिया जाता है वह कहाँ तक उचित है किन्तु राजनीतिक दर्शन के इतिहास में सोलन को जो स्थान प्राप्त है उस पर इसका कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ता। राजनीतिक दर्शन के इतिहास में सोलन का महत्व अक्षुण्ण है और इसका आधार वे राजनीतिक सुधार नहीं हैं। जिनका वह प्रणेता माना जाता है। विधि-व्यवस्था से सन्तव अपेक्षित परिणाम नहीं प्राप्त होते। सोलन की मृत्यु के उपरान्त दो शताब्दियों से अधिक समय व्यतीत हो जाने के बाद जब अरिस्टाटल[1] ने सोलन के कार्यों की उन विशेषताओं की ओर लोगों का ध्यान आकृष्ट किया जो जनसाधारण के लिए अधिक हितकर थीं जैसे—व्यक्ति की प्रतिभूति पर ऋण न देना दूसरे व्यक्ति का न्यायालय में प्रतिनिधित्व करने का अधिकार तथा जनता द्वारा निर्वाचित न्यायालय में अपील करने का अधिकार इसके साथ ही उसने अपने पाठकों को सावधान भी कर

---

१ Ath Pol ix १

दिया कि वे इस भ्रम में न पड़ें कि इन विचारों के समस्त राजनीतिक परिणामों से सोलन अवगत था अथवा वह इनकी अपेक्षा करता था। एक शासक और दार्शनिक कवि के रूप में यूनानी इतिहास में सोलन विशिष्ट स्थान रखता है, किन्तु राजनीतिक दर्शन की दृष्टि से उसके महत्त्व का मूल्यांकन उसकी रचनाओं की ओर ध्यान देकर ही किया जा सकता है। उसके राजनीतिक सुधार अथवा प्लूटार्क (Plutarch) या किसी अन्य लेखक के विवरण इस कार्य में अधिक सहायक नहीं हो सकते। यद्यपि उसकी अधिकांश कविताओं की क्षति के लिए हम खेद प्रकट करना पड़ता है फिर भी उसकी जो रचनाएँ उपलब्ध हैं वे उसकी महत्ता को सिद्ध करने के लिए पर्याप्त हैं।

कवि और नीतिवादी के रूप में वह हीसिएड से प्रेरणा लेता है। दैवी-न्याय की धारणा को पुनः सम्मुख लाता है और इसे यूनामिया (Eunomia) अर्थात् सुव्यवस्था की धारणा से सम्बन्धित करता है। हीसिएड की भाँति वह भी यह विश्वास करता है कि न्यायप्रिय जियस हिंसा और अनैतिकता के लिए मनुष्यों को दण्ड देता है और उनके पाप कृत्यों के लिए उन्हें उत्तरदायी बनाता है। अच्छी व्यवस्था की स्थापना तभी हो सकती है जब सभी इस बात से सहमत हो जायें कि सच्चा ढंग न्याय का ढंग है, अव्यवस्था और अराजकता का नहीं। समाज में अराजकता और अव्यवस्था उत्पन्न करने वाले तत्वों के विरुद्ध सभी को संगठित होना चाहिए, चाहे ये तत्व समाज में प्रभावशाली व्यक्तियों में से हों अथवा साधारण व्यक्तियों में से। ये असामाजिक और अराजक तत्व हीसिएड के 'Works and Days' में उल्लिखित कीरादियाइ (अपने हाथ में विधि ग्रहण करने की प्रवृत्ति वाले व्यक्ति) नहीं हैं अपितु असन्तुष्ट व्यक्ति हैं जो शान्ति को ही समाप्त कर देना चाहते हैं। सोलन के समय तक राज्य के रूप में नगर का विकास हो चुका था और उस समय के नगर को राज्य की संज्ञा दी जा सकती है। ऐसे राज्य की प्राथमिक आवश्यकता यह थी कि सभी सदस्य इसमें आस्था रखें और इसकी आवश्यकता को स्वीकार करें। ऐसे लोग जो राज्य में आस्था नहीं रखते थे राज्य के शत्रु थे, राज्य द्वारा लगाये गये नियन्त्रणों को वे कष्टसाध्य समझते थे और येन-केन-प्रकारेण धन संचित करने की होड़ में लगे रहना पसन्द करते थे। सोलन ने अमीर और गरीब सभी को समान रूप से यह समझाने का प्रयास किया कि अव्यवस्था डुस्नोमिआ सभी का शत्रु है और सभी के लिए दण्डस्वरूप है, इसका परिणाम अनिवार्यतः सामाजिक एवं राजनीतिक जीवन का विघटन होता है और इसके परिणामस्वरूप समस्त जाति निरंकुश शासक के अधीन हो जाती है। संक्षेप में अव्यवस्था अमर्यादित लाभ कमाने का सुअवसर नहीं प्रदान करती, अपितु राष्ट्रीय सर्वनाश का आयोजन करती है। राज्य एक सार्वजनिक संस्था है। इसे सुस्थिर रखना सब के हित में है। किसी दल विशेष की ऐसी विजय भी जिसमें विरोधियों को बड़ी संख्या में देश

छाना पड अव्यवस्था की भाँति ही राष्ट्रीय सकट की अवस्था उत्पन्न करनी थी और तत्कालीन यूनान म एक दल की विजय के फलस्वरूप विरोधियो का प्राय राज्य के बाहर जाने के लिए बाध्य होना पडता था। किन्तु इस प्रकार की स्थिति से उत्पन्न होने वाले राष्ट्रीय सकट की सभावना को विजताओ का समझाने म सोलन को भी कठिनाई हुई। वास्तव म सारी राजनीतिक योग्यता से सम्पन्न होते हुए भी यूनानी इस स्पष्ट एव लाभदायक पाठ को आसानी से नही समझ सके । नगर राज्यो की विफलता के अनेक कारणो म से एक कारण राज्य और सत्तारूढ दल को तथा सार्वजनिक हित और दलगत लाभ को एक ही समझने की प्रवृत्ति भी थी। शासन के औचित्य का किञ्चित मात्र भी ध्यान न रखकर अर्थ-सचय को ही जीवन का एकमात्र उद्देश्य बना लेना भी एक एसा मूर्खतापूर्ण असामाजिक कार्य था जो बड से बड राज्य को भी दुर्बल कर देता था। अपन परिश्रम से ईमानदारी के साथ साधारण मात्रा म धनोपार्जन करने को तो प्रोत्साहन दिया जा सकता था । स्पष्टतया धनिक व्यवसायी वर्ग के उदय ने ही इस प्रकार के कथन को प्रेरित किया था। सोलन ने अनुभव किया कि इस वर्ग के उदय से एक नयी सामाजिक और राजनीतिक समस्या उत्पन्न हुई है। किन्तु सयम का सामान्य उपदेश देने के अतिरिक्त इस समस्या का समाधान करने का कोई विशिष्ट उपाय वह नही बताता है। सोलन की दृष्टि म समाज म केवल दो वर्ग थे—अभिजात वर्ग और साधारण जनता। साधारण जनता की माँगो को वह कुछ सीमा तक तो उचित समझता था, किन्तु दोनो वर्गों म समानता हो सकती है इसे वह स्वीकार नही करता था । निरकुश शासन से वह घृणा करता था इसकी सभावना मात्र से भयभीत रहता था। *आततायी की गुलामी* से स्वतन्त्रता ऋण से स्वतन्त्रता अर्थात् जमींदारो से स्वतन्त्रता को ही वह वास्तविक स्वतन्त्रता समझता था। फिर भी सघर्षरत दलो को बल द्वारा ही पृथक रखा जा सकता था। इसलिए हिंसा (बाइआ) और न्याय (डिकी) को हीसिएड की भाँति वह असमाधेय विरोधी तत्त्वो के रूप म नहीं देखता है अपितु अच्छी व्यवस्था स्थापित करने के लिए दोनो का सामञ्जस्य आवश्यक समझता है।

ई० पू० सातवी और छठी शताब्दियो के अन्य कवियो के सम्बन्ध म कोई उल्लेखनीय बात नही है। उनकी रचनाओ म नगर राज्यो के प्रति देश भक्ति की दृढ भावना और समकालीन उथल पुथल और सामाजिक असन्तोष का प्रतिबिम्ब मिलता है। इन कवियो की अधिकाश रचनाए तो नष्ट हो गयी है। कुछ आशिक खण्ड ही उपलब्ध हैं। केवल थियोजनिस (Theognis) के नाम से (जो छठी शताब्दी ई० पू० के अतिम चरणो म हुआ) लगभग १४०० शोक-गानो की पक्तिया सुरक्षित रह गई है। ये गानगीत की शैली पर लिखी गई हैं और यह सदिग्धपूर्ण ही है कि ये सभी थियोजनिस द्वारा ही लिखी गयी है। राजनीतिक दर्शन की दृष्टि से इनका कोई महत्व नही है। फिर

भी दो कारणो से इनका यहाँ पर उल्लेख आवश्यक प्रतीत होता है। एक तो यह कि इन पक्तियो मे राजनीतिक समस्याओ के प्रति एक निश्चित दृष्टिकोण मिलता है और दूसरा कारण यह है कि तत्कालीन सामाजिक और राजनीतिक परिवर्तनो को ये पक्तियाँ प्रतिबिम्बित करती हैं और इन परिवर्तनो का भविष्य के राजनीतिक चिंतन पर निश्चित रूप से प्रभाव पडा। इन पक्तियो मे श्रेष्ठता श्रेष्ठ परिवार मे जन्म और श्रेष्ठ लालन-पालन के सम्बन्ध को इस प्रकार विकसित किया गया है कि श्रेष्ठ का प्रयोग आसानी से समाज के उच्चतम वर्ग और अभिजात दल के लिए किया जा सकता है। किलामत साधारण जनता को निकृष्ट और अकिंचन कहा जा सकता है। ऐसा नहीं है कि इन शब्दो का प्रयोग करते समय थियोजनिस ने इनके नैतिक तात्पर्य की ओर ध्यान नहीं दिया। उसका तो दावा था (१८८) कि श्रेष्ठ जन ही न्याय के अधिकारी हैं। पतृकता के सिद्धान्त मे पिंडार (Pindar) की भी दृढ आस्था थी और वह भी थियोजनिस की ही भाँति अभिजात वर्ग का समर्थक था। थियोजनिस का यह निर्देश कि निम्न वर्गों से सम्पर्क न रखो, सदैव अच्छे व्यक्तियो के साथ उठो बैठो" (३१–३८) अतएव सदाचरण और राजनीतिक व्यवस्था दोनो को सुदृढ करने के उद्देश्य से दिया गया था। अन्यत्र भी (१०५) वह कहता है कि अकिंचन और निधनो के प्रति दया भाव दिखाना उसी प्रकार निरर्थक है जैसे समुद्र मे बीज बोना और फल की आशा करना। इस प्रकार की मनोवृत्ति के अन्य उदाहरण भी उद्धृत किए जा सकते हैं। यह कोई असाधारण मनोवृत्ति नहीं थी। न यह छठी शताब्दी तक ही सीमित थी। हमारे विषय की दृष्टि से इसका महत्व केवल नकारात्मक है क्योंकि, जैसा प्राय देखा गया है, शब्दो के भ्रान्त प्रयोग से स्पष्ट चिंतन मे बाधा पहुँचती है, राजनीतिक दर्शन की दृष्टि से थियोजनिस के प्रयोगो का भी यही परिणाम हुआ।

व्यापार के विस्तार, धातु की मुद्राओ के अधिकाधिक प्रयोग, दासो की संख्या मे वृद्धि और सम्पत्ति की चलिष्णुता ने ई० पू० की छठी शताब्दी मे सामाजिक एव आर्थिक क्रान्ति उत्पन्न की। थियोजनिस के नगर मगारा (Megara) पर इस क्रान्ति का जो प्रभाव पडा उसी ने इन कटु कविताओ की रचना के लिए कवि को उद्वेलित किया। उसके कितने सहयोगी वर्ग और परम्परा की ओर ध्यान न देकर इस नये धनिक वर्ग की कन्याओ से विवाह कर रहे थे और इस प्रकार 'अच्छे' और 'बुरे' के अन्तर को अस्पष्ट करते जा रहे थे। इस प्रकार के वैवाहिक सम्बन्धो को वह इस व्यवसायी मध्यम वर्ग के हाथ मे राजनीतिक सत्ता के हस्तान्तरण से भी अधिक गम्भीर समझता था और अपने साथियो के इस कार्य से अत्यधिक क्षुब्ध हुआ। जिस समय मेगारा के इस राजनीतिक और सामाजिक परिवर्तन पर थियोजनिस शोक प्रकट कर रहा था, समीप ही एथेन्स को पहले पिसिस्ट्रेटिड्स (Pisistratids) की निरकुशता

सहन करनी पड़ी और बाद में क्लाइस्थनीज (Cleisthenes) के नाम से नाम सुधारों को अपनाने के लिए बाध्य होना पड़ा। इन सुधारों के परिणामस्वरूप एथन्स में तो मध्यम वर्ग की शक्ति में वृद्धि हुई और प्राचीन काल में चले आने वाले धनिक वर्ग और नव धनिक वर्ग का अन्तर लुप्त होने लगा। भविष्य के राजनीतिक चिन्तन पर इन सभी घटनाओं का प्रभाव पड़ा। व्यावहारिक राजनीतिक सुधारक को वस्तुस्थिति की ओर ध्यान देना पड़ता है क्योंकि इसी के आधार पर वह यह निश्चय कर सकता है कि किस प्रकार के सुधार सम्भव हो सकते और उनके लिए कौन-सा कदम उठाना चाहिए। कभी कभी वस्तुस्थिति में अप्रत्याशित परिवर्तन हो जाता है। युद्ध और आपत्तियाँ धन के नये साधन की खोज जैसे माउंट लारियों (Mt Laurion) में प्राप्त चाँदी की खान नया आविष्कार जैसे धातु की मुद्राएँ आदि किसी पुरानी समस्या का समाधान करते हुए भी नयी समस्याएँ उत्पन्न कर सकते हैं।[1] निर्मित मुद्राओं की कल्पना ही सारी निरर्थकता को भयभीत कर देती थी। जिस समय सर्वप्रथम सामुद्रिक व्यापार प्रारम्भ हुआ हीसिएड घबरा गया था किन्तु निर्मित मुद्राएँ और सामुद्रिक व्यापार दोनों यूनानी जीवन के अभिन्न अंग बन गये। समकालीन व्यक्तियों के लिए घटित क्षेत्र में हुए परिवर्तनों के वास्तविक प्रभाव की समझना कठिन हो सकता है किन्तु दूसरी पीढ़ी के लोगों के लिए भौतिक स्थिति उतनी ही महत्वपूर्ण होती है जितना कि पूर्वजों से प्राप्त विचार।

यह प्रश्न किया जा सकता है कि क्या केवल कवियों और विचारकों ने ही राजनीतिक दर्शन विचारधारा के विकास में योग दिया? क्या स्वयं दर्शन इस सम्बन्ध में बिल्कुल चुप है? छठी शताब्दी में ही यूनान में वैज्ञानिक विचारधारा का प्रारम्भ हुआ और यह आशा की जा सकती है कि इसके फलस्वरूप राजनीतिक समस्याओं पर भी वैज्ञानिक ढंग से चिंतन हुआ होगा। किन्तु प्रारम्भिक दार्शनिकों के ब्रह्माण्ड सम्बन्धी सिद्धान्तों को वैज्ञानिक केवल इसलिए कहा जाता है कि प्राचीन पौराणिक कथाओं अथवा दैवी शक्ति पर वे आधारित नहीं हैं इसलिए नहीं कि उन्होंने विचार के किसी ऐसे ढंग को अपनाया जो दूसरे क्षेत्रों में भी प्रयुक्त किया जा सकता है। निश्चय ही यह कहा जा सकता है कि यूनानी शब्द (एर्की) जिसका अर्थ आदि अथवा मूलकारण (First Cause) होता है और जिसे जानने का प्रयास प्रारम्भ के वैज्ञानिकों ने किया। कालान्तर में अधिकार और राज-पद के लिए भी प्रयुक्त होने लगा। किन्तु एर्की एकाधिकार तथा इस प्रकार के अन्य शब्दों के अर्थ-परिवर्तन की प्रक्रिया कितनी ही

१ इस बात की सत्यता को प्लेटो ऐसे आदर्शवादी ने भी स्वीकार किया, Laws ७०९ A

रोचक क्यों न हो प्राकृतिक और राजनीतिक क्षेत्रों के सम्बन्ध पर यह कोई प्रकाश नहीं डालती। इसके विपरीत छठी शताब्दी के अंत में कम से कम दो ऐसे विचारक हुए जिन्होंने राजनीतिक जीवन की समस्याओं का अध्ययन किया। अतः उन्हें भी शास्त्र तथा अन्य मनीषियों और कवियों की श्रेणी में स्थान दिया जाता है जिन्होंने राजनीतिक दर्शन का विकास किया। ये हैं पाइथागोरस (Pythagoras) और हेराक्लाइटस (Heraclitus, Herakleitos)। यह अधिक महत्त्वपूर्ण नहीं है कि पाइथागोरस के राजनीतिक सिद्धान्त किस मात्रा में उसके गणित और सांघ्वनिकी (Harmonics) के सिद्धान्तों से प्रभावित हुए हैं। उसी प्रकार यह भी महत्त्वपूर्ण नहीं है कि किस मात्रा में हेराक्लाइटस की भौतिक शास्त्र ने उसके राजनीति सिद्धान्तों को प्रभावित किया है। वस्तुतः पाइथागोरस का समान्तर मध्यक (Arithmetical Mean) का सिद्धान्त और हेराक्लाइटस का चिरपरिवर्तन (Perpetual Flux) का सिद्धान्त किसी राजनीतिक सिद्धान्त अथवा वाद की पुष्टि भी नहीं करते।

पाइथागोरस का जन्म समास (Samos) में हुआ था और हेराक्लाइटस से वह आयु में बड़ा भी था। ई० पू० ५३० के लगभग जब उसके नगर की सत्ता आततायी पोली क्रटीज़ (Poly crates) के हाथ में चली गई तो उसने अपनी जन्म भूमि को छोड़कर दक्षिणी इटली और मिस्र की ओर प्रस्थान किया। हेराक्लाइटस, जिसे ठीक ही 'अज्ञात' (Obscure) का उपनाम दिया गया है इस घटना के लगभग २५ वर्ष उपरान्त युवावस्था को प्राप्त हुआ। इन दोनों के बारे में हमारा ज्ञान अल्प ही है। हेराक्लाइटस की रचनाओं के अनेक छोटे छोटे खण्ड उपलब्ध हैं। इनमें से राजनीतिक विचार की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण खण्डों को संयोजित करने का हमें भरसक प्रयत्न करना चाहिये। उसके जीवन के बारे में तो हमारा ज्ञान लगभग नहीं के बराबर है। पाइथागोरस की जीवनी के बारे में तो एक परम्परा ही मिलती है, किन्तु वह बहुत अधिक विश्वसनीय नहीं है। जहाँ तक उसकी रचनाओं का सम्बन्ध है उनका कोई भी खण्ड ऐसा नहीं मिलता जिसके बारे में हम निश्चयपूर्वक कह सकें कि यह पाइथागोरस की ही रचना है। केवल यही नहीं कि उसने बाद की पीढ़ी के लिए कोई लिखित रचनाएँ नहीं छोड़ीं, बल्कि, जैसा कि उसके जीवन के सम्बन्ध में प्रचलित कथाओं से ज्ञात होता है, अपने जीवन काल में भी वह कम ही बोलता था। उसके मुख से निकले हुए थोड़े से शब्द उसके शिष्यों के लिए अवलम्बन का कार्य करते थे किन्तु इन शब्दों को वे गोपनीय रखते थे। ऐसी दशा में पाइथागोरस के मौखिक कथन से भी उसके बाद की पीढ़ी वञ्चित रह गई। कई पीढ़ी बाद इटली के लोग जब किसी सिद्धान्त को पाइथागोरस से सम्बन्धित करना चाहते थे तो कोई अन्य प्रमाण न देकर केवल इतना कह देते कि यह स्वयं सिद्ध या गुरु का वाक्य है। प्राचीन काल में कुछ कविताएँ (Golden

verses) बहुत दिनों तक पाइथागोरस के नाम से चलती रही, यद्यपि वे सर्वथा क्षेपक रचनाएं थीं। इस प्रकार पाइथागोरस की प्रामाणिक रचनाओं के अभाव में यह सदा से एक पहेली हो रही है कि तथाकथित पाइथागोरसवाद किस मात्रा में स्वयं पाइथागोरस की देन है और किस मात्रा में बाद की पीढ़ी के उसके अनुयायियों और शिष्यों की। इन अनुयायियों और शिष्यों में सोक्रटीज़ का समकालीन फिलोलास (Philolaus) टरेंटम (Tarentum) का आर्कीटास जिससे प्लेटो मिला था विशेष उल्लेखनीय है। बाद का शताब्दियों में भी लोग पर्याप्त संख्या में पाइथागोरस के अनुयायी हुए। अरिस्टाटल प्राय पाइथागोरसवादियों अथवा उन लोगों का उल्लेख करता है जो अपने को पाइथागोरसवादी कहते थे। कुछ लोगों के नाम का उल्लेख भी उसने किया है। किन्तु स्वयं पाइथागोरस के बारे में वह कुछ नहीं कहता। ऐसी दशा में कोई आश्चर्य की बात नहीं कि पाइथागोरसवादी राजनीतिक सिद्धान्तों के प्रतिपादन के विभिन्न प्रयासों व परिणामों में विविधता और विरोधाभास दृष्टिगोचर हो।[१]

उसके जीवन के वृत्तान्त का वर्णन प्राय किया गया किन्तु उसकी मृत्यु के पर्याप्त समय बाद ही एरिस्टोक्सेमस (Aristoxemus)[२] के अनुसार पोलीक्रेटीज़ (Polycrates) के शासन को स्वतन्त्र व्यक्ति के लिए अनुपयुक्त और असहनीय पाकर वह बृहत्तर यूनान (Magna Graecia) के नये नगरों की ओर चला गया। यहां क्रोटन (Croton) नगर में उसे अपने राजनीतिक विचारों को व्यावहारिक रूप देने का अवसर मिला। यद्यपि उसके जीवन काल में ही उसका शासन समाप्त हो गया था फिर भी दक्षिणी इटली में पाइथागोरसवादियों का राजनीतिक प्रभाव उसकी मृत्यु के पर्याप्त समय बाद तक बना रहा। प्लेटो के समय में टरेंटम का शासन पाइथागोरसवादी आर्कीटीज़ के ही हाथों में था। अपनी असाधारण मानसिक एवं आध्यात्मिक शक्तियों के लिए पाइथागोरस यूनानी भाषा भाषी विश्व में पहले से ही विख्यात था। क्रोटन पहुंचकर उसे भारी संख्या में अनुयायी मिल गये। इन्हें उसने एक धार्मिक समुदाय के रूप में संगठित किया। इस समुदाय के सदस्य एक साथ रहते थे वैयक्तिक सम्पत्ति नहीं रखते थे और मिल जुल कर वस्तुओं का उपभोग करते थे। सम्भवत अपने गुरु के प्रति असीम आदर की भावना तथा उसकी

---

१ अध्याय के अन्त में की गई टिप्पणी देखिए।

२ टरेण्टम का निवासी और अरिस्टाटल का शिष्य, संगीत विषयक लेखक के रूप में लब्ध प्रतिष्ठ। पाइथागोरस की जीवनी तथा उसके कथन पर इसकी पुस्तक के कुछ उद्धरण और संकेत ही मिलते हैं। इसने जानबूझ कर पाइथागोरसवादियों को ऊंचा उठाने और प्लेटो के शिष्यों को नीचा दिखाने का प्रयास किया है।

नैतिकता, अंकगणित के क्षेत्र में उसकी असाधारण प्रतिमा तथा भोजन सम्बन्धी उसके नियमों के प्रति समान रूप से प्रगमर होने के कारण भी इस समुदाय के सदस्य एक दूसरे के निकट आ सके। यह भी सम्भव प्रतीत होता है कि पाइथागोरस की भांति वे भी आत्मा में विश्वास रखते थे और इसे अमर, अनश्वर और एक योनि से दूसरी योनि में परिभ्रमणशील मानते थे। इस प्रकार समान रूप से विश्वास और एक व्यक्ति के प्रति समान रूप में आदर की भावना ने इस समुदाय के संगठन में सहायता दी। किन्तु अभी तक यह नहीं ज्ञात हो सका है कि किन राजनीति के सिद्धान्तों ने उन्हें सर्वप्रथम संगठित होने के लिए प्रेरित किया। हाँ, इतना अवश्य निश्चित प्रतीत होता है कि ३०० श्रद्धालु अनुयायियों के इस समुदाय ने शीघ्र ही एक राजनीतिक समूह का रूप ही नहीं ग्रहण किया अपितु नगर की राज-सत्ता भी इसके हाथ आ गई। इस प्रकार श्रद्धालु अनुयायियों का यह समूह शासक दल बन गया। १५० वर्ष उपरान्त प्लेटो ने एक ऐसे आदर्श राज्य की कल्पना की जिसमें सर्वोच्च सत्ता इसी प्रकार के दार्शनिकों के समुदाय के हाथों में हो और उस समुदाय के सदस्य व्यक्तिगत सम्पत्ति से वञ्चित होकर केवल सामुदायिक सम्पत्ति का उपभोग करें। किन्तु, जहाँ तक ई० पू० ५२९ के शासन का सम्बन्ध है यह विवादास्पद है कि पाइथागोरस के इस दल ने तत्कालीन कृषि प्रधान क्रोटन में प्राचीन अभिजात वर्ग के भू-स्वामियों का समर्थन किया। जो उस समय ना शक्तिशाली थे अथवा जिन्होंने उस समय उत्तरोत्तर वृद्धयामुख व्यावसायिक सम्पत्ति से प्रभावित होकर मध्यम वर्गीय प्रभुत्व की स्थापना की। जो भी हो, प्रथम दशा में सत्ता कुछ व्यक्तियों के हाथ में रहीं, दूसरी में हाथ में नहीं ? और कम से कम उस समय तो धर्म, भोजन सम्बन्धी और गणित का भांति राजनीति की शिक्षा भी पाइथागोरस के अनुयायियों के विचार स्थापना में की जाती थी। इनका प्रभाव केवल क्रोटन तक ही नहीं सीमित रहा। पाइथागोरसवादी समुदायों के कार्यों का वर्णन करते हुए अरिस्टोक्सेनस (Aristoxenus) ने लिखा है कि इनके प्रभाव से अन्य नगर भी स्वतन्त्रता की भावना से अनुप्राणित हुए। अरिस्टोक्सेनस के इस कथन की सत्यता संदिग्ध हो सकती है। एक आख्यायिका के अनुसार लाक्री (Locri) के निवासी तो पाइथागोरस जैसे पटु और सनसनीदार व्यक्ति से किसी भी प्रकार का सम्पर्क नहीं रखना चाहते थे। उनको डर था कि वह उनके पूर्वजों के नियमों और रीति रिवाजों को उलट देगा। इस प्रसंग में पाइथागोरस ने क्या कहा होगा उसका विवरण तो नहीं मिलता, किन्तु यह अनुमान किया जा सकता है कि उसने लाक्री के निवासियों के इस निर्णय का समर्थन ही किया होगा, क्योंकि जैसाकि उसके चौथी शताब्दी के समर्थकों का कहना है पाइथागोरस का कहना था कि 'अपने पूर्वजों की आदतों और विधियों को दृढ़तापूर्वक अपनाये रहना चाहिए, चाहे वे दूसरों की अपेक्षा

कहीं अधिक बरी क्या न हो। वास्तव में ऐसा प्रतीत होता है कि स्वयं पाईथागोरस के राजनीतिक सिद्धांत उन सिद्धान्तों से सर्वथा भिन्न रहे होंगे जिन्हें अरिस्टॉक्सीनस (Atistoxenus) डाइकार्कस (Dicaerchus)तथा अन्य पाइथागोरस वादियों ने उसके नाम से चलाने का प्रयास किया। इन पाइथागोरसवादियों ने तो पाइथागोरस की राजनीति को शासक और शासितों के बीच सामञ्जस्य के आदर्श के रूप में प्रस्तुत किया है और सोफोक्लीज (Sophocles) के इस कथन को कि अराजकता से बढ़कर कोई दूसरी बुराई नहीं है पाइथागोरस के कथन के रूप में उद्धृत किया है।[1] जहाँ तक स्वयं पाइथागोरस का सम्बन्ध है सम्भवतः हम यह कह सकते हैं कि उसने यह सिद्ध कर लिया कि जाति अथवा सामाजिक स्थिति के स्थान पर समान ज्ञान एवं समान जीवन-पद्धति के सूत्र में बंधा बौद्धिक वर्ग भी कुछ समय तक सफलता पूर्वक शासनकार्य चला सकता है। किन्तु यह शासन भी अल्पकालीन हो रहा। ई० पू० ५०९ में इस समुदाय को आवास जलाकर राख कर दिया गया और इसके सदस्य या तो नष्ट हो गये या भाग गये। सम्भवतः किसी क्रुद्ध जन-समूह ने ही इस सनक समुदाय के शासन से ऊब कर यह विध्वंसात्मक कार्य किया। इस घटना के सम्बन्ध में भी अरिस्टॉक्सीनस दूसरा ही विवरण प्रस्तुत करता है। उसके अनुसार यह आक्रमण व्यक्तिगत बदले की भावना से हुआ और इसके पीछे एक ऐसा अप्रिय और निकृष्ट व्यक्ति निवासी था जो वहाँ के निवासियों पर पर्याप्त प्रभाव रखता था। पाइथागोरसवादी समुदाय में वह सम्मिलित होना चाहता था और जब इस समुदाय ने उसे भर्ती करने से अस्वीकार कर दिया तो वह रुष्ट हो गया। यह तो अरिस्टॉक्सीनस का विवरण है। किन्तु इसके बाद की शताब्दी में भी पाइथागोरसवादी समूह पर होने वाले आक्रमण का विवरण मिलता है।

प्राचीन दर्शन के इतिहास की अधिकतम क्षति उस पुस्तक के नष्ट हो जाने से पहुँची है जिसके बारे में कहा जाता है कि हेराक्लाइटस (Heraclitus) ने अपने जन्म के नगर एफीसस (Ephesus) में आरटमिस (Artemis) के मन्दिर में रखा था। हेराक्लाइटस के समकालीन उसकी रचनाओं को समझने में अपने को असमर्थ पाते थे और हेराक्लाइटस स्वयं न तो अपने विचारों को साधारण भाषा में समझाने में सक्षम था और न इस प्रकार के स्पष्टीकरण करने की इच्छा ही रखता था। उसकी रचनाओं के अनेक खण्ड सुरक्षित हैं किन्तु वे इतने छोटे और असम्बद्ध हैं कि उनका तात्पर्य समझना कठिन हो जाता है। उसकी पुस्तक ही सम्भवतः इसी प्रकार की

---

[1] Soph Antig ६७२ यह क्रियोन (Creon) द्वारा कहलाया गया है।

थी। ऐसी दशा में उसके विचारों को समझने में त्रुटि उसके समकालीन व्यक्ति कर सकते थे वह हम भी कर सकते हैं फिर भी बाद के युग में विचारकों ने जिनमें Stoic Christian और Hegelian सभी[1] आते हैं हेराक्लाइटस के विचारों से सहायता ली और उनके वक्र और विरोधाभासी कथनों का जो संग्रह आज हम उपलब्ध है उसका पर्याप्त अध्ययन हो चुका है। किन्तु हेराक्लाइटस की रचनाओं के उपलब्ध अंशों में प्रत्यक्ष राजनीतिक महत्त्व का अंश कम ही है यद्यपि यह कहा जाता है कि उसकी पुस्तक के तीन भागों में से एक भाग राजनीति पर ही था।

हेराक्लाइटस बुद्धिवादी और व्यक्तिवादी दोनों था। उसके अनुसार बुद्धि सभी मनुष्यों में समान रूप से पाई जाती है (११३), यह तो मानवीय उत्तराधिकार का एक अंश है किन्तु व्यवहार में इने गिने लोग ही इसका प्रयोग करते हैं। एक बुद्धिमान व्यक्ति दस हजार व्यक्तियों के बराबर है (४०) किन्तु यह वास्तव में बुद्धि होना चाहिए, रटा हुआ सूचना नहीं (४०)। बुद्धि स्वयं आत्मा में मनुष्य में ऊँचे और परे है कुछ लोग इसे ज्यूस (Zeus) कहते हैं (?) और यह भगवान बुद्धि को सीमित करता है (७७)। यद्यपि अपनी बुद्धि पर उसे गर्व और अहंकार था फिर भी वह कहता है (५०) मुझे नहीं लोगोस (Logos) को सुनो। बुद्धिमान व्यक्ति के पास जो शक्ति रहती है वह बुद्धि द्वारा प्रदान की जाती है किन्तु उसे यह स्वतन्त्रता नहीं है कि वह जो चाहे करे। उसे संयमित होना चाहिए, सुख के पीछे नहीं दौड़ना चाहिए क्योंकि सुख बुद्धि का सबसे बड़ा शत्रु है। यह मस्तिष्क को कमजोर भारी और स्थूल बनाता है शक्तिशाली और सूक्ष्म नहीं (११७–११८)। इसके अतिरिक्त, प्रत्येक व्यक्ति अपने कार्यों के प्रति उत्तरदायी है अपनी चारित्रिक न्यूनताओं के लिए वह ईश्वर को दोषी नहीं ठहरा सकता (११९)। इस प्रकार का नैतिक दृष्टिकोण अपनाकर यदि हेराक्लाइटस अपने सहनागरिकों को, जिन्होंने हरमोडोरस (Hermodorus) नामक एक असाधारण योग्यता और सार्वजनिक सेवा करनेवाले व्यक्ति को देश से निकाल दिया था बुरा भला कहता है और उन्हें घृणा की दृष्टि से देखता है तो कोई आश्चर्य की बात नहीं। इस प्रकार का व्यवहार हेराक्लाइटस को अत्यन्त मूर्खतापूर्ण प्रतीत हुआ। फिर भी, एथेन्स में किसी न किसी ढंग से इस प्रकार का निष्कासन और बहिष्कार प्राय होता रहा। समानता को आदर्श स्वीकार करनेवाले समाज में, विशेषकर छोटे राज्यों में, असाधारण योग्यता और प्रतिभासम्पन्न व्यक्तियों का

---

१ उदाहरणार्थ Ferdinand Lassalle जिसने १८५८ ई० में Die Philosophie Herakleitos des Dunklen प्रकाशित की। किन्तु 'स्कोटीनोस' की कई भिन्न और पृथक मूल्यांकन और व्याख्या की गई है।

समस्या एक वास्तविक समस्या रही है। अरिस्टाटल[1] ने इस समस्या पर विचार करना आवश्यक समझा। हेराक्लाइटस के दर्शन में विरोधी तत्वों के संघर्ष का सिद्धान्त (Strife between Opposites) राजनीतिक महत्त्व का हो सकता है किन्तु अभी तक इसके अर्थ और तात्पर्य का स्पष्टीकरण नहीं हो सका है। उसका कथन (५३) कि युद्ध सब का पिता है और सम्राट भी कुछ लोगों को यह देवता बना देता है तो कुछ लोगों को मनुष्य कुछ लोगों को दास बनाता है तो कुछ लोगों को स्वतन्त्रता प्रदान करता है निर्णायात्मक न होकर वर्णनात्मक प्रतीत होता है। किन्तु इतना तो निश्चित प्रतीत होता है कि वह संघर्ष और स्पर्धा को स्वस्थ, सही और न्यायोचित मानता था (८०)। इस प्रकार वह हीसिएड से भी एक कदम आगे जाता है। हीसिएड ने तो केवल स्पर्धा (Aris) को स्वीकृति प्रदान की थी। अनियन्त्रित प्रतिस्पर्धा और प्रतियोगिता को समाज के आधार के रूप में स्वीकार करने की यह धारणा राज्य व्यक्तियों के सम्बन्ध में हेराक्लाइटस के विचारों के अनुकूल है। किन्तु कोई भी राज्य अपने किसी भी नागरिक की विधि-संगत साधना के अतिरिक्त अन्य किसी ढंग से उन्नति के शिखर पर पहुँचने की अनुमति नहीं दे सकता। हेराक्लाइटस तो बुद्धि और संघर्ष की भाँति विधि को भी व्यापक और ईश्वरीय सिद्धान्त मानता था। मानव निर्मित विधि-व्यवस्था का पोषण इसी से होता है। पोलिस (नगर राज्य) के लिए विधि का वही महत्त्व है जो मनुष्य के लिए बुद्धि का (११४)। यहाँ तक कि सूर्य भी अपने निर्धारित मार्ग को नहीं त्याग सकता अन्यथा विधि के समर्थक एरीनीज (Erinyes) उसे भी अलग कर देंगे। (९४)। लोगों को चाहिए कि अपने नगर की विधि-व्यवस्था की सुरक्षा के लिए वे उसी प्रकार तत्पर रहें जिस प्रकार वे अपने नगर के प्राकार की रक्षा के लिए तत्पर रहते हैं (४४)। क्या एक व्यक्ति भी विधि निर्धारित कर सकता है और उस विधि की मान्यता हो जायगी? इस प्रश्न के प्रति हेराक्लाइटस का उत्तर होगा हाँ एक व्यक्ति के समुपदेश का पालन करना भी विधि नामाज (Nomos) है (३३)। किन्तु इस उत्तर के सम्बन्ध में सन्दर्भ में हम निश्चयपूर्वक नहीं कह सकते। यूनानियों के लिए यह भी एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न था। जब निरंकुशता के प्रति उनकी घृणा ने (प्रस्तावना और अगला अध्याय देखिए) अधिकांश लोगों को एक व्यक्ति के शासन को अवैध मानने के लिए बाध्य किया वहाँ एक व्यक्ति के शासन को सर्वथा अवैध ही नहीं माना जाता था। सोफोक्लीज (Sophocles) के एण्टीगोन (Antigone)[2] में जिसका उल्लेख किया जा चुका

---

१ Politics III १२८४ और १३०२b १८ और १३०८b १७ अध्याय ११ देखिए।

२ ६३९–६८० esp

है एक स्थल ऐसा है जहाँ इस बात पर बल दिया गया है कि यदि एक व्यक्ति को न्यायोचित अधिकार प्राप्त हैं, तो सभी मामलों में चाहे व साधारण हों अथवा असाधारण, उचित हों अथवा अनुचित उसकी आज्ञा का पालन होना चाहिए। इसके बाद की शताब्दी की एक काल्पनिक वार्ता[1] में तो निरंकुश शासक के सार्वजनिक कार्यों को भी विधि की श्रेणी में रखा गया है। किन्तु हेराक्लाइटस की दृष्टि से महत्वपूर्ण यह है कि बुद्धि और स्पर्धा के साथ विधि भी उन तीन व्यापक सिद्धान्तों में आ जाता है जिनके अनुकूल ही 'पोलिस' की रचना होनी चाहिए। 'किसी एक व्यक्ति के समुपदेश का पालन' करने का स्वीकृति प्रदान करने का तात्पर्य यह नहीं है कि हेराक्लाइटस राजतन्त्र का समर्थन करता है अथवा इस विषय पर अपना मत व्यक्त करता है।

अन्य टिप्पणियां एवं प्रसंग निर्देश

अध्याय—२

HESIOD, Works and Days १७४ २८५, Theogony ७९-९७, ९०२, Tyrtaeus, Fragments ३ and ९, Solon Frr १, ३, ५, ८, १०, १६, २३, २४ and Xenophanes Fr २ as in Diehl Anthol Lyr 1 Theognis, क्रमश: पंक्तियों के अर्थ की ओर संकेत किया गया है।

Pythagoras, Fragments of Aristoxenus ed F Wehrli (१९४४) nos १६, १७, १८, ३३, ३४, ३५ पाइथागोरस के राजनीतिक सिद्धान्तों की विविध व्याख्याओं के लिए E L Minar की Early Pythagorean politics (१९४२), A Delatte की Essai sur la politique pythagoricienne (१९२२), और G Thomson की Aeschylus and Athens (१९४१) पृष्ठ २१३ देखिए। Heraclitus, पुस्तक में दिए गये सन्दर्भ Diels Kranz Vorsokratiker ५१ से हैं किन्तु किसी प्रकार की राजनीतिक व्याख्या प्रस्तुत करने का प्रयास बहुत खतरनाक है। Gregory Vlastos के लेख 'Equality and Justice in Early Greek Cosmologies', (Class Philol XLII, १९४७) में इस अध्याय में प्रस्तुत दृष्टिकोण का सामान्य समर्थन मिलता है।

---

१ Xenophon, Memorab १ २, ४३, जहां pericles के मुंह में ये शब्द रखे जाते हैं।

और सलामीस (Salamis) के युद्ध-स्थलों पर फारस की बहुसंख्यक और शक्तिशाली सेना का जिस साहस और सफलता से सामना किया उससे यह सिद्ध हो गया कि एथेन्स के नगर राज्य की स्वतन्त्र संस्थाएँ किसी भी अन्य राजनीतिक संगठन की अपेक्षा श्रेष्ठतर हैं। इससे पहले की पीढ़ी ने आततायी हिप्पियास (Hippias) के निरंकुश शासन को समाप्त किया था। एस्किलस (Aeschylus) की इस पीढ़ी ने फारस के आक्रमण का सफल प्रतिरोध करके समस्त यूनान की स्वतन्त्रता की रक्षा की। स्मरणीय है कि मैरथन के युद्ध में स्वयं एस्किलस ने भी भाग लिया था। आत्माभिमान, गम्भीर चिंतन तथा भविष्य में विश्वास इस युग की मुख्य विशेषताएँ हैं। स्वतन्त्रता प्राप्ति से उत्पन्न भावना का सर्वश्रेष्ठ चित्रण एस्किलस के नाटक The Persians में मिलता है। इस नाटक को एस्किलस ने ई० पू० ४७२ में प्रस्तुत किया था। यह सच है कि कवि और नाटककार के अतिरिक्त एक विचारक के रूप में एस्किलस को जो ख्याति मिली है उसका आधार उसके राजनीतिक विचार नहीं अपितु वह धर्मशास्त्र है जिसका उसने प्रतिपादन किया। जहाँ तक उसके राजनीतिक विचारों का सम्बन्ध है वे 'डाइक' के बारे में एक कवि की कल्पना इस विश्वास पर केन्द्रित है कि 'ज़ियूस' अपराधों को दण्ड देंगे और सज्जनों की रक्षा करेंगे। किन्तु Persae में एस्किलस ने जो विचार व्यक्त किये हैं वह उस समय के समस्त यूनानियों ने प्रतिध्वनित किया। इन शब्दों को कवि ने सलामीस में एकत्रित यूनानी जलसेना के नेताओं से कहलाया है। वे कहते हैं 'आओ हेलास (Hellas) के पुत्रो अपनी जन्मभूमि को मुक्त करो। अपने बच्चों अपनी पत्नियों, अपने पूर्वजों के देवालयों और समाधियों को भी मुक्त करो। हम अपने सर्वस्व के लिए लड़ रहे हैं।' जो वास्तव में यूनानियों को इस विजय के परिणामस्वरूप प्राप्त हुए और इन्हीं को वे अपने लिए सबसे बहुमूल्य समझते थे। फारसवालों की भाँति वे ऐसी व्यवस्था में रहना नहीं पसन्द करते थे जहाँ राजा और प्रजा का सम्बन्ध स्वामी और दास के सम्बन्ध के समान हो। वे तो ऐसे देश में अबाध जीवन व्यतीत करने का अवसर चाहते थे जिसे वे अपना समझते हों, जहाँ उनके स्वजन रहते हों, उनके देवता हों और उनके पूर्वजों की समाधियाँ हों और जहाँ वे वैयक्तिक स्वतन्त्रता का अनुभव कर सकें। वे एक ऐसी व्यवस्था में रहना चाहते थे जो उनकी देखभाल कर सके और सार्वजनिक कल्याण की ओर ध्यान दे सके।

फारस से उत्पन्न हुए संकट ने प्रथम स्पार्टा तथा अन्य यूनानी राज्यों को परस्पर सहयोग और एकता के लिए बाध्य किया। किन्तु कुछ लोग ऐसे भी थे जिन्होंने इस आक्रमण को स्वतन्त्र एवं स्वाधीन नगर राज्यों के अस्तित्व के लिए खतरे के रूप

मे नही देखा अथवा यदि इस खतरे को समझा भी तो उसकी परवाह नही की। बहुत से लोग एसे भी थे जो एसे राज्य की कल्पना भी नहीं पसन्द करते थे जिसमे परम्परागत विशेषाधिकारो की उपेक्षा करके सभी को समान रूप से न्याय का अधिकार प्राप्त हो। थीब्ज (Thebes) मे इस प्रकार की भावना अधिक तीव्र थी। वहाँ के लोगो ने फारस के विरुद्ध युद्ध मे भाग भी नही लिया। इस असहयोग और देशद्रोह का भूलने का अवसर थीब्ज के निवासियो को नही मिला। उनके शत्रु सदैव उन्हे इस घटना का स्मरण दिलाते रहे। फारस की सेना की अन्तिम पराजय के लगभग अर्द्ध शती पश्चात् प्लटिया (Plataea) मे, जहाँ यह युद्ध हुआ था थीब्ज निवासी अपने अग्रजो के इस कार्य को न्याय सगत सिद्ध करने के लिए वही परम्परागत तर्क प्रस्तुत करते हैं जो इस युद्ध के समय के थीब्ज निवासियो ने युद्ध मे भाग न लेने के अपने निर्णय के समर्थन मे प्रस्तुत किया था। जैसाकि थुसाडाइडोज (Thucydides) के वर्णन से ज्ञात होता है, थीब्ज निवासी अपने पक्ष के समर्थन मे यह कहते हैं कि आक्रमणकारी के सम्मुख समर्पण करने के लिए अपराधी वे नही हैं, क्योकि उनके यहाँ उचित स्वतन्त्र शासन नही था केवल एक शक्तिशाली गुट का आधिपत्य था। स्वीकृत अर्थ मे इसे अभिजात-तन्त्र भी नही कहा जा सकता था आइसोनोमिया की बात तो दूर रही। यह एक एसी व्यवस्था थी जिसमे सभी लोग अपने अधिकारो से सर्वथा वञ्चित थे। इस प्रकार वहाँ के लोग सविधान और विधि-व्यवस्था से वञ्चित जीवन व्यतीत कर रहे थे। उनका कहना था कि फारस के युद्ध की समाप्ति के बाद ही उनका नगर वास्तव मे अपने घर का स्वामी हुआ और उनके यहाँ विधि-व्यवस्था की स्थापना हुई। फारस के विरुद्ध युद्ध मे भाग न लेने के समर्थन मे दिया गया थीब्ज वालो का यह तर्क सगत हो अथवा असगत, किन्तु शिक्षाप्रद अवश्य है। इस तर्क मे हमे एसकील्स द्वारा प्रस्तुत चित्र का दूसरा पक्ष देखने को मिलता है और यूनानी राजनीतिक विचारधारा मे सविधान की धारणा के बदले बढते हुए महत्त्व का दिग्दर्शन होता है। अब लोग एसे सविधान की सकल्पना करने लग गये थे जो विधि-व्यवस्था पर आधारित हो, बल्कि यू कहना चाहिए कि वह विधि-व्यवस्था ही हो। इसके बाद तो यूनान के राजनीतिक दार्शनिको का मुख्य कर्त्तव्य सा हो गया कि वे पोलिस के लिए उपयुक्त सभी सभाव्य सविधानो का विश्लेषण, सश्लेषण और वर्गीकरण करे तथा विभिन्न प्रकार के आदर्श काल्पनिक सविधानो की रचना करे। प्लेटो की दो महान राजनीतिक कृतियो के शीर्षक हैं—गणतन्त्र है। 'The Republic' और विधि विधान 'The Laws' है।

इस प्रकार फारस के विरुद्ध युद्ध मे विजय प्राप्त करने का सबसे बहुमूल्य उपहार जो यूनानियो को मिला वह था अपने लिए स्वय विधि निर्माण करने का अधिकार

और अपने नगर को संविधान प्रदान करने का अवसर। यदि हम नगर की विधि व्यवस्था या नियमों को इंग्लैण्ड के रूप में न स्वतंत्र अधिकार-पत्र (चार्टर) के रूप में देखें और यह भी एक ऐसा अधिकार-पत्र के रूप में जिसे किसी वरिष्ठ अधिकारी ने नहीं प्रदान किया है अपितु नागरिकों ने अपनी चारता से स्वयं प्राप्त किया है तो हम आसानी से उस उत्साह को आन्तरिक रूप से अनुभव कर सकेंगे जो संविधान प्राप्त करने के विचार मात्र से यूनानियों में उत्पन्न हो जाता था। कारण यह था कि नगर की विधि-व्यवस्था प्रत्येक नागरिक की स्वतन्त्रता के अधिकार पत्र के समान थी जो आततायी शासक अथवा विशेषाधिकारी वर्ग की नृशंसता और उत्पीड़न से उसकी रक्षा करती थी और भविष्य में उसकी स्वतन्त्रता को सुरक्षित रखती थी।[1] प्रत्येक नगर की विधि-व्यवस्था उसकी सुरक्षा व्यवस्था का उतना ही महत्त्वपूर्ण अंग मानी जाती थी जितना कि नगर की प्राचीरें। हेराक्लाइटस के पुराने कथन (४४) की ही भाँति जब फोसीलाइडीज (Phocylides) का यह कथन प्रचलित हो गया था कि ऊँची चट्टान पर स्थित एक छोटा और सुव्यवस्थित नगर निनेवा (Nineveh) की निरर्थक अव्यवस्था से कहीं अधिक अच्छा है। ऐसी दशा में यह स्वाभाविक था कि संविधान में परिवर्तन और संशोधन के प्रति लोग सशंक हों। उन्हें डर था कि यदि परिवर्तन महत्त्वपूर्ण हुए तो नगर और साथ-साथ उसके निवासियों के सम्पूर्ण अधिकार-पत्र को भी बदल सकते हैं। यदि किसी नगर के संविधान को अभिजात तन्त्रात्मक बना दिया जाय तो उसके नागरिकों के स्वभाव में भी उसी प्रकार का परिवर्तन हो जायगा। किसी व्यक्ति के चरित्र के सम्बन्ध में अभिजात तन्त्रात्मक शब्द का प्रयोग यूनानियों के लिए असाधारण नहीं प्रतीत होता था। अस्थिर एवं सुख की लालसा में जीवन व्यतीत करनेवाले व्यक्तियों के चरित्र का वर्णन करने के लिए प्लेटो ने लोकतन्त्रवादी (Democratic) और समानतावादी (Isonomik) शब्दों का प्रयोग किया है। यूनानियों का यह विश्वास था कि एक विशिष्ट प्रकार के शासन के अन्तर्गत रहनेवाला व्यक्ति दूसरे प्रकार के शासन के अन्तर्गत रहनेवाले व्यक्ति से भिन्न होगा। जब तक यूनान में स्वतन्त्र संस्थाएं जीवित रहीं यह विश्वास भी व्याप्त रहा। आइसोक्रेटीज (Isocrates) संविधान को सम्पूर्ण नगर की आत्मा (Psyche) कहता है, अरिस्टाटल (Aristotle) इसे राज्य का जीवन कहता है, डिमास्थनीस

१ इसका यह अर्थ नहीं कि यूनानी आततायी शासकों के शासन-काल में विधि का सर्वथा अभाव था, कई आततायी शासकों ने वैधानिक ढंग से शासन करने का प्रयास किया।

(Demosthenes) का कहना है कि नगर की विधि-व्यवस्था से ही उसके चरित्र का आभास मिलता है। इस प्रकार यह धारणा कि शासन का स्वरूप, यदि सार्वजनिक सेवाओं की व्यवस्था सुचारु रूप से चल रही है, अपेक्षाकृत कम महत्वपूर्ण है, यूनानियों के लिए पूर्णतया निरर्थक प्रतीत होता। ठीक उसी प्रकार जैसे प्लेटो का (Isonomic Kind of man) (समान अधिकार वाला व्यक्ति) निरर्थक प्रतीत होता है। यूनानी व्यक्ति के लिए यह एक महत्त्वपूर्ण बात थी कि वह लोकतन्त्रात्मक व्यवस्था में रहता है अथवा अभिजात तन्त्रात्मक व्यवस्था में। एक गलत प्रकार के राज्य में उसका जीवन व्यर्थ ही नहीं, हेय और दुखपूर्ण भी होगा।

ऐसी दशा में यह समझने में कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए कि यूनानी राजनीतिक दर्शन में संविधान के श्रेष्ठतम स्वरूप की खोज करने पर इतना जोर क्यों दिया गया है। संविधान का सर्वश्रेष्ठ रूप क्या है? यह एक ऐसा प्रश्न था जो पर्याप्त समय तक यूनानी राजनीतिक दर्शन का प्रधान विषय बना रहा। इस विषय पर सबसे प्राचीन विचार विमर्श[1] जो हमें उपलब्ध हो सका है वह हेरोडोटस का इतिहास (Histories of Herodotus) की तृतीय पुस्तक (लगभग ४८५-४२५ ई० पू०) में मिलता है। यूनान के अधिकांश दार्शनिक साहित्य की भाँति यह भी संवाद की आख्या के रूप में है। प्लेटो के संवादों की भाँति यह प्रश्नोत्तर शैली में नहीं है। यह प्रोटेगोरस की पद्धति पर है जिसमें एक मत के पक्ष और विपक्ष में क्रमशः विभिन्न कथन प्रस्तुत किये जाते हैं। ई० पू० ५२२ में मजियन (Magian) शासकों से फारस को मुक्त कराने के बाद वहाँ के नेता आपस में यह विचार करते हैं कि फारस को अब कौन सी शासन प्रणाली अपनानी चाहिए। हेरोडोटस ने इस घटना को ऐतिहासिक रूप देने का प्रयास किया है। यह सम्भव हो सकता है कि इस प्रकार का विचार विमर्श हुआ हो। किन्तु हेरोडोटस द्वारा प्रस्तुत विवरण का अधिकांश भाग ५२२ ई० पू० में फारस के सामन्तों द्वारा व्यक्त विचारों की आख्या न होकर लगभग ७० वर्ष बाद के पाँचवीं शताब्दी के यूनानी दार्शनिकों की पद्धति पर लिखा हुआ एक संवाद है।

प्रथम वक्ता ओटेन्स (Otanes) है। वह फारस के राजतन्त्र के उन्मूलन का प्रस्ताव रखता है। इसके समर्थन में वह यह कहता है कि कम्बीसस (Cambyses) और मजियन (Magian) शासनकाल में यह प्रणाली जनता के लिए निकृष्ट और दुखदायी सिद्ध हो चुकी है। सिद्धान्त भी इस शासन के विरुद्ध दो आपत्तियाँ हैं १ एक शासक मनमानी कर सकता है और किसी के प्रति

---

१ यदि हम Hippodamus को न गिनें, पृ० ६३ देखिए।

उत्तरदायी नहीं होता तथा २ स्वभावत वह कितना ही अच्छा क्यों न हो विभिन्न वस्तुओं के प्रति उसका दृष्टिकोण सामान्य व्यक्ति से भिन्न होगा। एक विशेष दृष्टिकोण विकसित करने के लिए उसे बाध्य होना पड़ता है। उसका चारित्रिक पतन दो प्रकार से होता है। एक ओर तो सम्पत्ति और शक्ति का बाहुल्य उसे घमण्डी और अशिष्ट बना देता है दूसरी ओर अपने निकट वालों के प्रति वह ईर्ष्यालु और शंकालु हो जाता है। ऐसी स्थिति में वह निष्प्रयोजन और नृशंस कार्य करने लगता है। यदि लोग इस प्रकार के कार्यों का समर्थन नहीं करते तो वह क्रुद्ध और कुपित होता है और यदि लोग इन कार्यों की प्रशंसा करते हैं तो वह उन्हें झूठा और बेईमान समझता है। श्रेष्ठ चरित्र और ईमान वाले व्यक्तियों से वह अत्यधिक घृणा करता है तथा उनसे भयभीत रहता है। सब से बुरी बात तो यह है कि वह परम्परागत प्रणालियों की अवहेलना करता है स्त्रियों के साथ दुर्व्यवहार करता है और लोगों को न्यायालय के बिना मौत के घाट उतार देता है। ओटेन्स राजतन्त्र के स्थान पर राज्य के समस्त वयस्क पुरुष नागरिकों को सर्वोच्च सत्ता का अधिकारी बनाने का प्रस्ताव प्रस्तुत करता है। इस प्रकार की व्यवस्था का लक्षण 'प्रिय शब्द समानता' है। शासन के सचालन के लिए लाटरी द्वारा व्यक्तियों का चुनाव होता है। किसी भी पद पर नियुक्त व्यक्ति को जनता के सम्मुख अपने कार्यों का लेखा-जोखा देना पड़ता है। इसी प्रकार राज्य के अन्य प्रस्तावों पर भी जनता को विचार करने तथा अपनी सत्ता का सुन्दर प्रदर्शन का अवसर मिलता है। यूनानी दृष्टिकोण से आततायी शासक की स्थिति का विश्लेषण और मूल्यांकन करने की दृष्टि से किए गये अनेक प्रयासों में यह प्रथम प्रयास है। यह एक ऐसा कार्य था जिसमें वर्जित कार्य के सभी आकर्षण विद्यमान थे किन्तु जब तक आततायी शासन की स्थापना की सम्भावना बनी रही इस विषय का व्यावहारिक महत्त्व भी बना रहा है। ओटेन्स की इस वार्ता में कुछ टिप्पणियाँ ऐसी भी हैं जो लोकतन्त्र से सम्बन्धित हैं। इस अवसर पर 'लोकतन्त्र' (डेमोक्रेटिया) शब्द का प्रयोग तो नहीं किया जाता यद्यपि हेरोडोटस इस शब्द से परिचित था (VI ४०) किन्तु राजतन्त्र के स्थान पर जिस शासन का समर्थन किया गया है उसमें एथेन्स के लोकतन्त्र के सभी परम्परागत लक्षण मिलते हैं जैसे—समानता[1] निर्वाचन में लाटरी का प्रयोग अवधि समाप्त होने पर पदाधिकारियों के कार्यों का लेखा जोखा और जनता के न्यायों में सर्वोच्च सत्ता।

दूसरा वक्ता मगबीजस (Megabyzus) है। आततायी शासन

---

१ आइसोनोमिया, आइसोक्रेटिया आइसागोरिया और आइसोटोलिया इसके विभिन्न पक्ष हैं।

वे दोषों के सम्बन्ध में तो वह ओटेनस से सहमत है किन्तु जनता के शासन को भी वह 'hybris (अव्यवस्था) से सर्वथा मुक्त नहीं समझता। उसका कहना है कि आततायी शासक कम से कम यह तो जानता है कि वह क्या कर रहा है, किन्तु ज्ञान और शिक्षा से वञ्चित जनसमूह को तो इसका भी पता नहीं रहता। ऐसी स्थिति में वह कुछ व्यक्तियों के शासन (अभिजात तन्त्र) का समर्थन करता है। इसके पक्ष में जो तर्क वह प्रस्तुत करता है वे हैं प्रथम, इस विवाद में भाग लेने वाले फारस के तीनों सामन्तों को इस प्रकार की व्यवस्था में उच्च पद मिल सकेंगे। सिद्धान्त की दृष्टि में यह तर्क सर्वथा असंगत है। द्वितीय केवल ज्ञान और शिक्षा से युक्त व्यक्ति ही शासन करने के योग्य होते हैं। उसका कहना है कि यह तर्कसंगत है कि श्रेष्ठ व्यक्तियों से श्रेष्ठ परामर्श ही प्राप्त होगा।' जैसा कि हम अभी आगे चल कर देखेंगे। प्रोटेगोरस के अनुसार इस तर्क का अभिप्राय यह था कि अच्छी शिक्षा की व्यवस्था की जाय। किन्तु इस समय तो इसका सर्वाधिक प्रयोग अभिजात-तन्त्र के समर्थन के लिए ही किया गया यद्यपि, जैसा कि सॉक्रेटीज (Socrates) ने कहा है जब तक सर्वश्रेष्ठ को अर्थ स्पष्ट न किया जाय यह तर्क व्यर्थ है। किन्तु, जहाँ तक इस तर्क का प्रश्न है इसका आधार यह विचार है कि शासन का उद्देश्य अच्छा परामर्श (यूबोलिया) देना है। अभिजात तन्त्र के समर्थन में प्रस्तुत किये जाने वाले 'यूनॉसिमिया और 'यूनामिया' के पुराने नारों का स्थान अब 'यूबोलिया' ने ले लिया। वैसे संविधान की दृष्टि से यह शब्द स्वयं अपने में कोई वैधानिक महत्त्व नहीं रखता। सॉफोक्लीज के 'एन्टीगोन' (Antigone) (लगभग ४४० ई० पू०) में एक मात्र शासक क्रियान (Creon) इस शासन को एकमात्र पथ प्रदर्शक सिद्धान्त मानता है और प्रोटेगोरस का यह दावा था कि वह इसी की शिक्षा देता था।

जहाँ तक फारस के इतिहास का प्रश्न है इन प्रस्तावों में से किसी को भी अंगीकार नहीं किया गया और डेरियस (Darius) के आधिपत्य में फारस का राजतन्त्र पुनः स्थापित हुआ। इस संवाद का तृतीय वक्ता स्वयं डेरियस है। स्पष्ट शब्दों में वह आततायिता के विरुद्ध लगाये गये 'अव्यवस्था' के दोष का उत्तर नहीं देता। यह एक ऐसा आरोप था जिसे मगवीजस ने लोकतन्त्र पर भी लगाया था और बाद के कई लोगों ने भी लोकतन्त्र के इस दोष की ओर संकेत किया। किन्तु डेरियस यह भली भाँति जानता था कि आततायिता और अव्यवस्था किसी भी प्रकार के शासन के दोष हो सकते हैं। अपने वक्तव्य के प्राक्कथन में वह स्पष्ट कर देता है कि तीनों प्रकार के शासन-लोकतन्त्र, अभिजाततन्त्र और राजतन्त्र के गुण-दोष पर विचार करते समय हम इनके श्रेष्ठतम रूप पर ही ध्यान रखना चाहिए। प्लेटो के समय में[1] यूनानी

१ अध्याय ९ देखिए।

राजनीतिक दर्शन में शासन के जिन ६ स्वरूपों (तीन अच्छे और तीन बुरे) का बराबर उल्लेख होता रहा है—उनका पूर्वाभास हम डरियस के इस कथन में मिलता है। साथ ही इस संवाद में डरियस जिस निष्कर्ष पर पहुँचता है उसे प्लेटो और अरिस्टोटल भी अपने सिद्धान्तों की रक्षा करते हुए स्वीकार करते। निष्कर्ष यह है कि एक सर्वश्रेष्ठ व्यक्ति द्वारा शासन ही सर्वश्रेष्ठ शासन है। किन्तु इस निष्कर्ष के पक्ष में प्रस्तुत तर्क उस समय की परिस्थितियों और आनन्दायी शासन के व्यावहारिक अनुभव पर आधारित हैं। जब निरंकुश शासक असन्तुष्ट व्यक्तियों (इस्सनाज—यह शासन का नाम है) से जवाबित प्रकार के बिना छुटकारा पा सकता है। शासकों पर कठोर नियन्त्रण रख सकता है तथा तो व सतर्क के लिए परस्पर झगड़ते रहेंगे और गृहयुद्ध की स्थिति उत्पन्न हो जायगी। इसे समाप्त करने के लिए तथा व्यवस्था पुनः स्थापित करने के लिए एक शक्तिशाली व्यक्ति के शासन की आवश्यकता पड़ेगी। इस प्रकार राजतन्त्र अवश्यम्भावी हो जाता है। डरियस के इस तर्क में अवश्यम्भाविता ही राजतन्त्र की सर्वश्रेष्ठता प्रमाणित करती है। आज के युग में भी इसी ढंग से इतिहास की व्याख्या प्रस्तुत करने का प्रयास किया जा चुका है। इसी पद्धति का प्रयोग डरियस ने राजतन्त्र की अमन्तोषजनक सिद्ध करने के लिए भी किया है। उसका कहना है कि अल्पतन्त्र या जनतन्त्र में शासन का ह्रास हो जाता है क्योंकि शासन-सूत्र निकृष्ट श्रेणी के व्यक्तियों के हाथ में आ जाता है। इसका परिणाम यह होता है कि पुनः एक प्रथम श्रेणी का व्यक्ति जनता का समर्थन प्राप्त कर लेने के बाद शासन-सूत्र अपने हाथ में ले लेता है और अपना एकाधिपत्य स्थापित करता है। इस प्रकार ऐतिहासिक व्यवस्था के अनुभव के आधार पर भी राजतन्त्र को ही शासन के सर्वोत्तम प्रकार के रूप में सिद्ध किया गया है। फारसवासियों के लिए तो यह विशेष रूप से सर्वोच्चत्तम बनाया गया है क्योंकि उनकी परम्परा राजतन्त्रीय थी और यह एक उत्तम सिद्धान्त है कि जब तक पूर्वजों की पद्धतियाँ सुचारु रूप से और सन्तोषजनक ढंग से काम दे रही हैं तब तक उनको उन्मूलन न किया जाय।

इस प्रकार डरियस के वक्तव्य के बाद यह सम्वाद समाप्त होता है। पाइथागोरस सम्भवतः इस सम्वाद का विरोधी तर्क (एण्टीलोगिकाई लोगोई) कहता।[1] किन्तु आटेनस जो समानता का समर्थन करने में असफल रहा नये राजतन्त्र से अपने परिवार तथा अपने लिए विशेष छूट की प्रार्थना करता है और उसकी प्रार्थना स्वीकार भी कर ली जाती है वह कहता है मैं न तो शासन करूँगा और न शासित हूँगा। बाद को यूनानी

---

१ प्रोटगोरस के प्रति हेरोडोटस यहाँ अधिक ऋणी है, किन्तु इस सम्वाद की उत्पत्ति अज्ञात है।

राजनीतिक विचारधारा के यह सर्वथा प्रतिकूल है। उस विचारधारा के अनुसार तो यह एक अच्छे नागरिक का लक्षण माना जाता है कि वह शासन करने तथा शासित होने की योग्यता रखता है और दोनों के लिए तयार रहता है। हेरोडोटस के इन अध्यायों में हमें सामान्यतः ई० पू० छठी शताब्दी के परम्परागत विचारों और पाँचवीं शताब्दी के दार्शनिक दृष्टिकोण का सम्मिश्रण मिलता है। यद्यपि एकाधिकारी सम्राट के शासन के विरुद्ध जो आरोप लगाये गये हैं उन्हें फारसवालों ने प्रस्तुत किया है जो स्वयं इस प्रकार के शासन की कटुता चख चुके थे। तथापि ये आरोप पूर्णतया यूनानी हैं। हेरोडोटस के समय में पर्याप्त प्रचलित होने हुए भी इस प्रकार के विचार यूनानवालों के लिए नये न थे। इसी प्रकार कुलीनता (एरिस्टोइ) की सराहना में कही गयी बातों में भी कोई नवीनता नहीं है। किन्तु यह वाद विवाद अधिकांशतया पाँचवीं शताब्दी के प्रचलित विवादों का प्रतिबिम्बित करता है। यह वही समय था जब हेरोडोटस जीवित था, लिखता था और एक स्थान से दूसरे स्थान की यात्राएं किया करता था तथा कई बार पर्याप्त समय तक एथेन्स में रहा था।

हेरोडोटस की समस्त रचनाओं की यह विशेषता है कि वे राजनीतिक दर्शन में प्राचीन और अर्वाचीन का सम्मिश्रण प्रस्तुत करता है। अपने मत के थापने का प्रयास तो वह नहीं करता, किन्तु प्रायः उन्हें स्पष्ट कर देता है और यह आभास हो जाता है कि उसकी सहानुभूति किस पक्ष के साथ है। स्वतन्त्रता और समानता का वह समर्थन करता है। निरकुशता और अत्याचार का वह घोर विरोध करता है। निरकुश शासकों के वंशों के पतन की कहानियों का वर्णन वह विशेष रुचि के साथ करता है। वह स्वयं भी तो निरकुशता से ऊबकर अपने जन्मस्थान से भाग निकला था। इस दृष्टिकोण के साथ स्पष्ट चिन्तन सम्भव नहीं हो सकता और हेरोडोटस के बहुत से प्रशसक भी यह दावा नहीं करते कि वह राजनीतिक विचारकों की श्रेणी में आता है। तथापि यूनानी राजनीतिक दर्शन की भूमिका के लिए हेरोडोटस की रचनाएँ और एसकीलस (Aeschylus) की रचना (Persae) प्लटो, की रचना रिपब्लिक से कहीं अधिक उपयुक्त हैं, यद्यपि राजनीति के अधिकांश विद्यार्थी प्लटो की रिपब्लिक से ही अपना अध्ययन प्रारम्भ करते हैं। हेरोडोटस का इतिहास पूर्व और पश्चिम के संघर्ष का विवरण प्रस्तुत करता है। यह संघर्ष ई० पू० ४७८ में अपने अन्तिम चरण पर पहुँचा, जब फारस के सकट से यूनानी और एजियन (Aegean) द्वीपों को मुक्ति मिली। अपने इतिहास का प्रारम्भ वह पौराणिक काल से करता है और असम्बद्ध ढंग से परस्पर विरोधी तत्त्वों की चर्चा करता है यथा—बर्बर और यूनानी, अव्यवस्था और सुव्यवस्था, दास और स्वाधीन, आततायिता और स्वतन्त्रता। इन शब्दों का प्रयोग वह यथेष्ट सावधानी के साथ नहीं करता। आततायिता का अनिश्चित

है सम्भवत वास्तव म जब विधि ने एक निरकुश शासक का रूप धारण कर लिया था और परम्परागत निरकुश शासन की अनिश्चितता और अस्थिरता के कारण विधि के शासन म भी व्याप्त हो गये थ। किन्तु हेराडाटस ता एक दूसरी ही कहानी प्रस्तुत करता है। डमरटस की भाँति इसमे भी विधि के महत्त्व पर जोर दिया गया है, किन्तु इसका दृष्टिकोण भिन्न है। हेरोडाटस के इस अनुच्छेद के अधिकाश भाग का अनुवाद नीचे दिया जा रहा है। मूल म तीन स्थान पर 'नामास' शब्द का प्रयोग किया गया है अग्रेजी म अनुवाद म भी वहाँ नोमस का ही प्रयोग किया गया है और नोमान तथा नामिक्नोन के स्थान परिवर्तित प्रयाग का प्रयास नहीं किया गया है।

यदि सभी मनुष्यो को दुनियाँ की सर्वश्रेष्ठ विधियो (नोमोई) म से चुनने का अवसर दिया जाय तो लोग भली प्रकार देख भाल करके भी अपनी ही विधियो (नामोइ) को चुनेंगे विधियो के प्रति लोगो के इस दृष्टिकोण का प्रदर्शित करने के कई सकेत मिलते है। इस कहानी को ही देखिए अपने शासनकाल म सम्राट डेरियस ने अपने दरबार म उपस्थित यूनानियो को बुलाया और उनसे पूछा कि कितना धन पाने पर वे अपने पिता के शव का भक्षण कर सकते हैं। यूनानियो ने उत्तर दिया कि ऐसा काय तो वे किसी भी दशा म नहीं कर सकते। इसके पश्चात् डेरियस ने एक ऐसी इडियन जाति के लोगो को बुलाया जो अपने माता पिता के शव का भक्षण करते थे और दुभाषिये की सहायता से यूनानियो के सम्मुख ही उनसे पूछा कि कितना धन लेकर वे अपने पिताओ को आग म जलाकर समाप्त कर देंगे। इस प्रकार की बात ही सुनकर वे घबडा कर चिल्ला उठे। ये दोनो प्रथाएँ 'नोमास' द्वारा ही निर्धारित (नेनोमिस्ताइ) हैं। मेरे विचार से तो पिंडार (Pindar) ने अपनी कविता म सही ही कहा था कि 'नोमोस सब का शासक है।'

हेरोडोटस का यह अनुच्छेद (III ३८) राष्ट्रीय प्रथाओ की विविधता और अधिकार दोनो प्रदर्शित करता है किन्तु विधि (Laws) पर कुछ भी प्रकाश नहीं डालता। तथापि, प्लेटो ने पिंडार के इस खण्ड को विस्तारपूर्वक उद्धृत किया है और यह स्पष्ट किया है कि इस प्रसग म पिंडार का तात्पर्य केवल प्रथा तक ही सीमित नहीं था।[1] किन्तु 'नामोस' का एक ही अर्थ होता था दो नहीं और यूनानी धारणा म विधि

---

१ जसाकि कल्लिक्लीज (Plato, Gorgias ४८४B) का अनुमान था पिंडार शक्तिशाली व्यक्ति के अधिकारो की ओर सकेत कर रहा था। किन्तु एक दूसरे खण्ड मे (२१ Schr, २०३ Bowra) पिंडार का कथन है, विभिन्न लोगो की विभिन्न प्रथाएँ हैं किन्तु सभी अपने ही सही ढग (डिके) को पसन्द करते है। Nomos–Basileus के सम्पूर्ण विषय पर H E Stier का निबन्ध Philologus Lxxxiii १९२८ मे देखिए।

और प्रथा का घनिष्ठ सम्बन्ध था। जिस प्रकार हासिएड डाइक को वाय करने का ढंग समझता था और इसलिए उन वाय करन या सही ढंग मानता था उसी प्रकार नामोस के अन्तर्गत व वाय आते थे जिन्ह लोग स्वभावत करत चले आये हैं और इसलिए इस प्रकार के काय ठीक भी हैं। किन्तु जिस समय हरोडोटस अपने इतिहास की रचना कर रहा था राज्य के प्रसग म विधि की इस धारणा की अपर्याप्तता का अनुभव किया जाने लगा था। उपयुक्त अनुच्छेद म हरोडोटस नामोस का समर्थन भी करता है और उसके प्रति शकालु भी प्रतीत होता है। इस प्रकार हम एक बार फिर से देखते हैं कि हरोडोटस का एक पैर तो फारस के युद्धों के समय की राजनीतिक भूमि पर है तो दूसरा पैर तत्कालीन व्यवस्था और विचारको के प्रति आलोचना और सन्देह की भूमि पर स्थित है। स्वाधीनता के युग म यूनानी जहाँ नोमोस को अपनी स्वतन्त्रता के एक एक अधिकार पत्र के रूप म समझते थे जिससे उन्ह निरकुश शासक की इच्छा पर आधारित शासन तथा इसके दुष्परिणाम स्वरूप उत्पन्न अनवस्थित सामाजिक जीवन स मुक्ति मिली थी वहा एक ऐसी पीढ़ी का भी उदय हो रहा था जो इस सम्भावना को भली भाँति देख सकती थी कि नोमोस पर आधारित व्यवस्था भी निरकुशता का रूप ग्रहण कर सकती है और व्यक्तियों के स्वतन्त्र जीवन को प्रथाओं और परम्पराओं की शृखला स जकड सकती है। हरोडोटस न अपनी प्रथा और अपनी व्यवस्था के समर्थन म विश्व की सर्वश्रेष्ठ प्रथाओं को भली भाँति देख भाल करके की जो बात की थी उसका परिणाम यह भी हो सकता था कि यदि लोग दूसरो की अच्छी प्रथा को स्वीकार न भी करे तो कम से कम अपनी निज की प्रथा के महत्व और न्याय सगति पर सन्देह तो करने ही लगे। इस प्रकार की स्वाधीनता प्रदान करनेवाली शक्ति के रूप म नामस की धारणा स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात विलीन होने लगी और अब तक जिस स्वतन्त्रता की रक्षक समझा जाता था वही अब इसके अपहरणकर्त्ता के रूप म प्रतीत होने लगा। यह कहना तो उचित न होगा कि विधि और स्वाधीनता म सामन्जस्य स्थापित करने की समस्या यूनानी विचारको के सम्मुख इसी युग म उपस्थित हो गयी थी किन्तु इतना अवश्य कहा जा सकता है कि इस समस्या का बीजारोपण इसी काल म हुआ। राजनीतिक दशन की यह मूल समस्या है। एसकीलस के प्राचीनतम उपलब्ध नाटक Snpphauts म कथा का विकास दो भिन्न विधि-व्यवस्थाओं के विरोध पर होता है। एक म सगोत्र विवाह वध माना जाता है दूसरे म अवध। किन्तु नाटककार एव धर्माचाय एसकाइलस स्वय ईश्वर प्रदत्त विधि की वधता म पूर्ण आस्था रखता है। उसके अनुसार विधि एक ओर तो मनुष्य को अत्याचार और निरकुशता स मुक्ति दिलाता है और दूसरी ओर अव्यवस्था और अराजकता स उसकी रक्षा करता है। विधि का शासन कठोर हो सकता है। लोगो स विधि का पालन कराने

के लिए कभी कभी भय का प्रयाग आवश्यक हा सकता है, किन्तु विधि के प्रति नागरिकों की आन्तर की भावना ही देश और राज्य की प्राचीर की सुरक्षा का सबसे अच्छा साधन है। एसकीलस दवी और मानवीय संस्थाओं की एकरूपता म विश्वास करता था और सम्भवत इस विश्वास की सबस सशक्त एव प्रभावपूर्ण अभिव्यक्ति उसके Eumenides म मिली है।

कुछ अन्य टिप्पणियां एव प्रसग निर्देश

अध्याय—३

आतताथियो स सामरिक दुबलता उत्पन्न हाती है—Herodotus v ६६ ७८ ९१ ९२ cp Hippocrates A W P xvi,

AESCHYLUS Persae ४०२-४० २४१ २४२, Supplices ७०० प्रमाथिन इव काडनामाटिम एरका Thebans defence Thucydides iii६२ थाइनानिमियाम टिन एनर Plato, Rapublic viii ५६१ E नविसान पर फारस वाला का सम्वाद Herod iii ८० ८२ इयूवाल्सिा एरिल्टा वाल्लिय माटा Sophocles Antigone १७८-१८३, Plato Protagoras ३१८ E एर्कोन काइ एर्केस्थाइ Herod iii ८३ Soph Antigone ६६९, Plato, Laws ३६४, E, Aristotle Politics iii १२७७ a रचित अध्याय ११।

आइसारा त्वचर Herod v ७८, Herod iii ३८, vii १०२ १०४, (Demaratus) १३५, (Hydarnes) viii १४२ १४४, Plato Gorgias ४८४ B AESCHYLUS, Eumenides ५११ ५२६, ६८१-६९९ J L MYRES Political Ideas of the Greeks, १९२७, लेक्चर ५ और F Heinimann, Nomos und physis (अध्याय ८ के अन्त म दी गई टिप्पणी देखिए) जो डेमरटस के प्रसग के लिए विशेष उपयोगी है।

आर्थिक सम्पन्नता में नगर के वैभव में भी वृद्धि हुई और एथेन्स के निवासियों के लिए आयात खाद्य-सामग्री की मात्रा भी बढ़ गई। एथेन्सवासियों के निज उत्तम राष्ट्रीय गर्व और अपनी महत्ता से उत्पन्न गौरव की भावना की ओर पिछले अध्याय में संकेत किया जा चुका है उसमें और भी वृद्धि हुई। एथेन्सवासियों के नाटकों ने इस वैभव को प्रतिबिम्बित ही नहीं किया अपितु प्रोत्साहन भी प्रदान किया। तथा एथेन्स के यूनानियों का कार्य-क्षेत्र भी विस्तृत हो गया और वे नये अवसरों का उपयोग करने के लिए उत्सुक थे। इस प्रकार में भाग लेने तथा यूनान की जनसभा में अच्छा पद प्राप्त करने की अभिलाषा रखना कोई बड़ी महत्त्वाकांक्षा न थी। सलामीस के युद्ध में जिन लोगों ने भाग लिया था वे अपने पुत्रों को उचित अवसर प्रदान करने के लिए उन्हें अच्छी-अच्छी शिक्षा देने के लिए तत्पर थे। एथेन्स के राज्य में संगीत और जनता के शारीरिक-पोषण की ओर तो विशेष ध्यान दिया जाता था पर शिक्षा के लिए किसी भी प्रकार की व्यवस्था नहीं की गई थी। नाटक और त्योहार ही सार्वजनिक शिक्षा के मुख्य साधन थे। किन्तु राज्य के प्रति अपने कर्त्तव्यों का उचित पालन करने के लिए नागरिकों को उच्च स्तर की शिक्षा की आवश्यकता पड़ती थी। इस स्थिति ने एक नयी समस्या को जन्म दिया यद्यपि प्रारम्भ में इस समस्या को रूप में नहीं देखा गया। राज्य के अधिकारियों ने तो जो प्रायः वयस्क रहते थे इस ओर सबसे कम ध्यान दिया। फिर भी इस प्रश्न का कि "पोलिस (नगर राज्य) के जीवन में भाग (Share)[1] लेने के लिए कौन-सी शिक्षा व्यक्ति को सबसे अच्छी तरह तैयार कर सकेगी?" राजनीतिक महत्त्व स्पष्ट है। यदि यूनानी सभ्यता के सम्पूर्ण क्षेत्र का सर्वेक्षण किया जाय तो निश्चय है कि इस प्रश्न के अलग अलग उत्तर मिलेंगे क्योंकि प्रत्येक नगर राज्य की अपनी अलग राजनीतिक व्यवस्था थी और अपनी अलग जीवन पद्धति।[2] ऐसी दशा में प्रत्येक नगर राज्य अपने नागरिकों से अपनी व्यवस्थानुकूल कर्त्तव्यों की अपेक्षा करता था। कुछ नगर राज्यों में जहाँ कुलीन-तन्त्र था कुछ थोड़े से लोगों को बहु-संख्यक लोगों से अधिक तथा भिन्न कार्य करना पड़ता था। किन्तु एथेन्स में जहाँ क्लाइस्थनीज़ के संविधान को और भी विस्तृत और लोकतन्त्रात्मक बना दिया गया था कुछ अत्यन्त निर्धन व्यक्तियों को छोड़कर सभी वयस्क पुरुषों को किसी न किसी

---

१ यह शब्द (Share) अस्पष्ट होते हुए भी अनुपयुक्त नहीं है क्योंकि कालान्तर में राज्य के प्रति कर्त्तव्यों की अपेक्षा उससे प्राप्त होने वाले पारितोषिक पर अधिक जोर दिया जाने लगा। एथेन्सवासी अपने राज्य से लाभांश (dividend) की अपेक्षा करते थे।

२ बाइग्रोस way of life (जीवन पद्धति) देखिए पृष्ठ १६१ n २

सावजनिक काय म भाग लेने का अवसर था। योग्य और महत्त्वाकांक्षी व्यक्तियों के लिए तो बहुत से काय थे। किन्तु शक्ति और अधिकार प्राप्त करने के लिए उन पिसिस्ट्रेटस के समस्त्र दल की आवश्यकता नहीं थी अब तो शक्ति और अधिकार का मार्ग उन्ही के लिए खुला था जो अपनी वक्तता से लोगों को प्रभावित कर सके और उनके सम्मुख विधायन होने का दावा कर सके। अत जो शिक्षा इस प्रकार की योग्यता प्रदान कर सकती वह एथेन्स की व्यवस्था के अनुकूल नागरिक तैयार करने में निश्चय ही सफल होती। ऐसी स्थिति म, ऐसे व्यक्ति के लिए, चाहे वह एथेन्स का नागरिक हो अथवा विदेशी जो इस प्रकार की शिक्षा देने की योग्यता रखता था उनके व्याख्यानो और प्रदर्शनो से धनोपार्जन के लिए एथेन्स म विशेष अवसर उपलब्ध था। विद्यार्जन करने तथा इसका मूल्य चुकाने के लिए लोग पर्याप्त संख्या में तैयार थे। इस प्रकार राजनीतिक अधिकार और आर्थिक सम्पन्नता के साथ राजनीतिक शिक्षा की माँग भी जुड गई और इन तीनो के संयोग ने ही वह भूमि प्रस्तुत की जिसमे ई० पू० पाँचवी शताब्दी के राजनीतिक विचार का विकास हुआ।

स्पष्ट है कि इस प्रकार के वातावरण में विकसित होने वाले राजनीतिक विचार म नागरिको को जो व्यक्तिगत महत्त्व मिलेगा वह विगत शताब्दी के राजनीतिक विचार मे नहीं मिल सकता था। सोलन के पूर्व एथेन्स म व्यक्ति को कोई महत्त्व नहीं प्राप्त था। सोलन के उपरान्त भी फ़ारस के युद्धो तक इस महत्त्व म विशेष वद्धि न हो सकी थी। जाति, गोत्र और बिरादरी सभी का प्रभाव धीरे धीरे क्षीण होता गया और उनका राजनीतिक महत्त्व तो प्राय नगण्य हो गया था। किन्तु, इन बन्धनो के ढीले होने पर भी व्यक्ति का स्वाधीनता नहीं मिल सकी थी। उसके पैरो म तो अब एथेन्स के राज्य की व्यापक और कठोर बेडियाँ पड गई थी। स्वामि भक्ति के छोटे वृत्तो का स्थान एक बडे वृत्त ने ले लिया था और व्यक्ति का स्थान जैसा-का-तैसा बना रहा। फिर भी उसे सन्तोष था। वयक्तिक जीवन मे उसे पर्याप्त स्वतन्त्रता प्राप्त थी और राज्य की ओर से कोई हस्तक्षेप नहीं होता था। अपने तथा अपने परिवार के लिए धनोपार्जन करने तथा अर्जित लाभ का विनय करने की उसे स्वतन्त्रता थी। ऐसी स्थिति मे कोई कारण नहीं दिखाई पडता कि राज्य की सर्वोच्च सत्ता उसे अप्रिय लगती। इसके अतिरिक्त, राज्य उसकी आवश्यकताओ की पूर्ति करता था और वह स्वय अपने को राज्य का एक अग समझता था। अत जब हम यह कहते है कि पाँचवी शताब्दी के मध्य म व्यक्तिवाद का उदय हो रहा था तो हमारा तात्पय यह नहीं है कि मनुष्य के वयक्तिक अधिकारो पर जोर दिया जा रहा था अथवा पालिस (नगर राज्य) के अधिकारो का विरोध किया जा रहा था। वास्तव म, वयक्तिक उन्नति और अच्छी शिक्षा प्राप्त करने की उत्सुकता के पीछे राज्य की सेवा करने तथा इस सेवा द्वारा आदर

और ख्याति प्राप्त करने का अभिलाषी था। संविधान की धाराएँ भी स्वतन्त्र वर्ग में ही योग्य और समर्थ व्यक्तियों की आवश्यकता प्रकट करता रहता है। इस समय में एथेन्स में तो ऐसे व्यक्तियों के लिए अनन्त अवसर उपस्थित थे क्योंकि इस समय एथेन्स का साम्राज्य अपनी शक्ति और प्रभाव के क्षेत्र में निरन्तर विस्तार कर रहा था। साथ ही अब प्रजातन्त्रात्मक एथेन्स में योग्यता, शक्ति और सत्ता सम्बन्धी श्रेष्ठता (एरेटी) कुछ सामन्त परिवारों के परम्परागत जन्माधिकार नहीं माने जाते थे।[1] नि सन्देह कुछ ऐसे लोग थे जो पिण्डार[2] के इस विश्वास को अब भी अंगीकार किये हुए थे कि जन्मजात श्रेष्ठता शिक्षा द्वारा प्राप्त श्रेष्ठता से कहीं अधिक अच्छी होती है। किन्तु शिक्षा द्वारा यह श्रेष्ठता प्रदान नहीं की जा सकती ऐसा मानने वाले थोड़े ही लोग रह होंगे। अधिकांश लोगों में यह दृष्टिकोण व्याप्त हो रहा था कि शिक्षा से मनुष्य श्रेष्ठ बन सकता है। इस दृष्टिकोण की मान्यता मिलने का एक कारण यह भी था कि श्रेष्ठता (एरेटी) का तात्पर्य जहाँ एक ओर उन सभी गुणों के योग से था जो वास्तव में एक व्यक्ति के लिए आवश्यक होते हैं वहाँ दूसरी ओर किसी कार्य को अच्छी प्रकार सम्पन्न करने की योग्यता से भी था। दूसरे अर्थ में शिक्षण सम्भाव्य भी था और वाञ्छनीय भी। इसलिए सॉक्रेटीज के पूर्व कभी भी यह प्रश्न नहीं उठा कि सामान्य अच्छाई जिसमें अच्छा आचरण भी सम्मिलित है शिक्षा द्वारा प्रदान की जा सकती है अथवा नहीं? प्लेटो के अनुसार सोफिस्ट्स ने यह प्रश्न प्रारम्भ से किया था। किन्तु अभी तक तो इसका उत्तर स्पष्ट माना जाता था। राज्य की विधि और प्रथाओं का निर्माण हो जाता था और उनकी शिक्षा स्वयं अपने में श्रेष्ठ आचरण के लिए शिक्षा होती।[3] किन्तु पाँचवीं शताब्दी का व्यक्तिवादी यूनानी शिक्षा से इससे कहीं अधिक आशा करता था। वह ऐसी शिक्षा चाहता था जो उसकी वैयक्तिक उन्नति में सहायता दे और इस प्रकार की शिक्षा का मूल्य चुकाने के लिए वह तैयार था। इस माँग की पूर्ति हेतु तथा धनोपार्जन के इस अवसर से लाभ उठाने के लिए अन्य नगरों के विशेषज्ञ शिक्षकों को एथेन्स ने आकृष्ट किया। पर्याप्त संख्या में ऐसे शिक्षकों ने एथेन्स में पदार्पण किया और अपनी सुविधानुसार कम अथवा अधिक समय के लिए एथेन्स को

---

१ फिर भी पतकता के सिद्धान्त को अब भी मान्यता प्राप्त थी, एथेन्स के स्वतन्त्र कुलों में जन्म लेने वाले ही नागरिकता के अधिकारी होते थे।—W Jaeger, paideia Enq tians I पृष्ठ २८४।

२ उदाहरणार्थ Nem III ४० ४२ Olymp II ८६ ८८।

३ लिखित विधि द्वारा नैतिक स्तर निर्धारित करने को यूनानी शैक्षिक कार्य मानते थे। Jaeger Paideia I पृष्ठ १ ३।

अपने निवास और कार्य का क्षेत्र बनाया। यही 'सोफिस्ट' के नाम से विख्यात हुए। ये शिक्षक या तो वहां पर आवास ग्रहण कर लेते थे या दूसरे नगरों में आते-जाते रहते थे।

इन शिक्षकों[1] में से कुछ ने राजनीतिक दर्शन के विकास में योग दिया, शेष के कार्य इस क्षेत्र में अधिक महत्त्वपूर्ण नहीं हुए। इनकी शिक्षण विधि, सिद्धांत और पाठ्य-वस्तु अलग-अलग था। किन्तु एथेंस में उनकी उपस्थिति और शिक्षण क्रियाओं ने यह सिद्ध कर दिया कि राजनीति और संस्कृति में घनिष्ट सम्बन्ध है और नागरिकों की शिक्षा का राज्य के स्वभाव और उसकी उपयोगिता पर गहरा प्रभाव पड़ता है। किन्तु यह प्रभाव किस प्रकार का होना चाहिए इस प्रश्न की ओर उन्होंने किञ्चित मात्र ध्यान नहीं दिया। एथेंस के राज्य और वहां की व्यवस्था को वे मान कर चलते थे और विभिन्न प्रकार से सफल राजनीतिक जीवन अथवा व्यवसायों के लिए नवयुवकों को तैयार करना ही उनकी शिक्षा का ध्येय था। ज्ञान और योग्यता के अधिक विस्तीर्ण प्रसार का राज्य पर क्या प्रभाव पड़ेगा इस पर विचार करने की आवश्यकता का अनुभव उन्होंने नहीं किया। तथापि उनके कार्यों के फलस्वरूप जो स्थिति उत्पन्न हुई उसमें इस प्रकार के प्रश्नों का उठना अवश्यम्भावी था। विज्ञान का समाज से क्या सम्बन्ध होना चाहिए? नवीन विशेषज्ञ वर्ग को समाज में क्या स्थान मिलना चाहिए? ये कुछ ऐसे प्रश्न हैं जिनसे आधुनिकता प्रतिध्वनित होती है और ये समस्याएँ आज के युग की समस्याएँ प्रतीत होती हैं। किन्तु इन समस्याओं और परिक्लीज (Pericles)

---

१ प्रोटगोरस गर्व के साथ अपने को 'सोफिस्ट'—पुरातन कवियों की भांति मानवता का शिक्षक—कहता था (Plato, Protag ३१६ d ३१७ c), किन्तु बाद के सोफिस्ट शिक्षकों के समाज में निरादर की दृष्टि से देखा जाने लगा? सोक्रेटीज ने भी इस भावना को दृढ़ करने में सहायता दी और प्लेटो ने अपनी रचनाओं में सोक्रेटीज को सोफिस्ट शिक्षकों से पृथक सिद्ध करने का प्रयास किया। फलतः सोफिस्ट शब्द अब सम्मानसूचक शब्द नहीं रह सका। प्राचीन, पांचवीं शताब्दी के सोफिस्ट का मुख्य लक्षण यह था कि वे यह दावा करते थे कि (१) उन्हें विशेष ज्ञान प्राप्त है, (२) वे शिक्षा प्रदान करने की योग्यता रखते हैं, और (३) शिक्षा प्रदान करने के लिए शुल्क के अधिकारी हैं। यद्यपि सोक्रेटीज इस प्रकार का दावा नहीं करता था फिर भी कई अन्य प्रकार से वह पांचवीं शताब्दी के सोफिस्ट से मिलता जुलता था और इसे भी उनकी श्रेणी में रखा जा सकता था। अध्याय ५ देखिए।
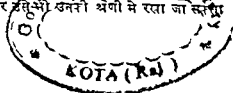
के युग की ज्ञान और शिक्षा के प्रसार स्वरूप उत्पन्न समस्याओं में विशेष अन्तर नहीं है। समस्या अपने पूर्ण रूप में तो नहीं प्रगट हो सकी थी और इसके स्वभाव और अस्तित्व का बोध लोगों को नहीं हो पाया था। किन्तु १८७० ई० के एथेंस की सांस्कृतिक समस्या का भी बोध नहीं हो सका था। इसके बाद की शताब्दी में प्लेटो इस समस्या के प्रति जागरूक था। अपनी रिपब्लिक (Republic) में वह सामाजिक न्याय की खोज का ज्ञान और शक्ति के सम्बन्धों के अध्ययन से उत्पन्न करता है। ४५० ई० पू० में लोगों के सम्मुख केवल एक समस्या थी और वह थी उत्पादन की समस्या—अधिक उचित योग्यता और ज्ञान का उत्पादन। निःसन्देह किसी विषय का ज्ञान प्रदान करने या अपेक्षा किसी कला का ज्ञान देना सुगम था। कला की अपेक्षा कम आसानी से बताया जा सकता था और इन शिक्षकों के शिष्यों में किसी विषय के आधार का भली भाँति समझने वाले तो कम हुए किन्तु किसी काम को करने के लिए सुन्दर-सुन्दर तरकीब निकाल देने वाले अधिक हुए। जीवन के परम लक्ष्य के बारे में शिक्षा देने की बात तो बहुत दूर की वस्तु थी।

फारस के आधिपत्य से एजियन प्रदेश की मुक्ति के परिणामस्वरूप यूनानी नगरों और द्वीपों के पारस्परिक सम्बन्ध में भी वृद्धि हुई। साथ ही विदेश-यात्रा की सुविधाओं में भी विस्तार हुआ और यूनानी पर्यटकों ने बाहर के देशों का भी भ्रमण किया। जिन लोगों को स्वयं विदेश-यात्रा करने का अवसर नहीं उपलब्ध हुआ उन्होंने हिकेटियस (Hecataeus) और हेरोडोटस (Herodotus) के यात्रा वृत्तान्तों का अध्ययन किया। पिछले अध्याय में हमने देखा था कि विभिन्न देशों की विधि और प्रथाओं का जो सर्वेक्षण हेरोडोटस ने प्रस्तुत किया उसके फलस्वरूप नामस के प्रति लोगों की धारणा में कुछ परिवर्तन आया और स्वतन्त्रता के स्रोत तथा प्रगणनायिता नवित के रूप में नोमस की धारणा दुर्बल हो चली। दस विदेशों की विधि-व्यवस्था के अध्ययन से लोगों ने देखा कि विधि (Nomos) कठोर और प्रतिबन्धमूलक भी हो सकती है। इतना ही नहीं। यूनान में विधि की परम्परागत धारणा को इससे भी गम्भीर चुनौती का सामना करना पड़ा। विभिन्न देशों में प्रचलित विभिन्न विधि व्यवस्थाओं को देखकर लोगों के मन में यह शंका भी उत्पन्न हुई कि यदि विधि-व्यवस्था स्थान-स्थान पर भिन्न है और यदि एक ही प्रकार का कार्य एक स्थान पर वैध माना जाता है और दूसरे स्थान पर अवैध तो निश्चय ही हेराक्लाइटस (Heraclitus) का यह कथन त्रुटिपूर्ण है कि सभी मानवीय विधियों का पोषण ईश्वरीय विधि द्वारा होता है। ऐसी स्थिति में नैतिक एवं राजनीतिक आचरण के सम्बन्ध में मार्ग दर्शन के लिए यदि वे अपने पुरातन कवियों का आश्रय लेते जो यूनानी स्वभावतः करते थे तो उन्हें होमर और हीसिएड की डिकी सही (सम्यक) ढंग

अब यदि इन प्रश्नों के सम्बन्ध में 'नामस' (विधि) पर विचार किया जाय तो चार दृष्टिकोण सम्भव हो सकते हैं। प्रथम विरुद्ध प्रकृति (physis) का आधार विधि (Nomos) है और विधि (Nomos) देवताओं पर आधारित है। वास्तव में इस दृष्टिकोण और प्राचीन काल में हैसियड द्वारा प्रस्तुत दृष्टिकोण में कोई अंतर नहीं है। हैसियड ने विधि का जो वर्णन किया है उसके अनुसार ज़ियस (Zeus) द्वारा मनुष्यों को दैविक 'न्याय' (जाब, यहां दण) प्रदान करने की व्यवस्था ही विधि (Nomos) है। किन्तु यूनान की तत्कालीन अवस्था में इस प्रकार का विचार सम्भव नहीं था। हम देख चुके हैं कि विधि (Nomos) 'राज्य' (polis) से इतना अधिक संयुक्त हो गई थी कि पशु और वनस्पति जगत के प्रजनन और संचयन के कारणों और कारकों की व्याख्या करने के लिए यह शब्द सर्वथा अनुपयुक्त हो गया था। जहाँ-कहीं प्रकृति का नियम (Law of Nature) का प्रयोग हुआ था वहाँ इसका अभिप्राय किसी ऐसी विधि से नहीं है जिसका प्रकृति अनुसरण करती है बल्कि प्रकृति से उद्भूत नियम अथवा विधि से है। वास्तव में यह चौथे दृष्टिकोण के अंतर्गत आता है। (आगे देखिए)। दूसरा दृष्टिकोण यह हो सकता है कि नामस (Nomos) को फाइसिस (physis) अर्थात् वर्द्धन प्रक्रिया से पृथक् कर

विकसित रूप अन्य मिलता है। उत्तर है—मनुष्य और पशु में कोई अंतर नहीं है।' इन दोनों प्राणियों में से कोई भी दूसरे से अधिक न्यायी नहीं होता है। अतः शिक्षा, न्यायालय, विधि व्यवस्था की कोई आवश्यकता नहीं। श्रेष्ठ व्यवहार (एरटी) के लिए किसी प्रकार की अनिवार्यता भी नहीं होनी चाहिए। पाँचवीं शताब्दी के अंतिम चरणों में 'प्रकृति की ओर' वापस जाने के इस दृष्टिकोण का व्यंग्यपूर्ण ढंग से रंगमंचों पर उड़ाया जाने लगा था। ४२० ई० पू० में Pherecrates का Wild Men प्रस्तुत किया गया। प्लेटो के Protagoras 322d में मिलनेवाले संकेत के अतिरिक्त इस सम्बन्ध में अधिक सामग्री नहीं मिल सकी है। किन्तु इस सिद्धान्तों को कलिक्लीज़ (Callicles) के सिद्धांत से पृथक् अवश्य करना चाहिए। अरिस्टोफेनीस (Aristophanes) की रचना Birds में भी प्रहसन का आंशिक आधार यह है कि पक्षी का अभिनय करनेवाले पशुओं की भाँति ही व्यवहार करता है।

१ Plato Gorgias ८८ E, जहाँ कैलिक्लीज़ द्वारा प्रयुक्त Law of nature (प्राकृतिक विधि) के लिए यूनानी एकमात्र शब्द प्रयुक्त का प्रयोग करते थे और उनका तात्पर्य ऐसी विधि से था जिसकी अवहेलना न की जा सके। देखिए अध्याय ४ (Antiphon)।

दिया जाय और दोनों को पवित्र एवं उच्चतर शक्ति पर आधारित किया जाय। इस प्रकार जहाँ फीसिस (physis) का स्वभाव वृद्धावस्था और मृत्यु को प्राप्त करना है वहाँ Nomos अनश्वर और चिरयौवना है। समय का इसके ऊपर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। इसी विषय पर सोफोक्लीज (Sophocles)[1] की एक सुंदर कविता है जिसका सामूहिक गान विधि की प्रशस्ति में है और जो वचन तथा कर्म में इसके पालन का आदेश देता है। विधि के सम्बन्ध में इस गान की पंक्तियाँ हैं—' वे (विधि) आसमान पर चलते हैं उनका जन्म ऊपर स्वर्ग में हुआ है, उनका जनक एकमात्र Olympus है और नश्वर मनुष्यों की विस्मृति प्रक्रिया ने उन्हें नहीं उत्पन्न किया है। विस्मृति में भी वे निद्रावस्था में नहीं जाते उनके अन्दर एक शक्तिशाली देवता व्याप्त है और वह कभी वृद्धावस्था को नहीं प्राप्त होता।' यह कोई नया दृष्टिकोण नहीं है। यह वस्तुतः हेराक्लाइटस के दृष्टिकोण की ही पुनरावृत्ति है। किन्तु, प्राचीन परिपाटी का अनुसरण करते हुए भी यह दृष्टिकोण अभी तक प्रचलित था। अलिखित विधि की कल्पना के रूप में यह सर्वसाधारण के विचार का अंग बन चुका था और विधि-व्यवस्था की स्थानीय विविधता और अन्तर के बावजूद भी सभी मनुष्यों को, विशेषकर यूनानियों को इसका वचन स्वीकार करना पड़ता था। अलिखित विधि' (एग्राफाइ नामोइ) का वास्तविक तात्पर्य तो वक्ता और प्रसंग के अनुसार भिन्न भिन्न होता था किन्तु ईश्वर और माता पिता के प्रति कर्तव्यों का पालन करने का उपदेश प्रत्येक दशा में अलिखित विधि' की धारणा के साथ संलग्न था। यह ध्यान देने योग्य है कि धार्मिक कृत्य और विशेष रूप से माता पिता के प्रति कर्तव्य को प्रायः विधि द्वारा निर्धारित कर दिया जाता था। अतः वे अलिखित विधि की श्रेणी में नहीं आते थे। इसके परिणामस्वरूप व्यवहार में उन्हें अधिक शक्ति प्राप्त हो गयी होगी, किन्तु उनके पक्ष में सदा प्रस्तुत किया जाने वाला यह दावा कि वे ईश्वरीय हैं अवश्य कमजोर हो गया होगा। किन्तु आचरण सम्बन्धी इन उपदेशों के अतिरिक्त भी विधि शास्त्र के क्षेत्र में और विशेषकर न्याय (Eguity)[2] की धारणा के आधारभूत सिद्धान्तों के सम्बन्ध में अलिखित किन्तु सामान्यतया स्वीकृत अलिखित विधि की कल्पना का भविष्य अत्यन्त उज्ज्वल था।

तीसरा दृष्टिकोण दूसरे से केवल इस बात में भिन्न है कि इसमें मनुष्य को अधिक महत्त्व प्रदान किया गया है। अलिखित विधि को अस्वीकार न करते हुए उनका उपयो

---

१ Oed Tyr, ८६३ ८७३।

२ देखिए Aristotle, Rhetoric I, ch १३, Andocides de Myst ८५ अलिखित विधि पर सोफोक्लीज के विचार अध्याय ५ में देखिए।

करके कुछ लोग केवल मानव निर्मित विधि पर ही ध्यान देकर इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि यद्यपि मानवीय विधि के निर्माण में यद्यपि प्रकृति मात्र का किञ्चित-मात्र भी भाग नहीं रहा है फिर भी मनुष्य के लिए यह स्वाभाविक है कि वह विधि के अनुकूल ही अपने जीवन को व्यवस्थित करे। यद्यपि इस दृष्टिकोण राजनीतिक चिन्तन में अत्यन्त महत्वपूर्ण उपयोगी सिद्ध हुआ किन्तु चौथी विचारधारा की आन्तरिक दुर्बलता के कारण कुछ समय तक यह प्रकाश में न आ सका।

चौथे दृष्टिकोण में उचित और अनुचित सम्यक और असम्यक का आधार केवल प्रकृति (physis) माना गया। प्रारम्भिक विधान ने प्रकृति निरीक्षण के आधार पर प्रमाणित किया था कि प्रत्येक वस्तु की एक स्वाभाविक एवं सामान्य अवस्था होती है। यह अवस्था विशुद्ध और भ्रष्ट की जा सकती है जब नये ऋतुओं के आने का समय स्थिति विशिष्ट हो उठती है (Herod ɪɪɪ १) अथवा वर्षा के अभाव में सरिता का सामान्य स्तर बदल जाता है (Herod ɪv ५०)। आयुर्विज्ञान के लेखकों ने निरन्तर मानव-शरीर की सामान्य स्वस्थ अवस्था को डिवाइन फिजिक से व्यक्त किया है। अतः यदि हम सामान्य एवं सम्यक अवस्था को स्वाभाविक एवं नैसर्गिक अवस्था कह सकते हैं तो मानव आचरण का वर्णन करने के लिए भी क्या न इसी शब्दावलि का प्रयोग करें? ऐसी स्थिति में हम उन कार्यों को उचित और सम्यक मानना चाहिए जो प्रकृति के अनुसार उचित और सम्यक है। मानव निर्मित विधि अथवा प्रथा के आधार पर किसी कार्य को उचित और सम्यक कहना उपयुक्त न होगा। किन्तु जिन नियमों के आधार पर मनुष्य आचरण करते हैं वे प्राकृतिक व्यवस्था से नहीं प्राप्त हुए हैं। इसलिए इन्हें वे विधि (Nomoi) का नाम देते हैं और उन पर विश्वास करके उनके अनुसार आचरण करते हैं। किन्तु प्रचलित विधियों परम्पराओं और प्रथाओं का कोई अंश प्राकृतिक वस्तुओं में नहीं मिलता है। वे तो केवल परम्परा पर आधारित हैं। इस प्रकार Nomos और physis प्रत्यक्ष रूप से एक दूसरे से पृथक् तथा विरोधी के रूप में सम्मुख आते हैं। संसार में जो भी 'प्रकृति (physis) से नहीं प्राप्त हुआ है चाहे वह कार्य हो तथ्य हो अथवा नाम हो केवल विधि अथवा परम्परा के आधार पर ही स्थित कहा जा सकता है अर्थात केवल इसलिए है कि परम्परा अथवा सम्मति से लोगों ने उसे स्वीकार कर लिया है।

इस प्रकार के विरोधी दृष्टिकोण और विभिन्न व्याख्याएं[1] विचार को ओर भी उलझा देता है। उस समय के लोग जिनका जीवन परिवर्तित दृष्टिकोण के कारण बन

---

१ इस अध्याय के अन्त मे दी गयी अन्तिम टिप्पणी देखिए।

ही अव्यवस्थित हो गया था इस विचार-वैभिन्य में और भी हतप्रभ हो गये होंगे। तथापि, उस समय के अभिजात लोगों के लिए यह विवाद प्रेरणादायक और रोचक सिद्ध हुआ। उस समय की बौद्धिक चेतना और विचार की नयी भूमि का यह उत्कृष्ट उदाहरण है। इन चारों विचारधाराओं में चौथी विचारधारा नैतिक अधिक उपयोगी सिद्ध हुई। इसने प्रकृति (physis) और परम्परा (Nomos) को दो विरोधी तत्त्वों के रूप में प्रस्तुत किया। संसार के किसी भी विषय के सम्बन्ध में इस विरोध का प्रयोग किया जा सकता था और रोचक एवं आश्चर्यजनक परिणाम प्राप्त किए जा सकते थे। यहाँ उदाहरण प्रस्तुत करने की आवश्यकता नहीं है। उस शताब्दी का साहित्य इस प्रकार के प्रयोगों से भरा पड़ा है। राजनीतिक विचारकों ने प्रकृति और परम्परा को विरोधों के रूप में देखने के इस दृष्टिकोण का किस प्रकार प्रयोग किया यह आगे चलकर स्पष्ट हो जायगा जब हम उनके विचारों का अध्ययन करेंगे। किन्तु यहाँ इस सिद्धान्त के तथाकथित प्रारम्भिक स्वरूप[1] और नैतिक क्षेत्र में इसके प्रारम्भिक प्रयोगों पर ध्यान देना उपयोगी होगा। यह कार्य नव शिक्षकों (Sophists) ने नहीं किया अपितु आर्कीलाउस (Archelaus) ने किया जिसे फिजिकोस का उपनाम दिया गया था। जीव विज्ञान, जन्म, विकास और मृत्यु में उसकी विशेष रुचि थी और इन्हें वह उत्पत्ति और हानि के सिद्धान्तों में सम्बन्धित करता था। मनुष्य के विकास के सम्बन्ध में उसने जो भी अध्ययन किया उसमें उसे उचित और अनुचित कहीं भी दृष्टिगोचर नहीं हुआ। फलतः वह इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि प्रकृति में उचित और अनुचित का कोई अस्तित्व नहीं है, ये केवल परम्पराओं और प्रथाओं पर आधारित हैं —हम यह तो नहीं जान सके हैं कि इस प्रकृतिवादी ने (physicist) इस निष्कर्ष से क्या तात्पर्य निकाला, किन्तु बहुत से लोगों ने[2] इसका यह अर्थ लगाया कि मनुष्यों के विभिन्न मतों के अतिरिक्त नैतिकता का कोई पृथक् मानदण्ड नहीं है।

---

१ Diog Laert, II १६ देखिए Diels Kranz, Vorsoker सेक० ६० आर्कीलास (Archelaus) के सम्बन्ध में यह कहा जाता है कि वह अनक्सेगोरस (Anaxagoras) का शिष्य था और सोक्रेटीज का आचार्य। किन्तु सम्भवतः यह प्राचीन दार्शनिकों को किसी न किसी प्रकार से सम्बन्धित करने की प्रवृत्ति का द्योतक है।

२ अब भी ऐसे लोग हैं। उदाहरण के लिए (John Mackie) का 'A Repitation of Morals' शीर्षक निबन्ध पढ़िए जहाँ से यह उद्धरण लिया गया है। यह निबन्ध Australasian Journal of Psychology and philosophy xxiv, Sept १९४६ में प्रकाशित हुआ था।

विचारों और जीवन की घटनाओं के विषय में सामग्री का अभाव अत्यन्त ही खेद का विषय है। व्यावहारिक राजनीति के क्षेत्र में इसी प्रकार के दो कार्य एेसे हैं जिनका उल्लेख है और जिन दोनों के बारे में कुछ विवरण भी आगे दिया जाता है (Ch IX ad fin) किन्तु प्राटगोरस के जीवन का कोई ऐसा मौलिक विवरण जिसका इन बातों से सम्बन्ध हो और जिससे कि थुरी के लिए उसने किस प्रकार का विधि का निर्माण किया। अनुमान किया जाता है[1] कि थुरी के लिए जिस संविधान की रचना उसने की वह एथेन्स के जनतंत्रात्मक व्यवस्था पर ही आधारित रहा होगा। निश्चय ही यदि वह स्वयं जनतंत्रात्मक व्यवस्था का समर्थक था, तो थुरी के लिए वह इसी प्रकार का संविधान बनाता क्योंकि उस पूरा स्वतन्त्रता थी और लोकतन्त्रात्मक संविधान का एक उदाहरण भी उसके सामने था। प्रारम्भ के विधायकों को यदि यह स्वतन्त्रता मिली भी तो उनके सामने इस प्रकार के संविधान का कोई स्पष्ट उदाहरण नहीं था। दक्षिणी इटली[2] के प्राचीन विधायकों का उल्लेख अरिस्टाटल ने किया है किन्तु उसमें प्राटगोरस का नाम नहीं आ सकता था क्योंकि जिन विधायकों की चर्चा की गई है वे प्राटगोरस से बहुत पहले के है। किन्तु, आश्चर्य की बात तो यह है कि थुरी के प्रसंग में भी उसने प्राटगोरस का उल्लेख नहीं किया है जबकि संविधानों की सुगम परिवर्तनशीलता के उदाहरण के रूप में वह दो स्थलों पर थुरी का उल्लेख करता है।[3] थुरी के संविधान में हुए परिवर्तनों का निर्धि भी अरिस्टाटल ने नहीं दी है किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि थुरी के लिए जिस संविधान की रचना प्राटगोरस ने की थी वह स्थायी था।[4]

अपने जीवन काल में प्राटगोरस को जो ख्याति मिली उसका आधार थुरी का वह संविधान नहीं था जिसकी रचना उसने की। उसे तो मुख्यतया अपने भाषणों और कुछ मात्रा में अपनी रचनाओं द्वारा ख्याति प्राप्त हुई। यद्यपि इनमें से प्रायः सभी नष्ट हो गये किन्तु बाद की पीढ़ी के लेखकों ने उसकी रचनाओं के शीर्षकों की एक सूची सुरक्षित

1 A Menzel का यही अनुमान है। Zeitschrift Fur Politik vol iii (१९१०) पृष्ठ २०८ और Protagoras als Gesetzgeber von Thurii (Verhandlungen der kgl Sachs Gesellschaft, Leipzig, Phil hist, Kl , LXII पृष्ठ १९१–२२९)।

2 Politics ii १२७४a

3 politics, v १३०७a २७ और b ६

4 इस निष्कर्ष के समर्थन में V Ehrenberg ने Amer Journ philol , LXIX, १९४८, १४९ १७० में कुछ अच्छे तर्क प्रस्तुत किए हैं।

रखा था। जैसाकि इन नामों से ज्ञात होता है प्रोटागोरस विभिन्न विषयों पर बोलता और लिखता था। बाद में प्लेटो ने अपनी पुस्तक 'रिपब्लिक' को यही नाम देकर इस शब्द को विख्यात कर दिया। प्रोटागोरस की एक दूसरी रचना का शीर्षक था (मनुष्य की) मूल अवस्था के बारे में (About the original state of mankind)। सम्भवत इन्हीं दोनों पुस्तकों के अध्ययन से ही प्लेटो ने प्रोटागोरस के राजनीतिक सिद्धान्तों से परिचय प्राप्त किया था जिसका उसने अपने उपयोग 'प्रोटागोरस' नामक संवाद की रचना में किया। 'थिएटेटस' (Theaetetus) में प्लेटो ने प्रोटागोरस के ज्ञान के सिद्धान्त की विवेचना की है यद्यपि इस सिद्धान्त को वह भलीभांति समझ नहीं सका था।[1] प्लेटो ने अपनी अन्य पुस्तकों में भी प्रोटागोरस का उल्लेख किया है जिससे यह स्पष्ट हो जाता है कि ज्ञान के क्षेत्र में प्रोटागोरस को महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त हो चुका था। यथार्थ शब्द वास्तव में प्रोटागोरस द्वारा कहे गये शब्द (Ipsissima verba) कम ही मिलते हैं। साथ ही प्लेटो ने उनमें भी उनकी स्पष्ट व्याख्या नहीं हो पाई थी। जिस कथन को उनकी ख्याति का आधार माना जाता है और सम्भवत उसी के कारण उन पर अनीश्वरवादी होने का अभियोग लगाया गया यह है— 'देवताओं के बारे में मैं यह नहीं जान सकता कि उनका अस्तित्व है अथवा नहीं है और यदि है तो उनका स्वरूप क्या है क्योंकि इस प्रकार के ज्ञान के मार्ग में अनेक बाधाएँ हैं। निश्चित ज्ञान का अभाव और मानव-जीवन की अल्पकालीनता दोनों ही इस मार्ग में बाधा उत्पन्न करते हैं' (Tr ४ D५)। इस कथन में न तो उसकी तथाकथित अनीश्वरवादिता की पुष्टि होती है और न इसमें तत् सन्त अज्ञेयवादिता ही मिलती है। इसके अतिरिक्त यद्यपि उसने अपने राजनीतिक सिद्धान्त में अलौकिक को बहुत कम स्थान दिया फिर भी 'देवताओं पर' (On the Gods) एक पुस्तक लिखना उपयुक्त समझा और उसके लिए समय निकाल सका। हमारे विषय की दृष्टि से उसका एक दूसरा कथन अधिक महत्त्वपूर्ण है और इसका प्रायः उल्लेख किया जाता है यद्यपि यह और भी अस्पष्ट है। प्रोटागोरस का यह विख्यात कथन इस प्रकार है —सभी वस्तुओं का माप-दण्ड मनुष्य है—ऐसी वस्तुओं का जो जैसी हैं वैसी हैं और ऐसी वस्तुओं का जो जैसी नहीं हैं वैसी नहीं हैं। इस कथन की अनेक व्याख्याएँ और प्रयोग हुए हैं। राजनीतिक दर्शन में इसके प्रयोग के सम्बन्ध में हमें कुछ और सामग्री मिलती है यद्यपि यह दूसरे लोगों से प्राप्त हुई है और स्वयं प्रोटागोरस से नहीं। प्लेटो का कहना है कि राज्य के प्रसंग में प्रोटागोरस अपने इस कथन का स्पष्टीकरण इस प्रकार करता है प्रत्येक नगर राज्य के लिए जो भी उचित और

---

[1] F C S Schiller की plato or protagoras ? १९०८ देखिए।

कल्याणकारी प्रतीत होता है वह उसके लिए उस समय तक उचित और कल्याणकारी है जब तक उसके इस विचार में परिवर्तन नहीं होता। आगे चलकर प्लेटो इसकी सविस्तार व्याख्या इस ढंग से करता है —'नगर राज्य से सम्बन्धित मामलों में प्रत्येक नगर अच्छे और बुरे, न्याय-सम्मत और न्याय विरुद्ध उचित और अनुचित के बारे में निर्णय करने के पश्चात इस निर्णय के अनुकूल वैधिक व्यवस्था करता है जो समान रूप से मान्य होती है। इस सम्बन्ध में यह नहीं कहा जा सकता कि कोई व्यक्ति अथवा नगर दूसरे का अपेक्षा अधिक बुद्धिमान है। किसी नगर के लिए क्या उपयोगी एवं सुलभ होगा इसके बारे में मतभेद हो सकता है किन्तु नैतिकता से सम्बन्धित मामलों में राज्य ही एकमात्र सत्ता है और राज्य का नैतिक स्तर सामूहिक निर्णय द्वारा निर्धारित होता है।

यदि उपर्युक्त व्याख्या में प्लेटो ने वास्तव में प्रोटगोरस का ही मत व्यक्त किया है तो हमें यह मानना पड़ेगा कि प्रोटगोरस के अनुसार नैतिकता और विधि दोनों का स्रोत राज्य ही है। प्रत्येक नागरिक को यह अधिकार है कि वह अपने मत पर दृढ़ रहे किन्तु साथ ही वह इस बात के लिए भी बाध्य है कि अपने आचरण से वह उस मत का उल्लंघन नहीं करेगा जो राज्य की विधि-व्यवस्था द्वारा होता है। यह रूसो की La volonte generale और la volonte de tous के अन्तर का स्मरण दिलाता है किन्तु प्रोटगोरस की टॉ' रूसो की (general will) (सामान्य इच्छा) नहीं है। यह तो सामुदायिक निर्णय' है और इस धारणा में यह भी सन्निहित नहीं है कि यह निर्णय अनिवार्यतः और सदैव उचित ही होगा। प्लेटो का कहना है (Theaet १६७) कि यदि परिवर्तन स्थान अथवा रोकने में नगर राज्य कोई त्रुटि करता है तो बुद्धिमान नागरिकों का यह कर्तव्य हो जाता है कि वे अपने सह नागरिकों को शान्तिपूर्ण ढंग से यह समझाने का प्रयास करें कि राज्य के निर्णय की अपेक्षा उनका मत अधिक उपयुक्त है। प्लेटो के इस कथन में यह संकेत नहीं है कि ये बुद्धिमान व्यक्ति किसी भी अर्थ में स्वयं शासन चलाने का प्रयास करेंगे[१] और न किसी विशेष प्रकार के संविधान पर जोर दिया जाता है। हाँ, यह तो सामान्य स्थिति के रूप में स्वीकार किया गया है कि नगर का शासन विधि द्वारा होता है बिना अनुत्तरदायी निरंकुश शासक द्वारा नहीं। नगर राज्य को इस प्रकार एक नैतिक सत्ता के रूप में प्रस्तुत करना कोई आश्चर्य की बात नहीं है। इस प्रकार का नैतिक आधार यूनानी नगर-राज्य की सामान्य विशेषता थी। किन्तु महत्त्वपूर्ण बात तो यह है कि यह निसंकोच स्वीकार किया गया है कि यदि यह स्थिति स्वीकार कर ली जाती है तो यह भी स्वीकार

---

१ वे एक प्रकार के 'विरोधी दल' का काम करते हैं।

प्रति एक भावना सामान्य रूप से व्याप्त रहती है। ये दोनों दृष्टिकोण प्रोटगोरस के ही विचार के रूप में प्रस्तुत किए गये हैं। किन्तु प्लेटो ने स्वयं यह स्पष्ट कर दिया है कि थिएटीटस' में जिस राजनीतिक सिद्धान्त को प्रस्तुत किया गया है वह प्रोटगोरस से नहीं प्राप्त किया गया है केवल सम्भावित निष्कर्ष मात्र है। इसलिए यह उचित होगा कि इन दोनों ग्रन्थों में व्यक्त विचारों में जहाँ कहीं एकरूपता का अभाव हो[1] अथवा दोनों के विचार परस्पर विरोधी प्रतीत हों हम प्रोटगोरस को ही अधिक विश्वसनीय मानें। दोनों संवादों (रचनाओं) में यह पहले का भी है और सामान्यतः प्रोटगोरस के व्यक्तित्व और उनके विचारों का विश्वासोत्पादक विवरण भी प्रस्तुत करता है। किन्तु इतना तो स्मरण रखना ही होगा कि यह संवाद के रूप में प्रस्तुत प्लेटो की रचना है और एक प्रकार से ऐतिहासिक नाटक है और प्लेटो ने इसे इस प्रवीणता से लिखा है कि पढ़ते समय यह भ्रम हो जाता है कि हम वास्तविक विवरण पढ़ रहे हैं। फिर भी यह आवश्यक नहीं है कि इसमें प्रस्तुत तथ्यों को हम सर्वथा अस्वीकृत कर दें। इतना तो हम विश्वासपूर्वक मान सकते हैं कि प्रोटगोरस में जो आख्यान[2] प्लेटो ने प्रस्तुत किया है वह प्रोटगोरस की उस रचना पर ही आधारित है जिसका उल्लेख हम पहले कर चुके हैं—मानव की मूल अवस्था के बारे में।

जो शिक्षा प्रोटगोरस देता था वह कुछ भाषणों द्वारा व्यावसायिक योग्यता जैसे औषधि अथवा संगीत का प्रदान करने तक नहीं सीमित था। उसकी शिक्षा तो विशेषकर उन नवयुवकों के लिए थी जो अपने नगर राज्य (पोलिस) के प्रबन्ध में ख्याति प्राप्त करने की अभिलाषा रखते थे। प्रोटगोरस द्वारा प्रदान की जाने वाली यह शिक्षा राजनीतिक कौशल अथवा राजनीतिक श्रेष्ठता पालिटिका, टक्नी या पोलिटिकी

---

१ यह समस्या इतनी जटिल है कि यहाँ सम्भव नहीं है कि इस पर विचार किया जा सके। लोएनेन ने इन दोनों ग्रन्थों को संगत माना है किन्तु इसे सिद्ध नहीं किया है। Max Salomon Zeitschrift der Savigny Stiftung fur Rechtsgeschichte (Romanist Abt.) XXXII, १९११, p १३५ff, ने इन दोनों पुस्तकों के विचारों में समानता स्थापित करने के लिए थिएटिटस के अनुच्छेदों की जो व्याख्या की है उसमें यह दिखाया गया है कि न्याय केवल विधि का वर्णन करती है और राज्य के ऊपर किसी प्रकार का उत्तरदायित्व नहीं स्थिर करता। Max Salomon के इस निबन्ध की चर्चा करने के लिए मैं लोएनेन की पुस्तक का आभारी हूँ।

२ टिप्पणी और निष्कर्ष सम्भवतः प्रोटगोरस की दूसरी पुस्तक पेरी पोलिटिआस से लिए गये हैं।

गन्दी प्राप्त करने को शिक्षा कहा जाती है। दूसरे शब्दों में इस प्रशिक्षण द्वारा व्यक्ति अच्छा राजनीतिज्ञ और अच्छा नागरिक बन सकता था।[1] यदि इस प्रकार का प्रशिक्षण प्रदान किया जा सकता है तो निश्चय ही राजनीति की एक व्यावहारिक समस्या का समाधान करने में यह पर्याप्त सहायक होगा। किन्तु जैसा कि मार्क्साज, जिसे प्लेटो ने प्रोटेगोरस के प्रश्नकर्ता के रूप में प्रस्तुत किया है, ने संकेत किया है अनुभव से यह ज्ञात होता है कि अच्छे से अच्छे राजनीतिज्ञ भी कोई ऐसा उपाय नहीं पा सके जिससे वे अपने बच्चों को लालन-पालन और शिक्षा द्वारा अपनी योग्यता हस्तान्तरित कर सकें। अभिजात-तन्त्र का आधार यह दृष्टिकोण था कि इस प्रकार की योग्यता वंशानुगत होती है अथवा कम से कम परिवार की एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक हस्तान्तरित होती रहती है और प्रशिक्षण द्वारा प्रदान की जाने वाली योग्यता इसकी तुलना नहीं कर सकती। एथेन्स का लोकतन्त्र इस दृष्टिकोण से सर्वथा भिन्न सिद्धान्त पर आधारित था। इसमें राजनीतिक श्रेष्ठता किसी विशेष गुण अथवा कौशल की श्रेणी में नहीं आती थी और यह आशा की जाती थी कि केवल नागरिक होने के नाते सभी नागरिकों में या तो यह योग्यता होगी और यदि नहीं है तो वे अपनी वृत्ति सम्बन्धी योग्यता के अतिरिक्त इसे भी शिक्षा द्वारा अर्जित कर लेंगे। प्रोटेगोरस ने भी शिक्षा द्वारा राजनीतिक योग्यता के अर्जन के सिद्धान्त का समर्थन किया किन्तु उसने एक महत्त्वपूर्ण बात और जोड़ दी। उसके अनुसार राजनीतिक श्रेष्ठता का तात्पर्य है अच्छा (श्रेष्ठ) नागरिक होना किन्तु इस श्रेष्ठता की मात्रा में अन्तर हो सकता है। कुछ नागरिक ऐसे होते हैं जिन्हें शिक्षा दीक्षा द्वारा वास्तविक राजनीतिज्ञ बनाया जा सकता है। प्रोटेगोरस ने यह नहीं बताया है कि इस प्रकार की शिक्षा-दीक्षा किन नागरिकों को दी जायगी और न उसने यही बताया कि वास्तविक राजनीतिज्ञ की प्रतिभा रखनेवाले नागरिकों को किस प्रकार चुना जायगा। व्यवहार में इस प्रकार का चुनाव नहीं हुआ यह तो स्पष्ट है क्योंकि प्रोटेगोरस द्वारा प्रदान की जाने वाली शिक्षा का द्वार उन सभी नागरिकों के लिए खुला था जो शुल्क दे सकते थे। इस प्रकार यदि प्रोटेगोरस वास्तव में एक ऐसे प्रबुद्ध वर्ग का निर्माण करना चाहता था जो राज्य के महत्त्वपूर्ण पदों[2] पर कार्य

---

१ यह मान कर चला जाता है कि अच्छा नागरिक अच्छा राजनीतिज्ञ भी होगा, क्योंकि एगाथोस और एरेटी दोनों शब्दों का तात्पर्य अच्छाई और योग्यता से है। (मूल पुस्तक में विशेषतया ३२२B—३२३B) एरेटी और टेक्नी दोनों शब्दों का प्रयोग एक साथ किया गया है पहले एक का और बाद में दूसरे का। 'virtue' भी एक 'Skill (कौशल)' ही है।

२ जैसे एथेन्स के १० महत्त्वपूर्ण पद (स्टटीगोइ)। इस पद पर पेरीक्लीज ने प्राय कार्य किया जिसके फलस्वरूप इसके महत्त्व में और भी वृद्धि हो गई।

कर सकता अथवा विधि और नतिकता सम्बन्धी समस्याओं पर बुद्धिमत्तापूर्ण तथा विश्वासोत्पादक परामर्श प्रदान कर सकता[1] तो इस वर्ग म प्रवेश पाने का आधार यही हो सकता था। किन्तु हम इस बात को निश्चयपूर्वक नहीं कह सकते, क्योंकि प्राटगोरस ने अपनी किसी रचना म आदर्श राज्य की कल्पना नहीं की है। इसके विपरीत, यह कहना अधिक उपयुक्त होगा कि चूंकि इस वर्ग म प्रवेश पाने के लिए किसी विशिष्ट परिवार म जन्म आवश्यक नहीं समझा जाता था इसलिए सभी नागरिकों के लिए इस वर्ग का द्वार खुला था। इस निष्कर्ष को स्वीकार करने म तभी आपत्ति हो सकती है जब कोई यह समर्थन करे कि जेल म रहकर आते ही किसी व्यक्ति म वह योग्यता आ जाती है जो पहले उसम नहीं थी। अतएव, प्राटगोरस में हम यह आशा कर सकते हैं कि वह इस बात से सहमत रहा होगा कि सभी मनुष्यों म, जब तक वे पूर्णतया पतित[2] नहीं हो गये हैं, अच्छा नागरिक बनने की प्रवृत्ति और शिक्षा म लाभ उठाने की क्षमता विद्यमान रहती है। प्राटगोरस की रचनाओं म इस बात का समर्थन भी मिलता है। प्रत्येक व्यक्ति म न्याय और नागरिकता का सामान्य-कौशल' का अंश होता है और एथेन्सवासियों का यह विश्वास कि उनके प्रत्येक नागरिक म नागरिक गुणों तथा श्रेष्ठता (एरेटी) की एक निश्चित मात्रा अवश्य विद्यमान है सर्वथा तर्कसंगत है, क्योंकि इसके अभाव म किसी भी नगर राज्य का अस्तित्व सम्भव नहीं हो सकता (३२३A)। तथापि शिक्षा और अभ्यास आवश्यक माने गये हैं और राज्य का यह कर्तव्य बताया गया है कि वह नागरिकों द्वारा बाल्यकाल म प्राप्त शिक्षा के पूरक के रूप म विधि की व्यवस्था करे। कोई भी नागरिक ऐसा नहीं होना चाहिए जो विशेषज्ञ न हो। किन्तु प्रत्येक व्यक्ति से किस मात्रा म विशेषज्ञता की आशा की जाती है तथा सम्पत्तिशाली लोग जो सबसे अच्छे शिष्य होते थे इस विशेषज्ञता को दूसरों की अपेक्षा किस मात्रा म अधिक अर्जित कर सकते थे इस विषय म प्लेटो की आख्या कोई प्रकाश नहीं डालती।

हाँ, प्लेटो एक बात पूर्णतया स्पष्ट कर देता है और वह यह है कि प्रोटगोरस

---

१ प्लेटो ने थियेटीटस (Theaet १६८B) में इसी प्रकार की व्यवस्था की कल्पना की है।

२ ऐसे व्यक्तियों को मृत्यु दण्ड मिलना चाहिए (protag ३२२D)। अपराधी को सदैव दण्ड मिलना चाहिए, किन्तु दण्ड का उद्देश्य सुधार होना चाहिए प्रतिशोध नहीं (३२६B)। दण्ड का यह नया तथा महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त स्वयं सिद्ध समझकर प्रासंगिक ढंग से ही प्रस्तुत किया गया है। (३२४B)।

के पास इस प्रश्न का कुछ उत्तर था कि मनुष्य क्या है ? (देखिए पृष्ठ १८३) न्याय का प्रवृत्ति तथा अन्य सामाजिक गुणों का मनुष्य का विशेषता बना कर वह न केवल हानि की भाँति मनुष्य का पशु से पृथक करता है अपितु व्यक्ति के भविष्य का उसके समुदाय के भविष्य के साथ जोड़ देता है। मनुष्य का यह एक राजनीतिक प्राणी के रूप में देखना है और कुछ समय पश्चात् अरिस्टाटल ने मनुष्य की जो परिभाषा दी उसकी मान्यता का प्रोटागोरस ने पहले से स्वीकार किया है। अरिस्टाटल द्वारा दी गयी यह विख्यात परिभाषा इस प्रकार है—मनुष्य एक राजनीतिक प्राणी है। इस प्रकार कुछ समय के लिए मनुष्य दर्शन का केन्द्र बिन्दु बन गया और परम्परागत दर्शन में ब्रह्माण्ड और मूल पदार्थ के अध्ययन का जो महत्त्व दिया जाता था वह अब मनुष्य को मिलने लगा। यह सच नहीं है कि मनुष्य को दर्शन का केन्द्र बिन्दु सर्वप्रथम प्रोटागोरस ने ही बनाया।[1] किन्तु राजनीतिक जीवन की उत्पत्ति पर ध्यान देकर राजनीतिक दर्शन की कुछ समस्याओं का समाधान करने का जो प्रयास उसने किया उससे राजनीतिक चिन्तन को एक नई दिशा मिली। सामुदायिक जीवन व्यतीत करने के लिए मनुष्य के प्रारम्भिक प्रयास तो अज्ञात के गर्भ में ही रह गये थे। और इस सम्बन्ध में प्रोटागोरस को किसी भी प्रकार का ऐतिहासिक विवरण नहीं उपलब्ध हो सका था जिसके आधार पर वह प्रारम्भिक राजनीतिक जीवन के बारे में कुछ निर्णय कर सकता। बाद में रूसो के सम्मुख भी यही समस्या उपस्थित हुई और उसे कहना पड़ा कि Commencons donc par ecarter tous les faits car ils ne touchent point a la question[2] इस प्रकार प्रोटागोरस और उसके पश्चात् लोगों को भी इस सम्बन्ध में प्राय पौराणिक कथाओं का सहारा लेना पड़ा है और राजनीतिक जीवन के प्रारम्भिक प्रयासों को जो चित्र वे प्रस्तुत करते हैं वे अज्ञात परम्पराओं पर आधारित है और अपने इन विचारकों की स्वतन्त्र कल्पना पर। मनुष्य की प्रारम्भिक अवस्था से सम्बन्धित कथाओं (म्यूथास) का अध्ययन हम इसी आशा से करते हैं कि सम्भवत इसकी सहायता से हम इस प्रश्न पर कुछ प्रकाश डाल सकें कि किस प्रकार मनुष्य अच्छा सामुदायिक जीवन व्यतीत कर सकता है ? इसके

---

१ इस सम्बन्ध मे जेनोफेनस (Xenophanes) का नाम निश्चित रूप से प्रोटेगोरस से पहले आता है । देखिए W Nestle का सस्करण protagoras भूमिका पृष्ठ २५।

२ Discours sur l origine de l [inegalite parmiles hommes, १८५४ p २

लिए यह जानना उपयोगी होगा कि प्रारम्भ म मनुष्य न किस प्रकार अच्छे सामुदायिक जीवन को सभव बनाया । इस ज्ञान की उपयोगिता इस बात म नहीं है कि इस प्रश्न का उत्तर मनुष्य की प्रारम्भिक सामुदायिक अवस्था के बारे म तथ्यो पर आधारित चित्र प्रस्तुत करता है अपितु इस बात म है कि यह मुख्य समस्या पर कितना प्रकाश डालता है। अत यदि हम निश्चित रूप से इस प्रश्न का उत्तर न भी दे सकें कि क्या पारस्परिक आवश्यकता के कारण मनुष्य एक साथ रहने लगे (Plato, Republic ii) अथवा सम्पत्ति का अर्जन प्रारम्भ करने के कारण मनुष्य को सामुदायिक जीवन व्यतीत करने के लिये बाध्य होना पडा (Rousseau Discours part ii init) ? फिर भी इस पर विचार करने स कुछ प्रकाश अवश्य प्राप्त होता है। प्रोटगोरस न पौराणिक कथा की शैली का प्रयोग करते हुए भी एतिहासिक विवरण प्रस्तुत करन का प्रयास किया है और अतीत के सम्बन्ध म जो कुछ भी वह जान सका उसका उपयोग उसन इस एतिहासिक वृत्तान्त की रचना म किया। उसके अनुसार प्रारम्भ म मनुष्य होमर के साइक्लोप्स (Cyclopes) की भाँति अलग-अलग परिवारो मे रहता था। उसे इस बात का ज्ञान था कि पोलिस नगर का प्रथम कर्त्तव्य निवासियो को सुरक्षा प्रदान करना है। वह यह भी जानता था कि सामुदायिक जीवन की प्रारम्भिक अवस्था म व्यक्ति का स्थान नगण्य था। इस सिद्धान्त का समर्थन वह नहीं करता कि राज्य का अस्तित्व किसी एसी सविदा पर आधारित है जिसम व्यक्तियो न अपनी पारस्परिक सुरक्षा क लिए अपनी स्वतन्त्रता का समर्पण कर दिया (अगला अध्याय देखिए)।

राज्य की उत्पत्ति की कहानी के लिए प्रोटगोरस न प्रामीथियस (Prometheus) का पौराणिक कथा को आधार बनाया है और पर्याप्त स्वतन्त्रता के साथ उस कथा का सशोधन और विस्तार किया है। प्रारम्भिक अवस्था म मनुष्य की दुर्दशा तथा सकट और उत्तरोत्तर विकसित होन वाली सभ्यता के लक्षणो और इसकी अवस्थाओ का वर्णन इस कहानी म मिलता है । धर्म, भाषा, कृषि, वस्त्रोत्पादन, गृह निर्माण तथा इस प्रकार के अन्य साधनो के आविष्कार के साथ साथ मानव सभ्यता का विकास होता गया और मनुष्य का जीवन सुगम हुआ। किन्तु हिंस्र वन्य-पशुओ से अब भी सकट था। इस सकट से मुक्ति पान का एकमात्र उपाय यही था कि लोग सहयोग से रहे और एक दूसरे की सहायता करे। किन्तु अभी तक जिन कलाओ को मनुष्य न सीखा था उसम राजनीतिक कला नहीं थी। अत वे न्यायोचित व्यवहार नहीं करते थे। परिणाम स्वरूप नगरो म एक साथ रहन का प्रथम प्रयोग असफल रहा। एसी दशा म मानव जाति को नष्ट होने से बचाने के लिए जियूस (Zeus) न हर्मिस (Hermes) को भेजा जिससे वह मनुष्यो को शिष्टता और न्याय (एइडोज तथा डिकी) की शिक्षा दे

त्व'।[1] इससे हम यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि राजनीतिक कला का प्रशिक्षण तभी सम्भव हो सकता है जब मनुष्यों में आवश्यक नैतिक गुण विद्यमान हों। प्रोटेगोरस की इस कहानी में आगे चल कर यह भी बताया गया है कि इन्हीं दोनों गुणों के कारण नगरों में शान्ति की स्थापना हो सकती है तथा नागरिक परस्पर मैत्री के सूत्र में बंध सकते हैं।[2] किन्तु इन दोनों गुणों के द्वारा ही अन्याय और दुराचरण (एडिकिया) के दोषों का निराकरण सम्भव रहा है। इसके लिए शिक्षा और दण्ड अत्यन्त आवश्यक हैं। प्रोटेगोरस की यह कथा इन शब्दों के साथ समाप्त होती है। हॉमिस ने तब ज़ियस से पूछा कि मनुष्यों में न्याय और शिष्टता (डिकी तथा एइडाज) का वितरण वह किस प्रकार से करे। क्या इनका वितरण भी उसी आधार पर होगा जिस कौशल अथवा कला (टक्नाइ) का हुआ है? अर्थात् कला जिस ढंग से एक व्यक्ति को औषधि का ज्ञान और कौशल प्रदान करके यह आशा की जाती है कि वह कुछ व्यक्तियों को भी औषधि के ज्ञान और कौशल में अनभिज्ञ हैं स्वस्थ कर सकेगा। उसी ढंग से न्याय और श्रेष्ठता भी संसार के कतिपय थोड़े से व्यक्तियों को प्रदान की जायगी अथवा सभी को इनका पात्र समझा जायगा? ज़ियस का उत्तर था—संसार के सभी मनुष्य इनके पात्र होंगे। अन्यथा यदि वस्तिक कौशल की भाँति ये भी केवल कुछ लोगों को ही मिलेंगी तो नगरों की स्थापना सम्भव नहीं हो सकेगी। ज़ियस ने हॉमिस से यह भी कहा कि इन गुणों से प्राप्त विधि के रूप में स्थापित कर दो कि जो व्यक्ति शिष्टता और न्याय के अयोग्य है उसे राष्ट्रनाशक रोग समझकर मृत्यु दण्ड दिया जायगा (३२२ D)।

१　डाइक (न्याय) के सम्बन्ध में अध्याय दो का अवलोकन कीजिए। एइडाज का अर्थ शिष्टता (decency) से कुछ अधिक है। स्वयं यूनानी भी इसके दो रूपों से हैरान थे—रचनात्मक दूसरों के लिए लिहाज, नकारात्मक विश्वासहीनता और पश्चात्ताप। देखिए—Hesiod, W D २१८ २१० and cp Ecclesiasticus iv २१ कदाचित नैतिक भावना काफी होगी।

२　एक नगर के निवासी दूसरे नगर के सदस्य हैं—इस भावना के बिना कोई नगर सुव्यवस्थित एवं सुगठित नहीं रह सकता। इस अनुच्छेद पर D Loenen (पृष्ठ ८ ११ और १०८ १११) देखिए जो का अनुवाद राजनीतिक अर्थ में सुसंगठन और एकता बताते हैं। इसी प्रकार Democritus और Antiphon में आमोनोइया का भी।

इस दृष्टिकोण का समर्थन करने के कारण प्रोटागोरस को एथेन्स की प्रचलित प्रथा में, जिसके अनुसार प्रत्येक नागरिक में उसकी वैतिक प्रवीणता के अतिरिक्त पर्याप्त राजनीतिक कौशल की आशा की जाती थी कोई दोष नहीं दिखाई दिया। एथेन्स के प्रत्येक नागरिक से यह आशा की जाती थी कि उसमें इतनी राजनीतिक श्रेष्ठता होगी कि राज्य सम्बन्धी समस्याओं पर वह उपयोगी परामर्श दे सकेगा। इस प्रकार की आशा रखने में कोई दोष भी नहीं था। दोष तो उस अव्यवस्थित प्रणाली में था जिसके द्वारा नागरिक सामान्यतया इस प्रकार की श्रेष्ठता प्राप्त करते थे। दूसरे शब्दों में राजनीतिक शिक्षा की समुचित व्यवस्था का अभाव ही एथेन्स की लोकतन्त्रात्मक व्यवस्था का मुख्य दोष था। प्रत्येक स्वतन्त्र मनुष्य[1] में जब तक कि उसमें कोई असाधारण दोष अथवा अभाव नहीं है वे सभी नैतिक गुण पाये जाते हैं जिनसे सामूहिक जीवन सम्भव हो सकता है तथा जो उसे शिक्षा से राजोचित होने की योग्यता प्रदान करते हैं। इसका तात्पर्य यह नहीं है कि शिक्षा से राजनीतिज्ञ होने की क्षमता सभी मनुष्यों में एक ही मात्रा में होती है। यद्यपि न्यूनतम मात्रा में आवश्यक प्रतिभा सभी व्यक्तियों में पाई जाती है और सभी को समान रूप से एक विधि का पालन करना पड़ता है फिर भी कुछ व्यक्ति ऐसे होते हैं जो शिक्षा से अधिक लाभ उठा सकते हैं अर्थात् दूसरों की अपेक्षा शिक्षा के श्रेष्ठतर पात्र होते हैं। प्रकृति प्रदत्त शक्तियों और युवावस्था के प्रारम्भ[2] में प्रदान की गई अच्छी शिक्षा के सहारे से कुछ ऐसे नागरिक बनाये जा सकते हैं जो सामान्य शासित नागरिकों की अपेक्षा राज्य के राष्ट्रीय समस्याओं पर अधिक उचित परामर्श दे सकेंगे। उचित परामर्श की क्षमता को ही प्रोटागोरस ने अपनी शिक्षा[3] का उद्देश्य बनाया।

---

१ इस प्रकार के विकल्प की धारणा ध्यान देने योग्य है। पृष्ठ १७५।१७६ से तुलना कीजिए। किन्तु इसे दूर करने का विचार भी सुदूर भविष्य की वस्तु नहीं है। अगले अध्याय के प्रारम्भ में देखिए। प्लेटो और अरिस्टाटेल के विचारों में तो इस प्रकार के विकल्प के लिए कोई स्थान नहीं है। उनकी दृष्टि में तो केवल स्वतन्त्र व्यक्ति ही नैतिक गुणों से पूर्ण हो सकता था। यह भी ध्यान देने योग्य है कि मानव इतिहास का जो विवरण, प्रोटगारस ने प्रस्तुत किया है उसमें सभ्यता के सभी 'तकनीकें' यहाँ तक कि भाषा और धर्म भी नैतिकता के पूर्व की अवस्था में विकसित हो चुकी थीं। Lucretius के विचारों से तुलना कीजिए, देखिए अध्याय १३।

२ Frag = Diels

३ Plato, protag ३१८ E अर्थात् सम्वाद में उसकी वोनोंओ के पूर्व।
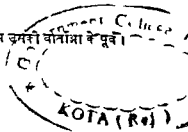
राजनीतिक दर्शन के क्षेत्र में प्रोटागोरस के योगदान का मूल्यांकन करना कठिन है। स्वयं प्रोटागोरस की रचनाएँ उपलब्ध नहीं हैं और जो कुछ भी हम उनके सम्बन्ध में जानते हैं वह दूसरे लेखकों से प्राप्त हुआ है। इसके अतिरिक्त इस प्रकार की सामग्री भी सीमित ही है। प्लेटो ने अपनी रचनाओं में उन्हीं अंशों का उपयोग किया है जो उसे अपने उद्देश्य के प्रतिपादन के लिए आवश्यक प्रतीत हुए। ऐसी दशा में प्रोटागोरस के विचारों और उसकी शिक्षण-पद्धति से सम्बन्धित कितनी ही आवश्यक बातों के बारे में हमारा ज्ञान अपर्याप्त है। उदाहरणार्थ हम यह नहीं जानते हैं कि किसी प्रश्न के दोनों पक्षों का अध्ययन करने की शिक्षा वह किस ढंग से देता है। हम केवल इतना सुनते हैं कि इस प्रकार की शिक्षा वह देता था। इसी तरह ज्ञान प्राप्त करने के लिए आवश्यक किन्तु उच्च स्तरीय लगभग असम्भव स्तर के उसके प्रमाणों के बारे में भी हम नहीं जान पाये हैं। उसके विख्यात धराशायी कर देने वाले (Knock em down)[1] तर्कों से भी हम अपरिचित ही हैं। किन्तु, ऐसे व्यक्ति को जो न्यायसंगत होने का सतत प्रयास करता है और उपयुक्त सामग्री के अभाव में अपना मत नहीं निर्धारित करता है लोगों की मिथ्या धारणा और अनादर का पात्र होना पड़ता है। प्रोटागोरस की भी यही स्थिति थी। उस समय का प्रचलित प्रश्न था—राजतन्त्र अभिजाततन्त्र और लोकतन्त्र में कौन सी व्यवस्था सर्वश्रेष्ठ है? इस प्रश्न का प्रोटागोरस ने क्या उत्तर दिया यह भी हमें नहीं मालूम हो सका है। इस प्रश्न का उत्तर देने से सम्भवतः वह इनकार कर देता किन्तु इन तीनों व्यवस्थाओं के समर्थन में युक्ति और तर्क प्रस्तुत करने में उसे कोई कठिनाई न होती। हो सकता है कि इस सन्दर्भ में वह हेरोडोटस के Persian Dialogue (अध्याय तीन) के स्थान पर भी कुछ प्रकाश डालता। इसके अतिरिक्त जिन कथाओं और वार्ताओं का उल्लेख हमने अभी किया है उनमें इस प्रश्न पर विभिन्न उत्तरों का संकेत मिलता है और इन उत्तरों में से एक या दो उत्तरों का विश्लेषण करने पर इस दार्शनिक से निश्चित उत्तर प्राप्त किया जा सकता है। उपर्युक्त कथा के अन्त में निष्पक्षता और औचित्य के सामान्य वितरण के जिस सिद्धान्त का प्रतिपादन उसने किया है वह तथा उसके विचारों की अन्य विशेषताएं समानता (आइसोनोमिया) की ओर इंगित करता है और यह लोकतन्त्र तथा हेरोडोटस के उपर्युक्त सम्वाद में ओटेन्स (प्रथम वक्ता) का नारा था। उचित परामर्श (इयूबोलिया) जिसकी क्षमता प्रदान करना प्रोटागोरस अपनी शिक्षा का उद्देश्य बताता था अभिजाततन्त्र तथा हेरोडोटस के सम्वाद में मेगाबाइजस का उद्देश्य था। इसी सम्वाद में राजतन्त्र के समर्थन में डेरियस द्वारा प्रस्तुत तर्क भी प्रोटागोरस के विचार के

---

[1] ओइ काटाबल्लोनटस (लोगोइ) उसके अनुपलब्ध ग्रन्थ का नाम है।

रूप म प्रस्तुत किय जाने हैं क्योंकि य तत्र परिस्थिति की स्थिति के अनुरूप हैं।[1] किन्तु सत्य तो निश्चित रूप से यही है कि सविधानो के सम्बन्ध म प्रोटगोरस कोई मत्रणा नहीं दे सकता था। उसके अनुसार शासन का स्वरूप उतना महत्त्वपूर्ण नहीं है जितना कि नगर राज्य के व्यक्तियो का चरित्र। राजनीतिक श्रेष्ठता का आधार नैतिक श्रेष्ठता है। प्रोटगोरस ने इसी स्रोत के आधार पर प्लेटो ने अपनी रिपब्लिक का प्रासाद निर्मित किया है। प्रोटगोरस की परिचर्चाओ का कोई विवरण लिखित रूप म सुरक्षित नहीं रह पाया है। फिर भी इतना तो निश्चित ही है कि उसने कई मार्गदर्शक सिद्धान्त प्रस्तुत किए जिनमे से कुछ सिद्धान्तो से तो हम परिचित हैं। साथ ही परिव्राज के समय म एथन्स के सविधान म उसके कुछ सिद्धान्तो को व्यवहृत भी किया गया। इनके आधार पर हमारे लिए यह कहना सम्भव है कि यदि प्रोटगोरस एक आदर्श सविधान की रचना करता तो निश्चित है कि वह निम्नलिखित तीन बातो पर विशेष ध्यान देता और इनम भी तीसरी बात को अत्यधिक महत्त्वपूर्ण समझता —

१ विधि के समक्ष सभी समान है और सभी अपने कार्यों के लिए उत्तरदायी हैं।

२ योग्य और सुशिक्षित व्यक्ति दूसरो की अपेक्षा अधिक उपयोगी होता है और उसे उनके अनुकूल आदर और पदोन्नति प्रदान करना चाहिए।

३ सामाजिक दृष्टि से जो उपयोगी है वह नैतिक दृष्टि से उचित है।

यहाँ इस बात की ओर ध्यान देना आवश्यक है कि प्रोटगोरस व्यक्ति को यह अधिकार नहीं देता है कि वह यह निश्चित करे कि सामाजिक दृष्टि से क्या उपयोगी है। यह अधिकार तो समुदाय को प्राप्त है और सामुदायिक निर्णय (टा कोइनो डाक्सान) द्वारा ही यह निर्धारित किया जा सकता है। व्यक्ति तो केवल अपना दृष्टिकोण व्यक्त कर सकता है। किन्तु जब तक प्रत्येक व्यक्ति म नैतिक भावना नहीं रहती तब तक समुदाय का निर्णय भी सामाजिक दृष्टि से उपयोगी न होकर विनाशकारी होगा।

प्रोटगोरस के अतिरिक्त, अन्य तीन शास्त्रीय[2] शिक्षक प्राडीकस (Prodicus), हिप्पियास (Hippias) और जार्जियास (Gorgias) अधिक महत्त्वपूर्ण नहीं हैं। सियास (Ceos) निवासी प्राडीकस का योग केवल यह है कि उसने भाषा के प्रयोग म सतर्कता तथा पारिभाषिक शब्दो के अन्तर की भली भाति समझने की ओर ध्यान आकृष्ट किया। व्याकरण[3] की नीव तो प्रोटगोरस ने ही डाल

---

१ इस अध्याय के अत मे दी गई टिप्पणी का अवलोकन कीजिए।

२ इन चारो को 'older' sophists भी कहा जाता है।

३ Plato, Phaedrus २६७ C,

दी थी किन्तु भिन्न जन्म अथ या न दा ा के अंतर का स्पष्ट करने का प्रयास प्रा ाकिय ने ही किया। वस स्वय उसका इसम अ छी प -परिभाषा म य विशेषता नहीं है। प्राडीकस प्राटगोरस का समकालीन था किन्तु उम्र म उसस कम था। राजनीतिक श्रेष्ठता का शिक्षा प्रदान करनेवाले शिक्षा का वह दशन और राजनीति क मध्य स्थित व्यक्ति कहता था।[1] पाँचवी शताब्दी के अधिकाश शिक्षकों की भांति वह भी प्लेटो क सम्वाद[2] म एक पात्र क रूप म आता है किन्तु इस सम्वाद म वह एक ही बार प्रकट होता है और उसके कथन को प्लेटो अधिक महत्त्व नहीं देता है। परन्तु अन्य सम्वादों म प्लेटो न उसका प्राय उल्लेख किया है। प्लेटो के इन उल्लेखों म यह भी प्रतीत होता है कि शब्दों क अर्थ क सम्बन्ध म प्राडीकस के अध्ययन म सुकरात और प्लेटो दोनों लाभान्वित हुए। इसके अतिरिक्त प्लेटो उपयोगी शिक्षकों की श्रेणी म प्राडीकस की गणना करता है और उस श्रेष्ठतम प्राडीकस के नाम से विभूषित करता है। प्लेटो से प्राप्त होनेवाले इस आदर का कारण हरक्लीज (Heracles) की वह कथा है जिसकी रचना प्राडीकस ने की थी। इस कहानी को जनोफन (Xenophon) ने लगभग मूल भाषा म सुरक्षित रखा है। इस कथा म हरक्लीज को न तो सत्त्व के एक ऐसे विजेता क रूप म प्रस्तुत किया है जो दिन रात शराब के नशे म चूर रहता है और न एक डारियाइ नायक के रूप म ही। इस कथा म हरक्लीज को एक ऐसे व्यक्ति के रूप म प्रस्तुत किया गया है जो सुखमय जीवन का त्याग कर सम्यक् न्याय क कठिन मार्ग को अपनाता है। राजतन्त्र का समर्थन करनेवाले राजनीतिक सिद्धान्तों ने बहुत दिनों तक इस कथा को जीवित रखा। किन्तु अच्छे आचरण का समर्थक होते हुए भी प्राडीकस की नैतिकता किसी ईश्वरीय सिद्धांत पर नहीं आधारित थी। वह तो उन लोगों म था जो प्राकृतिक शक्तियों की उपासना करते थे और प्रकृति क विभिन्न स्वरूपों को देवता मान लेते थे (Fr ५)। इसलिए उसकी गणना नास्तिकों म की जाती थी।[3] उसके विचार म निराशा की प्रधानता है और इसका कारण सियास (Ceos) द्वीप का असन्तोषप्रद वातावरण बताया जाता है।

---

१ सभी सोफिस्टों का वर्णन तो उसने इस प्रकार नहीं किया है किन्तु कुछ के सम्बन्ध मे प्लेटो ने भी इस वर्णन को उपयुक्त माना है (Euthyd ०४ C ,०५ E) cp infra p १,४

२ Protagoras, ७ A

३ शायद यह उचित नहीं था। E R Dodds द्वारा सम्पादित Euripides की Bacchae (१९४४) पृ० ९९ देखिए।

दूसरा गास्त्रीय साफिस्ट एलिस (Elis) का हिप्पियाज (Hippias) था। उसने अनेक यात्राएँ की और यूनान के प्राय प्रत्येक नगर मे वह परिचित था। स्पार्टा म भी वह अजनबी न था किन्तु एथेन्स का ही उसने का नाम दिया। प्लेटो न अपने दो सम्वादो के शीर्षक म उसके नाम का प्रयोग किया है, Hippias Major और Hippias Minor किन्तु इन दोनो सम्वादो के आधार पर उसे एक विचारक के रूप म विशेष स्थान नही मिल सकता। इन सम्वादो म हम केवल यह जान सकते हैं कि वह घमण्डी था सवतोमुखी प्रतिभा से सम्पन्न था। गणित सम्बन्धी उसके विचारो का उल्लेख प्लेटो की इन रचनाओ म नही मिलता है। प्राडीकस की भाति प्लेटो के (protagoras (३३७ C) म यह भी एक पात्र के रूप म आता है और यह कहता है कि मनुष्य परस्पर एक प्राकृतिक सम्बन्ध स बँधे ह, किन्तु परम्परा ने इस स्वीकार नहीं किया है। इसका कारण यह है कि विधि (Nomos) एक अत्याचारी शासक है जो मनुष्यो को प्रकृति के विरुद्ध कितने ही काय करने के लिए बाध्य करता है। हिप्पियाज के राजनीतिक विचारो का वणन जनोफन न एक कहानी म किया है। इसम साक्रटीज और हिप्पियाज म न्याय और विधि के विषय पर एक विवाद होता है। स्पष्ट है कि यह विवाद काल्पनिक ही है। इस विवाद म जिन विचारो को हिप्पियाज के नाम से प्रस्तुत किया जाता है उनम और प्लेटो की Hippias Major म इसके नाम से प्रस्तुत विचारो म किसी प्रकार की असगति नही है। सार रूप म वे इस प्रकार हैं —यद्यपि विधि और प्रथा प्रकृति के प्रतिकूल हैं फिर भी यदि वे अच्छे है तो उपयोगी होगे। एक अच्छे नगर के प्रसग म ही जो सभी दोषो स मुक्त है[1] यह कहा जा सकता है कि वहाँ की प्रथा और विधि न्यायसगत है। इसके विपरीत, देवताओ का आदर करने परस्त्रीगमन मे वचन तथा नेकी करनेवालो को पुरस्कृत करने के अलिखित नियम प्रत्येक स्थान पर मान्य बताये गये है। यह दूसरी बात है कि यदा-कदा इनके विपरीत आचरण करनेवाले भी मिल जाते है और इन अलिखित नियमो का भी उल्लघन हो जाता है किन्तु इस प्रकार का आचरण भी इन नियमो की स्वाभाविकता ही सिद्ध करता है। तत्कालीन एथेन्स मे प्राय लोग अपने विरोधियो के बारे म मिथ्या प्रचार करके उनकी ख्याति पर आघात करते थे। राजनीति के क्षेत्र म तो यह दोष अत्यधिक व्याप्त था। हिप्पियाज न इसकी तीक्ष्ण आलोचना की है। उसका कहना था कि किसी व्यक्ति की ख्याति को क्षति पहुँचाना दण्डनीय अपराध है। हेरोडोटस हिप्पियाज स परिचित था और सम्भवत इस विषय पर इसके भाषणो को उसने सुना

---

१ राज्य की यह अवस्था (Xen Mem IV ४,१६,) डेमोक्राइटस द्वारा समर्पित अवस्था से भिन्न नही है।

भी होगा। उसने भी इस सम्बन्ध में इसी प्रकार का विचार व्यक्त किया है। बाद में आइसोक्रेटीज ने भी इस प्रसंग[1] अथवा मिथ्या प्रचार को उठाया। हिप्पियास का यह भी कहना था कि सुन्दर और चतुर स्त्रियाँ राजकाज में भी हस्तक्षेप कर सकती है और राजनीति के क्षेत्र में प्रभावशाली हो सकती हैं (Fr 4)।[2]

भाषा के शुद्ध प्रयोग से जहाँ राजनीतिक चिन्तन में महत्वपूर्ण सहायता मिलती है वहाँ इसका कुशल प्रयोग की क्षमता राजनीतिज्ञों की सफलता का अत्यन्त आवश्यक साधन है। ई० पू० ४२७ में सिसली के ल्योन्टिनी (Leontine) नगर का सुविख्यात वक्ता जार्जियाज (Gorgias) ने एथेन्स में पदार्पण किया। इसके आगमन से राजनीतिक समस्याओं को समझने में तो किञ्चिन्मात्र सहायता न मिली, किन्तु एथेन्स की सभा (Assembly) को प्रभावित करने की महत्ता काशा रखनेवाले नवयुवकों को पर्याप्त शक्ति मिल गई। प्रोटागोरस की भाँति राजनीतिक कौशल सिखाने का दावा तो वह नहीं करता था। वह केवल प्रभावपूर्ण वक्तृता देने अर्थात् अलंकार शास्त्र की शिक्षा प्रदान करता था। अलंकार शास्त्र के साधन शब्द होते हैं और इसका एकमात्र लक्ष्य यह था कि शब्दों का प्रयोग इस प्रकार किया जाय कि श्रोतागण वक्ता की बातों पर विश्वास कर लें। यद्यपि अलंकार शास्त्र की यह शिक्षा स्वयं अपने में उद्देश्य बन गई और वाक्चातुर्य के अतिरिक्त अन्य गुणों के विकास की ओर इसने कोई ध्यान नहीं दिया तथापि इस शास्त्र के ज्ञाता और इससे प्राप्त कौशल से सम्पन्न व्यक्ति दूसरों की अपेक्षा अधिक स्वतन्त्र और अधिक शक्तिशाली हो जाते थे दूसरों के ऊपर शासन कर सकते थे। स्पष्ट है कि एथेन्स की लोकतन्त्रात्मक व्यवस्था में बल के स्थान पर उनका-बुझाकर लोगों से काम करा लेने की क्षमता रखनेवाले व्यक्ति राज्य के लिए अत्यन्त उपयोगी होते थे। किन्तु हमारे लिए जार्जियाज (Gorgias) शीर्षक प्लेटो के सम्वाद का महत्व इस लिए नहीं है कि इसमें इन अलंकार शास्त्रियों के कथनों का अवलोकन करने का अवसर

---

१ W Nestle ने Philologus Lxvii, पृष्ठ ५६७ में इसका उल्लेख किया है। उसके अनुसार सोफिस्टों का यह मुख्य विषय था। किन्तु सम्भवतः यह सामाजिक चेतना के प्रादुर्भाव का परिणाम था। क्रम से कम नगर राज्य के जीवन में लोगों में अच्छा सम्बन्ध स्नेह और सामञ्जस्य की आवश्यकता का अभाव अनुभव तो किया ही जा रहा था।

२ तुलना कीजिए Democritus Fr २१४ यद्यपि उसका संकेत राज्य सिंहासन के पीछे से राजनीतिक शक्ति का प्रयोग करने अथवा 'पटीकोट गवनमेन्ट' की ओर नहीं है। उसका अभिप्राय स्त्रियों की आकर्षण शक्ति से है।

मिलता है। इस पुस्तक का महत्त्व तो इसलिए है कि इसमें कलीक्लीज (Callicles) के राजनीतिक सिद्धान्तों का विवरण मिलता है (कृपया अगला अध्याय देखिए)। अन्य तीन साफिस्ट विचारकों की अपेक्षा गार्जियाज के कथन मूल रूप में और पर्याप्त मात्रा में सुरक्षित हैं और आज भी उपलब्ध हैं। इनमें दो रचनाएँ हैं— Praise of Helen' और Defence of palamedes जो राजनीतिक दृष्टि से तो नहीं पर वैयक्तिक दृष्टि से कुछ महत्त्व अवश्य रखते हैं।[1] उसकी आध्यात्मिक रचना Not Being के विनाशवाद (Nihilism) में यह नहीं सिद्ध होता है कि गार्जियाज भी अनैतिकतावादी विचारकों (कृपया अगला अध्याय देखिए) की पंक्ति में था। प्लेटो भी उसे इस प्रकार के अनैतिकतावादी सिद्धान्तों के प्रतिपादक के रूप में नहीं प्रस्तुत करता है। अधिक से अधिक इतना कहा जा सकता है कि अच्छाई की परिभाषा देने में वह असमर्थ था। किन्तु अपने समय की प्रचलित नैतिकता को वह स्वीकार करता था। पलामेडीज (Palamedes) के पक्ष में एक तर्क यह भी प्रस्तुत किया जाता है कि लेखन-कला के उसके आविष्कार ने लिखित विधि को जिसे न्याय का संरक्षक[2] कहा जा सकता है सम्भव करके मानव जाति की सभ्यता की दिशा में उन्नति में सहायता दी है। यह महत्त्वपूर्ण है कि ओलिम्पिया (Olympia) के स्थान पर दिये गये उसके भाषण में (Fr 8a) एक नगर के निवासियों में ही पारस्परिक स्नेह और सौहार्द्र की भावना की आवश्यकता पर जोर नहीं दिया गया है अपितु विभिन्न यूनानी राज्यों के पारस्परिक सम्बन्ध में भी इस भावना की आवश्यकता पर जोर दिया गया है। डमोक्राइटस और एन्टीफोन ने नगर की आन्तरिक व्यवस्था को सुदृढ़ करने के लिए ही इस भावना पर जोर दिया था। हाँ, आइसोक्रेटीज ने अवश्य विभिन्न यूनानी राज्यों के पारस्परिक सम्बन्ध में सद्भावना को आवश्यक बताया है (अध्याय ७)।

---

१ Helen सेक० ६ का वह अनुच्छेद जो शक्तिशाली के अधिकारों के सम्बन्ध में है मनुष्यों और देवताओं के सम्बन्ध की ओर संकेत करता है, मनुष्यों के पारस्परिक सम्बन्ध की ओर (Callicles in plato Gorgias) अथवा मनुष्यों और शासकों के सम्बन्ध की ओर नहीं (Thrasymachus)। इस विषय पर अगला अध्याय देखिए। यह विचार मिलता है (Helen सेक० १२) कि यह दलील कि मुझे ऐसा समझाया गया उतनी ही अच्छी या बुरी है जितनी कि यह कि मुझे बाध्य किया गया। प्रोपगण्डा की सफलता का आधार 'भविष्य के सम्बन्ध में मनुष्यों का अज्ञान, वर्तमान को समझ सकने और भूतकालीन घटनाओं को स्मरण करने की उनकी असमर्थता है। (वहीं, सेक० ११)

२ Palam सेक० ३०

राजनीतिक सिद्धान्तों का अध्ययन और प्रतिपादन शिक्षण की वृत्ति के रूप में अपनाने वाले लोगों तक ही नहीं सीमित रहा। माइलेटस (Miletus) का हिप्पोडैमस (Hippodamus)[1] वृत्ति से नगर निर्माता अथवा नगर नियोजन कर्ता था। प्रोटागोरस और [illegible] के साथ उसने भी ई० पू० ४४४ में थुरी का विन्यास करने में सहायता प्रदान की थी (पृष्ठ ५७ देखिए)। आदर्श राज्य की काल्पनिक रचना करने में वह प्लेटो का अग्रगामी था। किन्तु प्लेटो ने कहीं भी उसका उल्लेख नहीं किया है और इसके सम्बन्ध में हमारा जो कुछ ज्ञान है उसके लिए हम अरिस्टाटल के आभारी हैं जिसने अपनी Politiics की दूसरी पुस्तक में प्लेटो तथा आदर्श राज्य की कल्पना करनेवाले अन्य विचारकों द्वारा प्रस्तुत आदर्श राज्यों की समालोचना प्रस्तुत की है। [illegible] के उद्देश्य से ही अरिस्टाटल ने उसका उल्लेख किया है। राजनीति में सक्रिय भाग न लेते हुए भी आदर्श राज्य की स्थापना करने का प्रयास करनेवालों में अरिस्टाटल ने हिप्पोडैमस को सर्वप्रथम बताया है। अरिस्टाटल के अनुसार वह सनकी और बकवादी था और प्रत्येक वस्तु को तीन श्रेणियों में विभाजित करना पसन्द करता था। किन्तु अरिस्टाटल की समालोचना निष्पक्ष नहीं प्रतीत होती। अपील के लिए एक उच्च-न्यायालय की स्थापना के सम्बन्ध में हिप्पोडैमस के प्रस्ताव पर वह अपना मत नहीं व्यक्त करता[2] किन्तु उसके अन्य विचित्र सुझावों की कटु आलोचना करता है। हिप्पोडैमस के आदर्श नगर की दो विशेषताएँ प्लेटो की 'रिपब्लिक' में प्रस्तुत आदर्श राज्य में मिलती जुलती हैं — एक तो आकार अत्यधिक विशाल नहीं होगा और दूसरे इसमें तीन वर्ग होंगे। किन्तु प्लेटो के असमान वर्गों के विपरीत हिप्पोडैमस के वर्गों में समानता है और किसी एक वर्ग को शासन करने का एकाधिकार नहीं दिया जाता है। इस प्रकार वर्गों के होते हुए भी हिप्पोडैमस का समाज एकता पर आधारित है। आदर्श नगर के सदस्यों की संख्या १० हजार होगी और वृत्तिक योग्यता के आधार पर उनका वर्गीकरण इस प्रकार किया जायगा — शिल्पी, कृषक और नगर के संरक्षक सैनिक। इसके बाद की शताब्दी में निश्चय ही युद्ध-कला ने एक वृत्ति का रूप धारण कर लिया किन्तु उस स्तर में नहीं जिसकी कल्पना हिप्पोडैमस और प्लेटो ने की थी।

---

१ माइलेटस से एथेंस आने के पूर्व वह विख्यात हो चुका था।

२ With the result apparently that Vinogradoff, 'Out lines of Historical Jurisprude, ii ६९, also overlooked it though he quotes and Translates Aristotle s comm ents on the proposals relating to return of verdicts

जहा तक शासन के विविध कार्यों का सम्बन्ध है हिप्पाडमस इह निर्वाचित पदाधिकारियों के हाथ म सौंपता है किन्तु यह नहीं जान पड़ता है कि इन पदाधिकारियों के कार्य की अवधि कितनी होगी और कितने समय बाद निर्वाचन होगा । इस बात का उत्तर अवश्य दिया गया है कि निर्वाचित पदाधिकारी तीन प्रकार के कार्य करेंगे—समुदाय (Kolva) विदेशियों और अनाथों के हितों की सुरक्षा। इस प्रकार हम देखते हैं कि विदेशियों और अनाथों के हितों की सुरक्षा का ध्यान कदाचित लिखित विधि म ही नहीं रखा जाता है अपितु प्रारम्भ के आदर्श संविधानों म भी उनके हितों की ओर समुचित ध्यान दिया गया है। हिप्पाडमस के आदर्श नगर म यह भी व्यवस्था की गई है कि युद्ध म मृत्यु को प्राप्त होने वालों के आश्रितों के भरण-पोषण का उत्तरदायित्व राज्य का होगा। इसमें भी उसकी मानवता का आभास मिलता है। इसके अतिरिक्त नगर के लिए उपयोगी आविष्कार करने वालों को विशेष सम्मान देने की व्यवस्था भी उसने की है। चाल्सीडन के फलियाज (Phaleas of Chalcedon) के समय के बारे म कुछ निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता है किन्तु इतना निश्चित ही है कि वह हिप्पाडमस के बाद का है। इसके सिद्धान्तों की विवेचना भी अरिस्टाटल ने उपर्युक्त समीक्षा म की है। फलियाज का दृष्टिकोण राजनीतिक न होकर आर्थिक था। किन्तु हमारे पास इतना प्रमाण नहीं है कि हम यह कह सकें कि राजनीतिक समानता को सार्थक बनाने के लिए आर्थिक समानता उसने आवश्यक समझा था। उसका आधारभूत सिद्धान्त केवल यह था कि सम्पत्ति का असमान विभाजन ही समस्त असन्तोष और मतभेद का कारण है। अत उसने एक ऐसी पद्धति निकाली जिसके द्वारा सभी नागरिकों की सम्पत्ति धीरे धीरे बराबर हो जाय। किन्तु उसकी यह पद्धति केवल भूमि-सम्पत्ति के लिए ही थी, अस्थावर सम्पत्ति इस पद्धति से अछूती रह जाती थी। इतिहास की इस अवस्था म यह भूल कुछ असाधारण प्रतीत होती है। किन्तु अरिस्टाटल के विवरण म इस प्रकार की कितनी ही भूलों की ओर संकेत किया गया है और फलियाज के बारे म हम जो कुछ भी जान हो सका है उसका एकमात्र साधन अरिस्टाटल का यह विवरण ही है। ऐसी दशा म हम अरिस्टाटल के इस निष्कर्ष को स्वीकार करने के लिए बाध्य होना पड़ता है कि फलियाज के उपायों से समाज के साधारण दोषों का ही निवारण किया जा सकता है, क्योंकि यदि समाज म प्रचलित आर्थिक असमानता को कठोरतापूर्वक दूर भी कर दिया जाय तो केवल इतने से ही समाज उन दोषों से मुक्त नहीं हो जायगा जो मूलत नैतिक है। तथापि हम यह नहीं भूलना चाहिए कि युगों से चली आने वाली समस्याओं को एक ही नुस्खे से निराकरण करने का प्रयास करनेवाले विचारकों की परम्परा फलियाज के साथ ही नहीं समाप्त हो जाती।

डिमॉक्रिटस (Democritus) एब्डेरा (Abdera) का निवासी था। प्रोटागोरस जो कि उससे लगभग बीस साल बड़ा था[1] उसका जन्म भी इसी नगर में हुआ था। प्रारम्भ में दूर-दूर भ्रमण करने के पश्चात् वह अपने नगर में ही रहा और सार्वजनिक के मामलों में अपना भाग लेता रहा। कुछ समय बाद जब वह एथेंस गया तो वहाँ उसका नाम अपरिचित रहा था। वह भौतिक शास्त्रवेत्ता था और अणु सिद्धान्त का प्रतिपादन करने वालों में उसकी गणना होती है। अपने से पूर्व के भौतिक शास्त्रवेत्ता आर्केलास की भाँति उसने भी नीतिशास्त्र और राजनीति के क्षेत्र में भी महत्त्वपूर्ण योग दिया और इस क्षेत्र में उसका कार्य अधिक मूल्यवान भी था। किन्तु प्लेटो ने उसका नाम उल्लेख नहीं किया। और यद्यपि उसके नाम से बहुत-सी रचनाएँ आज भी प्रचलित हैं उनमें से अधिकांश की प्रामाणिकता संदिग्ध है।[2]

उसने जब यह परामर्श दिया कि शरीर की अपेक्षा आत्मा की ओर अधिक ध्यान देना चाहिए (१८७) तो जैसा कि प्रसंग से प्रतीत होता है उसका तात्पर्य बौद्धिक शक्ति से था, शारीरिक या नैतिक आत्मा के उत्कर्ष से नहीं। किन्तु उसका सामान्य नैतिक दृष्टिकोण सॉक्रेटीज़ के दृष्टिकोण से मिलता जुलता है। चरित्र और कर्तव्य पर दोनों जोर देते हैं और शारीरिक सुख के पीछे दौड़ने को दोनों ही निरर्थक प्रयास बताते हैं (१७१ २१३ २०७ २६८ et al) इत्यादि)। यद्यपि, डिमॉक्रिटस ने स्वयं शिक्षा प्रदान करने का दावा नहीं किया फिर भी प्रोटागोरस की भाँति वह भी प्रकृति प्रदत्त योग्यता के पूरक के रूप में प्रशिक्षण और शिक्षा की आवश्यकता पर निरन्तर जोर देता है (३३ २४२ et al) एपिक्यूरस (Epicurus) ने चिन्ताओं से मुक्ति प्राप्त करने की अवस्था को ही वैयक्तिक विकास का लक्ष्य माना था। डिमॉक्रिटस मानसिक संतुलन तथा प्रसन्न चित्त अवस्था को व्यक्ति के लिए आदर्श के रूप में प्रस्तुत करता है। इसे प्राप्त करने के लिए वह उपाय भी बताता है (३ १८९) किन्तु इसके लिए नागरिकता के कर्तव्यों की अवहेलना करने अथवा राजनीतिक जीवन का त्याग करने का परामर्श वह नहीं देता है (१५७ २५३)। इसके विपरीत नगर राज्य

---

१ The traditional birth date ४६० is regarded by W Kranz as much too early, Hermes XLVII १९१२, p ४२

२ विशेषकर (Frr ३५–११५) जिनके साथ Democrates' का नाम जुड़ा हुआ है। इसलिए इन पर यहाँ कोई ध्यान नहीं दिया गया है। इस प्रसंग पर Diels[4] II पृष्ठ १५३–१५४ देखिए। १६९–२९७ (Stobaeus से) भी संदिग्ध हैं। अध्याय १४ के अंत में दी गई टिप्पणी देखिए।

में वह अनाम आस्था रखता था और यह विश्वास करता था कि सारे राज्य के सुचारु सञ्चालन पर ही प्रत्येक वस्तु निर्भर करती है (२५२)। प्रोटेगोरस की भांति उसने भी धन निरपेक्ष राज्य की ही कल्पना की है। विधि का उल्लंघन करनेवालों को कठिन दण्ड देने में भी वह विश्वास करता था (२५९, २६२)। साथ ही, उसका यह भी विश्वास था कि विधि-पालन करने से मनुष्य का जीवन सुगम हो सकेगा (२४८)। मनुष्य के चरित्र में दोष के कारण ही विधि प्रतिबन्धात्मक प्रतीत होती हैं (२४७) तथा यह प्रतीत होता है कि विधि द्वारा मनुष्यों की स्वतन्त्रता पर आघात पहुँच रहा है। हिप्पियास की भांति वह भी विग्रह को सामुदायिक जीवन का सबसे बड़ा अभिशाप मानता था। जिस प्रकार व्यक्ति का आदर्श प्रसन्नचित्त अवस्था है उसी प्रकार नगर-राज्य का आदर्श सम्भावना है (२५०)। नगर के सदस्यों को परस्पर मित्र-भाव से रहना चाहिए, सम्पन्न और शक्तिशाली सदस्यों को कम भाग्यशाली व्यक्तियों की सहायता करनी चाहिए (१९१, २५५, २६१)। सामाजिक सम्बन्धों में परोपकार की भावना की ओर सङ्केत करने का सम्भवतः यह प्रथम प्रयास है। संविधान के प्रश्न पर वह लोकतन्त्र को अच्छा बताता है, कम से कम निरंकुशता की तुलना में तो यह अच्छा ही है (२५१), किन्तु वह समानता का उपासक न था। उसकी रचनाओं में सामान्य रूप से यह आशय मिलता है कि योग्यता के आधार पर निर्मित अभिजात-वर्ग का शासन करने का विशेषाधिकार स्वाभाविक है (२६७)।[1] लोकतन्त्रात्मक नगरों में अधिकारियों को दण्डित रहने की प्रथा तथा ईमानदारी और दृढ़तापूर्वक नियमानुकूल कार्य करनेवाले अधिकारियों का अवकाश ग्रहण करने के पश्चात् दण्डित होने की सम्भावना पर वह खेद प्रकट करता है (२६६)[2]। मानव जीवन की न्यूनता और अनिश्चितता के बारे में उनके कथन का (२८५) प्रायः उल्लेख किया जाता है, किन्तु इस कथन का तात्पर्य वह नहीं है जो हाब्स के विख्यात कथन का है। डेमोक्राइटस ने तो मानव-जीवन की न्यूनता और अनिश्चितता की ओर केवल इसलिए ध्यान आकृष्ट किया है कि लोग अत्यधिक आशा न करें। दूसरे शब्दों में प्रसन्नचित्त रहने के लिए डेमोक्राइटस का यह दूसरा नुस्खा है। राजनीतिक दृष्टि से अधिक महत्त्वपूर्ण कथन तो वह है जिसमें डेमोक्राइटस कहता है कि बुद्धिमान व्यक्ति के लिए प्रत्येक देश का द्वार खुला है अच्छे मन वाले

---

१ शक्तिशाली के अधिकार के सम्बन्ध में थ्रैसीमेकस (Thracymachus) के कथन (अगला अध्याय देखिए) को ध्यान में रखते हुए आवश्यक प्रतीत होता है, कि डेमोक्राइटस के शब्दों पर ध्यान दिया जाय।

२ Diels[5] पृष्ठ २००, देखिए। किन्तु यह व्याख्या पूर्णतया असन्दिग्ध नहीं है।

का निश्चित समय तथा इसके महत्त्व का पूरा विवरण तो नहीं ज्ञात हो सका है किन्तु इसके परिणाम के बारे में इतना अवश्य कहा जा सकता है कि अपने से ज्येष्ठ व्यक्तियों से असन्तुष्ट होने के पश्चात् साक्रटीज एथेन्स के कनिष्ठों की ओर आकृष्ट हुआ। इन कनिष्ठों को किसी प्रकार की शिक्षा देने के अभिप्राय से उसने यह नहीं किया, अपितु उनसे वाद विवाद और परिचर्चा करके वह स्वयं ज्ञान प्राप्त करने की आशा रखता था। इसी प्रक्रिया के माध्यम से साक्रटीज ने अपने जीवन का लक्ष्य प्राप्त किया और इसी के द्वारा प्लेटो ने साक्रटीज की महानता का अनावरण किया।

कुछ अतिरिक्त टिप्पणियाँ और प्रसग निर्देश

अध्याय—४

George Grote की History of Greece, Ch Lxvii, Werner Jaeger की Paideia vol I, Eng Trans pp २८३ ३२८ में ई० पू० पाँचवीं शताब्दी के मध्य के सामान्य वातावरण से सम्बन्धित प्रचुर एव विविध अध्ययन-सामग्री मिलती है। इस पुस्तक में उद्धृत मूल ग्रन्थों के जिन अवतरणों की ओर सकेत किया गया है वे H Diels, Die Fragments der Vorso Kratiker, ५th edition revisde by W Kranz, ३ vols Weid mann Berlin, १९३४ १९३९ में मिलते हैं। इस सम्बन्ध में निम्नलिखित भी उपयोगी है —Wilhelm Nestle Bemerkungen Zu den Vorsokratikern und Sophisten in Philologus Lxvii, pp ५३१ ५८१ Kathleen Freeman Companion to the Pre Socratic Philosophers, १९४६

Protagoras Plato Theaetetus १५२, १६७c १६८b १७१ १७२, Protagoras, esp chs I xvii (३०९ ३२९B), A Menzel, Beitrage zur griechischen Staatslebre, Chs ८ and ९ (S B Akad Wien vol २१० १९३०), D Loenen, Protagoras and the Greek Community (Amsterdam), १९४०

Protagoras ने निम्नलिखित के सम्बन्ध में भ्रान्त धारणाएँ दीं—Aristophanes, Clouds, passim, Aristotle Rhet ii २४, १४०२ a, Metaphysics iv ४, २७ १००७b, प्रोटेगोरस लोकतन्त्र का समर्थक है, A Doring, cited by Menzel p १८७, राजतन्त्र का समर्थक है।

J S Morrison, Classical Quarterly xxxv (१९४१) pp ?-१६ प्राग्गास्त्र के समकालीन के लिए अध्याय ४ के अन्त में दी गयी टिप्पणी देखिए।

Prodicus, Choice of Heracles Xenophon Mem ii १ २१ ८ Plato Symposium १७७B

Hippias Plato Hippias Major २८४ D, E और Xenophon, Mem iv ४ १२ ० देखिए किन्तु कोई भी विवरण प्रामाणिक नहीं प्रतीत होता।

Gorgias, Plato Gorgias chs ? xv (४६१ तक विशेषकर ४५० B-४५७C) philebus ५८ A उसकी नैतिकता के लिए Plato, Meno, ७१ D E Aristotle politics I १२६० a २७

Hippodamus, Aristotle, Politics ii १२६७ b Town planning Camb Anc Hist ६ p ४६३

PHALEAS Aristotle politics ii १२६६ ०

DEMOCRITUS अंश का सकलन Diels में प्रस्तुत अनुच्छेद से है।

इस अध्याय के प्रारम्भ में दिए गए दोनों उद्धरण प्राग्गास्त्र के सम्बन्ध में दो विरोधी दृष्टिकोणों के उदाहरणस्वरूप है। Montesquieu (de l' Espirt des Lois I १) और Sorel (Le proces de Socrate १८८९ iv सक० ६) का (एक ही विस्तार पर सात बारी बारी) साथ कुछ विचित्र-सा लगता है।

प्रकृति और विधि के सम्बन्ध में प्रचलित अनेकानेक धारणाओं के लिए F Heinimann Nomos und physis (Basel १९४५) उपयोगी ग्रन्थ है किन्तु अध्याय एक से अध्याय चार तक समाप्त कर चुकने के उपरान्त ही यह पुस्तक मुझे उपलब्ध हो सकी।

अध्याय ५

सोक्रेटीज और उसके विरोधी

गत अध्याय की भाँति यह अध्याय भी पाँचवी शताब्दी और विशेषकर इस काल के एथेन्स की बौद्धिक क्रियाशीलता और राजनीतिक दर्शन पर इसके प्रभावों से ही सम्बन्ध रखता है। किन्तु इस अध्याय में जिन विचारकों का अध्ययन किया गया है वे कुछ पृथक् दृष्टिकोण का प्रतिनिधित्व करते हैं। इसमें सन्देह नहीं कि इन विचारकों में परस्पर मतभेद है किन्तु जिन प्रश्नों पर ये एक अथवा दूसरे पक्ष का समर्थन करते हैं वे उन प्रश्नों से भिन्न हैं जिनका उत्तर प्राप्त करने का प्रयास डमोक्राइटस अथवा प्रोटगोरस ने किया था यद्यपि इन प्रश्नों की उत्पत्ति का कारण भी वही समस्याएँ थीं जिनका सामना डमोक्रिटस अथवा प्राटगोरस को करना पडा था। इन विचारकों को काल-क्रम के आधार पर नहीं पृथक किया गया है और इस अध्याय में जिन लेखकों पर विचार किया जा रहा है वे अनिवार्यत अध्याय चार में वर्णित लेखकों के बाद के नहीं हैं। यहाँ तक कि यह भी आवश्यक नहीं है कि वे अध्याय तीन में वर्जित हरोडोटस के ही बाद के हों। अधिकांश विचारकों के सम्बन्ध में निश्चित तिथि निर्धारित करना भी सम्भव नहीं है। किन्तु, इतना तो मानना ही पडेगा कि जिस प्रकार हरोडोटस पाचवी शताब्दी के प्रारम्भिक या पूर्व-माध्यमिक समय का प्रतिनिधित्व करता है जब मीड (Mede) के विरुद्ध विजय का प्रभाव लोगों के मस्तिष्क पर छाया हुआ था, तथा जिस प्रकार हिप्पियाज और प्रोटगोरस इस शताब्दी के मध्यकालीन समय का प्रतिनिधित्व करते हैं, उसी प्रकार किसी गम्भीर त्रुटि की आशंका के बिना हम इस शताब्दी के तीसरे काल का उल्लेख भी कर सकते हैं जिसमें एथेन्स के साम्राज्य को पेलोपोनीशियन युद्धों (४३१–४०४ ई० पू०) का सामना करना पडा था। यह प्रकृतिवाद तथा राज्य और नैतिकता के क्षेत्र में इस सिद्धान्त के विभिन्न प्रयोगों का युग है, एण्टीफोन (Antiphon) और थ्रैसीमैकस का युग है। किन्तु, साथ ही यह सोक्रेटीज और अन्य विचारकों का भी युग है जिन्होंने इस प्रकृतिवादी दर्शन का विरोध किया। यह वही युग है जब अरिस्टोफेनस (Aristophanes) और यूरीपाइडीज (Euripides) क्रमश सुखान्त की और दुखान्त की रंगमचों पर विविध ढंग से तत्कालीन सामाजिक कुरीतियों पर आघात कर रहे थे और अपनी प्रतिभा की चरम सीमा पर थे। यह वही समय है जब थूसीडाइडीज (Thuc-

ydides) युद्ध की घटनाओं और युद्ध-सम्बन्धी भाषणों का विवरण तैयार कर रहा था और निरन्तर विधि और नैतिकता के प्रति लोगों की उपेक्षा और अनादर की भावना तथा शान्ति और युद्धकालीन अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों की समस्याओं की विनाशकता के बारे में सोच कर चिन्तित हो रहा था। इन समस्याओं की ओर इससे पूर्व लोगों का ध्यान ही नहीं गया था। इस सब के अतिरिक्त यह निरन्तर वैषम्य का युग है जिसे शान्तिकारिक युक्ति-मात्र समझना भूल होगा। पक्ष और विपक्ष के तर्कों (डिस्सोई लोगोई) का युग है नीति और अनीति, नियम और स्वच्छन्द, उचित और अनुचित के गहन द्वन्द्व का युग है। एकता और संगठन के लिए प्रार्थना तथा कलह और विघटन के उत्तर का युग है।

सोफिस्ट एण्टीफोन (Antiphon) निश्चय ही टेट्रालॉजीज (Tetralogies) के लेखक और वक्ता एण्टीफोन से भिन्न व्यक्ति था। वह एथेन्स का रहने वाला था और उसका जीवन और लेखन काल ईसा पूर्व के पाँचवी शताब्दी का उत्तरार्ध है। उसने On Truth नामक पुस्तक की रचना की जो सम्भवतः इसी नाम से लिखी गई प्रोटेगोरस की पुस्तक का प्रत्युत्तर है। किन्तु, जहाँ प्रोटेगोरस की पुस्तक के भाषिक अवशेष लुप्त हो गए वहाँ एण्टीफोन की पुस्तक का महत्वपूर्ण अंश आक्सीरिंकस (Oxyrhynchus) स्थान की खोज में प्राप्त पपाइरस से प्रकाश में आ गया है। राजनीतिक विचार की दृष्टि से ये अंश महत्वपूर्ण हैं और कुछ प्रश्नों पर ये निश्चित रूप से प्रोटेगोरस के दृष्टिकोण के प्रतिकूल हैं। एण्टीफोन को प्रकृतिवादी कहा जा सकता है, प्रोटेगोरस 'विधि' का समर्थक था। किन्तु Polis के सम्बन्ध में Nomos का जो आलोचिक विवरण उसने प्रस्तुत किया उसके फलस्वरूप प्रकृति (फिसिज) के पक्ष में विधि (Nomos) को अस्वीकार करना सुगम हो गया। जैसाकि हम इस पुस्तक के प्रारम्भ में ही देख चुके हैं प्रकृति का अध्ययन करनेवालों को प्रारम्भ में संवर्द्धन प्रक्रिया के अतिरिक्त किसी अन्य प्रकार की विधि के अस्तित्व का कोई प्रमाण नहीं मिला। ऐसी स्थिति में इस प्रश्न का उठना स्वाभाविक था कि इसी प्रक्रिया को ही वास्तविक विधि के रूप में क्यों न स्वीकार कर लिया जाय? यह व्यापक विधि होगी और नगरों तथा मनुष्यों द्वारा निर्धारित विधियों से जिनका पालन करना प्रोटेगोरस तथा अन्य व्यक्तियों ने अनिवार्य बनाया था सर्वोपरि होगी और आवश्यकता पड़ने पर उन्हें निरस्त भी कर सकेगी। इस प्रकार की विधि को स्वीकार कर लेने के परिणामस्वरूप पहला निष्कर्ष तो यह निकलता कि यूनानी और बर्बर (विदेशी) में अन्तर रखने की प्रथा समाप्त हो जानी चाहिए।[1]

---

१ स्त्री और पुरुष को समानाधिकार देने का निष्कर्ष भी इस प्रकार की विधि को स्वीकार करने के फलस्वरूप निकल सकता है किन्तु कुछ विचित्र-सी बात है

किन्तु यह एक ऐसी प्रथा थी जो यूनानियों को अत्यधिक प्रिय थी। हिप्पियाज और डेमोक्राइटस की सार्वभौमिकता इस सीमा तक नहीं पहुँच सकी थी, किन्तु ऐन्टीफोन ने इस निष्कर्ष का स्वीकार किया। यही नहीं, पतृकता के आधार पर यूनानियों को सम्मानित करने की प्रथा को भी उसने अस्वीकार किया और इस बात पर जोर दिया कि चूँकि सभी मनुष्यों की सम्वर्द्धन प्रक्रिया समान है, सभी को जीवित रहने के लिए भोजन और श्वास पर निर्भर रहना पड़ता है इसलिए यूनानियों और बर्बरों (विदेशियों) में कोई अन्तर नहीं है और दोनों के साथ समान व्यवहार होना चाहिए। इसी से यह भी निष्कर्ष निकलता है कि केवल उच्च कुल में जन्म लेने के आधार पर किसी भी व्यक्ति को नगर राज्य (पोलिस) के संविधान में विशेष अधिकार नहीं मिलना चाहिए। हाँ, सम्पत्ति के आधार पर लोगों को विशेषाधिकार मिल सकता था। किन्तु संविधान के सम्बन्ध में यदि एण्टीफोन के कुछ विचार रहे भी हों तो उनका विवरण नहीं मिलता है।

एक स्थल पर असम्बद्ध प्रसंग में (१३६४a)[1] वह न्याय की परिभाषा इस प्रकार देता है — जिस नगर की राजनीति में आप भाग ले रहे हैं उसकी वैधिक व्यवस्था का उल्लंघन न करना ही न्याय है।' इस परिभाषा और विधि-व्यवस्था = न्याय के सिद्धान्त में कोई अन्तर नहीं है और एक कार्यकारी परिभाषा के रूप में इसे व्यापक स्वीकृति भी प्राप्त हुई। अन्य राज्यों के सन्दर्भ में यह परिभाषा प्रोटेगोरस का स्मरण दिलाता है। किन्तु स्वयं ऐन्टीफोन का निष्कर्ष इस प्रकार है 'यदि आपके आचरण को कोई देख रहा है तो न्याय के अनुकूल आचरण करना ही उपयोगी होगा किन्तु यदि पकड़े जाने की कोई सम्भावना नहीं है तो न्यायानुकूल आचरण की कोई आवश्यकता नहीं है। एण्टीफोन का यह तर्क उस सिद्धान्त पर आधारित है जिसके अनुसार प्रकृति को विधि के प्रतिकूल माना जाता है, क्योंकि विधि एक परम्परा मात्र है जिसे मनुष्यों ने स्वयं आपस में मिलकर बना लिया है। और अपने ऊपर लागू कर लिया है। इस प्रकार की विधि का उल्लंघन करनेवाले दण्ड और भर्त्सना के भागी उसी दशा में होते हैं जब इस प्रकार के आचरण का पता परम्परा के निर्माताओं को लग जाता है। किन्तु प्रकृति के नियमों के सम्बन्ध में ऐसा नहीं होता है। वे 'नोमस' अर्थात मनुष्य निर्मित विधियों से सर्वथा भिन्न हैं। उनका उल्लंघन किसी दशा में नहीं किया जा सकता और यदि कोई उनका उल्लंघन करने का प्रयास करता है तो प्रकृति द्वारा उसे तत्काल दण्ड मिलता है। और यह दण्ड भी कैसा है? साक्षियों के होने अथवा न होने पर यह नहीं

कि इस निष्कर्ष पर पहुँचने के लिए प्लेटो को प्रतीक्षा करनी पड़ी (Repub v ४५५ A)।

१ p Oxy इस अध्याय के अन्त में दी गयी टिप्पणी का अवलोकन करें।

निर्भर करता। यह दण्ड ऐसा नहीं है जो साक्षियों के प्राप्त होने पर बढ़ जाय और न प्राप्त होने पर कम हो जाय। इसी प्रसंग में मत और सत्य में अन्तर दिखाने की प्रचलित पद्धति का प्रयोग करते हुए वह आगे कहता है कि प्रकृति के नियमों का उल्लंघन करनेवालों को जो कष्ट सहन करना पड़ता है उसका कारण मत नहीं होता है अपितु सत्य होता है। *ऐसी कृत्रिम विधियाँ जो हमारे लिए यह निर्धारित करती हैं कि क्या* देखें और क्या न देखें क्या सुनें और क्या न सुनें तथा क्या करें और क्या न करें कोई मान्यता नहीं रखती है। हमारे आँख कान हाथ और पैर के लिए वही विधि मान्यता रखती है जिनका पालन करना इन अवयवों के लिए स्वाभाविक और आवश्यक है और जिनका उल्लंघन हम उसी दशा में कर सकते हैं जब हम आत्महत्या करने अथवा अपने को अंधा और अपंग करने का निश्चय कर लें।[1] इसलिए यद्यपि परम्परागत विधियों का पालन करते हुए दिखाई देना बहुधा सुविधाजनक और हितकर सिद्ध हो सकता है फिर भी ये प्रकृति के लिए बंधन स्वरूप ही हैं। इस दृष्टिकोण के विरोध में यह कहा जा सकता था कि अप्रिय वस्तुएँ भी हमारे लिए उपयोगी हो सकती हैं। इस आपत्ति का उत्तर भी ऐन्टीफोन ने दिया है किन्तु पपाइरस का यह अंश इतना कटा फटा है कि उसका उत्तर प्रकाश में नहीं आ सका। इसके बाद एण्टीफोन के विधि की आलोचना इस आधार पर करता है कि लोगों को पर्याप्त सुरक्षा प्रदान करने तथा कष्ट और क्षति से उन्हें बचाने में विधि समर्थ नहीं हो पाती। उसका कहना है कि यही नहीं कि विधि का हस्तक्षेप क्षति पहुँच जाने के पर्याप्त समय बाद होता है अपितु अन्वीक्षा के समय अभियोग पक्ष को यह अनुमति भी दी जाती है कि वह अलंकारयुक्त भाषा की सहायता से अपने को मुक्त करा ले। इस स्थल पर भी पपाइरस कटा हुआ है और आलंकारिक भाषा के विरुद्ध ऐन्टीफोन के उद्गारों को सुनने से हम वंचित रह जाते हैं।

एक दूसरे पपाइरस (p Oxy १७९७) (पाण्डुलिपि) में जो सम्भवत

---

१ ये तो अपेक्षाकृत सामान्य उदाहरण हैं उसी प्रकार जैसे पहाड़ी की चोटी पर टहलते समय गुरुत्वाकर्षण के सिद्धान्त की अवहेलना करना। किन्तु Euripides ने Hippolytus (४२८ ई० पू०) में संभवत इसी अनुच्छेद से प्रेरणा पाकर इस सिद्धान्त को कामुकता के सम्बन्ध में प्रयोग किया है और इस पर विचार किया है कि *काम के प्रति मनुष्यों का आकर्षण जीवन के नियम पर आधारित है* और इसका प्रतिरोध करने का परिणाम अच्छा नहीं हो सकता है। यूरीपाइडीज के इस नाटक में phaedra और Hippolytus दो इस तर्क को विभिन्न ढंगों से काटने का प्रयत्न करते हैं किन्तु 'सोफिस्ट' नर्स इसे स्वीकार कर लेती है।

'एलिथेइया' का ही खण्ड है एक अनुच्छेद के मध्य में न्याय के विषय पर चर्चा प्रारम्भ होती है, किन्तु मूल निबन्ध की अपूर्णता के कारण हम यह नहीं जान सके हैं कि ऐण्टीफोन ने इसकी क्या परिभाषा दी थी। हम इतना अवश्य पढ सकते हैं कि साक्ष्य देते समय सत्य कहना न्याय और बुद्धिमत्ता दोनो की दृष्टि से उचित है। किन्तु ऐसे भी अवसर आ सकते हैं जब सत्य कहने से न्याय की हत्या हो सकती है। क्योंकि यदि यह कथन सत्य है कि न्याय यही है कि यदि किसी ने आपको क्षति नही पहुँचाई है तो आप भी उसे क्षति न पहुँचाइए तो ऐसे वाद और अभियोग हो सकते हैं जिसमे सत्य कहने वाला साक्षी अपने कथन से ऐसे व्यक्ति को क्षति पहुँचा सकता है जिसने उसकी कोई हानि न की हो। साथ ही यह व्यक्ति जीवन भर के लिए उसका शत्रु हो जायगा। इस प्रकार न्यायोचित कहलाने वाले कार्य के फलस्वरूप दो व्यक्ति क्षति और अन्याय के भागी होते हैं। इससे ऐसा प्रतीत होता है कि ऐण्टीफोन उस कथन को अस्वीकार करना चाहता था जिसके अनुसार न्याय का अर्थ यह है कि किसी ऐसे व्यक्ति के लिए क्षति का कारण न बने जिसने आप को क्षति नही पहुँचाई है। किन्तु वाद के विवरण से यह निष्कर्ष नही निकलता है।[1]

इन दोनो पपाइरस खण्डो के प्रकाशन (क्रमश १९१५ और १९२२ ई०) के पूर्व एण्टीफोन की रचनाओं के बारे म हमारा ज्ञान उन सक्षिप्त उद्धरणो तक ही सीमित था जिन्हे बाद के लेखक प्राय अपनी कृतियो मे दिया करते थे। इन उद्धरणो म से कुछ तो ऐण्टीफोन की 'सत्य के विषय म' शीर्षक पुस्तक से थे और कुछ उसकी दूसरी पुस्तक से जिसका शीर्षक था 'सद्भावना के विषय मे', दैनिक जीवन म एकता और मैत्री की आवश्यकता को वह भी स्वीकार करता था। (Fr ४९ Diels) किन्तु मैत्री और एकता को राजनीतिक सिद्धान्त का रूप उसने नही दिया और न इन्हे न्याय के समकक्ष ही स्थान दिया।[2] इन दोनो रचनाओ का क्षेत्र विस्तृत है तथा विभिन्न विषयो पर जो

---

१ यदि मूल (Col II ll २०-२१) को विश्वसनीय माना जाय, तो इसका अभिप्राय एक ऐसी संविदा को स्वीकार करने से सावधान करना है जिसकी शर्त यह है कि 'न तो किसी को क्षति पहुँचाई जायगी और न स्वय क्षति का भागी होगा, क्योकि इस प्रकार की संविदा का पालन करना अनिश्चित रहता है। यह भी अविकसित शब्दावलि का ही परिणाम है, जिससे वास्तविक अर्थ समझने मे कठिनाई उत्पन्न होती है। 'एडीकाइन' का अर्थ केवल अनुचित कार्य करना ही नहीं है, इससे (१) अपराध करना तथा (२) किसी (व्यक्ति) को क्षति पहुँचाने का भी बोध होता है।

२ Plato, Clitophon ४१० A मे कुछ वक्ता जिनका नाम नहीं दिया गया है मैत्री और ऐक्य को राजनीतिक सिद्धान्त का स्थान देते हैं तथा इन्हें न्याय के

विचार प्रस्तुत किये गये हैं उनमें असाधारण मिश्रण है। प्रयग राजनीतिक महत्व वाल प्रसग कम हा हैं। नतिक उपदेशा का बाहुल्य है किन्तु य प्राय सामान्य स्तर म ऊपर हैं। एक एम ल्वख स जो अच्छ आचरण का समथन कवल उस स्थिति म करता है जब वुरा आचरण करन पर पकड जान की सम्भावना हो इस प्रकार क नतिक उपदेश सुनना कुछ विरोधाभास-सा प्रतात होता है। चरित्र पर वातावरण का प्रभाव (Fr ६२) अपन पर पूर्णाधिकार प्राप्त करन की आवश्यकता (५८), आवपण स बचकर अपन चरित्र को दृढ करना (५९) आदि कुछ एम उपदेश है जो एण्टीफान के दृष्टिकोण को ध्यान म रखत हुए कुछ विचित्र स लगत हैं। अराजकता क दोषा का दिखान के लिए वह सोफाक्लीज (Sophocles) क क्रयान (Creon)[1] क कथन का उद्धरण देता है किन्तु इसका प्रयोग राजनीति क क्षत्र म न करक बच्चा की उद्दण्डता तथा उन्ह शिक्षित करन की आवश्यकता के सम्बन्ध म करता है (६१)। इसके विपरीत इनसे यह प्रतीत होता है कि वह प्रकृति ऋतु और प्राकृतिक घटनाओं का विद्यार्थी था, रेखागणित का पण्डित था और देवताओं क स्वभाव तथा समय के सम्बन्ध म उसन कुछ सिद्धान्तो का प्रतिपादन किया था। असभ्य वनजातियों क सम्बन्ध म उसके कथनो क पीछ प्राकृतिक अवस्था म रहनवाले असभ्य मनुष्यो के सम्बन्ध में उसके सिद्धान्त हो सकत हैं।[2]

बाइजण्टियम (Byzantium) की प्रतिकूल दिशा म बासफारस (Bosporus) की दूसरी ओर चल्सडन (Chalcedon) स्थित है। थ्रसीमकस (Thrasymachus) यहीं का निवासी था और एथन्स म पर्याप्त समय तक रहन के बाद अपने जीवन के अन्तिम दिनो म पुन अपन जन्मस्थान को वापस चला गया। यहा उसकी मृत्यु हुई। एथन्स म उसके निवास की अवधि निर्धारित करना तो कठिन है किन्तु सम्भवत २७ वर्षीय पलोपानीशियन युद्धा के समय म वह एथन्स म ही था और इसी के कारण उस पर जार्जियास का प्रभाव भी पडा। एण्टीफोन ने तो सभी वृत्ता स कुछ एकत्र किया था किन्तु थ्रसीमकस कवल जार्जियास के ही समीप दिखाई देता है। किसी अन्य विचारक के समीप नहीं। उसकी रचनाओं

समकक्ष रखते हैं। जसाकि हम पिछले अध्याय मे देख चुके हैं 'होमोनोइआ' के विभिन्न पक्षों पर विवाद करना सामान्यतया प्रचलित था किन्तु Xenopone (Mem iv ४ १६) और Isocrates (Areopagiticus ३१ ३५) मे दिये गये विवादों को Antiphon की रचना से सम्बन्धित करने के लिए पर्याप्त कारण नहीं मिलते।

[1] Antigone ६७२, पृ० २८ देखिए।

[2] Seeabove P ४८ n ४

की शली, शब्द और छन्द प्रधानतया यूनानी गद्य की शली पर आधारित है। उसकी वक्तृता के सम्बन्ध म यह विख्यात था कि श्रोताओं के सवेगात्मक भावनाओं को उत्तेजित करने म वह प्रवीण है। उसकी गद्य शली की श्रेष्ठता उस एकमात्र खण्ड (No 1) से प्रमाणित होती है जिसे हैलीकारनासस (Halicarnassus) के डायोनीसियस (Dionysius) ने सुरक्षित रखा और जिसका उल्लेख प्लेटो ने (phaedrus २६७) म किया है। रिपब्लिक' म प्लटो ने उसका जो चित्र प्रस्तुत किया है उसके अनुसार वह कटु भाषी और क्रोधी व्यक्ति था। हो सकता है कि उसका जो स्वभाव प्लटो न इस चित्र म प्रस्तुत किया है उसका कारण उसकी शली ही हो, क्योंकि इसम कोई सन्देह नहीं है कि स्वय क्रुद्ध होकर अपन श्रोताओं को क्षुब्ध करना उसकी शली का अग था। किन्तु, यह स्वीकार करना पडगा कि थ्रसीमकस के नाम के साथ जिस राजनीतिक सिद्धान्त को सम्बद्ध किया जाता है वह पूणतया प्लटो की 'रिपब्लिक' के प्रारम्भिक दृश्यों म प्रकट होन वाले थ्रसीमकस तथा क्लाइटोफोन (Clitophon) क एक उल्लेख, जिसम केवल यह कहा गया है कि न्याय के सम्बन्ध मे उसका एक अपना सिद्धान्त था पर आधारित है। थ्रसीमकस के सम्बन्ध म एक किवदन्ती[1] भी है किन्तु उसम यह नहीं कहा गया है कि थ्रसीमकस के अनुसार न्याय के अधिकारी केवल बलवान ही होते हैं अथवा न्याय केवल बलवानो के हितों की रक्षा करता है। वास्तव म, यदि 'रिपब्लिक' की प्रथम पुस्तक म प्लटो थ्रसीमकस का विवरण न प्रस्तुत करता तो उसके बारे म हमारे ज्ञान का एक मात्र साधन डायोनीसियस द्वारा सुरक्षित थ्रसीमकस के भाषण का वह अश ही होता जिसम वह नीति और राजनीति के क्षेत्र म जीण शीण, पुरातन मान्यताओ के समथक के रूप म सम्मुख आता है। इस भाषण और प्लटो के विवरण मे जो अन्तर दिखाई पडता है उसके आधार पर यह कहना उचित न होगा कि प्लटो का विवरण पूणतया काल्पनिक है।[2] क्योंकि, सवप्रथम तो डायोनीसियस ने जिस भाषण से उद्धरण दिया है वह किसी ऐसे व्यक्ति के लिए तयार किया गया था जो इस प्रकार के उदगारों को व्यक्त करके श्रोतागण पर अच्छा प्रभाव डालना चाहता था। उस युग म दूसरों के लिए भाषण तयार करने की प्रथा पर्याप्त प्रचलित थी।[3] दूसरे, प्लटो के सवाद म समीक्षाकार यह नहीं

---

१ प्लेटो का भाष्यकार, plaedr २३९, Diels[4] p ३२६

२ H Gomperz, Sophistik und Rehetorik (१९१२) ch iii देखिए।

३ विदेशी होने के कारण स्वय थ्रसीमकस को एथेन्स के सविधान की आलोचना करने तथा राय देने का अवसर नहीं मिल सकता था।

कहता है कि वह थ्रैसीमैकस का दृष्टिकोण प्रस्तुत कर रहा है वह तो केवल उसके इस मत का उल्लेख करता है कि मनुष्यों ने न्याय का अत्यधिक उपयोगी पाया और यदि देवताओं को मनुष्यों के कल्याण का किञ्चित्-मात्र भी ध्यान होता तो वे इसकी उपेक्षा न करते।

थ्रैसीमैकस के इस सिद्धान्त की व्युत्पत्ति भी प्रकृति के समर्थन से ही होती है किन्तु इससे प्राप्त निष्कर्ष एण्टीफान के निष्कर्ष से भिन्न है। एक स्थान पर तो दोनों निष्कर्ष एक दूसरे के प्रतिकूल हैं। मानव का सम्बद्धन प्रक्रिया को सबसे एक-सा देख कर हिप्पियाज और एण्टीफान ने समस्त मानवता को सजातीय माना। किन्तु यदि हम एक असम्बद्ध सन्दर्भ (Fr २) को विश्वसनीय मान लें तो थ्रैसीमैकस यूनानियों और बर्बरों के मध्य अन्तर कायम रखने के पक्ष में था। किन्तु प्रकृति जगत् के अध्ययन द्वारा मनुष्यों के लिए आचरण के नियमों की खोज करने वालों में कुछ व्यक्ति ऐसे भी थे जिन्हें प्रकृति में प्रक्रिया तथा प्रतिरोध के अतिरिक्त कुछ और भी दृष्टिगोचर हुआ। इन्हीं व्यक्तियों में कलाक्लीज (Callicles) और थ्रैसीमैकस (Thracymachus) भी थे। उन्होंने देखा कि विनाशकारी और शक्तिशाली पशु निर्बल पशुओं का निगल जाते हैं और तीव्र बुद्धि वाले एवं चतुर मन्द बुद्धि वालों और मूर्खों को धोखा दे सकते हैं। यह एक ऐसा तथ्य था जो इस सिद्धान्त की पर्याप्त पुष्टि करता हुआ प्रतीत हुआ कि शक्तिशाली व्यक्तियों द्वारा निर्बल व्यक्तियों पर आधिपत्य स्थापित करना प्रकृति के नियमों के अनुकूल है। इस प्रकार के सिद्धान्त के तीन स्वरूप हो सकते हैं और सिद्धान्त तथा व्यवहार में इन तीनों का प्रयोग हुआ। व्यक्तियों के सम्बन्ध में इस सिद्धान्त के प्रयोग से कलिक्लीज का महामानव का सिद्धान्त निकलता है। राज्यों के सम्बन्ध में इसका प्रयोग करने से Machtpolitik (साम्राज्यवाद?) का वह सिद्धान्त निकलता है जिसका प्रतिपादन एथेंसवासियों ने मेलास (Melos) पर अपना आधिपत्य स्थापित करने के लिए किया था (कृपया अध्याय ६ देखिए)। तीसरा प्रयोग किसी राज्य के लिए शासन का सिद्धान्त निर्धारित करने के लिए किया जा सकता है और यह निष्कर्ष प्राप्त किया जा सकता है कि शासन के अधिकारी वही लोग होंगे जो शासन करने की शक्ति रखते हैं। थ्रैसीमैकस के नाम के साथ यही तीसरा प्रयोग सम्बद्ध किया जाता है। प्लेटो के विवरण में इस सिद्धान्त के समर्थन में वह कुछ तथ्य प्रस्तुत करता है यद्यपि इन तथ्यों का निरीक्षण उसने अपने ही दृष्टिकोण से किया है। उसने देखा कि यूनान के नगर राज्यों में संविधान की रचना तथा विधि का निर्धारण शासन करने वाली शक्ति के हितों को ध्यान में रख कर ही किया गया है चाहे यह शक्ति एक व्यक्ति की हो चाहे कुछ व्यक्तियों की अथवा बहुतों की (टीरआस एरिस्टोक्रेटिआ या डमोक्रेटिआ) राजतन्त्र हो या कुलीनतन्त्र अथवा लोकतन्त्र इस प्रकार यदि संविधान

को न्याय के सिद्धान्तो की प्रतिमूर्ति के रूप मे स्वीकार किया जाता है तो इसका अर्थ यह होगा कि न्याय के सिद्धान्तो और शासक वर्ग के हितो मे कोई अन्तर नही है। यह ऐसी स्थिति होगी जिसमे शक्तिशाली दल का हित ही न्याय कहलायेगा। इस प्रकार की बातो से उस समय के लोगो को किसी प्रकार का मानसिक आघात पहुँचेगा ऐसी सम्भावना नही थी, प्राचीन काल मे तो ऐसा होता ही था। अधिक से अधिक इतना कहा जा सकता है कि थ्रसीमकस अपने विषय के सैद्धान्तिक पक्ष की आधुनिकतम प्रगति से पूर्णतया अवगत नही था प्रोटगोरस के विचारो का उसने अध्ययन नही किया था और राज्य तथा इसके कर्तव्यो को समझने के लिए गम्भीरतापूर्वक प्रयास नही कर सका था। इतना तो निश्चित ही है कि उसके पूर्व प्राटगोरस तथा उसके पश्चात प्लेटो मे से किसी ने भी यह नही कहा कि राज्य का उद्देश्य स्वय शासको के हितो का उत्कर्ष करना है। प्लेटो ने थ्रसीमकस (जिनके नाम का अर्थ वीर योद्धा[1] होता है) को एक ऐसे सिद्धान्त के समर्थक के रूप मे भी प्रस्तुत किया है जिसमे शासक को त्रुटि के परे माना जाता है और यह बताया जाता है कि अपने हित का समर्थन अर्थात् यह समर्थन मे कि क्या न्यायोचित है शासक किसी प्रकार की भूल नही कर सकता। किन्तु चूकि यह कथन अन्ततोगत्वा थ्रसीमकस को ही परेशानी मे डाल देता है इसलिए यह समझना उपयुक्त प्रतीत होता है कि प्लेटो ने अपने उद्देश्य की पूर्ति हेतु थ्रसीमकस को वक्ता के रूप मे प्रस्तुत करके उसके द्वारा यह कथन मुखरित कराया है। इस प्रसग मे हमे एक ऐसे कथन का अभाव प्रतीत होता है जो इस बात पर प्रकाश डाल सकता कि थ्रसीमकस का यह सिद्धान्त तीनो प्रकार के सविधानो (राजतन्त्र, कुलीनतन्त्र और लोकतन्त्र) मे किस प्रकार लागू होता। सम्पूर्ण विवाद मे आरम्भ से अन्त तक यह मान कर चला जाता है कि शासन का सचालन अल्पसख्यक ही करते है। यह आशा करना तर्कसगत है कि इस प्रकार के शासन मे भी बहुसख्यक का हित ही न्याय समझा जायगा किन्तु इस दृष्टिकोण के समर्थन मे थ्रसीमकस का एक भी कथन नही मिलता है। हा, जार्जियाज (Gorgias) मे अवश्य प्लेटो ने थ्रसीमकस के मुख मे इस प्रकार का कथन प्रस्तुत किया है (Gorgias ४८३ B) किन्तु वहाँ इसका खण्डन स्वय कल्लिक्लीज ने किया है। थ्रसीमकस का कहना है कि यद्यपि विधि का निर्माण करने वाले (और यह कार्य बहुसख्यक द्वारा होता है) अपने हितो को ध्यान मे रख कर ही विधियो को निर्मित करते हैं किन्तु विधि निर्मित करने वाला बहुसख्यक वास्तव मे शक्तिशाली नही होता वह शक्तिहीन होता है। थ्रसीमकस के बारे मे इससे अधिक सूचना नही मिलती जो हमारे प्रयोजन की हो। 'रिपब्लिक' की प्रथम पुस्तक मे इस प्रसग पर

---

१ Aristotle Rhetoric II २३, १४०० b

प्रस्तुत तक आगे चल कर शासन के अधिकारों से व्यक्ति के अधिकारों पर आ जाते हैं। थ्रेसीमेकस के मुख से कहलाया जाता है कि परम्परागत न्याय और मूर्खतापूर्ण परोपकार में कोई अन्तर नहीं है, सफलता प्राप्त करने के लिए अन्याय का मार्ग अपनाना आवश्यक बताया जाता है और अन्याय के इस मार्ग का अनुसरण साधारण अपराधी बन करके नहीं किया जा सकता। इसके लिए तो बड़े पैमाने पर छल-कपट और निजी स्वार्थ को अग्रसारित करने के कार्य करने पड़ते हैं। यहाँ भी तथ्यों के आधार पर ही थ्रेसीमेकस अपने मत का समर्थन करता है। 'रिपब्लिक' की प्रथम पुस्तक के इस उत्तरार्ध में वह जिस दृष्टिकोण को प्रस्तुत करता है वह गॉर्जियाज में सुकरात के विरोधियों द्वारा प्रस्तुत दृष्टिकोण से मिलता-जुलता है। गॉर्जियाज में अलंकार शास्त्री पोलस (Polus) आत्मोत्कर्ष के लिए न केवल आलंकारिक भाषा का समर्थन करता है अपितु किसी भी मूल्य पर सफलता प्राप्त करने को जीवन का मार्ग-दर्शक नियम बनाता है। जिस प्रकार हेरोडोटस की कहानी (१ ३०) में क्रोसस (Croscus) सोलन को यह समझाने का प्रयास करता है कि सम्पत्ति शक्ति और लीडिया के सम्राट के रूप में अपनी समृद्धि के आधार पर सोलन मनुष्यों में सबसे अधिक भाग्यशाली है उसी प्रकार पोलस भी मैसीडोनिया के सफल और क्रूर शासक आर्केलास (Archelaus) का उदाहरण देकर सोक्रेटीज को समझाने का प्रयास करता है। थ्रेसीमेकस भी कुछ इसी प्रकार के सिद्धान्त का प्रतिपादन करता है। किन्तु सोक्रेटीज इन सभी के तर्कों का खण्डन करता है। प्लेटो के इस विवरण में शक्तिशाली एवं सफल व्यक्ति के इस सिद्धान्त का सबसे तर्कसंगत और प्रभावपूर्ण प्रतिपादन कलिक्लीज द्वारा किया गया है जो 'महामानव' (Superman) के प्राचीन सिद्धान्त के लिए विख्यात है। किन्तु सोक्रेटीज के सम्मुख उसके तर्क भी असफल हो जाते हैं।

पोलस और थ्रेसीमेकस की भाँति कलिक्लीज न तो सोफिस्ट था और न पेशेवर शिक्षक ही। किन्तु गॉर्जियाज का शिष्य वह अवश्य रहा होगा।[1] साथ ही

---

१ Gorgias की विचारधारा को स्वीकार करने वालों में असंख्य लोग थे। यह कहना तो कठिन है कि Callicles अथवा Meno की 'अनीतिवादिता' किस मात्रा में Gorgias की शिक्षा द्वारा अनुप्राणित हुई थी क्योंकि अलंकार शास्त्र में विश्वास रखने वाले सभी व्यक्ति अनीतिवादी न थे। प्लेटो का Meno स्वयं Gorgias की ही भाँति है और प्लेटो उसके विचारों की विवेचना भी सहानुभूतिपूर्ण ढंग से ही करता है। किन्तु Xenophon (Anabasis ii २१ २९) उसे थ्रेसीमेकस को आत्मोत्कर्ष और स्वार्थ-परायणता के पीछे दौड़ने वाले व्यक्तियों के आदर्श तुल्य प्रस्तुत करता है। वैसे जेनोफन इससे परिचित भी था किन्तु प्लेटो की भाँति वह यह नहीं कहता है कि थ्रेसीमेकस ने गॉर्जियाज से शिक्षा

आलकारिक भाषा के प्रभाव म उसका भी अवश्य विश्वास रहा होगा। परन्तु, उसके बारे म निश्चित जानकारी का पूर्णतया अभाव है। कुछ लोगो का तो यह भी मत है कि वह एक काल्पनिक पात्र है जिसका निर्माण प्लेटो ने इन सिद्धान्तो का प्रतिपादन करने के लिए किया। दूसरा मत उसे वास्तविक व्यक्तित्व प्रदान करता है और इसके अनुसार उसका वास्तविक नाम सम्भवत करिक्लीज (Charicles) था जो एथेन्स के तीस व्यक्तियो म था। जार्जियाज म कल्लिक्लीज का प्रवेश उस समय होता है जब सोक्रटीज अपने विरोधाभास युक्त कथन से पोलस को हतप्रभ कर देता है। सोक्रटीज का यह कथन इस प्रकार है —अपकृत्य सहन करने की अपेक्षा अपकृत्य करना अधिक लज्जाम्पद है। इस कथन के उत्तर म कल्लिक्लीज अपने मत के आधारभूत तत्वो को प्रस्तुत करता है। प्रकृति और विधि के अन्तर का उल्लेख करते हुए वह कहता है कि सोक्रटीज ने इस अन्तर पर ध्यान नही दिया है। यह अन्तर वास्तव म आधारिक और निरपेक्ष है इसका विवेचन तो वह नहीं करता किन्तु यह सिद्ध करने का प्रयास अवश्य करता है कि सोक्रटीज का विरोधाभासी कथन प्रकृति के प्रतिकूल है क्योकि क्षति से बचने का प्रयास स्वाभाविक होता है। साथ ही जैसा कि प्रकृति जगत् के अध्ययन से ज्ञात होता है यदि किसी प्रकार के लाभ की सम्भावना हो तो दूसरो को क्षति पहुँचाना भी उतना ही स्वाभाविक है जितना कि स्वय इससे बचने का प्रयास करना। अतएव, प्रकृति हम यह शिक्षा देती है कि यह सर्वथा न्याय-सगत है कि योग्य[1] व्यक्ति को अयोग्य की अपेक्षा और शक्तिशाली को निर्बल की अपेक्षा अधिक प्राप्त होना चाहिए। यहाँ तक तो कल्लिक्लीज के विचार 'वृद्ध अल्पतन्त्री' (Old Oligarch)[2] यथा एथेन्स की समानतावादी व्यवस्था म आस्था न रखने वाले किसी भी व्यक्ति के विचारो से आगे नही जाते है। घृणा के पुट के साथ[3] वह यह भी कहता है कि

ग्रहण करे थे। Meno का कहना था कि 'यदि कोई व्यक्ति पूर नहीं है तो इसका यह अर्थ हुआ कि उसे उचित शिक्षा नहीं मिली है।'

१ एकीनोन और क्रोटोन का वास्तव मे एक ही अर्थ होता है। दोनों का तात्पर्य योग्य, शक्तिशाली होता है।

२ लगभग ४२४ ई० पू० एथेन्स के सविधान पर लिखी गई एक राजनीतिक पम्फलेट का अज्ञात लेखक। इसी अध्याय मे पृष्ठ ८३–८४ देखिए।

३ किन्तु लाइकोफ्रोन (Lycophron) ने इस प्रकार की विधि का समर्थन किया है यद्यपि उसका राजनीतिक सिद्धान्त भी प्रकृति पर ही आधारित हैं कि (इसी अध्याय मे आगे उल्लेख मिलेगा)। विधि की तुलना मे प्रकृति कम परिवर्तनशील मानी जाती थी किन्तु इसका प्रयोग अनेक अर्थों मे किया गया है। अध्याय ४ के अन्त मे दी गई टिप्पणी का अवलोकन कीजिए।

जनसमूह को विधि निर्धारित करने का अधिकार मिल जाने पर वे ऐसी ही विधि निर्धारित करते हैं जो जनसमूह के हित में हो और इस विधि व्यवस्था का स्पष्ट उद्देश्य यह होगा कि शक्तिशाली व्यक्तियों को अधिक प्राप्त करने से वञ्चित रखा जाय यद्यपि प्रकृति ने उन्हें यह अधिकार दे रखा है। इस प्रकार हम देखते हैं कि कैलिक्लीज शासन की सत्ता के विषय में नहीं सोचता है। उसका ध्यान तो शक्तिशाली व्यक्तियों द्वारा सत्ता ग्रहण करने के अधिकार पर है। किन्तु महामानव पूर्ण और सक्षम तभी हो सकता है जब वह बुद्धि और कौशल में श्रेष्ठ होने के साथ-साथ इनका निःसंकोच प्रयोग करने में उचित और अनुचित के बन्धनों से मुक्त भी हो। यहाँ उसका अनातिवाद अपनी चरम सीमा पर है और पूर्णता प्राप्त कर रहा है। जिस न्याय को वे कमजोर दुर्बल लोग किया करते हैं वह उन्हीं के अनुकूल होगा—उन विपत्तिग्रस्त, पामर मानवों के अनुकूल जिनके लिए प्रत्येक दशा में मृत्यु ही अच्छी है (४८३ B)। मुझे तो ऐसा मनुष्य चाहिए जिसमें अपरिष्कृत प्रकृति की इतनी मात्रा हो कि वह बन्धनों से मुक्त हो सके इन कागज के टुकड़ों, कामल मूर्तियों, औसू पोछने वाले नियमों और अप्राकृतिक परम्पराओं को रौंदता हुआ जाल को तोड़ कर निकल सके (४८४ A)। प्रकृति की विधि ही एकमात्र मान्य विधि है और इसी विधि को पिंडार (Pindar) सब का शासक बनाता है। क्या यह कल्पना की जा सकती है कि हेराक्लीज जरिओन (Geryon) के बैलों का मूल्य चुकायेगा? उचित और अनुचित के तुच्छ अन्तर के लिए प्रकृति के न्याय में कोई स्थान नहीं है।

यह कैलिक्लीज का विरोधाभास है। प्रकृति और विधि का पूर्णतया विरोधी दिखा कर सभी प्रकार की मान्य विधियों का जिनमें अलिखित विधि भी सम्मिलित है उन्मूलन कर देता है। परिणामस्वरूप विधि का सामान्यतया स्वीकृत अर्थ ही उलट जाता है और जिन गुणों को अब तक शालीनता का लक्षण समझा जाता था अवगुण हो जाते हैं। थ्यूसीडाइडीज के अनुसार (III ८२) मान्यताओं का यह विपर्यय कभी-कभी वास्तव में हुआ। इस प्रकार के सिद्धान्त के आधार पर किसी भी राज्य का अस्तित्व सम्भव नहीं हो सकता है इस तथ्य को सर्वप्रथम प्लेटो ने ही प्रस्तुत किया। किन्तु जहाँ तक मान्यताओं के विपर्यय का प्रश्न है यह तो सॉक्रेटीज के इस विरोधाभास में भी निहित है कि अपकृत्य करने की अपेक्षा उसको सहन करना श्रेयस्कर है। सामाजिक आचरण सम्बन्धी तत्कालीन नियम इस प्रकार के बलिदान की अपेक्षा नहीं करते थे और यह स्वाभाविक समझा जाता था कि किसी अपराध के अभियोग से मुक्त होने के लिए अभियोगी सभी प्रकार के साधनों का उपयोग करेगा। यहाँ भी, प्लेटो ने ही यह स्पष्ट किया कि मान्यताओं का यह विशिष्ट विपर्यय वास्तव में हृदय-परिवर्तन का सिद्धान्त है जो एक आत्मसात राज्य के निर्माण के लिए अनिवार्य

आवश्यक है। जैसाकि वर्नर ईगर (Werner Jaeger)[१] ने सुन्दर ढंग से स्पष्ट किया है प्लेटो, कल्लिक्लीज और सोक्रेटीज दोनों के दृष्टिकोण को समझ सकता था और वह स्वयं शक्ति प्राप्त करने के लिए सकल्प (will to power) तथा इसके आकर्षण और सकट का भलीभाँति अनुभव कर चुका था। सम्भवत इस प्रसग मे यह उल्लेख करना उपयुक्त होगा कि एक व्यक्ति द्वारा सचालित शासन के लिए उपयुक्त व्यक्ति की खोज मे वह निरन्तर लगा रहा और यह आशा करता रहा कि अन्ततोगत्वा वह केवल अपने को ही इस योग्य पायेगा। इतना तो वह निश्चित रूप से समझता था कि उसकी इस खोज के परिणामस्वरूप जो उत्तर प्राप्त होगा वह कैल्लक्लीज के उत्तर के विपरीत होगा। प्लेटो के अनुसार, हम यह नहीं कह सकते कि अपने प्रयासों से जो व्यक्ति सफलता के शिखर पर पहुँच गया है वह शासन करने के योग्य है यह कहना चाहिए कि शासन करने योग्य व्यक्ति की खोज कीजिए और उसके हाथ में शासन-सूत्र सौंप दीजिए। इस प्रकार शासक होने के लिए दार्शनिक प्रशिक्षण की आवश्यकता समझी है वह कल्लिक्लीज से शिक्षा[२] की भर्त्सना करवाता है। कल्लिक्लीज शिक्षा को केवल बाल्यकाल में उपयुक्त बताता है और इसे योग्य नहीं समझता कि वयस्क इस पर समय नष्ट करे। उसके अनुसार केवल अध्ययन में अपना समय व्यतीत करने वाले व्यक्तियों का वास्तविक जीवन से सम्पर्क टूट जाता है। शासन करने की योग्यता प्रदान करना तो दूर रहा, सोक्रेटीज की भाँति अपने बौद्धिक विकास के सतत् प्रयत्न में लगा रहना बलवान व्यक्ति के लिए निश्चित रूप से बाधक होता है। कैल्लिक्लीज तथा नीत्शे (Nietzsche)[३] दोनों के 'महामानव' के सिद्धान्तों में बौद्धिक कार्यकलापों की अवहेलना की गई है। वस प्लेटो भी अनियन्त्रित ढंग से साहित्यिक और कलात्मक कार्यों में लगे रहने के परिणाम से घबराता था। अपने को शिक्षक कहने वालों के प्रति उसका अनादरपूर्ण कथन सॉफिस्ट शिक्षकों के प्रति प्लेटो की भावना को भी व्यक्त करता है। कैल्लिक्लीज और हेराक्लाइटस के विचारों में कहीं कहीं समानता मिलती है। दोनों ने अनियन्त्रित प्रतिस्पर्धा का समर्थन किया है और दोनों के विचार से श्रेष्ठ पुरुष को शिखर तक पहुँचने के लिए प्रतिस्पर्धा अत्यन्त आवश्यक था। किन्तु,

---

१ Paideia Vol ii, p १३८

२ प्लेटो का तात्पर्य दार्शनिक प्रशिक्षण ही था 'दर्शन का अध्ययन' नहीं। देखिये आगे पृ० १२४ n

३ यद्यपि दोनों के सिद्धान्तों में अन्तर है। देखिए A Menzel, Beitrage (अध्याय ८ के अन्त में दी गयी टिप्पणी) p २४६ एफएफ। प्लेटो और अरिस्टाटेल की 'मनुष्यों में देवता' के सिद्धान्त का आधार कल्लिक्लीज अथवा जानवर चुराने वाले हेराक्लीज से कोई सम्बन्ध नहीं है।

बौद्धिक शिक्षा के विरुद्ध कल्चिनीज की भावना हरावलाइग्म के विचारों में नहीं मिलती है।

राजनीतिक सिद्धान्तों में प्रकृति के नियमों का प्रयोग करने वाले जाजियाज के अन्य शिष्यों में एल्माइडमस (Alcidamous) और लाइकोफान (Lycrophon) थे। वस्तुतः चकना एल्सामस, सोफिस्ट लाइकफान और ग्लाउकन (Glaucon) चाय, नत्ताब्दी ई० पू० के हैं किन्तु इनका भी यहां उल्लेख करना सुविधाजनक होगा। एल्माइडमस का कथन है, ईश्वर ने सभी मनुष्यों को स्वतन्त्रता दी है प्रकृति ने किसी को भी दास नहीं बनाया है। इसके पूर्व यूरीपाइडीज (Euripides) ने कहा था (Iow ८५४ ८५६) कि दास और स्वतन्त्र के अन्तर का आधार नाम मात्र हैं। *व्यापक समानता के सिद्धान्त के विकास का यह तीसरा और अन्तिम चरण है जिसका प्रतिपादन सर्वप्रथम हिप्पियाज और उसके पश्चात एण्टिफोन ने किया था।* एल्माइडमस विधि को नगरों का सम्राट कहा करता था। यह उसकी आलंकारिक भाषा का उदाहरण है जिसके विरुद्ध अरिस्टाटल ने आपत्ति की। किन्तु उसने यह भी कहा था कि दास विधि के विरुद्ध दुर्ग का काम करता है। सम्भवत उसका तात्पर्य अत्यधिक कठोर विधि से है।[1] लाइकोफान को उस सिद्धान्त का प्रणेता माना जाता है जिसके अनुसार विधि को अधिकारों की पारस्परिक प्रत्याभूति (guarantee) समझा जाता है। उसका कहना था कि प्राकृतिक अवस्था में न तो नैतिक प्रतिबन्ध थे और न किसी प्रकार की विधि केवल जंगल का कानून था। नगर राज्य प्रकृति से न उत्पन्न होकर संविदा (Contract) के फलस्वरूप उत्पन्न हुए हैं। नगर राज्यों की उत्पत्ति के इस दृष्टिकोण के सम्बन्ध में अरिस्टाटल का कहना है कि यदि यह सही है तो नगर राज्य का स्वरूप एक समाज की भाँति न होकर युद्ध-कालीन संघ की भाँति होगा तथा इस प्रकार का राज्य नागरिकों के नैतिक शिक्षा प्रदान करने में असमर्थ होगा किन्तु प्रत्येक यूनानी नगर राज्य को एक शिक्षाप्रद संस्था के रूप में देखना था और उससे नैतिक प्रभाव की अपेक्षा करता था। प्रकृति की व्याख्या भी लाइकोफान ने इस प्रकार की है जिससे यह सिद्ध होता है कि संगठन से निर्बल भी सशक्त हो सकते हैं और सामन्तों की शक्ति के सम्बन्ध में प्रचलित धारणा कल्पना मात्र पर आधारित है क्योंकि उच्च अथवा निम्न वंश में जन्म लेने मात्र से मनुष्य की योग्यता में कोई अन्तर नहीं आता है। प्लेटो की 'रिपब्लिक' की दूसरी पुस्तक में भी संविदा के सिद्धान्त का उल्लेख मिलता है। रिपब्लिक के तत्सम्बन्धी स्थल पर प्लेटो

---

१ Aristotle Rhetoric iii ३, ३ और ४ (१४०६)

२ Aristotle, politics iii १२८०b

का भाई ग्लाउकन (Glaucon) इस सिद्धांत का स्पष्टीकरण करता है, किन्तु इसे वह अपना सिद्धान्त न कह कर विधि की उत्पत्ति के सम्बन्ध में दूसरों के दृष्टिकोण के रूप में प्रस्तुत करता है यद्यपि इस दृष्टिकोण के वास्तविक समर्थकों का नाम वह नहीं बताता है। अधोलिखित उद्धरण इस सिद्धान्त को स्पष्ट करने में सहायक होगा —

दूसरों को क्षति पहुँचाना अच्छा है, स्वयं क्षति को प्राप्त होना बुरा है किन्तु क्षति प्राप्ति से उत्पन्न बुराई क्षति पहुँचाने की अच्छाई से अधिक बड़ी होती है। इसलिए जब मनुष्य जी भर कर दूसरों को क्षति पहुँचा चुका और स्वयं दूसरों द्वारा पहुँचाई गई क्षति को भोग चुकता तो ऐसे व्यक्तियों ने जो स्वयं क्षति से बचने और दूसरों को क्षति पहुँचाने में सफल न हो सके थे यह निर्णय लिया कि उनके हित में है कि लोग परस्पर मिल कर यह समझौता कर लें कि न तो वे किसी को क्षति पहुँचायेंगे और न स्वयं इसको सहन करेंगे'[1] यहीं से विधि और संविदा आरम्भ होता है और विधि द्वारा निर्धारित आचरण के वर्णनार्थ उचित और विधि-संगत शब्दों का प्रयोग होने लगता है। इस प्रकार न्याय का स्वागत लोग इसलिए नहीं करते हैं कि यह स्वयं कोई अच्छी वस्तु है अपितु इसलिए कि वे अपने को बुराई करने के अयोग्य पाते हैं।

कवि राजनीतिज्ञ तथा बहुमुखी प्रतिमा सम्पन्न क्रिटियाज़ प्लेटो का सम्बन्धी था। इसकी मृत्यु ई० पू० ४०३ में हुई। वह सोक्रेटीज़ का सहयोगी था किन्तु बाद में उसका विरोधी हो गया। पेलोपोनीशियन युद्ध में एथेन्स की पराजय के पश्चात जिन तीस व्यक्तियों को कुछ महीनों तक के लिए एथेन्स में कुशासन का अवसर मिला उनमें वह भी था। वह नाटककार, सगीतज्ञ और गद्य-लेखक था, किन्तु वृत्ति से सोफ़िस्ट नहीं था। अपने वर्ग और सामाजिक स्थिति के कारण वह सोफ़िस्ट हो भी नहीं सकता था। किन्तु फिलोस्ट्रैटस (Philostratus) उसे सोफ़िस्ट की उपाधि देता है, किन्तु उसकी यह त्रुटि क्षम्य है, क्योंकि क्रिटियाज़ एक प्रकार की सोफ़िस्ट विचारधारा की प्रतिमूर्ति था और अपनी बहुमुखी प्रतिमा तथा चातुर्य और इनके निकृष्ट प्रयोग से उसने 'सोफ़िस्ट' शब्द को कुख्याति प्रदान करने में महत्त्वपूर्ण योग दिया। साधारण एथेंसवासी जिन्हें वह घृणा की ही दृष्टि से देखता था, उसे पसन्द नहीं करते थे और इसका कारण उसकी अधार्मिकता तथा कुलीनतन्त्र और स्पार्टा की सराहना करने वाले उसके विचार, साहित्य के क्षेत्र में परम्परा के विपरीत उसके निर्णय (४४) और प्रयोग (४) थे। संविधान पर लिखी गई उसकी दो रचनाओं में जिनमें एक गद्य

---

१ एण्टीफोन ने भी इस सिद्धान्त का उल्लेख किया है। दो राज्यों के सम्बन्ध में सन्धि आदि के लिए इसका प्रायः प्रयोग किया जाता था, उदाहरणार्थ Xenophon, Anabasis vi १, २।

है और दूसरा पक्ष उसकी बौद्धिक श्रेष्ठता की भावना स्पार्टा के शिक्षा प्रणाली और [illegible] के प्रति उसके अनुराग के उदाहरण मिलते हैं। किन्तु इन खण्डों में संविधान के सिद्धान्त के बारे में कोई भी महत्त्वपूर्ण बात नहीं मिलती है। यह संकेत अवश्य मिलता है कि क्रिटियास के विचार कृषि जीवन के ढंग भौतिक सम्पत्ति और उत्पादन की वस्तुओं में थे। एक दूसरे पक्ष (२) से यह और भी स्पष्ट हो जाता है। इस पक्ष में वह सिद्धान्त के पात्र रूप में कविता वर्णमाला और छन्द की व्युत्पत्ति के सम्बन्ध में निर्णय देने का प्रयास करता है। सम्भवतः यह महत्त्वपूर्ण है कि हमारे विषय की दृष्टि से उसका सबसे उपयोगी खण्ड (२५) सभ्यता के विकास पर भी कुछ प्रकाश डालता है। यह खण्ड सिसीफस (Sisyphus) नामक उसके नाटक का एक अंग है। यह नाटक व्यंग्य शैली (Satyric Style) में लिखा गया है। इसके मुख्य पात्र द्वारा क्रिटियास एक नया सिद्धान्त प्रस्तुत कराता है जिसके अनुसार राज्य का आधार बल नहीं अपितु प्रवञ्चना है। राज्य के सम्बन्ध में इस नाटक द्वारा प्रस्तुत कथा और प्रोटेगोरस की कथा में महान अन्तर है। विषय से सम्बन्धित ४२ पंक्तियों का आरम्भ इस प्रकार होता है 'एक समय था जब मनुष्य का जीवन अव्यवस्थित था और वह पशुओं की भाँति पाशविक बल से ही नियन्त्रित होता था। उस समय न तो अच्छा कार्य करने वाले को पुरस्कार मिलता था और न बुरा कार्य करने वाले को दण्ड। इसके बाद मनुष्य ने यह सोचा कि दण्ड के साधन के रूप में विधि लागू की जाय जिससे न्याय को ही मानव-जीवन का एकमात्र शासक बनाया जा सके और हिंसा पर नियन्त्रण रखा जा सके। परिणामस्वरूप अपराधियों को दण्ड मिलने लगा। किन्तु चूँकि विधि के अनुसार केवल स्पष्ट हिंसा के कार्य ही वर्जित थे इसलिए गुप्त अपराध होते रहे। मेरा यह विश्वास है कि इसी परिस्थिति में किसी दूरदर्शी और दक्षचित्त व्यक्ति ने एक भय की आवश्यकता का अनुभव किया जो लोगों को गुप्त अपराध करने तथा इसके बारे में सोचने में भी रोकने में समर्थ हो। इसलिए उसने ईश्वरीय शक्ति की धारणा का सूत्रपात किया और एक ऐसा देवता उत्पन्न किया जो सदैव सक्रिय और तत्पर रहता है अपने मस्तिष्क से ही सब कुछ सुनता और देखता रहता है ... मनुष्य जो कुछ भी कहता अथवा करता है इस देवता से नहीं छिप सकता। इसके बाद सिसीफस द्वारा इस प्रवञ्चना की सफलता का वर्णन प्रस्तुत कराया जाता है। मनुष्यों ने इस काल्पनिक देवता के अस्तित्व को सहज स्वीकार कर लिया और विश्वास करने लगे कि वज्रपात अथवा अन्य दुर्घटनाओं से होने वाली मृत्यु अपराधियों को दण्ड स्वरूप मिलती है। देवताओं के अस्तित्व में आस्था और विधि के पालन की उत्पत्ति इसी प्रकार हुई'।

इस प्रकार अपने समकालीन मेलोस (Melos) के डायगोरस (Diagoras)

की भाति क्रिटियास भी पूर्णरूपेण नास्तिक था। इसके अतिरिक्त वह सर्वप्रथम व्यक्ति है जिसने यह कल्पना की कि धर्म का राजनीतिक उपयोग भी किया जा सकता है। उसके पश्चात अन्य ने भी उसका अनुसरण किया। उसका यह भी कहना था (यदि कथन २२ का यह सन्दर्भ माना जाय) कि निम्नवर्गों की व्यवस्था में रखने के लिए विधि ही पर्याप्त नहीं है क्योंकि चतुर व्यक्ति विधि को धोखा दे सकते हैं, किन्तु अच्छे चरित्रवालों को वे भी भ्रष्ट नहीं कर सकते। पवित्र जनोचित तथा बहुत में इतर लोग उन धर्मों को दृष्टि में रखते थे। अपने समाज[1] में यह मिश्रित भावना का पात्र था। यदि कुछ लोग उसकी प्रशंसा करते थे, तो कुछ ऐसे भी थे जो उसे बहिष्कार के योग्य समझते थे। वह छिद्रान्वेषी, घमण्डी और दूसरों को तुच्छ समझता था तथापि नाट्य एवं राजनीतिक साहित्य का यह दुर्भाग्य ही है कि उसकी अधिकांश रचनाएँ सुरक्षित न रह सकीं। सम्भवत वह प्रथम राजनीतिक विचारक था जिसने आर्थिक इतिहास की महत्ता को समझा और निश्चित रूप से वह प्रथम समाज शास्त्री था जिसने माता और पिता दोनों को इस विषय पर उपदेश दिया कि गर्भाधान के पश्चात तथा प्रसव के पूर्व उन्हें किन बातों पर ध्यान देना चाहिए (३२)।

यद्यपि क्रिटियास की रचनाओं के उपलब्ध अंशों में इस बात का प्रमाण नहीं मिलता है कि उसने प्राकृतिक प्रक्रियाओं के आधार पर नैतिक अथवा राजनीतिक आचरण के किसी सिद्धान्त का प्रतिपादन किया फिर भी उसकी उपलब्ध रचनाओं में प्रतिबिम्बित होने वाले दृष्टिकोण के आधार पर हम उसको उन विचारकों की श्रेणी में रख सकते हैं जो यह मानते थे कि चूँकि बुरा आचरण करना मनुष्य के स्वभाव में ही है अतएव इस प्रकार का आचरण करने का अनुमति उसे मिलना चाहिए। किन्तु इन अनीतिवादियों को निष्कंटक मार्ग नहीं मिल सका। प्रोटेगोरस को लोग अभी तक सर्वथा भुला नहीं पाये थे, सोक्रटीज सक्रिय था और अपने मित्रों और विरोधियों दोनों की संख्या में वृद्धि कर रहा था। कुछ और लोग भी थे जो न्याय और विधि का समर्थन करते थे (Plato Republic ii ३६८ E) किन्तु उनका नाम अज्ञात है। इनकी रचनाओं में से केवल एक महत्वपूर्ण अंश सुरक्षित रह सका है। वह गणितज्ञ

---

१ जैसे Alcibiades, Plato तथा युवक Charmids। प्लेटो की अपूर्ण रचना Critias बाद की रचनाओं में है और इसमें दी गयी अटलाण्टिस को क्या क्रिटियाज के ज्ञात रचनाओं में किसी स्थल पर भी नहीं मिलती। देवता कापनिक दृष्टि न होकर राजनीतिक व्यवस्था के स्रष्टा हैं। (Critias १०९ c D) Timaeus और Charmides में भी उसका उल्लेख है।

आयम्ब्लिकस (Iamblichus) की पाण्डुलिपि में प्राप्त इस अंश के लेखक का नाम भी नहीं दिया गया है। ऐसी दशा में इसके लेखक को हम अज्ञात आयम्ब्लिकस आयम्ब्लिकी (Anonymus Iamblichi) कहेंगे। मिटिलिनियन विवाद (Mytilenean debate)[1] के डायोडोटस (Diodotus) की भाँति यह भी अपने को यथार्थवादी, व्यावहारिक और आवश्यकता से पर सिद्ध करना चाहता है। वह यह सिद्ध करने का प्रयास नहीं करता है कि न्याय स्वयं अपने में महत्त्वपूर्ण है और इस दृष्टि से महत्त्व का कारण वे सुविधाएँ नहीं हैं जो इससे प्राप्त होती हैं। एडीमेंटस (Adeimantus)[2] ने इसी दृष्टिकोण का विरोध किया है। यह अपने पाठक को यह परामर्श देता है कि मनुष्य को ख्याति प्राप्त करने का प्रयास करना चाहिए यद्यपि इसमें कुछ समय अवश्य लगेगा। भाषण देने की कला तथा अन्य कलाओं में दक्षता प्राप्त करने के लिए शिक्षा ग्रहण करना चाहिए और समाज के प्रभावशाली व्यक्तियों के लिए उपयोगी सिद्ध होने का प्रयत्न करना चाहिए। इसके लिए सावधानी के साथ पैसा भी खर्च करना चाहिए। किन्तु इस प्रकार से जो प्रभाव अर्जित करने में मनुष्य सफल हो सके उसका उपयोग न्याय और अच्छाई के लिए तथा विधि के अनुकूल ही करना चाहिए। धन उपयोगी होता है किन्तु उसके लिए इतना लालुप न हो जाइए कि आप स्वयं इसके दास हो जाएँ। इसी प्रकार जीवन में सफलता और समृद्धि प्राप्त करने की लालसा को भी इतना प्रोत्साहन न दीजिए कि वह अर्थलोलुपता, स्वार्थपरता और विलासिता का रूप धारण कर ले। यह सकेत कैलिक्लीज और थ्रैसीमेकस के सिद्धान्तों की ओर है। लेखक का कहना है कि धृष्टता को स्वार्थ सिद्धि करने की क्षमता का पर्याय नहीं समझना चाहिए और न यही सोचना चाहिए कि विधियों का पालन करना किसी प्रकार की दुर्बलता का द्योतक है। यहाँ तक कि धन, शक्ति और विधि की सत्ता से अपने को मुक्त समझने वाला महामानव भी विधि को अपने पक्ष में करने के बाद ही अपने लक्ष्य की दिशा में आगे बढ़ सकता है। (इस प्रकार निष्पक्षता के साथ न्यायाधीश[3] के कर्तव्यों का पालन करके ही माड डायोसीज (Deioces, the Mede) ने सत्ता प्राप्त की)। राजनीतिक व्यवस्था के सम्बन्ध में यह लेखक सामान्यतया प्राचीन परिपाटी का समर्थक है। शान्ति और सुव्यवस्था को वह सभी के लिए उपयोगी बताता है। सम्पत्ति वालों के लिए तो ये विशेषरूप से उपयोगी हैं

---

१ Thucydides iii देखिए अध्याय ६।

२ Plato Republic ii ३६६ E

३ मूल मे यह प्रसग नहीं है। डायोसीज की कहानी Herodotus i ९६–९९ में मिलती है। कोरसिरा के संघर्ष का उल्लेख Thucydides iii ८२ मे है।

परन्तु जो अधिक सम्पन्न नहीं हैं उनके हित में भी शान्ति और सुव्यवस्था आवश्यक है क्योंकि दान और पारस्परिक सहायता उसी समाज में सम्भव हो सकती है जहाँ विधि का पालन किया जाता है। शान्तिपूर्ण और रचनात्मक कार्यों के लिए आवश्यक अवसर भी सुव्यवस्था द्वारा ही प्रदान किया जा सकता है। अव्यवस्था के परिणामस्वरूप तो केवल बाह्य-युद्ध और आन्तरिक अशान्ति की अवस्था उत्पन्न हो सकती है और यह ऐसी अवस्था है जिसमें प्रत्येक व्यक्ति दूसरे से शंकित रहता है (कारसेरा–Corcyra में ई० पू० ४२७ में यही स्थिति थी)[१]। किन्तु अपनी शान्तिवादिता के कारण लेखक यथार्थ से विमुख नहीं होता है। प्रकृतिवादी विचारकों की अपेक्षा वह कहीं अधिक व्यावहारिक और यथार्थवादी है। अपने देशवासियों को सावधान करते हुए वह कहता है कि अव्यवस्था की दशा में न्याय की भावना का लोप हो जाने के परिणामस्वरूप अन्ततोगत्वा राज्य की सम्पूर्ण सत्ता का एकमात्र अधिकार उसी व्यक्ति के हाथों में चला जाता है जो सबसे अधिक दुष्ट है और उचित अनुचित की ओर किञ्चिन्मात्र भी ध्यान नहीं देता है। व्यवस्था और न्याय का अभाव निरंकुश शासन स्थापित करने की अभिलाषा रखनेवाले व्यक्ति को सुअवसर प्रदान करता है। यदि सभ्य जीवन केवल नगर राज्य (पालिस) के अन्तर्गत ही सम्भव हो सकता है तो विधि और न्याय को सर्वोपरि रखना चाहिए क्योंकि नगर राज्य का निर्माण इन्हीं से होता है और इन्हीं से नगर राज्य की एकता सुरक्षित रह सकती है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि इस लेखक ने एक ऐसा प्रश्न उठाया है जिसके उत्तर की ५वीं शताब्दी के अन्तिम चरणों में अत्यधिक आवश्यकता थी। वस्तु यूनानी राजनीतिक विचारक सदैव इसके महत्त्व का अनुभव करते रहे। यदि नगर राज्यों को सुरक्षित रखना है तो आवश्यक है कि हम उन शक्तियों में अवगत हों जो मनुष्यों और नगरों को एकता के सूत्र में बाँधती हैं। इस लेखक के अनुसार एकता के लिए सबसे पहली आवश्यकता तो यह है कि न्याय के सम्बन्ध में एक सर्वमान्य धारणा हो। दूसरे विचारकों ने पारस्परिक स्नेह और सौहार्द्र को आवश्यक बताया था। न्याय के सम्बन्ध में सर्वमान्य धारणा के अतिरिक्त एकता के लिए अन्य आवश्यकताएँ हैं खाद्य-सामग्री, आवश्यक समझी जाने वाली वस्तुओं और सेवाओं की व्यवस्था तथा क्रय विक्रय के लिए सुविधाजनक माध्यम। इनका आदान प्रदान तथा मनुष्यों के विभिन्न पारस्परिक सम्बन्ध ही नगर राज्य के जीवन का अधिकांश भाग है। जैसाकि अरिस्टाटल[२] ने अनुभव किया, नगर राज्य के

---

१ See footnote ३, p ८१
२ Ethics v ५, ६, ११३२ B Fin 'The city is held together by interchange of services on a proportionate basis and politics iii १२६१ a Euripides, phoen ५३८ से तुलना कीजिए।

महामारी के प्रकोप ने इन मान्यताओं को दुर्बल अवश्य कर दिया था। ऐसी दशा में जनता के स्तर को ऊँचा रखने का प्रयास करनेवालों को नीच भावनाओं और वृत्तियों व रुचि का पक्ष विश्वासी समर्थक कहना तथा उनकी खिल्ली उड़ाना आसान हो गया था। जिस अज्ञात लेखक का उल्लेख किया गया है यह वृद्ध कुलीनतन्त्री (Old Oligarch) के नाम से भी सम्बोधित किया जाता है। उसके अनुसार जनता की नैतिकता का विनाश स्वार्थ जनित सिद्धान्तों का आचरण उचित और अनुचित पर ध्यान न देना और अपने ही व्यक्तिगत हित में आस्था रखना है। उसी का एक और कथन है— जिसे आप बुरा शासन समझते हैं उसी से जनता अपनी शक्ति और स्वतन्त्रता पाती है। इस प्रकार हम देखते हैं कि जिनके पूर्वजों ने विधि (Nomos Gr) को मुक्तिदायिनी शक्ति मानकर उसके लिए संघर्ष किया और इस संघर्ष में सफलता भी प्राप्त की वही लोग अब विधि को दासता का प्रतीक मानने लगे और उससे मुक्ति प्राप्त करने को उद्यत थे। आन्तरिक अव्यवस्था में दमन और विघटन (स्टेसिस) के परिणामस्वरूप जब कभी हिंसा का प्रादुर्भाव हो जाता है अथवा युद्ध जन्य कष्टों और विपत्तियों से लोग ऊब जाते हैं तो दासता की नैतिकता के बन्धन ढीले पड़ने लगते हैं और आकांक्षाओं का निर्बन्ध[1] प्रारम्भ होने की सम्भावना उपस्थित हो जाती है। ऐसी दशा में लोग परम्परा से सर्वथा प्रतिकूल नैतिक भावनाओं का परित्याग कर सकते हैं। इस समय के एथेन्स में भी यही स्थिति व्याप्त थी और परम्परागत नैतिकता की उपेक्षा सम्भव हो सकती थी। नगर राज्य अथवा व्यक्तियों के कार्यों को मूल्यांकन करने में नीति-निरपेक्ष मानदण्डों का प्रयोग करना तथा केवल ऐसे कार्यों को उचित घोषित करना जिनसे किसी विशिष्ट उद्देश्य अथवा प्रयोजन की सिद्धि में सहायता मिल सके कुछ लोगों के लिए स्वाभाविक हो गया था। ये उद्देश्य कई प्रकार के हो सकते थे, जैसे नागरिक कल्याण[2] समाज का पुनरुद्धार अथवा अनर्जित धन संचय का बढ़ना था, केवल शासक वर्ग का हित। यहाँ तक कि स्वयं 'Old Oligarch' भी जो किसी भी अर्थ में एथेन्स की लोकतन्त्रात्मक व्यवस्था का समर्थक नहीं कहा जा सकता 'न्यायसम्मत और न्याय विरुद्ध' शब्दों का प्रयोग इस ढंग से करता है कि यह प्रतीत होता है कि न्यायसम्मत से उसका तात्पर्य शासन करने वाली बहुसंख्यक जनता (डिमोस)[3]

---

१ प्लेटो का यह वक्तव्य (phaedrus २२५ A) जिस प्रकार से 'पागल होने वाले मनुष्य के मस्तिष्क में किस प्रकार के विचार उत्पन्न होते हैं।' का वर्णन करता है और नीत्से (Nietzsche) के वक्तव्य से समानता है।

२ अध्याय ४ में प्रोटेगोरस के विचारों से तुलना कीजिए।

३ H Frankel American of Journal philology ७८ (१९४७) p ३०९

प्रयाण किया। पाइथिया (pythia) से जब यह प्रश्न किया गया कि क्या कोई व्यक्ति सोक्रेटीज़ से भी अधिक बुद्धिमान है तो उसने उत्तर में कहा —कोई नहीं। सोक्रेटीज़ ने इस अपनी प्रशंसा ने समय कर चुनौती के रूप में लिया। चरफो की डेल्फी यात्रा की निश्चित तिथि के सम्बन्ध में तो हम नहीं जान सकते किन्तु यदि यह घटना सोक्रेटीज़ के दृष्टिकोण में हुए परिवर्तन के पहले की नहीं भी है तो भी इस परिवर्तन की पुष्टि करने में यह अवश्य सहायक हुई होगी (देखिए अध्याय ४)। इस घटना की जो भी तिथि हो उसी समय से सोक्रेटीज़ ने प्रश्नों और विचार विमर्श में सत्य और विनय की खोज करना अपना परम पवित्र कर्तव्य समझने लगा। चूंकि वह यह नहीं समझता था कि किसी प्रकार का विवेक अथवा ज्ञान उसके पास है इसलिए उसने निर्णय किया कि पाइथिया (pythtia) के दिव्यपूर्ण शब्दों का तात्पर्य यह है कि वह कम से कम इतना तो जानता है कि वह कुछ भी नहीं जानता है दूसरे लोग तो इतना भी नहीं जानते थे। एथेन्सवासियों के लिए वह एक ऐसा साफिस्ट था जो किसी भी प्रकार का ज्ञान का दावा नहीं करता था और न किसी प्रकार की शिक्षा ही देता था। किसी सैद्धांतिक प्रणाली का प्रणयन भी उसने नहीं किया फिर भी उसका प्रभाव व्यापक था और बाद में बहुत से ऐसे लोग हुए जो अपने को सोक्रेटीज़वादी (सोक्रेटिकाज) कहा करते थे। राजनीतिक दर्शन के क्षेत्र में उसका प्रभाव तीन प्रकार से प्रकट होता है—उसके रहन सहन की पद्धति से उसके कथन और विचारों से तथा उसकी मृत्यु के ढंग से। इसी लिए उसका प्रभाव अधिकांशतया अप्रत्यक्ष ही रहा और इसकी व्याख्या और मूल्यांकन करने के प्रयास कभी भी पूर्वाग्रह और वैयक्तिक रुझान से मुक्त नहीं हो सके।

अपने रहन-सहन के ढंग, आदतों और आकृति तथा लोगों को क्षुब्ध और क्रुद्ध कर देने वाले वार्तालाप से अपने जीवन-काल में ही वह एक रहस्यमय व्यक्तित्व बन गया था। देखने का उसका ढंग ऐसा था मानो उसकी पैनी दृष्टि आपके अन्तस्तल तक को देख रही। इन सारी बातों तथा उसके व्यक्तित्व की अन्य विशेषताओं ने उसे एक विलक्षणता एवं दिव्यता प्रदान कर दी थी जिससे उसकी मृत्यु के पर्याप्त समय बाद तक लोग उसे न भूल सके। अपने वैयक्तिक जीवन में वह नम्र था और विधि का पालन करता था। न्यायपरायणता और लोलुपता से वह ऊपर था। एथेन्स वालों के लिए यह एक विस्मय की बात था क्योंकि उसके पास इतनी बुद्धि थी कि वह धनोपार्जन कर सकता था और वह इतना निर्धन था कि धन की उसे आवश्यकता थी। सार्वजनिक जीवन में उसने उन सभी सामरिक और नागरिक कर्तव्यों का पालन किया जिनका उत्तरदायित्व उसको दिया गया। किन्तु पद पर बने रहने की उसने कोई दिलचस्पी नहीं दिखाई। साथ ही जब तक वह किसी पद पर रहा अपने अधिकारों का उपयोग अपने स्वार्थ के लिए नहीं किया। प्रस्तर कला को जो उसके पिता का व्यवसाय था उसने सीख रखा

था। इसलिए यदि प्लेटो को 'रिपब्लिक' की छठी पुस्तक का अध्ययन करने का अवसर उसे मिला होता और यदि वह इसको समझ पाता तो निश्चय ही 'रिपब्लिक' का यह अंश उसे अप्रासंगिक न प्रतीत होता। किन्तु स्वयं सोक्रेटीज ने ज्ञान के सम्बन्ध में क्या कहा है? प्रकट रूप से उसने कहा था कि प्रथम यह कि मैं कुछ नहीं जानता हूँ,[1] निश्चित ज्ञान का मार्ग यद्यपि कठिन है किन्तु इसे प्राप्त करना असम्भव नहीं है। तर्क और ईमानदारी के साथ प्रश्नोत्तर के ढंग का अनुसरण करके ही ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। सम्भव है यह हो सकता है कि यदि गहन चिन्तन मनन की पद्धति का अनुसरण करके भी सोक्रेटीज को ज्ञान नहीं प्राप्त हो सका तो प्रश्नोत्तर का ढंग वास्तव में अच्छा ढंग नहीं है। इसलिए ग्लाकोन ने यह समझा कि उसका तथाकथित ज्ञान एक पाखण्ड मात्र है। सुन्दर और असुन्दर के अन्तर को स्पष्ट करने के लिए उसने एक ऐसा आधार भी प्रस्तुत किया जिसे हम व्यावहारिक ज्ञान (Working Knowledge) कह सकते हैं। और उसने स्वयं अपनी आस्था और विश्वास के साथ इस ज्ञान को अपने आचरण का आधार बनाये रखा। इससे यह प्रतीत होता है कि सोक्रेटीज ही एकमात्र ज्ञानी था दूसरे लोग तो सन्दिग्धावस्था में ही थे। किन्तु सोक्रेटीज का अभिप्राय यह नहीं था। उसके अनुसार आस्था और विश्वास चाहे वे कितने ही प्रबल हों, कितने ही सुन्दर हों, कितने ही सत्य हों और कितने ही अधिक व्यक्तियों द्वारा क्यों न स्वीकार किये जायँ वे मनुष्य के ही विश्वास या व्यक्ति के विश्वास हैं। सच्चा ज्ञान तो सर्वजनीन एवं सर्वदेशीय होता है और इसका दावा वह नहीं करता था।

जातियों (Universals) के सम्बन्ध में सोक्रेटीज के विचारों का विवेचन करना हमारे विषय की सीमा के परे है। तथापि इतना तो निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि सम्यक् (Right) को वह जातिगत मानता था और विश्वव्यापी न्याय की धारणा में विश्वास करता था। किन्तु जैसा कि हम देख चुके हैं नास्तिवादी विचारकों की चुनौती और युद्ध के वातावरण से प्रभावित लोगों की मनःस्थिति के कारण उस समय नैतिकता और न्याय का अस्तित्व ही संकट में पड़ गया था। बौद्धिक जातिवादों के दुष्परिणामों को वह जानता था किन्तु साथ ही वह यह भी जानता था कि निन्दनीय एवं विध्वंसक विचारों के संकट से बचने का उपाय विचारकों का दमन नहीं है। इस बात को समझना कोई प्लेटो नहीं देख सका। सोक्रेटीज के अनुसार इस प्रकार

---

१ क्या कारण है कि सोक्रेटीज का यह कथन कि 'मैं कुछ नहीं जानता हूँ' प्रायः उसकी प्रशंसा का कारण बन जाता है और, देवताओं के सम्बन्ध में प्रोटैगोरस का इसी प्रकार का कथन उसकी भर्त्सना का कारण बन जाता है? (देवताओं के सम्बन्ध में प्रोटैगोरस ने कहा था कि मैं नहीं जानता हूँ कि वे हैं अथवा नहीं हैं।)

के विचारो मे बचने का एकमात्र उपाय यही था कि विचारक का पुन और उच्च द्वार मे विचार करने म सहायता दी जाय। इसी से मिलता जुलता एक दूसरा भी मत है जो साक्रेटीज को तो विदित हो गया था किन्तु प्लेटो इसे नही देख पाया। यह है कि चिन्तन के परिणामस्वरूप संकट उत्पन्न हो सकता है परन्तु अन्ततोगत्वा चिन्तन से उतनी हानि की सम्भावना नही रहती है जितनी कि चिन्तन न करने से। ५वीं शताब्दी के अन्य विचारको की भाँति वह भी बौद्धिक स्वतन्त्रता और उदार चिन्तन म विश्वास करता था। किन्तु जहां पिछले विचारक उत्तेजनात्मक और परम्परा विरोधी उत्तरो से ही सन्तुष्ट होकर चिन्तन की प्रक्रिया को बीच मे ही रोक देते थे वहा साक्रेटीज ऐसे उत्तरो को जिन्हें वह श्रेष्ठता की धारणा के विरुद्ध पाता था नहीं स्वीकार करता था और अपने प्रश्नो का क्रम जारी रखता था। इस सम्बन्ध म वह परम्परा विरोधी प्रतिक्रियावादी अथवा बौद्धिक स्वतन्त्रता पर किसी भी प्रकार का नियन्त्रण लगाने वाले तत्वो का प्रतिनिधित्व नही करता है। उसने तो केवल उन लोगो का सतत विरोध किया जो अपनी बौद्धिकता पर गर्व करते थे। थ्रेसीमेकस और क्लिटोफन ने पाण्डित्य प्रदर्शन से तथा अपना प्रत्यक्ष ज्ञान को विज्ञान पर आधारित करार दे न केवल साक्रेटीज को ही अपितु सब व्यक्तियों को भी मानसिक आघात पहुचाया था। इसका कारण यह था कि परम्परा से चले आने वाले तथा लोगो के अन्तस्तल म व्याप्त उद्दण्डता (Hubris) का भय अभी समाप्त नहीं हुआ था। नास्तिकता का यद्यपि पर्याप्त प्रचार हो गया था, फिर भी उद्दण्डता से लोग भयभीत थे। अपने अन्य समकालीन व्यक्तियों की भांति साक्रेटीज भी यह भली भांति अनुभव करता था कि प्राचीन प्रथाओं अथवा 'डाइक' और 'थेमिस' के वैयक्तीकरण पर अब विधि, नैतिकता और राज्य को आधारित करना पर्याप्त नहीं होगा। किन्तु इसके साथ ही उसका यह भी विश्वास था कि इस प्रकार के आधारो को न स्वीकार करने वालो का निराशावादी विनाशवाद भी तर्कसंगत नहीं है। उसने यह अनुभव किया कि प्राकृतिक घटनाओ के निरीक्षण द्वारा विश्वव्यापी न्याय के सिद्धान्तो की खोज का प्रयास निष्फल होगा क्योंकि जो वास्तव म व्यापक है उसे निरीक्षण द्वारा नहीं देखा जा सकता। इसलिए यह आवश्यक हो जाता है कि डाइक सम्यक् प्रथा जो स्थान-स्थान पर भिन्न हो सकती है और सम्यक् उचित शाश्वत-अपरिवर्तनीय और व्यापक सम्यक् के अन्तर को समझा जाय।

इसके पश्चात प्रकृति और परम्परा के विवाद के सन्दर्भ म साक्रेटीज की स्थिति पर विचार करना आवश्यक प्रतीत होता है। एक ओर तो वह प्रकृतिवादी सिद्धान्तो (doctrines) प्राकृतिक समानता और बलवान के अधिकार के सिद्धान्तो को अस्वीकृत करता प्रतीत होता है। मानव मानव म समानता का-

है कि ३० व्यक्तियों के शासन के पतन के उपरान्त एथेंस के पुनर्स्थापित लोकतन्त्र का व्यवहार उग्र नहीं था। यद्यपि ऐसे व्यक्ति थे जो व्यक्तिगत कारणों से यह चाहते थे कि किसी भाँति सोक्रेटीज से छुटकारा मिल जाय किन्तु किसी प्रकार के राजनीतिक संकट की सम्भावना उससे नहीं थी। एथेंस के नये लोकतन्त्र के विरुद्ध सामन्तवादी शक्तियों को संगठित करने में भी वह सहायक नहीं हो सकता था। इसके अतिरिक्त, यदि यह मान भी लिया जाय कि उसके विरोधियों ने मुख्यतया राजनीतिक कारणों से प्रेरित होकर ही उस पर अभियोग लगाया तो भी इससे उसकी मृत्यु की घटना के महत्व पर कोई विशेष प्रकाश नहीं पड़ता है। जैसा कि हम देख चुके हैं, 'तीस व्यक्तियों' के अल्पतन्त्र के द्वारा उसे मृत्युदण्ड दिए जाने की संभावना लगभग उत्पन्न हो गयी थी। न उसने प्रजातंत्र या अल्पतंत्र के लिए प्राण दिए और न वास्तविक अर्थों में राजनीतिक शहीद ही हुआ।

उसकी मृत्यु का महत्त्व तो सम्भवतः इस बात में है कि आत्मा की स्वतन्त्रता के हेतु उसने मृत्यु का आलिंगन किया। जीवन पर्यन्त अपने देशवासियों को वह यही शिक्षा देता रहा कि प्रत्येक व्यक्ति के कुछ व्यक्तिगत कर्त्तव्य होते हैं जिनका सम्बन्ध उसकी आत्मा से रहता है और इनका पालन करने के लिए प्रत्येक व्यक्ति राज्य के प्रति उत्तरदायी न होकर स्वयं अपनी आत्मा के प्रति उत्तरदायी होता है। इसी सिद्धान्त के अनुरूप जीवन व्यतीत करने के प्रयास के फलस्वरूप ही राज्य से उसका संघर्ष हुआ। मनुष्य की नैतिक स्वाधीनता में उसके अमिट विश्वास का प्रमाण इसी से मिलता है। कारावास में मृत्यु की प्रतीक्षा करते समय भी इस नैतिक स्वाधीनता का समर्थन उसने त्याग किया। उसके मित्र क्राइटो ने जब कारावास में उसके सम्मुख यह प्रस्ताव रखा कि वह कारावास तथा एटिका से भाग निकले और उसे यह भी बताया कि इस पलायन की पूरी व्यवस्था उसने पहले से कर ली है तो सोक्रेटीज ने क्राइटो के इस प्रस्ताव को उसी तरह ठुकरा दिया जिस तरह उसने 'तीस व्यक्तियों' वाले अल्पतन्त्र के आदेश को ठुकरा दिया था। इस प्रकार के पलायन को वह उचित नहीं समझता था। किन्तु न्यायाधीशों के निर्णय को अनुचित समझना तथा इस अनुचित निर्णय के परिणाम से बचने के लिए कारावास से पलायन करने से इनकार करने में कोई असंगति नहीं है। सोक्रेटीज कभी भी यह नहीं स्वीकार कर सकता था कि एक पक्ष का अनुचित कार्य दूसरे पक्ष को भी अनुचित कार्य अधिकार प्रदान कर देता है। क्राइटो की प्रार्थना को अस्वीकार करके तथा न्यायालय के निर्णय को अंगीकार करके सोक्रेटीज ने उसी सिद्धान्त के प्रति अपनी आस्था प्रकट की जिसके कारण पहले एक अवसर पर उसने सत्ता के आदेश का पालन करने से इनकार किया था। यद्यपि यह निर्णय न्याय विरुद्ध था फिर भी सोक्रेटीज को न्याय विरुद्ध आचरण का अधिकार नहीं प्राप्त था और न इस प्रकार के आचरण की उससे

आशा ही की जा सकती थी। सर्वमान्य न्याय (टी डिकाइअान) का ऐसा विवरण जो सर्वमान्य हो सोक्रेटीज ने नहीं दिया है और यह भी नहीं कहा जा सकता है कि उसने जानबूझ कर इस प्रकार का विवरण प्रस्तुत करने से इनकार किया। ऐसी दशा में हम यही सोच सकते कि न्याय की इस परिभाषा तक वह नहीं पहुंच सका था। फिर भी अपने सम्बन्ध में इसके अर्थ को वह भलीभांति जानता था और एक बार यह जान लेने के बाद कि क्या सम्यक (right) है इसका पालन करने में वह संकोच नहीं कर सकता था। किन्तु ग्रीक (यूनानी) भाषा में भी अंग्रेजी की ही भांति 'right' शब्द का प्रयोग केवल कार्यों के सम्बन्ध में ही नहीं किया जाता है अधिकारों के लिए भी right का प्रयोग होता है। इसलिए क्राइटो का दृष्टिकोण यह हो सकता था कि चूंकि सोक्रेटीज को जो दण्ड दिया गया था वह न्याय विरुद्ध था इसलिए कारावास से भाग जाने का अधिकार उसे था। किन्तु सोक्रेटीज का यह मत था कि चूंकि इस प्रकार का आचरण न्यायोचित नहीं है और न्याय की धारणा के प्रतिकूल है इसलिए अधिकारों की श्रेणी में यह नहीं आ सकता था। क्राइटो और सोक्रेटीज के दृष्टिकोणों में सामञ्जस्य नहीं स्थापित हो सकता है। यह अनुमान करना भी कठिन है कि क्राइटो ने सोक्रेटीज के इस दृष्टिकोण को स्वीकार किया होगा। किन्तु क्राइटो नामक अपने संवाद में प्लेटो ने जो विवरण प्रस्तुत किया है उससे यह प्रकट होता है कि सोक्रेटीज ने अपने शुभचिंतक मित्र क्राइटो[1] को अपने तर्कों से परास्त कर दिया था। साथ ही इस दृष्टिकोण के समर्थन में जो तर्क सोक्रेटीज के मुख से प्रस्तुत कराये गये हैं उनमें यह भी आभास मिलता है कि राज्य के सम्बन्ध में भी सोक्रेटीज ने कुछ सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया था। वैसे प्लेटो के इन संवादों के अतिरिक्त सोक्रेटीज से सम्बन्धित परम्पराओं में कोई भी ऐसा उल्लेख नहीं मिलता है जिसे राज्य का सिद्धान्त कहा जा सके। हां प्लेटो के संवाद के आधार पर यह अवश्य कहा जा सकता है कि सोक्रेटीज ने राज्य के सम्बन्ध में दो सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया है। पहला सिद्धान्त तो यह है कि किसी राज्य की सीमा में निरन्तर निवास करने के परिणामस्वरूप ही प्रत्येक नागरिक एक ऐसे अनुबन्ध में बंध जाता है जिससे वह उन सभी कार्यों को करने के लिए बाध्य हो जाता है जिसकी आशा उससे की जाती है। दूसरा सिद्धान्त राज्य को माता पिता के सदृश स्थान देता है और इसे रोमन पिता के auctoritas और potestas के अधिकारों से युक्त कर देता है। ये दोनों सिद्धान्त पृथक और यदि कोई असंगति न उत्पन्न हो तो

---

१ क्राइटो के सम्बन्ध में भी कहा जाता है (Diog L ii १२१) कि प्रोटगोरस की राजनीति पर उसकी भी एक रचना थी जिसके लिए उसे पर्याप्त ख्याति मिल चुकी थी।

सम्मिलित रूप से भी कारावास से पलायन करने के विरुद्ध उचित तर्क प्रस्तुत करते हैं। किन्तु इससे यह नहीं सिद्ध होता है कि सोक्रेटीज ने इनका प्रयोग किया ही। इनका प्रयोग तो कितने एसे कार्यों का समर्थन करने के लिए भी किया जा सकता था जिन्हें सोक्रेटीज गलत समझता। यह सम्भव नहीं प्रतीत होता है कि सोक्रेटीज ने कभी भी इन सिद्धान्तों पर विश्वास किया अथवा इनके अनुसार कार्य किया। यह भी असम्भव ही लगता है कि उसने राज्य के सम्बन्ध में किसी सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। इतना तो निश्चित ही है कि राज्य के सम्बन्ध में किसी सिद्धान्त की रक्षा के हेतु उसने अपनी जान नहीं दी। उसकी चिन्ता का *मुख्य विषय मनुष्य था राज्य नहीं।*

सोक्रेटीज के जीवन की घटनाओं का स्मरण करते समय हमारा ध्यान प्रोटगोरस की ओर जाता है। वह भी सस्थाओं की अपेक्षा मनुष्य की अधिक चिन्ता करता था। और सोक्रेटीज की भांति सामुदायिक जीवन की सफलता के लिए नैतिक और बौद्धिक गुणों को अत्यधिक आवश्यक समझता था। तथापि, ५वीं शताब्दी के राजनीतिक दर्शन पर इन दोनों महान विभूतियों के विचारों में आधारभूत अन्तर है जिस पर ध्यान देना आवश्यक है। सबसे महत्वपूर्ण अन्तर तो यह है कि शिक्षा और दर्शन को सोक्रेटीज कार्यक्षमता बढ़ाने के लिए प्रदान किये जाने वाले प्रशिक्षण के रूप में नहीं देखता था। वह शिक्षा और दर्शन को यथार्थ के स्वरूप और स्वभाव को समझने की प्रक्रिया मानता था। प्रोटगोरस का दृष्टिकोण सामान्यतया आशावादी था। शिक्षा के जिस उद्देश्य का प्रतिपादन उसने किया उसकी पूर्ति सुगम थी। जिस युग में उसका जीवन व्यतीत हुआ साधारणतया यथास्थान था और संस्थाओं एवं मान्यताओं में कोई गम्भीर त्रुटि नहीं प्रतीत हो रही थी। इसके विपरीत सोक्रेटीज ने अपने सामने इतिहास के एक सर्वथा नये अध्याय की रचना होते हुए देखा और इस प्रक्रिया में एक महान एवं दुष्कर कार्य के संपादन का उत्तरदायित्व उसने अपने ऊपर ले लिया। 'आत्मा का उत्कर्ष' के जिस उद्देश्य को उसने अपने सम्मुख रखा उसके लिए उच्चस्तर की बौद्धिक ईमानदारी की आवश्यकता थी और डेल्फी का यह वाक्य कि 'स्वयं अपने को समझो' मानव की बौद्धिक सीमाओं का सतत स्मरण दिलाता था। किन्तु बौद्धिक सीमाओं के कारण मनुष्य के उत्तरदायित्व की महानता में किसी प्रकार की कमी नहीं आती है। उसे सदैव अपने उत्तरदायित्व का वहन करने का प्रयास करना चाहिए और इस प्रश्न का उत्तर प्राप्त करने का प्रयत्न करना चाहिए कि जीवन किस प्रकार व्यतीत करना चाहिए'? प्रोटगोरस और सोक्रेटीज में दूसरा अन्तर पद्धति से सम्बन्ध रखता है। प्रोटगोरस ने वादविवाद की पद्धति चलाई। हेरोडोरस ने भी इसी पद्धति का अनुसरण किया। इस पद्धति में प्रत्येक प्रश्न के दोनों पक्षों पर विचार किया जाता था। सोक्रेटीज यह जानने के लिए उत्सुक था कि कौन सा पक्ष 'सम्यक' है। सत्य को प्राप्त करने की

आगे से उसने प्रश्नोत्तर का ढंग अपनाया। दोनों पद्धतियाँ उपयोगी थीं और दोनों का प्रयोग हुआ किन्तु प्रोटेगोरस की पद्धति सरल थी। इसका प्रयोग भी अपेक्षाकृत अधिक हुआ। अरिस्टोफेनीस ने अपने 'Clouds' में इस पद्धति का जो परोडी (Parody) अर्थात् एक हास्यात्मक काव्य प्रस्तुत की है उसका उल्लेख हम इसी अध्याय में कर चुके हैं। दैनिक जीवन में इस पद्धति का जो भी प्रभाव पड़ा हो यह इसमें संदेह नहीं कि इस पद्धति का पर्याप्त प्रचलन था जहाँ तक उस समय के साहित्य का सम्बन्ध है वह तो इसके प्रयोगों से भरा पड़ा है। नाट्य साहित्य में तो इस पद्धति का विशेष रूप में प्रयोग किया गया। सोफोक्लीज के नाटकों में बहुत से दृश्य एसे हैं जिनमें किसी विषय के पक्ष और विपक्ष के समर्थकों का संवाद प्रस्तुत किया जाता है। यूरीपाइडीज (Euripides) के नाटकों में तो इस पद्धति का प्रयोग प्रचुर मात्रा में किया गया है। उसी के एक खण्ड (१८९ N) का वाक्य है—एक कुशल वक्ता प्रत्येक विषय अथवा वस्तु के पक्ष और विपक्ष दोनों के समर्थन में तर्क प्रस्तुत कर सकता है। ४०० ई० पू० के एक अज्ञात लेखक ने असंख्य यही करने का प्रयास किया। सत्य और असत्य उचित और अनुचित न्याय और अन्याय तथा उस समय के महत्वपूर्ण प्रश्नों जैसे क्या कौशल और ज्ञान (एरेटी तथा सोफिया) की शिक्षा दी जा सकती है? अथवा अधिकारियों की नियुक्ति के लिए लाटरी की लोकतन्त्रात्मक प्रथा कहाँ तक उपयुक्त है? पर उसने पक्ष और विपक्ष दोनों ओर से तर्क प्रस्तुत किया है। इस अज्ञात लेखक के तर्कों में मौलिकता और गहराई दोनों का अभाव है। सबसे रोचक तर्क यह अच्छे और बुरे उचित और अनुचित के पक्ष में प्रस्तुत करता है किन्तु य अधिकांशतया विधि के सम्बन्ध में हराक्लिटस के विचारों पर ही आधारित हैं। राजनीति की दृष्टि से इस लेखक के तर्क विशेष महत्व नहीं रखते हैं। इस पद्धति का अनुसरण करनेवाले साहित्य में यूरीपाइडीज के कुछ नाटकों में जो विवाद प्रस्तुत किये गये हैं वे अवश्य राजनीतिक दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं। phoenissae और Supplices[1] में प्रस्तुत विवाद विशेष रूप से राजनीतिक महत्व के हैं।

Phoenissae में निरंकुशता (टीरआस) और समानता (आइसोनॉमिया) विरोधी स्थापनाओं के रूप में प्रस्तुत किये गये हैं। निरंकुशता के समर्थन में प्रस्तुत तर्कों का आधार नैतिक नहीं है। उनका एकमात्र आधार यह है कि इस प्रकार का शासन करने

---

१ इन दोनों नाटकों के अतिरिक्त Medea, Hecuba और Helen में भी राजनीतिक अथवा अर्द्ध राजनीतिक विषयों पर विवाद मिलते हैं। इस प्रकार के अनेक अनुच्छेदों में से २०५ २५१, २५६, २८४, २८८, ३२९, १०३५ विशेष रूप से राजनीतिक महत्व के हैं।

का अवसर प्राप्त कर लने के पश्चात् इसका त्याग करना कायरता है। इस तर्क के अनुसार अपने शासन के अस्तित्व के लिए यदि अधिनायक को अपराध भी करना पडे, तो उसे सकोच नहा करना चाहिए। किन्तु केवल ऐसे ही अपराध किये जाय जो शासन के अस्तित्व के लिए आवश्यक हा अन्यथा निरकुश शासक को भी नतिकता (इयूसेवाइन) का अनुसरण करना चाहिए। इन तर्कों के विरुद्ध दूसरे पक्ष का समथन जो जोकास्टा (Jocasta) 'अनेक अच्छे उद्धरणो के साथ करती है।'[1] उसका कहना है कि अपने सहयोगियो से आगे बढने की अभिलाषा अनुचित है। मनुष्यो के पारस्परिक सम्बन्ध समानता के सिद्धान्त पर ही आधारित होने चाहिए। उसके अनुसार प्रकृति भी इसी सिद्धान्त का समथन करती है क्योकि प्रकृति जगत म रात्रि एव दिवस, शीत एव ग्रीष्म मे समानता के आधार पर ही समय का विभाजन किया गया है। प्रकृतिवादी सिद्धान्त का यह अप्रत्याशित और कुशल प्रयोग महामानव के सिद्धात के आधार को उलट देता है और यद्यपि स्वय अपने म यह तक अधिक गम्भीर नही है फिर भी दूसरे पक्ष के तर्कों म गम्भीरता के अभाव का दिग्दशन कराने मे सफल होता है। प्रकृति से प्राप्त होने वाले मानदण्ड भी विधि के मानदण्डो की भाति ही अस्थायी और अनिश्चित सिद्ध होते हैं। इस प्रकार प्रकृति और परम्परा दोनो ही समानता का समथन करते ह। Children of Heracles नामक एक दूसरे नाटक म कल्किलीज के 'महामानव' की असीमित स्वाथपरता और न्याय की तुलना की गइ है और उसे समाज विरोधी तथा देशद्रोही प्राणियो की श्रेणी मे रखा गया है।

Suppliants' मे थीसियस (Theseus) की जननी ऐथरा (Aithra) अपने पुत्र को शासन की कला पर परामर्श देती है और विशेष रूप से धम और विधि की उपेक्षा के फलस्वरूप उत्पन्न होने वाले सकटो से उसे सावधान करती है। इसी प्रसग मे वह कहती है, 'प्रत्येक व्यक्ति द्वारा विधि का सद्पालन ही राज्य को विच्छिन्न होने से बचाता है।' इसी नाटक म एक दूसरे स्थल पर भी एक विषय के पक्ष और विपक्ष मे विचार व्यक्त करने का अवसर उत्पन्न किया जाता है। एथेन्स म एक सदेशवाहक आता है और भूल से एकाधिकारी (निरकुश) सम्बोधन के साथ अपना सदेश प्रारम्भ करता है। इस पर थीसियस उसे कडी फटकार सुनाती है और कहती है कि निरकुश शासक तुम्हे यहाँ नही मिलेगा। यह स्वतन्त्र राज्य है और किसी एक व्यक्ति को शासन का पूर्णाधिकार यहाँ नही प्राप्त है। इस राज्य की सर्वोच्च सत्ता जनता के हाथो म है और बारी-बारी से एक वर्ष के लिए शासक की नियुक्ति की

---

१ इस नाटक की भूमिका के रूप मे दिये गये Argument का लेखक यही कहता है।

जाती है। धनवान व्यक्ति को यहाँ कोई विशेषाधिकार नहीं प्राप्त है, निर्धन और धनवान इस राज्य में समान हैं।' सन्देशवाहक जब राजतन्त्र के सिद्धान्त का समर्थन करने का साहस करता है तो ५वीं शताब्दी के एथेन्सवासी की भाँति थीसियस उसकी चुनौती स्वीकार करती है और जोन के साथ अपने पक्ष का समर्थन करती है। निरंकुश शासन के विरुद्ध दिए जाने वाले परम्परागत तर्कों (देखिए अध्याय ३) के अतिरिक्त लोकतन्त्रात्मक एथेन्स की कुछ विशिष्ट अच्छाइयों का भी उल्लेख किया जाता है जैसे विधि के समक्ष प्रत्येक नागरिक को प्राप्त समानाधिकार तथा राष्ट्रीय नीति के निर्धारण में समस्त जनता का भाग लेने का अधिकार। अन्त में दोनों इस बात पर सहमत होते हैं कि वे एकमत नहीं हो सकते क्योंकि नाटक की बातें आगे चलनी हैं।[1] नाटक के मुख्य कथानक से इस विवाद का कोई सम्बन्ध भी नहीं है।[1] फिर भी यूरीपाइडीज के नाटकों में राजनीतिक विचारों का आक्रमण दिखाने के लिए यह एक उपयुक्त उदाहरण है।

कुछ अतिरिक्त टिप्पणियाँ और प्रसंग निर्देश

अध्याय ५

ANTIPHON आक्सीरिंकस (Oxyrhynchus) में प्राप्त दोनों पपाइरस खण्डों का क्रमांक १३६४ (vol xi) और १७९७ (vol xv) है। Diels में उन्हें Frag ४४ A और B का नाम दिया गया है। इस अनुसंधान के पूर्व के खण्डों से उनका सम्बन्ध स्थापित करना कठिन है। देखिए E Bignone Studi Sul pensiero greco जिसमें प्रधानतया एन्टीफ़ान की समस्याओं का अध्ययन किया गया है। Gnomon Xvi, १९४० p ९७ में O Regenbogen की समीक्षा भी देखिए। नीति आदि के सम्बन्ध में J H Finley, Harvard Studies in classical Philology, Vol ५० (१९३९) पृष्ठ ६३ देखिए। इस पुस्तक में Diels के क्रमांकों का प्रयोग किया गया है।

THRASYMACHUS Plato, Republic I विशेषतया

---

१ यथार्थवादी युक्ति देने के लिए थीसियस सन्देशवाहक पर विवाद प्रारम्भ करने का आरोप लगाती है (४२७–८)। सम्भवत यूरीपाइडीज ने यह ध्यान नहीं दिया कि जेसन और मीडिया (Jason Medea) के विवाद में भी उसने इन्हीं तर्कों को अक्षरश प्रस्तुत किया है (Medea ५४६)।

३३८c २४४c और Clitophon पट्टिओस पालिटिआ पर दिये गये भाषण के खण्ड Diels से है।

CALLICLES Plato Gorgias, विशेषकर ४८२ E–४८८B, तथा W Jaeger paideia ii Ch ६

LYCOPHRON यद्यपि इसे सोक्रटीज का पूर्वगामी कहना उचित न होगा तथापि Diels^५ म इसे स्थान दिया गया है, एल्सीडमस को नहीं। Glaucon का भाषण Plato, Republic ३५८C ३५९B

CRITIAS पुस्तक म प्रयुक्त सन्दभ Diels^५ से हैं। अनाम आयमब्लिचि (Anon Iamblichi) की मूल रचना भी Diels^५ म दी गई है पृष्ठ ४०० ४०४। Just and Unjust debate Clouds ८८६-१०२३

OLD OLIGARCH Ps-Xen, O C T Xenophon के भाग ५ (Vol 5) म प्रकाशित हुई है। E Kalinka (Teubner) १९१४ ने भी इसका सम्पादन किया है।

SOCRATES सोक्रटीज के सम्बन्ध म किन प्राचीन साहित्य को विश्वसनीय माना जाय? यह एक एसा प्रश्न है जिसके कई संभावित उत्तर हो सकते हैं। एसी दशा म पाठक यह आशा नहीं करेंगे कि इस प्रश्न पर यहाँ विचार किया जा सकेगा। जिन मुख्य साधनों का प्रयोग किया गया है वे है Plato, Apology, Epist VII ३२४ E-३२५ C, Crito, ४३ A ४९ C Xenophon, Apology, Memorab II १० १९ और IV ४, १-४ Aristotle विभिन्न सन्दर्भों का Th Deman ने Le temoignage de Aristote sur Socrate (pasris १९४२) म अच्छे ढंग से संकलित किया है तथा उनकी विवेचना की है। इनम ११, १६, २४ ३४, ३९ राजनीतिक दर्शन की दृष्टि से सर्वाधिक महत्वपूर्ण है।

EURIPIDES, Phoenissae ५०३ ५८५, Heraclidae १ ५, Supplices २०१ ३१९, ३९९ ४६६ भी देखिए।

अध्याय ६

थुसीडाइडीज

इतिहास हमें सतर्कता एवं बुद्धिमत्ता सिखाता है सिद्धान्त नहीं — बरी

जैसा कि अध्याय ५ के प्रारम्भ में ही कहा गया था ५वीं शताब्दी के उत्तरार्ध का राजनीतिक दर्शन एथेन्स और स्पार्टा के मध्य हुए घोर युद्ध की पृष्ठभूमि में विकसित हुआ। इस युद्ध के बारे में हमारा जो भी ज्ञान है उसका मुख्य स्रोत थुसीडाइडीज (Thucydides) का विवरण है। यद्यपि इस युद्ध का दर्शन अथवा थुसीडाइडीज द्वारा दिया गया इसका विवरण प्रस्तुत करना हमारे विषय की दृष्टि से अनावश्यक होगा तथापि थुसीडाइडीज की इस रचना की कुछ विशेषताओं तथा राजनीतिक दर्शन के इतिहास में इसके महत्त्व पर विचार करना आवश्यक है।

इधर उधर की कुछ असम्बद्ध बातों को छोड़कर जिन्हें विभिन्न कारणों से थुसीडाइडीज ने अपने इतिहास में स्थान दिया है इसका वर्णनात्मक अंश मुख्यतया जल और थल-सेना के कार्यों से ही सम्बन्धित है। एथेन्स के आन्तरिक इतिहास के सम्बन्ध में भी अधिक सामग्री नहीं दी गई है। केवल आठवीं पुस्तक में इस सम्बन्ध में कुछ सूचना मिलती है। संवैधानिक प्रश्नों की ओर भी विशेष ध्यान नहीं दिया गया है और संविधान से सम्बन्धित प्रश्नों पर यत्र-तत्र मिलने वाली उसकी स्वीकृतियाँ अथवा अस्वीकृतियाँ राजनीति से सम्बन्धित न होकर युद्ध संचालन की आवश्यकताओं पर आधारित हैं। इस प्रकार थुसीडाइडीज की रचना राजनीतिक इतिहास की श्रेणी में नहीं आती है। इस प्रकार का इतिहास प्रस्तुत करना उसका उद्देश्य भी नहीं था। उसने तो मुख्यतया युद्ध का इतिहास प्रस्तुत करने के उद्देश्य से ही अपने इतिहास की रचना की है। फिर भी राजनीतिक कार्यों, मनुष्यों और राज्यों तथा राज्य के अन्तर्गत मनुष्य के आचरण का अध्ययन करने में उसकी विशेष रुचि थी। उस काल के मनुष्यों के व्यवहार और कार्यों का बोधगम्य इतिहास प्रस्तुत करने में उसे जो सफलता प्राप्त हुई उसका कारण यही था कि राज्य और राजनीति के सन्दर्भ में मनुष्यों के व्यवहार को समझने की योग्यता वह रखता था। चूँकि इस प्रकार के इतिहास की यह पहली रचना है इसलिए ऐतिहासिक एवं राजनीतिक साहित्य में इसका अपना स्थान है। दूसरे सन्दर्भों में मनुष्य के स्वभाव के बारे में हेरोडोटस का ज्ञान अपेक्षाकृत अधिक था। वह भली-भाँति जानता था कि एक निरंकुश शासक का क्रोध अथवा प्रेमिका के प्रति आकर्षण बहुधा

राजनीतिक घटनाओं का कारण प्रतीत हो सकता है और कभी-कभी इन घटनाओं का वास्तविक कारण भी हो सकता है। किन्तु हेरोडोटस का थुसीडाइडीज से पृथक् करने वाली पीढ़ी मनुष्य के स्वभाव के अध्ययन में महत्त्वपूर्ण प्रगति तथा महान राजनीतिक और सामाजिक परिवर्तन देख चुकी थी। (अध्याय ४ और ५)। नयी शिक्षा, विस्तृत ज्ञान और आलोचनात्मक दृष्टिकोण से सुसज्जित होकर थुसीडाइडीज ने तत्कालीन इतिहास का समझने का प्रयास किया। यूरीपाइडीज ने भी इसी ढंग से सामाजिक और राजनीतिक समस्याओं को समझने का प्रयास किया था। इतना ही नहीं, युद्ध में जलसेना के कमाडर के रूप में वह पर्याप्त सामरिक अनुभव प्राप्त कर चुका था। इस प्रकार इन विशेषताओं और अनुभव के साथ अपनी अपार बौद्धिक शक्ति का प्रयोग उसने युद्ध के इतिहास की रचना के लिए किया। ई० पू० ४११ की क्रान्ति का जो विवरण उसने प्रस्तुत किया है उसमें राजनीतिक घटनाओं के अध्ययन में ऐतिहासिक ज्ञान का प्रयोग किया गया है, किन्तु अन्यत्र उसका मुख्य उद्देश्य इतिहास के अध्ययन में राजनीतिक ज्ञान का प्रयोग रहा है।

उसकी रचना प्रधानतया ऐतिहासिक है, राजनीतिक नहीं। फिर भी, राजनीतिक दर्शन के इतिहास में उसे विशेष और पृथक स्थान दिया गया है जो अरिस्टो-फेनिस तथा अन्य यूनानी भाषणकर्त्ताओं की रचनाओं को नहीं दिया गया, यद्यपि उनकी रचनाएँ राजनीतिक विचारों से भरी पड़ी हैं। इसके लिए कई अच्छे कारण हैं।[1] प्रथम और मुख्य कारण तो यह है कि थुसीडाइडीज ने अपने इतिहास में उस समय के भाषणों और वाद विवादों को भी सम्मिलित किया है। थुसीडाइडीज के पूर्व अन्य लेखकों ने भी ऐसा किया था किन्तु उनकी रचनाओं में उद्धृत भाषणों और वाद विवादों में अद्ध नाटकीयता का समावेश रहता था और इनकी ऐतिहासिकता के सम्बन्ध में पाठकों को

---

१ और सम्भवत कुछ बुरे भी। उदाहरणार्थ इस रचनाओं को 'छद्मवेश में राजनीतिक सिद्धान्त की निर्देशिका' कहा गया है। कुछ लोगों का विचार है कि थुसीडाइडीज का मुख्य उद्देश्य भावी राजनीतिज्ञों के लिए एक निर्देश पुस्तिका प्रस्तुत करना था। स्वयं थुसीडाइडीज ने भी यह दावा किया था कि उसकी रचनाओं में भूतकालीन घटनाओं का यथार्थ विवरण तथा भविष्य में घटित होने वाली घटनाओं के सम्बन्ध में उपयोगी पथ प्रदर्शन प्रस्तुत करता है। तथापि इतिहासकार के इस कथन को अत्यधिक महत्त्व देकर ही उपर्युक्त निष्कर्ष पर पहुँचा जा सकता है। अपने देश से निष्कासित होने तथा सक्रिय राजनीति में भाग लेने से वञ्चित हो जाने के कारण भी सम्भवत थुसीडाइडीज को इतिहास की रचना करने के संकल्प में सहायता मिली। इस अध्याय के अन्त दी गयी टिप्पणी भी देखिए।

सन्देह होने लगता था। थ्यूसीडाइडीज ने यह प्रयास किया है कि इन भाषणों और वाद-विवादों की ऐतिहासिकता सुरक्षित रह सके और पाठकों को यह भ्रम न हो कि वे किसी लेखक द्वारा प्रस्तुत अर्द्ध-नाटकीय विवरण का अध्ययन कर रहे हैं। इस प्रकार उसने अपने समय के विख्यात महापुरुषों के राजनीतिक विचारों का कुछ अंश हमारे लिए सुरक्षित रखा है। पेरिक्लीज एल्सीबियाडीज क्लियान तथा कितने अन्य व्यक्तियों के भाषण जिनके नाम नहीं दिए गए हैं थ्यूसीडाइडीज के इतिहास में सुरक्षित हैं। स्वाभाविक है कि राजनीतिक दर्शन की दृष्टि से इन भाषणों में कही गई सभी बातें महत्त्वपूर्ण न हों किन्तु इन भाषणों में संगृहीत विचारों और थ्यूसीडाइडीज के प्रस्तुत करने के ढंग ने सामान्य सिद्धान्तों के प्रतिपादन अथवा सैद्धान्तिक विचार विमर्श में सहायता दी। थ्यूसीडाइडीज के इतिहास में संगृहीत भाषणों में नैतिक सोफिस्ट शिक्षकों के भाषण-कला का प्रत्येक विषय के पक्ष और विपक्ष में तर्क प्रस्तुत करने की कृत्रिमता है और नैतिक समस्याओं पर होने वाले विवादों की सजीवता ही। इन भाषणों में सोफिस्ट आचार्यों के व्यक्तिगत तथा स्थानीय विचारों को सजीवता से व्यक्त करने का प्रयास किया गया है। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि न केवल थ्यूसीडाइडीज अपितु उस समय का समस्त विचार दार्शनिक शिक्षा की आवश्यकता से अभिभूत था। इसमें सन्देह नहीं कि इन भाषणों में थ्यूसीडाइडीज के विचारों का भी समावेश है। भाषणों को मूल रूप में प्रस्तुत करने का दावा वह नहीं करता है। उसका तो केवल यह कहना है कि उसने इन भाषणों के सार को, जहाँ तक सम्भव हो सका है, उसी ढंग से प्रस्तुत किया है जैसा कि कहा गया था। प्रत्येक भाषण के विवरण के सम्बन्ध में यह जानना तो सम्भवतः कभी भी सम्भव न होगा कि किस मात्रा में उसके व्यक्तिगत विचारों ने इसे प्रभावित किया है। किन्तु इसमें सन्देह नहीं कि उन स्थलों पर जहाँ उसने वक्ताओं के भाषणों को प्रस्तुत किया है या जहाँ मूल भाषण के सम्बन्ध में उसका ज्ञान पर्याप्त नहीं था अथवा जहाँ मूल भाषण ही अपर्याप्त था उसके विचारों का प्रभाव गहरा है। इसके अतिरिक्त इतिहास लिखने की जिस पद्धति का अनुसरण उसने किया है उसमें यह सम्भावना रहती है कि इतिहासकार अपनी ओर से भाषणों को तर्कसंगत बना दे अथवा जहाँ उसे यह प्रतीत हो कि वक्ता कुछ आवश्यक बातें कहना या कुछ आवश्यक कार्य करना[1] भूल गया है वहाँ अपनी ओर से उसे पूरा कर दे। इसके परिणामस्वरूप यद्यपि उस समय के भाषणों का विवरण पूर्णरूपेण सत्य नहीं होगा परिस्थिति का अच्छा

---

१ जैसाकि J H Finley ने स्पष्ट किया है। टा डिओण्टा से करने और कहने दोनों का बोध होता है—J H Finley (Thucydides, pp ९६-१००) तथा Gorgias Epitaphius का एक साथ अवलोकन कीजिए।

विश्लेषण सम्भव हो सकेगा और किसी काय के पक्ष और विपक्ष का पूव विवरण प्रस्तुत हो सकेगा। किन्तु यह भी नहीं कहा जा सकता कि थुसीडाइडीज ने इस स्वतन्त्रता का उपयोग किस मात्रा म किया है।[1] वह स्वय राजनीति का ज्ञाता था, विशेषकर युद्ध सम्बन्धी राजनीति का। इसलिए यद्यपि साधारणतया वह अपने विचारो को व्यक्त करने तथा नतिक समस्याओ पर निणय देने से बचने का प्रयास करता है तथापि राजनीतिक व्यवहार का उसने जो विश्लेषण प्रस्तुत किया है और राजनीतिक शक्ति के स्वभाव और परिणाम को समझने म जो सूझ-बूझ दिखाई है उनके आधार पर वह सहज ही राजनीतिक दशन के इतिहास मे उचित स्थान का अधिकारी हो जाता है। अन्त मे अपने इतिहास के विषय के कारण उसे प्राय अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध की समस्याओ पर भी विचार करने को बाध्य होना पडा। यह एक ऐसा विषय था जिसकी ओर अधिकाश यूनानी राजनीतिक दार्शनिको ने ध्यान नहीं दिया था और आज भी यह साधारणतया राजनीतिक अध्ययन का अपेक्षा वैधिक अध्ययन का विषय माना जाता है। इन कारणो पर ध्यान देते हुए यूनानी राजनीतिक दशन के इतिहास में थुसीडाइडीज को पथक स्थान देना उपयुक्त प्रतीत होता है।

उस समय के राजनीतिज्ञो म जिनके विचार अध्ययन करने योग्य हैं पेरिक्लीज सबसे महत्त्वपूर्ण है यद्यपि उसके गौरवपूर्ण और महान् दिनो के व्यतीत हो जाने के पश्चात् ही इस युद्ध का प्रारम्भ हुआ और युद्ध प्रारम्भ होने के दो वष के अन्दर ही उसकी मृत्यु हो गई। पेरिक्लीज एक दूरदर्शी राजनीतिज्ञ था। राज्य को किस परिस्थिति का सामना करना पडेगा तथा इसके लिए कौन से उपाय करने होंगे वह पहले से ही देख सकता था। किसी अन्य राजनीतिज्ञ म यह शक्ति नहीं थी। अपनी इसी दूरदर्शिता' (प्रनोइआ) के कारण ही पेरिक्लीज थुसीडाइडीज की प्रशसा का पात्र बना। वह इसे बहुमूल्य राजनीतिक गुण (पोलिटिकी एरेटी) समझता था। प्राचीन महापुरुषो मे थेमिस्टाक्लीज (Themistocles) म भी यह गुण था, जो उसे सहज प्राप्त हो गया था, दूरदर्शिता उसके स्वभाव म ही थी। किन्तु शिक्षा द्वारा भी यह प्रदान की जा सकती

---

१ प्रस्तुत प्रयोजन के लिए साररूप मे इतना ही कहना पर्याप्त होगा। यदि किसी पाठक को इस विषय मे विशेष रुचि है तो उसे J H Finley, Thucydides, (Harvard U P, १९४२,) A w Gomme, Essays in Greek History and Literature, ch ix (Blackwell १९३७) तथा J B Bury, The Ancient Greek Historians (१९०९) Lecture iii का अध्ययन करना चाहिए। इस अध्याय के अन्त मे दी गयी अतिरिक्त टिप्पणी भी देखिए।

थी। युद्धकाल के मानवीय व्यवहारों का अध्ययन करने से मनुष्यों की क्रियाओं और प्रतिक्रियाओं का आभास मिल जाता है। जहाँ तक पेरिक्लीज का सम्बन्ध है अपनी योग्यता और चरित्र के द्वारा उसने एथेन्सवासियों को अपने अधिकार में कर लिया था। वह एकाधिकारी शासक नहीं था किन्तु उसका व्यक्तित्व इतना प्रभावशाली था कि उसके नेतृत्व में एथेन्स का शासन जो नाम मात्र के लिए लोकतन्त्रात्मक था वास्तव में एक प्रमुख नागरिक द्वारा शासन का रूप धारण करता जा रहा था। थ्यूसीडाइडीज के इतिहास के आधार पर यदि पेरिक्लीज के राजनीतिक सिद्धान्त की रचना की जाय तो प्रतीत होगा कि उसके आदर्श राज्य की कल्पना एथेन्स के उस वर्णन से मिलती जुलती है जो उसकी विख्यात फ्यूनरल स्पीच (Funeral Speech) में मिलता है। इस भाषण में उसने एथेन्स का वर्णन ही नहीं किया है उसकी व्यवस्था को आदर्श के रूप में भी प्रस्तुत किया है। भाषण का कुछ अंश इस प्रकार है—

पोलिस (नगर राज्य) के संचालन के लिए अत्यन्त आवश्यक है कि राज्य का कुछ भाग थोड़े-से व्यक्तियों के अधिकार में न हो। संविधान का स्वरूप ऐसा होना चाहिए जिसमें सत्ता बहुसंख्यकों के हाथ में हो अल्पसंख्यकों के हाथ में नहीं। साथ ही जहाँ यह आवश्यक है कि सभी नागरिकों को विधि के समक्ष समान समझा जाय और सम्पत्ति के आधार पर किसी को विशेषाधिकार न दिया जाय वहाँ यह भी आवश्यक है कि प्रत्येक व्यक्ति को समान अवसर प्रदान करने वाले लोकतन्त्रात्मक सिद्धान्त का संशोधन इस प्रकार किया जाय कि योग्यता को यथोचित मान्यता मिल सके।[1] नगर का सामाजिक वातावरण सुन्दर होना चाहिए सामाजिक बन्धनों में कठोरता और दृढ़ता नहीं होनी चाहिए। तथापि विधि सत्ता तथा आचरण सम्बन्धी स्वीकृत मानदण्डों का उचित पालन आवश्यक है (देवताओं के प्रति कर्तव्यों का उल्लेख नहीं है)। इस प्रकार के सामाजिक जीवन तथा सुन्दर परिस्थितियों की व्यवस्था तभी हो सकती है जब राज्य सम्पन्न और शक्तिशाली हो साम्राज्य और व्यापार विस्तृत हो और जल-सेना सक्षम और शक्तिशाली हो। किन्तु इसका यह तात्पर्य नहीं है कि प्रत्येक व्यक्तिगत नागरिक सम्पन्न और समृद्ध होवे।[2] नागरिकों के लिए तो चरित्र और वैयक्तिक गुण अधिक महत्त्वपूर्ण हैं और उसके लिए उचित शिक्षा अत्यन्त आवश्यक है। स्पार्टा के शिक्षालयों की कठोर और संकुचित शिक्षा का समर्थन वह नहीं करता है। उसके अनुसार नागरिकों को

---

१ ii ३७ A W Gomme, Classical quarterly XL ii १९४८, p १० देखिए।

२ ii ६०, किन्तु सम्पत्तिशाली वर्ग तो यही चाहता रहा होगा उदाहरणार्थ Nicias, vi ९, २।

केवल प्रशिक्षित कर देना ही पर्याप्त नहीं है, उन्हें उदार शिक्षा मिलनी चाहिए, क्योंकि युद्ध में भी सैनिक का चरित्र ही महत्वपूर्ण है। अच्छे चरित्र वाले सैनिक ही रणक्षेत्र में साहस दिखा सकते हैं। केवल प्रशिक्षण मात्र से यह साहस नहीं उत्पन्न किया जा सकता। किन्तु शिक्षा में कोमलता नहीं आनी चाहिए। साहित्य और कला की आवश्यकता से अधिक महत्व नहीं देना चाहिए और किसी भी दशा में उन्हें राष्ट्रीय हित से परे नहीं समझना चाहिए। किसी राज्य का नागरिक यदि अपने राज्य को सर्वाधिक महत्त्व नहीं देता है और राज्य के आदेशों का समझना तथा उनका पालन करना अपने जीवन के उद्देश्य के रूप में नहीं स्वीकार करता है तो वह अपने कर्त्तव्य से च्युत होता है। पेरिक्लीज के आदर्श राज्य की समीक्षा करने अथवा यह निर्धारित करने के लिए कि यह चित्र स्वयं थुसीडाइडीज की कल्पना की आकांक्षा से किस मात्रा में रंजित है यह अवसर उपयुक्त न होगा। तथापि इतना तो ध्यान में रखना ही चाहिए कि पेरिक्लीज के इस भाषण में प्लेटो के संवादों के कुछ प्रमाणों की पूर्वावधारणा मिलती है। इस प्रकार हम देखते हैं कि राज्य के निर्माण में चरित्र और शिक्षा का महत्व प्लेटो की 'रिपब्लिक' के पूर्व भी स्वीकार किया जा चुका था। पेरिक्लीज के कार्यों का उल्लेख करते समय थुसीडाइडीज उसकी दूरदर्शी युद्ध नीति को विशेष महत्त्व देता है। पेरिक्लीज के सम्बन्ध में जो विवरण उसने प्रस्तुत किया है उससे यह स्पष्ट हो जाता है कि वह स्वयं शक्ति के साथ ही नेतृत्व में भी आस्था रखता था। पेरिक्लीज की मृत्यु के पश्चात् एथेन्स में अच्छे नेताओं का अभाव सा रहा। इसका कारण यह था कि उस समय के राजनीतिज्ञ व्यक्तिगत सफलता की आकांक्षा, प्रतिस्पर्धा और धनलोलुपता के वशीभूत थे। ऐसी दशा में यह स्वाभाविक था कि लोगों का ध्यान राजनीतिक सत्ता को आर्थिक सत्ता से पृथक् करने की आवश्यकता की ओर जाता। सम्भवतः परिस्थितिजन्य इस आवश्यकता ने ही प्लेटो को सिद्धान्त रूप में इसका प्रतिपादन करने के लिए प्रेरित किया।

ई० पू० ४२८-४२३ के अधिकार-लोलुप तथा उचित अनुचित की ओर ध्यान न देने वाले राजनीतिज्ञों में क्लियान (Cleon) सर्वोपरि था। अरिस्टाफ़ेनीस की भाँति थुसीडाइडीज भी क्लियोन से असन्तुष्ट था किन्तु अपनी भावनाओं को बहुधा वह व्यक्त नहीं करता है। थुसीडाइडीज के 'इतिहास' में क्लियान का एक भाषण और उसका प्रत्युत्तर मिलता है। प्रश्न यह था कि लेसबास (Lesbos) के माइटीलीन (Mytilene) निवासियों का युद्ध में एक पक्ष को छोड़कर दूसरे पक्ष से मिल जाने के लिए या, जैसा कि एथेन्स निवासियों का कहना था, विद्रोह के लिए क्या दण्ड दिया जाय। दोनों भाषण अधीन राज्यों के ऊपर साम्राज्य के शासनाधिकार अथवा सत्ता (एरकी) से सम्बन्ध रखते हैं। दोनों वक्ताओं ने समकक्ष राज्यों के पारस्परिक सम्बन्ध तथा एथेन्स और उसके अधीनस्थ राज्यों के सम्बन्ध में अन्तर

दिखाया है। क्लियान के अनुसार अधीन राज्यों के सम्बन्ध में साधारण शिष्टता और मानवीय भावनाओं को कोई महत्त्व नहीं देना चाहिए। हाँ, अन्य शक्तिशाली राज्यों के सम्बन्ध में इनका प्रयोग उपयोगी होता है। क्योंकि इनके आधार पर उनसे भी समान व्यवहार की आशा की जा सकती है। लोकतन्त्रात्मक शासन के सिद्धान्तों और पद्धतियों को वह सर्वथा अव्यावहारिक बताता है। उसका कहना है कि यदि आपके पास साम्राज्य है तो आपको निरंकुश शासक की भाँति शासन करना चाहिए और विरोधियों को विद्रोहियों की भाँति दण्ड देना चाहिए। (इस विषय पर क्लियान और परिक्लीज के साम्राज्यवादी विचारों में कोई अन्तर नहीं है)। उसने भी एथेन्स के साम्राज्यवादी सत्ता को उपमा निरंकुश शासन से की है।[1]

क्लियान के अनुसार साम्राज्य की सत्ता (ii ६३) को यह आभास नहीं देना चाहिए कि वह अनुनय विनय से द्रवित हो सकता है अथवा अपना निश्चय बदल सकता है। स्वयं अपने नागरिकों से भी शासन को पूर्ण आज्ञाकारिता की अपेक्षा करना चाहिए और नागरिकों को यह अनुमति नहीं देना चाहिए कि वह सोचने लगें कि राज्य के विधि की अपेक्षा वे अधिक बुद्धिमान हैं। यहाँ क्लियान के विचार परिक्लीज के विचारों के सर्वथा प्रतिकूल हैं। नागरिकता के आदर्श के सम्बन्ध में परिक्लीज के विचारों के विरोध में क्लियान ने ये विचार सम्भवतः जान-बूझ कर प्रस्तुत किये हैं। क्लियान आलोचनात्मक एवं स्वतन्त्र भावनाओं को निरुत्साहित करता है, आज्ञा का उल्लंघन करने वाली बुद्धि की अपेक्षा आज्ञाकारिता और मूढ़ता को प्रश्रय देता है और ऐसे राज्य की अपेक्षा जहाँ की विधि-व्यवस्था तो अच्छी है किन्तु उसे कार्यान्वित करने की सामर्थ्य का अभाव है एक ऐसे राज्य को श्रेष्ठ समझता है जहाँ की दोषपूर्ण विधि-व्यवस्था भी दृढ़ता से कार्यान्वित की जाती है और उसमें अनावश्यक संशोधन नहीं किया जाता।

क्लियोन के इस भाषण का प्रत्युत्तर डायोडोटस (Diodotus) देता है। बस साधारणतया उसका नाम अपेक्षाकृत अज्ञात व्यक्तियों की श्रेणी में ही आता है। डायोडोटस विरोधियों के प्रति इतने कठोर व्यवहार का समर्थन नहीं करता। वैसे तो वह भी अपने भाषण के प्रारम्भ में ही यह स्पष्ट कर देता है कि विद्रोही माइटिलीनवासियों के प्रति वह किसी प्रकार की संवेदना एवं सहानुभूति नहीं रखता है। उसका मुख्य ध्येय तो केवल यह है कि जो भी किया जाय वह एथेन्स के हित में होना चाहिए। सामान्य राजनीतिक सिद्धान्तों के विषय में वह प्रोटेगोरस और परिक्लीज के विचारों को ही प्रतिध्वनित करता है। और सद्परामर्श और अच्छे नागरिक कर्त्तव्यों पर जोर देता है।

---

[1] यह उपमा सामान्यतया स्वीकृत थी उदाहरणार्थ Athenian Euphemus at Camarina in Sicily ४१५ B C Thuc vi ८५ inst

क्लियोन द्वारा प्रस्तुत अपरिवर्तनशील विधि और व्यवस्था और उसके जथायुधानुकरण के विरुद्ध वह परिक्लीज के विचारो से मिलता जुलता सिद्धान्त प्रस्तुत करता है। उसका कहना है कि तथाकथित व्यावहारिक व्यक्ति, इसका कितना ही मखौल क्यो न उडाएँ, व्यावहारिक राजनीतिक चिन्तन को इस सिद्धान्त पर ही आधारित होना चाहिए कि विचार विमर्श कार्य की शिक्षा प्रदान करता है (Discussion is action's teacher)[1] विशेषकर लोकतन्त्रात्मक व्यवस्था म स तो राजनीतिक समस्याओ पर स्वतन्त्र चिन्तन करना प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य हो जाता है। इस सिद्धान्त को स्वीकार करने का स्वाभाविक निष्कर्ष होगा कि शासन की ओर से यह प्रयास किया जाय कि उसके स्वरूप और कार्यो को जनता समझ सके।[2] डायोडाटस के अनुसार राज्य की दूसरी विशेषता यह होनी चाहिए कि नागरिको को भाषण की वास्तविक स्वतन्त्रता हो जिससे वे किसी अप्रिय प्रस्ताव का समर्थन करने अथवा सत्ता के विरुद्ध अपने विचारो को व्यक्त करने म किसी भी प्रकार का भय न अनुभव करें। इस प्रकार की स्वतन्त्रता तत्कालीन एथेन्स म भी नही था जिसके लिए डायोडोटस ने खेद प्रकट किया है। उसका कहना था कि इसे यह प्राथमिक सिद्धान्त के रूप म स्वीकार करना चाहिए कि पर्याप्त विचार विमर्श के उपरान्त ही निर्णय लिये जायेंगे, इस प्रकार का विचार विमर्श आतुरता, सवेग और विरोधियो को नीचा दिखाने की भावना से मुक्त होगा और किसी भी व्यक्ति को अपने विचारो को व्यक्त करने के लिए दण्ड नहीं दिया जायगा। यह उल्लेखनीय है कि डायोडोटस ने यह सकेत किया है कि तत्कालीन एथेन्स म इस प्रकार की स्वतन्त्रता का अभाव था यद्यपि चार वर्ष पूर्व ही परिक्लीज ने अपने भाषण म एथेन्स की इसी विशेषता का ज्वलन्त विवरण प्रस्तुत कर चुका था। इतना ही नही, पुरातन पन्थी और भावुक कहलाने की डर से डायोडोटस अपने को समस्त मानवतावादी भावनाओ से अलग रखता है।[3]

एथेन्स मे एसे लोग भी पर्याप्त सख्या मे थे जो अत्यधिक धन और वृद्धि को देवताओ की सबसे महान अनुकम्पा समझते थे। यद्यपि कोई देवताओ की इस अनुकम्पा को प्राप्त कर लेता था तो वह लोगो की प्रशसा और ईर्ष्या का पात्र बन जाता था। इतना

---

१ पेरिक्लीज का वाक्य प्रस्तावना के प्रारम्भ मे पृष्ठ मे दिया गया है।

२ स्वय डायोडोटस तो यह नहीं कहता है किन्तु पेरिक्लीज तथा प्लेटो के सिद्धान्तो से यह भिन्न नहीं है।

३. थुसीडाइडीज की पुस्तक मे प्रस्तुत भाषणो की रचना के सम्बन्ध मे जो भी दृष्टिकोण अपनाया जाय तक और स्वतन्त्रता का जो समर्थन डायोडोटस के इस भाषण मे किया गया है उसमे इतिहासकार के विचार परिलक्षित होते हैं।

ही नहीं ऐसा व्यक्ति भावी निरंकुश के रूप में भी देखा जाता था और लोग उससे आशंकित रहते थे। छोटे राज्यों के लिए यह एक सतत समस्या भी थी कि असाधारण प्रतिभा सम्पन्न व्यक्तियों की योग्यता का उपयोग राज्य के हित में किस प्रकार किया जाए तथा राज्य का एकमात्र अधिकारी होने से उसे किस प्रकार रोका जाए। Politics में अरिस्टॉटल ने इस समस्या पर विशेष ध्यान दिया है। एथेन्स (Athene) नगर में परम सिद्ध साधक एल्सी बयाडीज इस समस्या का ज्वलन्त उदाहरण था। उसने लोगों की उसकी सम्पत्ति के प्रति ईर्ष्या के रूप में बदल देने में उसके शत्रुओं को अधिक कठिनाई नहीं हुई एवं नागरिकों के हृदय में व्याप्त निरंकुशता की आशंका का प्रयोग उन्होंने इस ढंग से किया कि एल्सी बयाडीज का पतन निश्चित हो गया। थ्यूसीडाइडीज के सम्मुख दिए गये उसके एक भाषण का विवरण थ्यूसीडाइडीज ने दिया है। इस भाषण में एल्सी बयाडीज समृद्ध व्यक्ति द्वारा अपने धन का अपव्यय करने तथा प्रदर्शनात्मक ढंग से भी धन का व्यय करने का समर्थन करता है। उसका कहना है कि इस प्रकार के अपव्यय से देश की ख्याति में वृद्धि होती है। इस भाषण का अवसर उस वाद विवाद ने प्रस्तुत किया था जिसमें एल्सी बयाडीज ने निसियास (Nisias) के तर्कों का खंडन किया। राजनीतिक तथा आर्थिक क्षेत्र में निसियास सावधानी का समर्थक था। सिसली के विरुद्ध अभियान करने के प्रस्ताव पर ही यह विवाद प्रारम्भ हुआ। अंततः इसका विषय भी साम्राज्यवादी नीति अथवा शान्ति ही है। थ्यूसीडाइडीज के ही स्वर में एल्सी बयाडीज कहता है दूसरे राज्यों पर शासन करने वाले राज्य के लिए यह आवश्यक है कि वह सदा आक्रामक रहे। इस हेतु उसे अपनी सम्पत्ति और साधनों का व्यय करने के लिए तत्पर रहना चाहिए। साधनों को सुरक्षित रखने अथवा मितव्ययिता से इस लक्ष्य की पूर्ति नहीं हो सकती। शक्तिशाली राज्य द्वारा छोटे राज्यों को आक्रान्त न करने की अपनी नीति का अचानक बदल देने का परिणाम सर्वथा विनाशकारी होगा। इस प्रकार एथेन्स के लोकतन्त्र की साम्राज्यवादी नीति का स्पष्ट समर्थन करने के पश्चात् जब एल्सी बयाडीज को अपने ऊपर लगाये गये अभियोगों के डर से भाग कर स्पार्टा जाना पड़ा तो स्पार्टा के प्रति मित्रता का स्वांग रचने में उसे कुछ कठिनाई हुई। स्पार्टावासियों को प्रसन्न करने के लिए ही उसने कहा कि लोकतन्त्र मानी हुई मूर्खता (admitted folly) है। देशभक्ति के सम्बन्ध में उसने स्पार्टा में जो दृष्टिकोण प्रस्तुत किया उसे १९३४ ई० के बाद की योरप की राजनीति के सन्दर्भ में भी विशेष महत्त्व मिला। स्पार्टा में उसने इस सिद्धान्त का प्रतिपादन किया कि अपने देश के विरुद्ध भी संघर्ष करने का अधिकार उसे है क्योंकि अपने खोए हुए अधिकारों के प्राप्त करने के लिए ही वह एथेन्स से युद्ध कर रहा है। उसके अनुसार एथेन्स का वास्तविक शत्रु वह नहीं था, अपितु वे लोग थे जो अपनी शक्ति का दुरुपयोग करके एथेन्स के मित्रों

को शत्रुओ के शिविर म गड रहे थे। राजनीतिक निष्ठा के लिए राजनीतिक स्वतन्त्रता आवश्यक है, राजनीतिक उत्पीडा पीडित व्यक्ति को देशभक्ति के कर्तव्यो च्युत कर देता है।[1]

एथेन्स की सशक्त सेना के आक्रमण के पर्याप्त समय पूर्व से सिसली निवासी कई कारणो से भयभीत थे और स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए उपयुक्त उपाय की खोज करने के लिए वहाँ भी निरन्तर विचार विमर्श और वाद विवाद होता रहा। इस प्रकार के सभी वाद विवाद तो उल्लेखनीय नही समझे गये, किन्तु एक भाषण का उल्लेख थुसी-डाइडीज ने किया है। यह भाषण ४२४ ई० पू० जल (Gela) सम्मेलन के अवसर पर सेराक्यूज के हरमोक्रटीज (Hermocrates) ने दिया था। सिसली की सामूहिक सुरक्षा की नीति के समर्थन मे प्रस्तुत किए जाने वाले सभी तर्कों का समावेश इस भाषण मे किया गया है। वक्ता हरमोक्रटीज एथेन्स की प्रसारवादी नीति के विरुद्ध किसी प्रकार का नैतिक आक्रोश नही व्यक्त करता है। वह केवल उन लोगो से क्रुद्ध है जो इस नीति का विरोध करने के लिए नहीं तयार हैं। उसके अनुसार आक्रमणकारी का अपने अधीन रखना तथा आक्रमणकारी का सफलतापूर्वक सामना करना य दोनो काय मानव स्वभाव के अनुकूल है (IV ६१)। युद्ध की तुलना मे शान्ति को वह भी श्रेष्ठ समझता है किन्तु साथ ही इस तथ्य की ओर भी लोगो का ध्यान आकृष्ट करता है कि जसाकि अन्य राज्यो के अनुभव ने यह सिद्ध कर दिया है, केवल न्यायसगत होने से ही किसी पक्ष को सफलता नही प्राप्त होती है। सफल पक्ष अनिवार्यत न्यायसगत नहीं होता है इस दृष्टिकोण का न तो उसने समर्थन किया है और न खण्डन ही। इस सम्मेलन के लगभग ९ वर्ष बाद जब एथेन्स की जल सेना ने सिसली की दिशा मे प्रस्थान किया, तो हरमोक्रटीज ने सेराक्यूज के निवासियो को पुन सम्बोधित किया। राजनीति के सामान्य सिद्धान्तो के सम्बन्ध मे तो उसे कुछ कहना शेष नही रह गया था। हाँ, उसका विपक्षी वक्ता एथनागोरस (Athenagoras) विदेशी आक्रमण की अपेक्षा राजनीतिक सिद्धान्त के सम्बन्ध मे विशेष चिन्तित प्रतीत होता है। सविधान के सिद्धान्त के सम्बन्ध मे उसके विचार पेरिक्लीज और प्रोटेगोरस के विचारो से मिलते जुलते हैं। जिस लोकतन्त्र का समर्थन वह करता है उसमे सम्पत्ति के आधार पर तो किसी को विशेषाधिकार नही मिलता है किन्तु गुण और योग्यता को यथेष्ट मान्यता प्रदान की जाती है। विदेशी शत्रु का सामना करने के लिए सशस्त्र सेना की सख्या मे वृद्धि

---

१ यह सन्दिग्ध है कि मूल की अस्पष्ट एव द्वि-अर्थी भाषा के पीछे यही भावना है, किन्तु सम्भव हो सकता है कि एलसीबयाडीज हृदय से एथेन्स का हित चाहता रहा है। देखिए Thuc viii ८१ and ८६

के परिणामस्वरूप किसी भी समय यह सेना नागरिकों की सुरक्षा के स्थान पर उनके उत्पीडन का साधन बन सकती थी। इस सभावना के प्रति वह पर्याप्त जागरूक प्रतीत होता है। और कुछ अशो म एसा हुआ भी, क्योंकि एथेस के आक्रमण और सेराक्यूज की प्रथम पराजय के उपरान्त सेराक्यूज की सम्पूर्ण सैन्य शक्ति हरमाक्रटीज के नेतृत्व म कुछ थोड़े से लोगो के हाथ म आ गई।

नगर राज्यो के पारस्परिक सम्बन्ध के विषय पर यूनानी राजनीतिक दशन म विशेष महत्त्व नही दिया गया है। किन्तु यह विषय भी व्यावहारिक महत्त्व रखता था और सविधान के स्वरूप अथवा अधिकारियो की नियुक्ति के ढग की तुलना म यह कम महत्त्वपूर्ण न था। नगर राज्यो के पारस्परिक सम्बन्ध विषयक समस्याएँ उत्पन्न होती थी और इन समस्याओ एव प्रश्नो की ओर राज्यो एव नागरिको का ध्यान देना ही पडता था। इस प्रकार के अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध मुख्यतया दो प्रकार से निर्धारित होते थे—दो अथवा कई नगर राज्यो की पारस्परिक सधियो के आधार पर या फिर परम्परागत प्रथाओ की धारणाओ के आधार पर जो प्राय अस्पष्ट ही हुआ करती थी। *जिस प्रकार विधि और प्रकृति के समर्थको म मतैक्य का अभाव था* (अध्याय ५ देखिये) और जिस विधि को कुछ लोग सर्वोच्च मानते थे उसी को दूसरे लोग प्रकृति के प्रतिकूल कह कर दूर फेकना चाहते थे उसी प्रकार कुछ लोग अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धो म परम्परागत प्रथाओ सन्धि-पत्रो की पवित्रता तथा शिष्टता और औचित्य की अलिखित व्यवस्था को सवथा अमान्य घोषित करने के लिए उद्यत थे और कुछ लोग अभी भी उन्हें मान्य समझते थे और आशा करते थे कि राज्यो के पारस्परिक सम्बन्ध सनातन से चली आने वाली प्रथाओ और सन्धियो द्वारा निर्धारित होंगे। क्लिकलीज के व्यक्तिवादी दशन को जब नगर राज्यो के सम्बन्ध म लागू किया जाता है उसका तात्पर्य यह होता है कि जो नगर राज्य समृद्ध है तथा जिसम पर्याप्त सख्या म योग्य और बुद्धिमान नागरिक विराजमान हैं वह अन्य राज्यो की अपेक्षा प्रगति के पथ पर आगे बढ सकेगा। साथ ही नगर राज्यो के स्वायत्त शासन के प्राचीन सिद्धान्त के अनुसार प्रत्येक नगर राज्य का अपना व्यक्तित्व है और व्यक्ति की भाँति नगर राज्य के सम्मुख भी आत्मोत्कर्ष का लक्ष्य रहता है। किन्तु स्वायत्त शासन का यह सिद्धान्त और एक नगर राज्य द्वारा दूसरे नगर राज्य पर आधिपत्य स्थापित करने के सिद्धान्त परस्पर असगत हैं यद्यपि नगर राज्य द्वारा आत्मोत्कर्ष के लक्ष्य का अनुसरण करने का परिणाम अन्ततोगत्वा यही होता था कि शक्तिशाली नगर राज्य निर्बल राज्यो पर अपना आधिपत्य स्थापित कर ले। एथेस और स्पार्टा के मध्य युद्ध प्रारम्भ होने के पूर्व ही यह समस्या उपस्थित थी। दोनो राज्यो म दिये गये भाषणो से यह स्पष्ट हो जाता है। इन भाषणो म डाइके अथवा सम्यक् प्रथा की परम्परागत धारणा की ओर सकेत किया गया है। किन्तु एक नगर-

राज्य द्वारा दूसरे नगर राज्य के लिए उचित और अनुचित का मानदण्ड निर्धारित करने के अधिकार का दावा करने को पेरिक्लीज ने स्वतन्त्रता अपहरण करने की दिशा में पहला कदम बताया था और उसने इसका तीव्र विरोध भी किया था। पेरिक्लीज के दृष्टिकोण के विपरीत कोरिन्थ के कुछ वक्ताओं का यह मत था कि अन्तर्राष्ट्रीय मामला में शक्तिशाली नगर राज्यों का कुछ उत्तरदायित्व रहता है और दूसरे शक्तिशाली नगर राज्यों को निबल नगर राज्यों का अतिक्रमण करने से रोकने के लिए उन्हें तत्पर रहना चाहिए। यदि दो नगर राज्यों के मध्य शासक और शासित का सम्बन्ध है और इस सम्बन्ध को वैधिक अथवा औपचारिक मान्यता प्रदान की गई है तो इस प्रकार के सम्बन्ध का सद्धान्तिक आधार शासक राज्य की शक्ति ही होगी, क्योंकि अपनी श्रेष्ठ शक्ति के आधार पर ही शासक राज्य ने यह सम्बन्ध स्थापित किया है। यदि शासक और शासित का सम्बन्ध औपचारिक ढंग से नहीं स्थापित हो पाया है और एक स्वतन्त्र नगर-राज्य का कोई शक्तिशाली राज्य हड़प जाने को उद्यत है जैसे शक्तिशाली स्पार्टा निबल प्लेटिया (Plataea) को तथा शक्तिशाली एथेन्स निबल मेलास (Melos) को हड़प जाना चाहते थे तो ऐसी दशा में निबल नगर राज्य के सम्मुख केवल दो उपाय रह जाते हैं या तो वह किसी तीसरे राज्य से सहायता ले अथवा आक्रमणकारी नगर राज्य की सद्भावनाओं को जागृत करने का प्रयत्न करे। संक्षेप में इतना कहा जा सकता है कि अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों के क्षेत्र में 'अनीतिवादी' विचारकों का ही बोलबाला दिखाई पड़ता है। एथेन्स और स्पार्टा का यह युद्ध बिना किसी घोषणा के अचानक आक्रमण से प्रारम्भ हुआ इसका उल्लेख थुसीडाइडीज ने किया है, किन्तु इस प्रसंग पर किसी प्रकार की टीका टिप्पणी उसने नहीं की।[1]

फिर भी सन्धियों में आस्था न रखने वाले लोग भी सन्धि करते ही थे। युद्ध समाप्ति की घोषणा के रूप में सन्धियों की उपयोगिता थी। साथ ही कुछ समय के लिए शान्ति स्थापित करने के लिए भी सन्धियाँ उपयोगी सिद्ध होती थीं। थुसीडाइडीज ने सन्धि के विषय पर भी एक लघु भाषण का उल्लेख किया है। यह भाषण स्पार्टा के एक शिष्टमंडल द्वारा दिया जाता है जो छः वर्षों तक युद्ध चलते रहने के उपरान्त एथेन्स भेजा गया था। यह शिष्टमंडल अपने प्रयास में सफल नहीं हो सका। किन्तु इस भाषण के बाद वाले अध्याय में थुसीडाइडीज ने जिन घटनाओं का वर्णन किया उनसे ऐसा प्रतीत होता है कि उस समय भी सन्धि की सम्भावना थी और युद्ध समाप्त हो सकता था। भाषण के प्रारम्भ में ही स्पष्ट कर दिया जाता है कि यह कल्पना करना कि एक राष्ट्र किसी महायुद्ध में आंशिक एवं परिसीमित रूप से भाग ले सकता है मूर्खता होगी। इसके पश्चात्

१ फिर भी इस प्रकार के युद्ध को वह उचित नहीं समझता है VII १८।

वक्ताओ ने इस बात पर जोर दिया है कि शान्ति के लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि सन्धि की शर्तें दोनो पक्षो की सम्मति से निर्धारित हो जिससे युद्ध और वमनस्य दोनो समाप्त हो सकें और यही सन्धि का उद्देश्य होना चाहिए। शान्ति की स्थिति को स्थायी बनाने के लिए आवश्यक है कि 'इस धारणा का त्याग किया जाय कि जिस पक्ष को युद्ध में अधिक सफलता प्राप्त हुई है वह दूसरे पक्ष को असमान शर्तों पर सन्धि करने के लिए बाध्य कर सकता है। यदि विजेता अपनी शर्तों को स्वीकार कराने की स्थिति में है तो भी उसे औचित्य और न्याय[1] का ध्यान रखना चाहिए और उदारता दिखाते हुए दोनो पक्षो की सम्मति को ध्यान में रख कर उचित सन्धि करना चाहिए।

स्वाभाविक है कि इस प्रकार की भावनाओ की अभिव्यक्ति अधिकांशतया निर्बल पक्ष की ओर से ही की जाएगी। सबल पक्ष तो दूसरे ही नियम का अनुसरण करेगा। वह तो यह कहेगा कि 'यदि आपके पास पर्याप्त शक्ति है तो निश्चित रूप से अपनी शर्तों को स्वीकार कराइये।' मेलास में एथेन्सवालो ने भी इसी सिद्धान्त का अनुसरण किया। उनका कहना था कि वे कोई नया बात नही कर रहे हैं ऐसा तो होता ही आया है। उनका कथन सत्य ही था। मेलास उन थोड़े से द्वीपो में था जिन्होने ४१६ ई० पू० में स्थापित एथेन्स के महासंघ की सदस्यता को नहीं स्वीकार किया था। डोरियाई जाति के वंशज होने के नाते वहा के निवासी अधिकांशतया स्पार्टा के पक्ष में थे किन्तु यह आशा करते थे कि उनकी निष्पक्षता सशक्त जल सेना वाले एथेन्स को सन्तुष्ट रख सकेगी। उनकी यह आशा मिथ्या सिद्ध हुई और बड़ी संख्या में एथेन्स की सेना का एक भाग मेलास को एथेन्स के अधीन करने के लिए पहुच गया। इस अवसर पर भी एक वाद विवाद होता है जिसे थुसीडाइडीज ने प्रस्तुत किया है। इस विवाद में एथेन्स की ओर से वही सिद्धान्त प्रस्तुत किया जाता है जिसकी चर्चा इस अनुच्छेद के प्रारम्भ में की गयी है—यह विशुद्ध Machtpolitik है और चूकि यह निरंकुशता का ही दूसरा रूप है इसलिए राजनीतिक सिद्धान्त में इसका महत्त्व निरंकुशता के महत्त्व से अधिक नही हो सकता। (निरंकुशता को यूनान के राजनीतिक दार्शनिक अधिक महत्त्व नही देते थे, यहाँ तक कि निरंकुश शासन को संवैधानिक मानने के लिए भी वे तैयार न थे। ऐसी दशा में स्पष्ट है कि विशुद्ध Machtpolitik अर्थात सबल राज्यो द्वारा अपनी शक्ति

---

१ क्लियोन ने इस प्रस्ताव का उसी प्रकार विरोध किया जिस प्रकार से उसने Mytileneans के प्रति सहानुभूति दिखाने का विरोध किया था। उसके अनुसार एक साम्राज्य के शासन मे तथा अन्तरराष्ट्रीय सम्बन्धो मे 'एपीएकिआ' के लिए कोई स्थान नहीं है।

का दुरुपयोग कर दुर्बल राज्यों पर अपना आधिपत्य स्थापित करने की नीति को वे अन्तराष्ट्रीय राजनीति के सिद्धांत के रूप में कोई महत्व न देते)। चूंकि इस विवाद में शक्तिशाली एथेन्स की ओर से जो तर्क प्रस्तुत किये गये हैं वे न्यायोचित नहीं हैं और न एथेन्स के वक्ताओं ने यह दावा ही किया कि न्याय उनके पक्ष में है, इसलिए उनके पक्ष का प्रतिपादन विपक्ष की तुलना में कम महत्वपूर्ण है। मेलास के वक्ताओं द्वारा अपने समर्थन में प्रस्तुत तर्क अंतराष्ट्रीय सम्बन्ध के क्षेत्र में औचित्य का समर्थन करते हैं और एथेन्स के वक्ताओं द्वारा प्रतिपादित सिद्धांत के दावों की ओर संकेत करते हैं। विगत सेवाओं के आधार पर एथेन्सवालों से सद्व्यवहार की आशा नहीं की जा सकती थी, यद्यपि स्पार्टा में एथेन्सवालों की ओर यह तर्क प्रस्तुत किया गया था। दैवी अनुमति अथवा नैतिक उत्तरदायित्व के सिद्धान्तों के आधार पर भी एथेन्सवालों में सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार की आशा नहीं की जा सकती थी ई० पू० ४२७ में प्लटिया के निवासियों ने जिन्हें स्पार्टा की सैन्य शक्ति के सम्मुख नीचा देखना पड़ता था इन सिद्धान्तों के आधार पर उचित व्यवहार की माग की थी, किन्तु स्पार्टा के विजेताओं ने इन सिद्धान्तों की ओर किञ्चित मात्र भी ध्यान नहीं दिया। ऐसी स्थिति में मेलास निवासी अपने पक्ष के समर्थन में केवल तीन मुख्य तर्क प्रस्तुत करते हैं पहले तर्क में इस बात पर जोर दिया गया है कि सबल और निर्बल दोनों राज्यों के पारस्परिक हित की ओर ध्यान देना चाहिए दूसरा तर्क इस धारणा का खंडन करता है कि साम्राज्य की प्रसारवादी नीति सुरक्षा प्रदान कर सकती है, तीसरा तर्क दूसरे से मिलता जुलता है और इसमें यह कहा जाता है कि बल पर आधारित साम्राज्य स्थायी नहीं रह सकता। एथेन्सवासी इन तर्कों को सुनने के लिए तैयार नहीं थे। फिर भी मेलासवासी इन पर अड़े रहे। अगले दस वर्षों के यूनानी इतिहास ने मेलास निवासियों द्वारा प्रस्तुत तर्कों की सत्यता प्रमाणित कर दी और यह स्पष्ट रूप से सिद्ध हो गया कि भाग्य की परिवर्तनीयता ही निर्बल और सबल को एक सूत्र में बांध सकती है संकट तो निरन्तर उत्पन्न होता रहता है और यदि आज निर्बल पर है तो कल सबल तक पहुँच सकता है। अतः मान्य सिद्धांत यह होना चाहिए कि 'जो सभी के लिए कल्याणकारी है उसे नष्ट न किया जाय' इसी विवाद में एथेन्स के वक्ता जब यह कहते हैं कि मेलास को अपने अधीन करके वे केवल अपने साम्राज्य के विस्तार की ही आशा नहीं करते, अपितु अपने भविष्य की सुरक्षा की भी आशा करते है तो मेलास के वक्ता तुरन्त उत्तर देते है कि प्रसारवादी नीति शीघ्र ही एक ऐसी अवस्था को प्राप्त होती है जिसमें ये दोनों लाभ (साम्राज्य का विस्तार और भविष्य की सुरक्षा) एक साथ नहीं उपलब्ध हो सकते है। एक नये देश को अधीन करने के पश्चात् दूसरे देश से संघर्ष प्रारम्भ हो जाता है और समीप के अप्रभावित देशों में भी आशंका और शत्रुता बढ़ जाती है। यह प्रक्रिया अबाध गति से चलती जाती है और यह आशा करना कि

किसी भी अवस्था म इस रोका जा सकता है भ्रम मात्र है। एथ सवासियो क अनुसार इस प्रक्रिया को नियन्त्रित किया जा सकता था, किन्तु यह उसी प्रकार का भ्रम था जस कि यह सोचना कि कोई देश युद्ध म सीमित भाग ले सकता है (१०६) अथवा यह आशा करना कि कोई साम्राज्य अपनी सत्ता को स्वय छोड देगा। (१०४) मेलास के वक्ता अत म यह भी कहते हैं कि अधिपति राज्य का औचित्य की ओर ध्यान न देकर केवल बल क आधार पर अपनी सत्ता को बनाये रखने के सकल्प म और अधीन राज्य की पराधीनता स मुक्त होन की इच्छा म निरतर सघर्ष चलता रहेगा। इसम स देह नहीं कि कुछ राज्य शक्ति के इस तूफानी वेग के सम्मुख झुक जायेंगे। इस प्रकार के व्यवहार को एथ स के वक्ताओ न अपमानजनक नहा बताया है। उनके अनुसार तो इस प्रकार का आत्म समपण नगर राज्य को विध्वस से बचा लता है और मलास निवासियो को यही करना चाहिए क्योकि जिस स्थिति म वे थे उसम किसी प्रकार की अप्रत्याशित घटना, जसे स्पार्टा स सहायता की आशा करना, मूर्खता थी। इस प्रकार सघप म, यदि सम्प्रति आत्मरक्षा (साटेरिआ) को मुख्य लक्ष्य मान लिया जाय तो इस विवाद म एथ स के वक्ताओ का हा सफलता मिलती है। इसीलिए विवाद के अत म मेलासवासियो का अपनी ही बात पर दृढ रहना एथ स वालो को तकसगत नही प्रतीत होता है और व यह समझते हैं कि मेलास निवासी तकसगत निष्कर्ष की अवहेलना कर शिष्टता और सम्मान की मूखतापूर्ण भावनाओ से प्रेरित हो कर अपना माग निश्चित कर रहे हैं। सम्भवत मेलास निवासी स्पार्टा की सहायता पर भरोसा करत थ, किन्तु एथ स वाले भी यह निश्चित रूप स जान गए होंगे कि मेलास के सम्मुख आत्मरक्षा का ही प्रश्न नहीं है और इसलिए केवल सयशक्ति स उन्हे पराजित नही किया जा सकता। उपस्थित एथ स वासियो म स कुछ लोगो का ध्यान अपन मित्र राज्य प्लटिया पर कुछ समय पूव हुए स्पार्टा के आक्रमण और प्लटिया निवासियो द्वारा प्रस्तुत तक की ओर अवश्य गया होगा। अपन निबल विरोधियो को उनक मूर्खतापूर्ण व्यवहार के लिए फटकारते हुए एथ स वासियो न जिन शब्दो का प्रयोग किया था वे १९४०–४५ के मध्य के अवना-आन्दोलना को प्ररणा प्रदान करनवाला भावना की भविष्यवाणी करत हुए प्रतीत होत हैं। मेलासवासियो को सम्बोधित करते हुए एथ स के वक्ताओ न कहा था, 'आप लोग वतमान की अपक्षा भविष्य का अधिक वास्तविक और महत्त्वपूर्ण समझ रहे हैं और अपनी आकाक्षाओ के वशीभूत होकर यह समझते हैं कि अदृश्य भविष्य अभी से आपके पक्ष म है।'

(द्वितीय महायुद्ध के दौरान म नाज़ी सेनाओ स परास्त देशो क अलावा आन्दोलन भी भविष्य की आशा से ही अनुप्राणित होते रहे)। एतिहासिक दृष्टिकोण राजनीतिक सूझ-बूझ और दार्शनिक शिक्षा स युक्त होने क कारण युसीडाइडीज इस समस्या को अतीत और भविष्य के सन्दभ म देख सकता था और यह भली भाँति समझ गया था कि

यह एक शाश्वत समस्या है। किन्तु निर्बल की मूखता और सबल की क्रूरता की आलोचना अथवा एक के साहस और दूसरे की सफलता की सराहना वह नहीं करता है।

इस प्रकार विभिन्न भाषणों और विवादों का विवरण प्रस्तुत करने में थुसीडाइडीज ने आद्योपान्त निष्पक्ष रहने का प्रयास किया है और अपने को तथा अपने विचारों को सम्मुख नहीं आने दिया है। हाँ, कुछ स्थलों पर विशेष राजनीतिज्ञों के बारे में दूसरों का मत प्रस्तुत करते हुए वह अपना भी मत व्यक्त कर देता है। किन्तु ऐसे अवसर बहुत कम हैं और अपनी रचना के अधिकांश भाग में उसने निर्णय देने के प्रलोभन का संवरण किया है। दार्शनिक शिक्षा के फलस्वरूप जिस प्रकार वह समस्याओं के विभिन्न पक्षों को भली भाँति समझने में समर्थ हो सका है उसी प्रकार अन्य साफिस्ट शिक्षकों तथा चिकित्सा के अध्यापकों से प्राप्त शिक्षा का उपयोग भी उसने किया है। औषधि विज्ञान की शिक्षा भी उसने प्राप्त की थी और अपने विवरण में वह इस ज्ञान का भी प्रयोग करता है। फलतः वह न केवल एथेन्स की महामारी (प्लेग) के लक्षणों का वर्णन करता है अपितु राज्य (body politic) के रोगों का भी निरपेक्ष निदान प्रस्तुत करता है। रोगों को वह मानव-स्वभाव से अभिन्न और अपृथक् मानता था उसी प्रकार जैसे मानव शरीर से यह अभिन्न है। ऐसी दशा में जब तक मनुष्य का वर्तमान स्वभाव क़ायम रहता है राज्य में संघर्ष होते ही रहेंगे। यद्यपि हम आगे चलकर देखेंगे। प्लेटो इस निश्चय पर पहुँचा कि यदि मानव-स्वभाव के कारण ही संघर्ष होते हैं तो हमें मनुष्य के इस स्वभाव को ही बदलने का प्रयत्न करना चाहिए। किन्तु थुसीडाइडीज निदान मात्र प्रस्तुत करता है उपचार नहीं बताता है। अपने इतिहास की तीसरी पुस्तक के एक अनुच्छेद में, जिसका प्रायः उल्लेख किया जाता है उसने युद्ध की प्रारम्भिक अवस्था में कारसीरा (Corcyra) में व्याप्त उग्र राजनीतिक संघर्षों के कारणों और परिणामों का विश्लेषण किया है। यूनान के अन्य राज्यों में भी इसी प्रकार के संघर्ष व्याप्त थे। वास्तव में आन्तरिक संघर्षों और कलह से उत्पन्न होने वाली अस्थिरता यूनानी राजनीति की सबसे कठिन और महत्वपूर्ण व्यावहारिक समस्या थी। जहाँ-कहीं एक दल के शक्तिशाली हो जाने के फलस्वरूप दूसरे दल को राजनीतिक जीवन से वस्तुतः पृथक् हो जाना पड़ता है वहाँ भीषण संकट का उत्पन्न होना स्वाभाविक है। जब तक मानव स्वभाव इसी तरह रहेगा, यह स्थिति अवश्यम्भावी है और यूनानी नगर राज्यों में एक दल के प्रभुत्वशाली होने के परिणामस्वरूप दूसरे दल का राजनीतिक जीवन से पृथक होना ही पड़ता था और कभी-कभी तो उसके सदस्यों को देश छोड़ने के लिए बाध्य होना पड़ता था। इस प्रकार के संकट युद्धकाल में और भी तीव्र रूप धारण कर लेते हैं, क्योंकि नगर राज्य की एकता और

स्थिरता की ओर ध्यान न देकर अधिकारच्युत दल विदेशी राज्यों से सहायता प्राप्त करने के लिए तत्पर हो सकता है। इस स्थिति की ओर भी थुसीडाइडीज ने संकेत किया है। इतना ही नहीं, उसका कहना है कि जब ईमानदारी, संयम, श्रेष्ठ और शालीन भावनाओं का ह्रास होने लगता है और सामान्य मान्यताओं का विपर्यय हो जाता है, (इसलिए अध्याय ५) और राजनीतिक दर्शन[1] की सर्वथा उपेक्षा करके मूर्ख लोग विचारशून्य कार्य और बुद्धिमान लोग निष्क्रिय विचारों में रत रहते हैं तो इससे भी कहीं अधिक गम्भीर स्थिति उत्पन्न हो जाती है।[2]

अपने इतिहास की आठवीं पुस्तक में और यही इस रचना की अंतिम पुस्तक है, थुसीडाइडीज भाषणों को मूलरूप में न प्रस्तुत करके उनका सारांश मात्र देता है। जिन कारणों से प्रेरित होकर उसने ऐसा किया है उनके बारे में तो कुछ कहना कठिन है किन्तु ई० पू० ४११ में युद्ध के दौरान में ही एथेन्स में जो क्रान्ति हुई उसका विवरण देते हुए उस समय के राजनीतिज्ञों के सम्बन्ध में कुछ व्यक्तिगत टीका टिप्पणी भी उसने की है। विख्यात वक्ता एन्टीफोन के कौशल की सराहना करते हुए भी '४०० व्यक्तियों' की नीति एवं कार्य प्रणाली का अनुमोदन वह नहीं करता है। क्रान्ति के परिणामस्वरूप जिस शासन की स्थापना हुई वह अधिक दिनों तक नहीं चल सका। इसकी अस्थिरता का एक कारण राजनीतिक परिवर्तनों से सम्बन्धित वह सिद्धान्त भी हो सकता है जो हमें यह बताता है कि लोकतन्त्र के स्थान पर स्थापित अल्पतन्त्र पारस्परिक स्पर्धा के कारण विशेषरूप से अस्थायी होता है[3] 'क्योंकि सभी (नए शासक) आपस में एक दूसरे को समान न मान कर स्वयं प्रथम होने का दावा करने लगते हैं। लोकतन्त्रात्मक संविधान के अन्तर्गत जब इसके विपरीत नेताओं का निर्वाचन होता है तो असफल व्यक्ति यह सोच कर निर्वाचन के परिणाम से सन्तुष्ट हो जाता है कि जिन व्यक्तियों द्वारा वह पराजित हुआ है वे उससे श्रेष्ठ हैं (VIII ८९)। लोकतन्त्रात्मक के स्थान पर अल्पतन्त्रात्मक शासन की स्थापना की संभावना है अथवा नहीं इस विषय पर थुसीडाइडीज कुछ नहीं कहता है। वह तो पाठक का ध्यान केवल इस प्रकार के परिवर्तन के परिणाम की ओर आकृष्ट करता है। इसके विपरीत प्लेटो इस प्रकार के परिवर्तन की उपेक्षा करता है और संभवतः इसे असंभाव्य समझता है। किन्तु इस विषय पर प्लेटो का

---

१ II ४० V Supra, p २ n

२ III ८३

३ इसमें सन्देह नहीं कि इनके प्रभाव की ओर ध्यान देना ही पड़ता है। पेरिक्लीज की मृत्यु के उपरान्त उत्पन्न स्थिति का वर्णन करते हुए भी थुसीडाइडीज ने इसी प्रकार की भाषा का प्रयोग किया है (II ६५)

दृष्टिकोण इतिहासकार के दृष्टिकोण से सर्वथा भिन्न है। फिर भी, हम यह जानना चाहेंगे कि एथेंस के लिए थुसीडाइडीज वास्तव में किस प्रकार के शासन को उचित समझता था। अर्थात् उसके अनुसार एथेंस को किस शासन की आवश्यकता थी। उसके संगृहीत भाषणों में लोकतन्त्र और अल्पतन्त्र के नारों तथा विशिष्ट शब्दावलि की भरमार है किन्तु इनसे स्वयं थुसीडाइडीज के दृष्टिकोण का पता नहीं चलता है। हाँ, अपने अपूर्ण इतिहास के अन्तिम भाग में वह यह मत प्रकट करता है कि ४०० व्यक्तियों के कुलीनतन्त्र के स्थान पर एक संशोधित लोकतन्त्र स्थापित करने का प्रस्ताव उन सभी संवैधानिक सुधारों से श्रेष्ठ था जो उसके जीवन काल में एथेंस में हुए थे। जहाँ तक लोकतन्त्र का सम्बन्ध था केवल दो मुख्य संशोधन प्रस्तुत किये गये थे। किन्तु लोकतन्त्र में दृढ आस्था रखनेवाले के लिए दोनों संशोधन गंभीर थे क्योंकि इन्हें स्वीकार कर लेने के परिणामस्वरूप जनता (डेमोज) की शक्ति समाप्त हो जाती। पहला संशोधन सम्पत्ति के आधार पर मताधिकार को केवल ५००० व्यक्तियों तक सीमित करना चाहता था और दूसरा पदाधिकारियों को वेतन देने की प्रथा का अन्त करना चाहता था। यद्यपि थुसीडाइडीज द्वारा व्यक्त विचारों में ये दोनों विचार सबसे अधिक निश्चित और स्पष्ट है तथापि राजनीतिक दर्शन की दृष्टि से इनका कुछ भी महत्त्व नहीं है।

थुसीडाइडीज के पूर्व के विचारकों ने राजनीतिक चिंतन में इतिहास के महत्त्व की उपेक्षा की थी। उन्होंने अपना ध्यान समकालीन समस्याओं के अध्ययन तक सीमित रखा और इन कितने की सामाजिक प्रथाओं और संस्थाओं का ही अध्ययन किया। इस प्रकार के अध्ययन का क्षेत्र जितना विस्तृत हुआ परिणाम उतना ही आश्चर्यजनक हुआ (देखिए—अध्याय तीन)। थुसीडाइडीज ने समकालीन स्थिति को समझने के लिए देश के स्तर पर पूर्व और पश्चिम की ओर देखने की अपेक्षा काल के स्तर पर भूत और भविष्य की ओर देखना उचित समझा। निश्चय ही वह किसी त्रिकालदर्शी महात्मा की भांति भविष्य के गर्भ में स्थित घटनाओं को नहीं देखता है, किन्तु सक्रिय राजनीतिज्ञ के लिए दूरदर्शिता की उपयोगिता पर प्रायः जोर देता है। और, जैसाकि उसके बहुउद्धृत अनुच्छेद से पता चलता है, भविष्य का ध्यान में रख कर ही उसने अपने इतिहास की रचना की। उसका विश्वास था कि भविष्य में विगत घटनाओं का अध्ययन करनेवाले उसके इतिहास को मार्गदर्शक के रूप में उपयोगी पाएंगे। स्वयं उसकी पीढ़ी के लोग इस प्रकार की सुविधा से वञ्चित रह गये थे। ऐतिहासिक कृतियां तो उस समय भी उपलब्ध थीं। हेरोडोटस के इतिहास की रचना हो चुकी थी। हेलनिकास (Hellanikos) की रचना भी उपलब्ध थी और इन दोनों रचनाओं में पर्याप्त ऐतिहासिक सामग्री मिलती थी। इसके अतिरिक्त भाषणों और प्रशस्तियों में भी विगत गौरव की स्मृतियां सुरक्षित थीं। महाकाव्य भी लिखे जा चुके थे जो प्राचीन इतिहास पर प्रकाश

डालते थे। इस सम्बन्ध में होमर के महाकाव्य विशेष उल्लेखनीय हैं। प्रोटेगोरस और क्रिटियाज ने मनुष्य के प्रारम्भिक जीवन का काल्पनिक चित्र भी प्रस्तुत किया था। किन्तु इसमें अतीत का वास्तविक विवरण नहीं मिलता था। कुछ तो शुद्ध पौराणिक कथाएं थीं और कुछ शैली के प्रभाव के कारण अतिरंजित हो गये थे। इसके अतिरिक्त प्रत्येक लेखक ने अपने विशिष्ट उद्देश्य की पूर्ति के लिए ऐतिहासिक घटनाओं का उपयोग किया था। कुछ लेखकों ने अपने श्रोतागण का मनोरंजन करने के लिए ऐतिहासिक घटनाओं का प्रयोग किया, तो कुछ ने अपने सिद्धान्तों का प्रतिपादन करने के लिए दृष्टान्त के रूप में इनका प्रयोग किया। इस प्रकार यद्यपि इन रचनाओं में ऐतिहासिक सामग्री प्रचुर मात्रा में मिलती है किन्तु विगत इतिहास का जो वास्तविक विवरण थुसीडाइडीज देना चाहता था और अपने समय की घटनाओं का जो सच्चा चित्र भविष्य के लिए सुरक्षित रखना चाहता था वह इन रचनाओं में नहीं मिलता था। ऐसी दशा में उपलब्ध ऐतिहासिक रचनाओं को परिशोधित एवं परिपूर्ण करने[1] तथा प्रारम्भिक एजियन (Aegean) सभ्यता के इतिहास को विशेषकर युद्ध की कला के इतिहास पर इसके प्रभाव को, स्वयं लिखने के लिए उसे बाध्य होना पड़ा। स्वयं उसके इतिहास का विषय एक ऐसा व्यापक और दीर्घकालीन युद्ध है जिसके समान अभी तक यूनान में कोई युद्ध नहीं हुआ था। अल्पकालीन और स्थानीय युद्ध तो इसलिए भी हो सकते हैं कि भोजन और वस्त्र के अभाव में एक देश के निवासी अपने भरण-पोषण के लिए[2] पड़ोसी देश पर आक्रमण कर दें। किन्तु दीर्घकालीन और व्यापक युद्धों का सफल सचालन तो तभी हो सकता है जब देश में सम्पत्ति[3] और भौतिक एवं तकनीकी साधनों का प्राचुर्य हो और जीवन व्यवस्थित एवं सगठित हो। प्राचीन यूनान में इस प्रकार की सुविधाएँ सुलभ नहीं थीं। एजियन सागर द्वारा प्रस्तुत विशेष परिस्थितियों में दीर्घकालीन युद्ध के लिए एक चौथी सुविधा की भी आवश्यकता थी और वह था विशाल जलसेना और इसके सचालन के लिए साहसी सैनिक। अपने समय की घटनाओं और भाषणों पर प्रकाश डालने की दृष्टि से थुसीडाइडीज ने अपनी रचना के प्राक्कथन में इनका तुलनात्मक अध्ययन भी प्रस्तुत किया है। भूत के सन्दर्भ अथवा प्रकाश में हम वर्तमान को समझ सकते हैं। इसी लिए अपने समय की घटनाओं को समझने के लिए थुसीडाइडीज ने अपने पूर्व के यूनानी इतिहास का अध्ययन किया और यह प्रयास किया कि उसके बाद की पीढ़ी को कम से कम यूनानी

---

१ उदाहरणार्थ BK १, अध्याय २०, ९७, ८९-११७, १२६, १२८-१३८।

२ अथवा भरण-पोषण के लिए अतिरिक्त साधन और ऊँचे जीवन-स्तर की तलाश में—Plato Republic 11 ३७३

३ १, २ and ७

महायुद्ध से सम्बन्धित घटनाओं को समझने में वह कठिनाई नहीं जो उसे अपने से पहले के यूनानी इतिहास को समझने में त्रुटिपूर्ण और मिथ्या विवरणों के कारण हुई थी।

थुसीडाइडीज़ के पूर्ववर्ती लेखक जैसे प्रोटगोरस, हिप्पियाज़, एण्टीफान आदि प्रधानतया राजनीति के लेखक थे। थुसीडाइडीज़ मुख्यतया इतिहासकार था। ऐसी दशा में इन लेखकों के विचारों तथा थुसीडाइडीज़ के विचारों के जटिल सम्बन्धों का निरूपण करना एक दुष्कर कार्य हो जाता है। इसके अतिरिक्त स्वयं थुसीडाइडीज़ उसका अशृंखलित जीवन-मार्ग, उसकी ऐतिहासिक रचनाएँ, उसके विचार तथा दूसरों के विचारों का उसका विवरण सभी तो राजनीति की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं और इनके सन्दर्भ में ही उसके विचारों को समझा जा सकता है। समकालीन सोफिस्ट शिक्षकों के भाषणों का थुसीडाइडीज़ ने उसी प्रकार आत्मसात किया था जिस प्रकार कार्ल मार्क्स ने ब्रिटिश म्यूजियम के वाचनालय को। उसके अध्ययन का प्रभाव विपरीतगामिनी तर्क वितर्क की शैली द्वारा प्राप्त उपलब्धियों की अपेक्षा कहीं अधिक गहरा पड़ा। जैसा कि पूर्व अध्याय से विदित हो गया होगा ५वीं शताब्दी में सोफिस्ट शिक्षकों में बहुत ही ज्यादा विविधता थी। थुसीडाइडीज़ ने उस समय के वधिक और राजनीतिक सिद्धान्तों का सामान्य ज्ञान प्राप्त किया और इनके प्रवक्ताओं के विचारों का भी अध्ययन किया। इस ज्ञान से उसे अपनी रचनाओं में विरोधी पक्षों की युक्ति-युक्त व्याख्या करने में पर्याप्त सहायता मिली। किन्तु इन सोफिस्ट शिक्षकों से प्राप्त समस्त ज्ञान इतिहासकार के लिए समानरूप से उपयोगी नहीं हो सकता था। शासकों की त्रुटि से परे सिद्ध करने के सिद्धान्त अथवा धर्म और विधि की उत्पत्ति के सिद्धान्तों में न तो वह विशेष रुचि ही रखता था और न इन्हें उपयोगी ही समझता था। भाषण, अलंकार और औषधि विज्ञान के अध्ययन से वह अवश्य प्रभावित हुआ। उसका दृष्टिकोण प्रधानतया लौकिक था और अनक्सगोरस (Anaxagoras) के दृष्टिकोण से मिलता जुलता था। वह स्वयं सोफिस्ट न था और इसलिए महामानव के सिद्धान्त अथवा राजनीतिक सफलता प्राप्त करने के उपायों में उसकी रुचि नहीं थी। हाँ, अन्य राज्यों के सम्बन्ध में नगर राज्य (पोलिस) की सफलता को उसके इतिहास में पर्याप्त महत्व प्रदान किया गया है। किन्तु अन्य राज्यों के सम्बन्ध में सफलता प्राप्त करने के पहले यह आवश्यक है कि नगर राज्य का अस्तित्व अक्षुण्ण रखा जाय किन्तु इस समस्या पर अर्थात ऐसे युग में नगर राज्य का संचालन किस प्रकार किया जाय कि इसका अस्तित्व अक्षुण्ण रह सके थुसीडाइडीज़ कोई प्रकाश नहीं डालता है। वह केवल एकता और नैतिकता के ह्रास की प्रक्रियाओं का विश्लेषण करता है। ऐसा प्रतीत होता है कि अपनी सोफिस्ट शिक्षा से वह सम्यक और असम्यक, उचित और अनुचित के अध्ययन की ओर न आकृष्ट होकर केवल सत्य और असत्य से सम्बन्धित प्रश्नों के अध्ययन की ओर प्रवृत्त हुआ। उदाहरणार्थ

अध्याय ७

प्लेटो और आइसोक्रेटीज

थुसाडाइडीज़ के अपूर्ण इतिहास को विषय प्रदान करनेवाले दीघकालीन युद्ध का अंत ४०४ ई० पू० म एथन्स की पराजय के साथ हुआ। स्पार्टन विजेताओ की सहायता स स्थापित ३० व्यक्तियो का अपतन्त्र कुछ ही समय तक चल सका और ४०३ ई० पू० म यूक्लाइडीज़ (Eucleides) की अध्यक्षता म पुन लोकतन्त्रात्मक संविधान स्थापित किया गया। लगभग इसी समय थुसीडाइडीज़ की मत्यु हुई। ३९९ ई० पू० म साक्रेटीज को विष का प्याला दिया गया। ५वी शताब्दी ई० पू० के लेखको म से जिनकी रचनाएँ कुछ मात्रा म सुरक्षित रह सकी केवल दो ही ऐसे हैं जिन्होने इस समय के एथेन्स की राजनीति म सक्रिय भाग लिया था। वे हैं अरिस्टाफेनीस (Aristophanes) और प्रसिद्ध वक्ता एण्डोसाइडीज़ (Andocides)। किन्तु आने वाली शताब्दी के अधिकाश लेखक पलोपोनाशियन युद्ध (Pelopnnesian War) के दौरान म ही वयस्क हुए थे और इस पुस्तक के पाँचवे अध्याय के विषय से सम्बन्धित प्रश्नो पर निरन्तर होने वाले वादविवाद को अपने कानो स सुन चुके थे। इसलिए साम्राज्य की क्षति हो जाने के पश्चात् एथेन्स के लोगो के दष्टिकोण म जो परिवतन आया उसे अधिक महत्त्व देना भूल होगी। इसके विपरीत, युद्धोत्तर युग म सामाजिक आर्थिक एव राजनीतिक परिवत्तन अनिवाय थे और अनिवाय यह भी था कि इन परिवत्तनो का प्रभाव राजनीतिक विचार पर भी पडे। विगत शताब्दियो म राजनीतिक विचारो के फलस्वरूप राजनीतिक परिवत्तन हुआ करते थे। इस शताब्दी म विचारो की प्रधानता कुछ कम हो गई। एथेन्स के साम्राज्य का निर्माण एसे व्यक्तियो द्वारा हुआ था जिन्होने ५वी शताब्दी के प्रारम्भ और मध्य काल म नाक्षिक आन्दोलनो म सक्रिय भाग लिया था। इसके पूर्व तो राष्ट्रनिर्माता और शिक्षक का यह सम्बन्ध और भी घनिष्ठ था। सोलन के व्यक्तित्व म विचारक शिक्षक कवि और राजनीतिक वक्ता सुन्दर सामञ्जस्य मिलता है। चौथी शताब्दी म इस प्रकार का सामञ्जस्य व्यवहार के स्तर पर सम्भव नही हो सकता था और यही शताब्दी प्लेटो की शताब्दी है। वही एक ऐसा व्यक्ति था जिसकी मानसिक शक्तियाँ इस योग्य थी कि वह इस प्रकार का काय कर सकता था और इस अवसर के लिए वह इच्छुक भी था।[1]

---

१ स्वय प्लेटो का यह विचार था कि उसका जन्म उपयुक्त अवसर के पर्याप्त समय बाद हुआ (Epist V ३२२ A)

सम्भवत उस अस्थायी और सकुचित नगर राज्य की तुलना मे भी, जिसे मेसीडोनिया के सकट के विरुद्ध डेमास्थनीज (Demosthenes) न उत्तेजित करने या प्रयास किया, हम प्लेटो के एथेन्स म रहना पसन्द न करें, फिर भी उसकी विद्वता और बौद्धिक सामर्थ्य की उपमा नही की जा सकती।

पलीपोनीशियन युद्ध के समाप्त हो जाने के पश्चात् यूनान म शान्ति की स्थापना नहीं हो सकी। विभिन्न यूनानी राज्यो म सघर्ष चलता रहा। स्पार्टा के आधिपत्य का विरोध होता रहा। केवल बल के आधार पर ही इसे स्थायी रखा जा सकता था और स्पार्टा वालो ने बल का प्रयोग भी किया। थ्रीज और कारिन्थ जो युद्ध काल म स्पार्टा के साथ थे, युद्ध के उपरान्त अपने विजता स प्रतियोगिया के विरुद्ध हो गये। युद्ध म एथेन्स को जन और धन दोनो की अपार क्षति हुई थी। विध्वस का क्रम अब भी नही रुका था। खेतो म बीजारोपण इस विश्वास के साथ नही किया जाता था कि तैयार अन्न घर तक आ सकेगा? जनसख्या म वृद्धि के साथ खाद्य-सामग्री के आयात की भी आवश्यकता हुई। ३८६ ई० पू० की शान्ति से परिस्थिति कुछ सुधरी और इस शताब्दी के अन्तिम चरणो मे कृषि सम्बन्धी विषयो का वैज्ञानिक अध्ययन करने का प्रयास भी किया गया। किन्तु क्लाइस्थनीज (Cleisthenes) की मध्यमवर्गीय क्रान्ति के परिणामस्वरूप चल सम्पत्ति की तुलना मे भूमि का मूल्य पहले ही घट गया था। इस काल म इसका मूल्य और भी कम हो गया। अस्त्रो और बतनो के उत्पादन, दासो के परिश्रम, अभिगोपन और बीमा से प्राप्त होने वाले लाभ की तुलना म भूमि स प्राप्त लाभ की मात्रा और उपयोगिता कम हो गई। इन मध्यमवर्गीय व्यवसायो के अतिरिक्त धनार्जन का सबसे सुलभ और लोकप्रिय साधन किसी समृद्ध देश की सेना म भर्ती हो जाना था। इसम तो किसी प्रकार की पूँजी की भी आवश्यकता नहीं पडती थी। किन्तु इस प्रकार स धनार्जन करने वालो की अपेक्षा ऐसे लोगो की सख्या कही अधिक थी जो न तो इतने चतुर थे और न इतने साहसी ही कि इन व्यवस्थाओ से लाभ उठा कर पर्याप्त धन पैदा कर सकते। इस प्रकार वस्तुओ के मूल्य म वृद्धि हो जाने के परिणामस्वरूप केवल वही लोग लाभान्वित हुए जो अपने निजी उत्पादन द्वारा अथवा लूटमार या पतक सम्पत्ति के रूप म आवश्यकता की वस्तुओ का सचय प्रचुर मात्रा म कर सके थे। जिनके पास इस प्रकार की वस्तुओ का अभाव था उनके लिए तो यह स्थिति और भी विपत्तिजनक सिद्ध हुई। एथेन्स म परम्परागत पद्धति द्वारा इस परिस्थिति को सुधारने का प्रयास किया गया। धनवानो पर लगाये जाने वाले करो की वृद्धि की गयी। निर्धनो को राज्य स मिलनेवाली सहायता की मात्रा बढाई गई। किन्तु धनवान और निर्धन या यूनानियो की भाषा म सक्षम और अक्षम के बीच की खाई निरन्तर चौडी ही होती जा रही थी। किसी भी उपाय से उसे पाटा नही जा सकता था। एक पीढी पूर्व अरिस्टो-

फस क सुखात नाटको म नाति और राजनीति के प्रश्नो पर होन वाले समकालीन विवाद प्रतिबिम्बित होते थे किन्तु इस काल म लिख गये उसके नाटको म इसी सामाजिक समस्या का चित्रण मिलता है। यहा नही, अरिस्टोफ़ेस न अपने एक नाटक के एक स्त्री पात्र द्वारा इस समस्या का काल्पनिक समाधान भी प्रस्तुत किया है। सुझाव है कि मनुष्यो को परस्पर सहयोग की रीति रहना चाहिए और आवश्यकता की वस्तुओ का मिल जुल कर उपभोग करना चाहिए। सभी की आय समान होनी चाहिए। ऐसा नही होना चाहिए कि कोई धनवान है तो कोई निर्धन किसी के पास आवश्यकता से अधिक भूमि है तो किसी के पास अपनी कब्र भर के लिए भी नहीं किसी के पास अनेक परिचारक हैं तो किसी के पास एक भी नही। मैं सबा के लिए एक सा जीवन चाहती हू (तभी) यह सम्भव हो सकेगा कि लोग दरिद्रता और अभाव से किसी काय के लिए न प्रेरित हो क्योकि सभी को आवश्यकता की वस्तुएँ खाद्य पेय वस्त्र और मनोरजन सभी उपलब्ध होगे।[1] यह प्रक्सागोरा (Praxagora) का कथन है जो अरिस्टोफ़ेस की महिला ससद सदस्या म से एक है। एक दूसरे सुखान्त नाटक (Plutus)[2] म अरिस्टोफ़ेस ने सम्पत्ति के वितरण के लिए इससे भी अधिक न्यायोचित सिद्धात का प्रतिपादन किया है। सम्पत्ति और निर्धनता इस नाटक के पात्र हैं। अपने पक्ष के समथन म दोनो ओर से जो तक प्रस्तुत किये जाते है उनसे यह आभास मिलता है कि तत्कालीन समाज म व्याप्त विषमता के कारण एक गभीर सामाजिक समस्या उत्पन्न हो गयी थी। राजनीतिक समस्याओ को सामाजिक समस्या के रूप म देखना तथा निर्धनता को समाज का शत्रु और विपत्ति का कारण समझना भी इसी युग में प्रारम्भ हुआ। ड्रैको (Draco) के समय से लेकर अब तक यह दृष्टिकोण नही अपनाया गया था। इस प्रकार इस युग के चिन्तन म आर्थिक पक्ष को भी प्रधानता मिली। लोगो ने यह अनुभव किया कि लक्ष्य स्पष्ट होते हुए भी भौतिक एव तकनीकी साधनो के अभाव म विशेष प्रगति सम्भव नही हो सकती। जेनोफ़ोन (Xenophon) की कृति के रूप म मानी जाने वाली पुस्तिका Ways and Means[3] से यह प्रमाणित हो जाता है कि आर्थिक समस्याओ के अध्ययन म लोगो की रुचि बढ़ रही थी उसी प्रकार जैसे Oeconomicus नामक कृति इस बात का प्रमाण है कि कृषि म लोग विशेष रुचि ले रहे थे। Ways and Means का मुख्य उद्देश्य एथेन्स को स्वावलम्बी बनाना है। इसके लिए उपयुक्त उपाय प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है कि

१ Ecclesiazusae ५९०–६०५, (लगभग ३९१ ई० पू०) से उद्धृत।
२ प्लूटोज Wealth ३८८ b c
३ या De Vectigalibus लैटिन नाम उपरोक्त का अनुवाद है।

कर-वृद्धि अथवा साम्राज्यवादी विस्तार के बिना निधनता का उन्मूलन किस प्रकार किया जा सकता है लोगों का जीवन स्तर किस प्रकार उठाया जा सकता है तथा राज्य की अतिरिक्त आय में किस प्रकार वृद्धि हो सकती है जिससे सभी प्रकार के सार्वजनिक एवं धार्मिक कार्यों के सम्पादन के लिए धन जुटाया जा सके।

पलापोनीसियन युद्ध के पश्चात् के यूनान की स्थिति का विस्तृत सर्वेक्षण यहाँ सम्भव नहीं है। इसके लिए पाठक को यूनान के इतिहास पर लिखी गई पुस्तकों का अवलोकन करना चाहिए। किन्तु इतना जानने के लिए कि राजनीतिक विचारकों के मस्तिष्क में किस प्रकार के विचार सतत आते रहे होंगे पर्याप्त कहा जा चुका है। प्लेटो की अपेक्षा आइसोक्रटीज (Isocrates) की रचनाओं में इस प्रकार की बातों का स्पष्ट उल्लेख मिलता है। उसकी रचनाओं का एक उद्देश्य यह भी था कि उसकी विचारधारा को अधिक से अधिक लोग स्वीकार करें। प्लेटो का अभिप्राय यह नहीं था। उदाहरणार्थ ३८० ई० पू० के लगभग आइसोक्रटीज ने लिखा कि प्रकृति की गति विधि में हो मानव जाति को कष्ट पहुँचाने के लिए पर्याप्त साधन हैं फिर भी हमने असाधारण प्रयत्न करके कुछ नये कष्टों को ढूँढ निकाला है जो सर्वथा अनावश्यक थे। युद्ध और गृह-युद्ध से उत्पन्न होने वाले संकट इसी श्रेणी में आते हैं। कुछ लोग तो अपने देश में ही विधिविहीन अराजकता का शिकार होकर मृत्यु को प्राप्त होते हैं, दूसरे लोग अपनी पत्नी और बच्चों के साथ विदेश में एक स्थान से दूसरे स्थान तक भटकते फिरते हैं। बहुत से लोगों को विवश होकर जीविकोपार्जन हेतु किराये का सैनिक बनना पड़ता है और अपने शत्रुओं की ओर से अपने मित्रों के विरुद्ध युद्ध करते हुए प्राण त्याग करना पड़ता है।[1] इस प्रकार हम देखते हैं कि एथिन्स जगत् की तत्कालीन स्थिति पर प्लेटो की अपेक्षा आइसोक्रटीज अधिक व्यापक दृष्टि डालता है। युद्धों के आर्थिक परिणाम तथा इनसे उत्पन्न होने वाली सामाजिक विपत्तियों के प्रति भी वह अधिक जागरूक है। किन्तु, नगर राज्य के सम्मुख उपस्थित होने वाली समस्याओं को प्लेटो अपेक्षाकृत अधिक तीक्ष्ण दृष्टि से देखता है। आइसोक्रटीज की तुलना में प्लेटो का क्षेत्र कुछ संकीर्ण है क्योंकि उसने नगर राज्य की आन्तरिक समस्याओं की ओर ही अधिक ध्यान दिया है। इसका कारण यह था कि प्लेटो की दृष्टि में ये अधिक महत्वपूर्ण एवं मूलभूत थीं। तत्कालीन स्थिति और घटनाओं का उल्लेख भी वह कम ही करता है।[2] और इसके लिए वह दो कारण सामने रखता है जो विभिन्न होते हुए भी उचित प्रतीत होते हैं।

---

१ iv (Panegyricus) १६७–८

२ यदि कभी उसने सामयिक घटनाओं का उल्लेख किया भी तो ऐसी दशा में कालक्रम का अतिरेक हो गया है।

पहला कारण तो यह है कि प्लेटो के अनुसार राजनीतिक सिद्धान्त से सम्बन्ध रखनेवाली समस्याएँ प्रत्यक्ष रूप से नीति सम्बन्धी समस्याएँ होती हैं और वे मूलतः एक-सी होती हैं। दूसरा कारण साक्रटीज़ के सम्वाद की शैली है जिसे उसने अपनी अधिकांश रचनाओं में अपनाया है। इस शैली का उचित अनुसरण करने के लिए आवश्यक था कि वह साक्रटीज़ के जीवन-काल की घटनाओं की पृष्ठभूमि में ही अपनी रचनाओं को प्रस्तुत करता। फिर भी राजनीतिक दोषों का उसने जो विश्लेषण किया है (e g Republic viii) वह युद्धोत्तर एथेन्स की स्थिति के निरीक्षण पर उतना ही आधारित है जितना कि युद्धकालीन एथेन्स के लोकतन्त्र की स्मृतियों पर।[1] प्लेटो और आइसोक्रटीज़ में एक अन्तर यह भी है कि यूनानी राज्यों में होने वाले गृह-युद्धों के परिणामों से वह आइसोक्रटीज़ अधिक चिन्तित था और यह समझता था कि साइप्रस के इवागोरस (Evagoras) एसे दक्ष किन्तु उदार शासक परिस्थिति में पर्याप्त सुधार कर सकते हैं। इसके विपरीत सोक्रटीज़ के मृत्यु दण्ड के पश्चात् सभी राजनीतिज्ञों से प्लेटो को निराशा हो गई थी। उसके अनुसार निःस्वार्थ सार्वजनिक सेवा की अत्यधिक आवश्यकता थी। इसलिए उसने एक ऐसी शिक्षा व्यवस्था का निर्माण करने का प्रयास किया जो निःस्वार्थ सेवा को इस भावना को जागृत कर सके। धनवान और निर्धन के अन्तर से वह इतना घबरा गया था कि समाज को दो राष्ट्रों में विभक्त करने की इस सम्भावना को सबसे बड़े संकट का परिचायक मानता था और इसकी आशंका मात्र से भयभीत था। राज्य की एकता को उसने जो असाधारण और प्रायः विकृत महत्त्व दिया है उसका मूल कारण यही भय है।[2] थोड़े लोगों के हाथ में राज्य की समस्त सम्पत्ति के केन्द्रीकरण का भा

---

१ देखिए G C Field, Plato and his Contemporaries अध्याय ८।

२ K R Popper (The Open Society and Enemies Vol १, Ch ५ and १०) का यह विचार कि राज्य की एकता पर प्लेटो ने जो अत्यधिक जोर दिया है वह प्राचीन जातियों में प्रचलित अवस्था की ओर लौटने की उसकी काल्पनिक आकांक्षा के कारण था निर्मूल प्रतीत होता है। 'स्वतन्त्र समाज' का विरोध करने के लिए प्लेटो पर पौपर महोदय ने जो तीर चलाये हैं उनमें से बहुत तो सही दिशा में गये हैं किन्तु बहुत से एस भी हैं जो लक्ष्य भ्रष्ट हो गये। पौपर ने जिस दुरूह और प्रायः त्रुटिपूर्ण शब्दावलि का आविष्कार किया है वह भी अनावश्यक ही प्रतीत होता है। इससे तो समस्या और भी उलझ जाती है और जिसे वे Pretentious muddle of the philosophers (p २७) कहते हैं उसकी मात्रा में और भी वृद्धि हो जाती है। आइसोक्रटीज़ (vii ५४) भी धनवानों और निर्धनों के अन्तर से चिन्तित था किन्तु उसका विचार था कि दान और औपम्य की

वह उतना ही भयावह मानता था। यही कारण है कि पूंजीवाद के सभी परिचित स्वरूपों को वह घृणास्पद मानता है। अभाव के युग में तकनीकी कौशल की माग में वृद्धि और उसके फलस्वरूप विशिष्ट क्षेत्रों में विशेष दक्षता की अभिवृद्धि अनिवार्य थी। युद्ध विज्ञान के क्षेत्र में तो इस प्रकार की विशेष दक्षता में पर्याप्त वृद्धि हुई। प्लेटो और जनोफन दोनों की रचनाओं में यह परिलक्षित होता है। सेराक्यूज के डायोनीसियस प्रथम (Dionysius) ने अपने जीवन और कार्यों से यह उदाहरण उपस्थित कर दिया था कि कुशल सामरिक कुलीनतन्त्र अव्यवस्था और अराजकता को समाप्त करने तथा सुव्यवस्था और सुशासन स्थापित करने में समर्थ हो सकता है। 'शक्तिशाली व्यक्ति' के भामक सिद्धान्त को पुनर्जीवित करने तथा एक व्यक्ति के नेतृत्व में लोगों की आस्था उत्पन्न करने में भी डायनीसियस के उदाहरण ने सहायता दी। विशाल राज्यों की तुलना में अपने को निर्बल समझने वाले छोटे राज्यों ने सघ और सगठन बनाना प्रारम्भ किया।

ई० पू० की चौथी और तीसरी शताब्दियों में शासन के सम्बन्ध में प्रचलित दो धारणाओं—नगर राज्यों के सघ अथवा लीग की धारणा तथा एकाधिकारी शासक में आस्था के—बारे में दो सकेत यहां मिलते हैं। जहा तक सघ की धारणा का प्रश्न है राजनीतिक विचारकों ने इस धारणा के विकास में अल्पमात्र भी योग नहीं दिया। जैसा कि पहले कहा जा चुका है, अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं की ओर यूनानी विचारकों का ध्यान केवल युद्धकाल में ही जाता था, साधारण समय में नगर राज्य की आन्तरिक समस्याएँ हो उनके अध्ययन और चिन्तन का मुख्य विषय हुआ करती थीं। अत कई राज्यों के सघ की धारणा के प्रति विचारकों की उपेक्षा यूनानी राजनीतिक दर्शन की प्रवृत्ति के अनुकूल ही थी। किन्तु यह अत्यन्त दुर्भाग्य का विषय है कि हम इस प्रकार के प्रश्नों पर, जैसे—'व्यक्तिगत राज्यों के स्वायत्त की रक्षा करते हुए पारस्परिक सहायता और सुरक्षा के लिए कई राज्यों को एकता के सूत्र में किस प्रकार बाधा जा सकता है?' किसी यूनानी राजनीतिक दार्शनिक के विचार नहीं उपलब्ध हो सकते हैं। तथापि, सूक्ष्म और बुद्धि-सम्पन्न व्यक्ति इस प्रकार के प्रश्नों पर विचार कर रहे थे और सभावित उत्तरों की उपयोगिता का मूल्याकन करने का प्रयास भी कर रहे थे। एक उत्तर तो यह था कि प्रत्येक राज्य के नागरिकों को सघ के अन्य राज्यों की नागरिकता भी प्राप्त हो, किन्तु प्रत्येक नगर राज्य अपनी व्यवस्था का प्रबन्ध स्वय करे। इस सिद्धान्त को

पुरातन प्रणाली इस दोष को दूर कर सकती है। प्लेटो द्वारा प्रस्तुत समाधान के सम्बन्ध मे हमारा जो भी विचार हो किन्तु इतना तो मानना ही पड़ेगा कि आइसोक्रटीज को अपेक्षा इस समस्या को वह अच्छी तरह समझ सका था।

समान नागरिकता (आइसोपोलिटिया) की सत्ता दी गई। संघ के एक दूसरे स्वरूप की भी कल्पना की गई जिसमें प्रत्येक व्यक्ति अपने नगर राज्य का सदस्य होने के साथ ही एक वृहत् संस्था का भी सदस्य होता था और इस वृहत संस्था का संगठन विभिन्न राज्यों के संघ के रूप में किया जाता था। इस प्रकार के संघ को सुम्पॉलिटिआ कहा जाता था। यूनान के विभिन्न नगर राज्यों ने पारस्परिक सुरक्षा और सहायता के लिए विभिन्न प्रकार के संघों का संगठन किया किन्तु इस प्रकार के संघ स्थायी नहीं हो सके। कारण यह था कि इस प्रकार के संघों से सुरक्षा की अपेक्षा करनेवाले राज्य प्रायः छोटे और निर्बल हुआ करते थे और विशाल एवं शक्तिशाली राज्य निर्बल राज्यों के इन संघों के प्रति शंकालु रहते थे और पारस्परिक सहयोग के इन प्रयासों को विफल कर देते थे। ऐसी दशा में यह आशा नहीं की जा सकती है कि राजनीतिक दार्शनिकों का समर्थन प्राप्त कर लेने मात्र से ये संघ सुरक्षित रह सकते। इस प्रकार के प्रयोगों के विरुद्ध सुविधानुसार नगर राज्यों की स्वाधीनता और स्वायत्तता के प्राचीन सिद्धान्त की सहायता ली जा सकती थी। यह एक ऐसा सिद्धान्त था जिसे फारस के सम्राट[1] ने भी सिद्धान्ततः स्वीकार किया था किन्तु किसी एक व्यक्ति, द्वारा जो अपने देशवासियों का योग्य और सफल नेता होता था राज्य के संचालन और शासन के विरुद्ध इस प्रकार की और औपचारिक एवं सैद्धान्तिक आपत्ति नहीं की जा सकती थी। अत्याचारी शासकों का युग समाप्त हो चुका था। अव्यवस्था और अराजकता का अन्त करने के लिए दृढ़ एवं सशक्त व्यक्ति की आवश्यकता का अनुभव किया जाने लगा था। साहस और योग्यता से युक्त व्यक्ति के लिए यह उपयुक्त अवसर था। सभा की धारणा के विपरीत एक व्यक्ति द्वारा शासन की यह धारणा इस शताब्दी की अधिकांश राजनीति विषयक कृतियों में व्याप्त दिखाई देती है। राजनीतिक चिन्तन की सामान्य प्रवृत्ति ने संघ की धारणा की अपेक्षा एक व्यक्ति द्वारा शासन की इस धारणा को सहज आत्मसात किया और राजनीतिक विचारकों द्वारा इसकी ओर सम्भवतः आवश्यकता से अधिक ध्यान दिया गया। किन्तु इसके विपरीत यह भी महत्त्वपूर्ण है कि व्यवहार में विशाल एवं सुसंगठित राज्यों में एक व्यक्ति के शासन की आकांक्षा किंचित मात्र भी नहीं दृष्टिगोचर होती है। स्पार्टा और एथन्स के युद्ध के दौरान में ही सुदूर प्रदेशों में आर्केलाउस ने मसीडोनिया में युद्धकालीन व्यवस्था स्थापित करने की दशा में अपने सभी पूर्वजों से अधिक कार्य किया। सेराक्यूज़ में डायोनीसियस प्रथम ने कार्थेज के आक्रमणकारियों को पूर्वी सिसली से दूर रखा। किन्तु इन उदाहरणों का प्रभाव व्यावहारिक राजनीति का

---

१ महान सम्राट की संधि अथवा एंटालसिडस (Antalcidas) की संधि ३८७–८६ ई० पू० की धाराओं द्वारा।

अपेक्षा राजनीतिक दर्शन पर अधिक पडा। जनोफन के Hiero और आइसोक्रटीज के 'Evagoras Essays' में 'उदार निरंकुश शासक' (benevolent despot) के सिद्धान्त का सुन्दर प्रतिपादन मिलता है और साधारण यूनानी इस तरह से प्रभावित भी हो जाता है किन्तु वास्तव में वह यही विश्वास करता था कि एक व्यक्ति का शासन अन्य लोगों के लिए ही अच्छा है। इस समय भी यदि एथेन्स में कोई दूसरा एल्सीबियाडीज प्रगट होता तो सम्भवतः उसकी भी वही गति होती, जो एल्सीबियाडीज की हुई थी। निरंकुशता के प्रति एथेन्सवासियों की पुरानी आशंका, ईर्ष्या और अद्ध अपराध की भावना से युक्त प्रशंसा और अविश्वास का पुराना सम्मिश्रण आज भी राजनीतिक सिद्धान्तों की अपेक्षा कहीं अधिक प्रबल होता और इस एल्सीबियाडीज को भी अपने प्राणों की रक्षा हेतु एथेन्स छोड़ कर अन्यत्र भागना पड़ता। किन्तु एल्सीबियाडीज की मृत्यु हो चुकी थी और अब उससे किसी प्रकार की आशंका की सम्भावना नहीं थी। ऐसी स्थिति में उसकी प्रशंसा करने तथा उसकी स्मृति को एक मत का रूप देने की प्रवृत्ति का विकास हुआ और सोक्रटीज की भाँति वह भी विवाद का विषय बन गया तथा तत्कालीन भाषणों और निबन्धों में सोक्रटीज की ही भाँति उसकी भी चर्चा होने लगी। सोक्रटीज का वह सन्निकट मित्र रह चुका था, इस कारण एक के समर्थन में जो बातें कही जाती थीं उनसे दूसरे का भी समर्थन होता था। इस प्रकार यदि इस शताब्दी में असाधारण प्रतिभा और योग्यता सम्पन्न व्यक्तियों से आशंकित रहने की 'लोकतन्त्रात्मक' भावना में कुछ कमी आ गई थी तो उसका एक कारण यह भी था कि ऐसे प्रतिभा सम्पन्न व्यक्तियों का इस युग में अभाव था।

चौथी शताब्दी ई० पू० के लेखकों के विचारों को समझने के लिए उस समय की आर्थिक एवं ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को कितना ही महत्त्व क्यों न दिया जाय फिर भी यह मानना पड़ेगा कि इन लेखकों के चिन्तन को प्रधानतया पहले के विचारकों ने ही प्रभावित किया जिनकी चर्चा हम इस पुस्तक के प्रारम्भिक अध्यायों में कर चुके हैं। प्राटगोरस से लेकर सोक्रटीज तक के चिन्तन से इस शताब्दी के लेखक विशेष रूप से प्रभावित हुए। थुसीडाइडीज का प्रभाव अभी तक स्पष्ट नहीं दिखाई देता है। इतिहास और राजनीति के जिस सम्बन्ध पर उसने जोर दिया था उसे अभी तक लोग नहीं सीख पाये थे।[1] किन्तु सोक्रटीज का प्रभाव सर्वत्र दिखाई देता है। इस समय के एथेन्स में प्रचलित सभी विचारधाराओं पर सोक्रटीज का गहरा प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। Cynic और Cyrenaic विचारकों पर भी सोक्रटीज का उतना ही प्रभाव पडा जितना कि

---

१ आलंकारिक भाषा-शैली के क्षेत्र में थुसीडाइडीज का प्रभाव अवश्य पडा। देखिए W Jaeger, Paideia iii, पृष्ठ १०२।

Academy, Porch और Peripatos पर। चौथी शताब्दी ई० पू० के प्रारम्भ में कई सोक्रटीज सम्वादों और कुछ सोक्रटीज विरोधी रचनाओं का सृजन हुआ। इनमें से केवल प्लेटो और जनोफन की रचनाएँ तथा एस्कीन्स (Aeschines Socraticus और एण्टास्थीनीस (Antisthenes) की रचनाओं के कुछ अंश ही सुरक्षित रह सके। किन्तु इन लेखकों में से किसी ने भी आचार्य (सोक्रटीज) का पूर्णानुसरण नहीं किया। सम्भवतः इनमें से कोई भी उस विलक्षण और रहस्यमय व्यक्तित्व को भली भाँति नहीं समझ सका यहाँ तक कि प्लेटो भी। और प्लेटो ने जहाँ सोक्रटीज से अत्यधिक ग्रहण किया वहाँ उसने सोक्रटीज को विचार प्रणाली को बहुत कुछ दिया भी। सोक्रटीज के विचारों में कुछ जोड़ने का सामर्थ्य भी केवल उसी में था। फिर भी हमें प्रारम्भिक प्रभावों को नहीं भूलना चाहिए। पुरातन काल से चले आने वाले प्रश्न कि 'सर्वश्रेष्ठ राज्य के क्या लक्षण हैं? अथवा कौन सा संविधान सर्वश्रेष्ठ है?' —अब भी प्रमुख प्रश्न था यद्यपि इस प्रश्न की भाषा में थोड़ा परिवर्तन आ गया था। यह प्रश्न करने के स्थान पर कि—सर्वश्रेष्ठ आदर्श राज्य की क्या विशेषता है?—इस युग के मनुष्य यह प्रश्न करते थे कि—सम्भाव्य सर्वश्रेष्ठ राज्य के क्या लक्षण हैं? एक शताब्दी पूर्व इन दोनों प्रश्नों में किसी प्रकार के अन्तर का आभास नहीं लग सकता था। स्वतन्त्रता के संघर्ष में सफलता प्राप्त की जा चुकी थी सब कुछ सम्भव प्रतीत होता था सर्वश्रेष्ठता के आदर्श को प्राप्त करने की आशा की जा सकती थी। किन्तु ई० पू० की चौथी शताब्दी में यूनानी जगत में आदर्श और सम्भाव्य के बीच की खाई विस्तृत हो गई थी। इसके साथ ही अब यह भी सम्भव नहीं था कि लोग हेरोडोटस के फारसवालों के सम्वाद में प्रतिपादित एक कुछ और बहुत व्यक्तियों के शासन के किसी एक रूप को चुन कर सन्तुष्ट हो जाते। जैसाकि हम अगले पृष्ठों में देखेंगे प्लेटो ने भी कई बार संविधानों का वर्गीकरण किया है। इसके अतिरिक्त एक शताब्दी के राजनीतिक अनुभव तथा पाँचवीं शताब्दी के शिक्षकों के कार्यों तथा मनुष्य के सम्बन्ध में उनके अध्ययनों के परिणामस्वरूप यह स्पष्ट हो गया था कि शासन का कोई भी रूप क्यों न हो इसकी सफलता इसकी अच्छाई और बुराई शासन का संचालन करनेवाले व्यक्तियों के वैयक्तिक गुणों राजनीतिक कौशल (एरटा) पर अधिक निर्भर करती है। क्या यह राजनीतिक कौशल (श्रेष्ठता) अर्जित किया जा सकता है? इसे किस प्रकार अर्जित किया जा सकता है? और कौन से व्यक्ति इसे अर्जित कर सकते हैं?—ऐसे प्रश्न थे जिनका व्यावहारिक महत्त्व अत्यधिक था और प्लेटो आइसाक्रटीज और जनोफन को परस्पर विभिन्न विचार रखते हुए भी नागरिकों और राजनीतिज्ञों की शिक्षा की समस्या पर विचार करने के लिए बाध्य होना पड़ा।

प्लेटो का जन्म लगभग ४२७ ई० पू० हुआ। इस प्रकार उसके जीवन का

निर्माण काल यूरीपाइडीज अरिस्टोफेन्स और पलीपोनीशियन युद्धा के समय के एथन्स म व्यतीत हुआ। किन्तु प्लटो की रचनाओ स यह प्रतीत होता है कि जिस युद्ध न थुसीडाइडाज का इतना प्रभावित किया उसका प्लेटो के ऊपर विशष प्रभाव नहा पडा और उस युद्ध से उसन कोई भी शिक्षा नही ग्रहण की। इतना तो निश्चित है कि अपन बाल्यकाल म उसन मेलास (Melos) के दुभाग्य, जिसला के विरुद्ध एथन्स के अभियान तथा इसके विनाशकारी परिणाम के बार म अवश्य जानकारी प्राप्त की होगी। किन्तु युवावस्था म उसके ऊपर सबसे गहरा प्रभाव सोक्रटीज की मित्रता का और अपन परिवार के लोगा का ही पडा। अपन परिवार से प्राप्त प्रभाव के फलस्वरूप वह सक्रिय राजनीति म भाग लन को उत्सुक था और सोक्रटीज का उदाहरण उसे राजनीति स पृथक रहन को बाध्य करता था। यह द्वन्द्व उसके जीवन पयन्त चलता रहा। उसकी प्रतिभा असाधारण था। यहा हम एक राजनीतिक दार्शनिक के रूप म ही उसका स्मरण कर रहे है किन्तु वह कुशल कवि नाटककार गणितज्ञ कहानीकार रहस्यवादी, आध्यात्मिक राजनीतिज्ञ और धमशास्त्री भी था अथवा हो सकता था। वास्तव म, बौद्धिक एव कलात्मक क्षत्र म वह इतिहासकार के अतिरिक्त क्या नहीं हो सकता था? मानव इतिहास की घटनाएँ उनके शुद्ध और निष्पक्ष विवरण को थुसीडाइडाज सबसे अधिक महत्त्वपूण समझता था। बौद्धिक योग्यता म उसके एकमात्र समकक्ष प्लटो के लिए इस प्रकार का विवरण किञ्चित्मात्र महत्त्व नहीं रखता था। प्लटो के लिए तो एतिहासिक सत्य नाम का कोइ वस्तु ही न थी। किन्तु यदि तथ्यो और घटनाओ का कोई महत्त्व नहीं है तो समय का महत्त्व तो और भी नगण्य हो जाता है। एसी दशा म केवल शाश्वत हो वास्तव म महत्त्वपूण रह जाता है।[1] प्लटो क पूव भी कुछ लेखको न मानव जीवन को घटनाक्रम के विवरण के रूप म न देख कर 'Sub specie aeternitatis' के रूप म देखने का प्रयास किया था। किन्तु एसकीलस (Aeschylus) और साफाक्लीज (Sophocles) कवि थे। प्लटो ने कवि और नाटककार की बहिर्दृष्टि को दार्शनिक और रहस्यवादी की अन्तर्दृष्टि प्रदान की। जीवन प्रारम्भ से ही अदृश्य और शाश्वत तथा स्वगलोक म स्थित परम यथाथ म उसका विश्वास हो गया था और इसके साथ ही उसका यह भी विश्वास था कि सत्य की प्राप्ति के लिए बौद्धिक और भावनात्मक दोनो स्तर पर प्रयास अनिवाय ह। जसे जसे समय व्यतीत होता गया उसके ये विश्वास और भी दृढ होते गय और उसके व्यक्तित्व के अग बन गय। उसके राजनीतिक विचारा पर भी इन विश्वासो का गहरा प्रभाव पडा।

---

१ उदाहरण के लिए Repub X ६०४ C और Laws vii ८०३ B देखिए।

अपने जीवन के अन्तिम दिनों में प्लेटो ने कई पत्र लिखे। इनमें से कुछ ऐसे भी हैं जो तात्कालिक होने के अतिरिक्त उसके अपने जीवन की घटनाओं का सच्चा रूप प्रस्तुत करने तथा उनका औचित्य सिद्ध करने के अभिप्राय से लिखे गये हैं। इस से कम इन पत्रों में प्लेटो पहली बार यह स्वीकार करता है कि वह वास्तविक घटनाओं का उल्लेख कर रहा है। इन पत्रों का वह अंश जो उसकी आत्मकथा से सम्बन्धित है उसके जीवन के सम्बन्ध में उपयोगी सूचना ही नहीं देता है अपितु उसके राजनीतिक विचारों पर प्रकाश भी डालता है। सातवें पत्र के प्रारम्भ के एक अनुच्छेद में वह अपने प्रारम्भिक जीवन तथा राजनीति के प्रति अपने दृष्टिकोण पर सॉक्रेटीज़ का मृत्यु के प्रभाव के बारे में लिखता है। इसलिए यद्यपि इसका उद्धरण प्राय मिलता है फिर भी यहाँ सम्पूर्ण अनुच्छेद प्रस्तुत किया जा रहा है —

युवावस्था में मेरे भी विचार उसी प्रकार के थे जैसे बहुत से अन्य लोगों के। मेरा विचार था कि वयस्कता प्राप्त करते ही स्वतन्त्र रूप से अपना जीवन निर्वाह कर सकूँगा, अपने देश की राजनीति में भाग लूँगा। और कुछ ऐसा हुआ भी कि घटनाओं ने मेरा साथ दिया। उस समय (४०४ ई० पू०) के संविधान से बहुत लोग असंतुष्ट थे। समय ने करवट बदली और शासन सूत्र ५१ व्यक्तियों के हाथ में आ गया—एथेन्स में ११ और पिरयस (Piraeus) में १० व्यक्तियों को व्यापार और स्थानीय समस्याओं की देखभाल करने का उत्तरदायित्व सौंपा गया और ३० व्यक्तियों को समस्त राज्य के शासन का सर्वाधिकार दिया गया। इन तीस व्यक्तियों में मेरे कई मित्र और सम्बन्धी भी थे और उन्होंने मुझे तुरन्त आमन्त्रित किया कि मैं उनका हाथ बटाऊ। उन्होंने मुझसे कहा कि मेरे लिए यह सर्वथा उपयुक्त कार्य था और मुझे भी इतना अनुभव नहीं था कि मैं उनकी इस बात पर सन्देह करता। मैंने सोचा कि नगर राज्य के जीवन से अन्याय को हटाने तथा न्याय की स्थापना करने के लिए ही उन्होंने शासन सूत्र को अपने हाथों में लिया है और इस उद्देश्य को सम्मुख रखकर ही वे शासन का संचालन करेंगे। इसलिए उनके कार्यों की ओर मैंने विशेष ध्यान दिया—यह जानने के लिए कि वे कैसा कार्य करते हैं। थोड़े ही समय में मुझे ज्ञात हो गया कि इनके शासन की तुलना में तो पहले का शासनकाल स्वर्ण-युग था। इनके अपराधों में से एक अपराध यह था कि इन्होंने मेरे वयोवृद्ध मित्र सॉक्रेटीज़ को, जिसे मैं अपने समय का सबसे नेक और धर्मभीरु व्यक्ति कहने में तनिक मात्र भी संकोच नहीं करूँगा, कुछ लोगों के साथ एक अन्य नागरिक को प्राणदण्ड देने के अभिप्राय से बलपूर्वक बन्दी बनाने के लिए भेजा सम्मिलित कर लिया (Leon of Salamis p. 90)। उनका उद्देश्य यह था कि सॉक्रेटीज़ को उसकी इच्छा के विरुद्ध भी वे अपने कुकृत्यों का भागी बनाए। किन्तु सॉक्रेटीज़ ने इस आदेश का पालन करना अस्वीकार कर दिया। किसी भी प्रकार की यातना को शीघ्रातिशीघ्र सहन करने

के लिए वह तयार था, किन्तु विधि के विरुद्ध कार्य वह नहीं कर सकता था। इस प्रकार के तथा अन्य घृणित अपराधों को देखकर मैं क्षुब्ध हो गया और शीघ्र ही इन दुखद घटनाओं के उत्तरदायित्व से मुक्त हो गया। तीस व्यक्तियों का यह शासन भी अधिक समय तक नहीं चल सका और उसका अन्त भी शीघ्र ही हुआ। राजनीतिक जीवन में भाग लेने की मेरी सुषुप्त अभिलाषा पुनः जगी और राजनीति की ओर मैं आकृष्ट भी हुआ, यद्यपि यह शनैः शनैः ही हुआ। नय शासन का अस्तित्व अनिश्चित था, दोषारोपण के लिए पर्याप्त अवसर भी था। कोई आश्चर्य की बात नहीं कि इस परिवर्तन के परिणामस्वरूप प्रतिशोध की भावना भी जागृत हुई और कुछ लोगों को इस भावना का शिकार भी होना पड़ा। किन्तु पुनर्स्थापित शासन के सत्ताधारियों ने सामान्यतया औचित्य और औदार्य का प्रदर्शन किया। किन्तु मेरे मित्र सॉक्रेटीज के विरुद्ध कुछ प्रभावशाली व्यक्तियों ने न्यायालय के समक्ष एक ऐसा अभियोग प्रस्तुत किया जो सर्वथा अनुचित था और उस व्यक्ति के लिए तो विशेषरूप से अनुपयुक्त था। इसे भाग्य की विडम्बना ही कहा जा सकता है। इन लोगों ने उस पर अधार्मिक होने का लांछन लगाया। न्यायालय ने उसे अपराधी घोषित किया और मृत्यु-दण्ड दिया। यह वही सॉक्रेटीज था जिसने ३० व्यक्तियों के शासनकाल में इन्हीं नये शासकों के एक मित्र को उस समय असंवैधानिक ढंग से गिरफ्तार करना अस्वीकार कर दिया था जब ये निर्वासित अवस्था में थे।

'इन तथ्यों की मैंने पुनर्परीक्षा की, सार्वजनिक जीवन में भाग लेने वाले व्यक्तियों, विधि और नैतिकता के बारे में विचार किया। इन विषयों पर मैंने जितना ही अधिक विचार किया तथा जैसे जैसे मेरी अवस्था बढ़ती गई राज्य के कार्यों का सम्यक् (औचित्य) संचालन मुझे उतना ही कठिन प्रतीत होने लगा। इसका प्रथम कारण तो यह था कि दृढ़ मित्रों और स्वामिभक्त समर्थकों के बिना अकेले कुछ भी करना सम्भव नहीं था। एक ऐसे राज्य में जहां का जीवन परम्परागत नैतिकता और आचरण सम्बन्धी मान्यताओं से दूर होता जा रहा था ऐसे मित्रों की संख्या कम ही थी और नये मित्र आसानी से नहीं बनाये जा सकते थे। दूसरा कारण यह था कि विधि और नैतिकता के सभी नियमों के प्रति अवहेलना की भावना इतनी व्यापक हो रही थी कि अपने चारों ओर अव्यवस्था और नैतिक ह्रास की इस विभीषिका को देख कर मैं हतप्रभ हो गया। राजनीति में सक्रिय भाग लेने का मेरा सारा उत्साह जाता रहा और मेरी समझ में नहीं आता था कि मैं क्या करूँ। यद्यपि यह जानने का प्रयास तो मैं करता रहा कि इस परिस्थिति को तथा राजनीति के समस्त कार्यकलापों को सुधारने का क्या ढंग हो सकता है किन्तु सक्रिय राजनीति में भाग लेने के अपने निर्णय को कुछ समय के लिए स्थगित कर दिया। अन्त में मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि सभी आधुनिक राज्यों का संविधान और शासन असन्तोषजनक है, उनकी विधि-व्यवस्था और प्रथाओं में

सुधार करना प्रचुर साधन और असाधारण सौभाग्य के बिना असम्भव है। प्रत्येक राज्य की यही दशा थी विकल्प रूप में भी वहां कोई अच्छा संविधान और शासन दृष्टिगोचर नहीं था। अतः बाध्य होकर मुझे इस निष्कर्ष को स्वीकार करना पड़ा कि इस समस्या का समाधान तभी हो सकता है जब सही शिक्षा को ही राज्य और व्यक्तियों के सम्यक आचरण का आधार माना जाय। इसके साथ ही मुझे इस सत्य का भी आभास हुआ कि राष्ट्रों को अपने संकट से उस समय तक मुक्ति नहीं मिल सकती है जब तक राज्य का संचालन ऐसे लोगों के हाथ में नहीं आता जो वास्तव में सही शिक्षा प्राप्त कर चुके हैं अथवा जब तक किसी दैवी संयोग से राज्यों के सत्ताधारी व्यक्ति स्वतः वास्तविक शिक्षा प्राप्त नहीं कर लेते हैं।[1]

अपने प्रारम्भिक जीवन के द्वन्द्वों पर दृष्टिपात करते हुए वृद्ध प्लेटो की यह समीक्षा प्रस्तुत करता है। सक्रिय राजनीतिक जीवन के प्रति आकर्षण और विकर्षण दोनों प्रवृत्तियों की स्मृति इस समय भी स्पष्ट है। किन्तु आचार्य सोक्रेटीज का चित्र कुछ धुंधला पड़ गया है। कोई एक वृद्ध व्यक्ति के लिए वृद्धावस्था में अर्जित ज्ञान को प्रारम्भिक अवस्था में अर्जित विचार और ज्ञान के रूप में प्रस्तुत करना सुगम है। परन्तु उपयुक्त पत्र में प्लेटो ने सम्भवतः ऐसा नहीं किया है। उसने अपने जीवन की प्रारम्भिक अवस्था में ही यह अनुभव कर लिया था कि भावी व्यावहारिक सुधारक के लिए यह शिक्षा अपर्याप्त है परन्तु दर्शन भी उपयुक्त नहीं है यह तो इस कथन को और भी विरोधाभासी बना देता है। आइसोक्रेटीज तथा कई अन्य विचारकों ने भी इस सिद्धान्त को स्वीकार किया किन्तु दार्शनिक शिक्षा के तत्वों के सम्बन्ध में वे एकमत नहीं हो सके। अत्यन्त आवश्यक है कि वह पृथक न रह कर अपने नेतृत्व में काम करनेवाले सहयोगियों के एक दल का संगठन करे। इसी अवस्था में उसने यह भी जान लिया था कि अव्यवस्थित और अनिश्चित नैतिकता अव्यवस्थित और अनिश्चित राजनीति को जन्म देती है। ऐसी दशा में उपयुक्त शिक्षा परमावश्यक हो जाता है। उपयुक्त पत्र में वर्णित मन:स्थिति में ही वह कुछ समय के लिए एथेन्स से मेगारा (Megara) चला गया और वहाँ यूक्लाइडीज (Eucleides) के पास कुछ समय व्यतीत किया। यूक्लाइडीज स्वयं

---

[1] प्लेटो का यह कथन कि शिक्षा अपर्याप्त है परन्तु दर्शन भी उपयुक्त नहीं है। यह तो इस कथन को और भी विरोधाभासी बना देता है। आइसाक्रेटीज तथा कई अन्य विचारकों ने भी इस सिद्धान्त को स्वीकार किया किन्तु दार्शनिक शिक्षा के तत्वों के सम्बन्ध में वे एकमत नहीं हो सके विचारकों ने भी इस सिद्धान्त को स्वीकार किया किन्तु दार्शनिक शिक्षा के तत्वों के सम्बन्ध में वे एकमत नहीं हो सके। cp p 77 n 2 and see further below

दार्शनिक और सम्वाद-लेखक था और यह अनुमान लगाया जा सकता है कि सोक्रटीज के सम्बन्ध म नाटच रेखा चित्रा का रचना प्लटो ने इसी समय प्रारम्भ की। किन्तु मेगारा म उसके निवास की अवधि के बारे म हम निश्चित सूचना नहीं मिलती है। फिर भी, उसके साहित्यिक काय-कलाप का प्रथम काल ३९९ ई० पू० म सोक्रटीज की मृत्यु के पश्चात और ३८७ ई० पू० की उसकी यात्राओ के मध्य निर्धारित किया जा सकता है। ३८७ ई० पू० के कुछ ही समय बाद उसने अकादमी (Academy) की स्थापना की। इस यात्रा म वह मिस्र तथा दक्षिण इटली भी गया और उसके भावी जीवन एव राजनीतिक विचारो की दृष्टि से इस यात्रा का परिणाम महत्वपूर्ण सिद्ध हुआ। सराक्यूज म उसकी भेंट महान डायोनीसियस प्रथम (Dionysius) और उसके सम्बन्धी डायोन (Dion) से हुई। प्लटो के सेराक्यूज आने के पूर्व ही डायोनीसियस न अपने कार्यों द्वारा पर्याप्त ख्याति प्राप्त कर रखी थी किन्तु प्लटो को वह प्रभावित नही कर सका। हा उसके सम्बन्धी डायोन स उसका जो परिचय हुआ उसने शीघ्र ही मित्रता का रूप धारण कर लिया। टरटम (Tarentum) म वह आर्कीटास (Archytas) से मिला जो अपने नगर का शासक होने के साथ साथ पाइथागोरसीय दर्शन का प्रकाण्ड विद्वान भी था। राजनीतिक सत्ता और दार्शनिक शिक्षा के इस सयोजन से प्लटो अवश्य प्रभावित हुआ होगा क्योंकि स्वय पाइथागोरस न जिस प्रकार की भी राजनीतिक शिक्षा दी हो (अध्याय २ देखिए) अपने समकालीन पाइथागोरसवादियो को प्लटो महान आदर की दृष्टि से देखता था और उनकी कुछ महत्वाकाक्षाओ और विश्वासो को स्वीकार भी करता था। इसलिए यह खेद का विषय है कि उसने टरटम के इस शासन का, शासक और गणितज्ञ के अद्वितीय सयोजन का कोई भी विवरण नही प्रस्तुत किया। तथापि यह निष्कर्ष युक्तिसगत प्रतीत होता है कि इस शासन का उस पर अच्छा प्रभाव पडा, क्योंकि एथेन्स लौटते ही उसने एक शिक्षालय की स्थापना की जो शीघ्र ही योग्य और व्यवहार-कुशल राजनीतिज्ञो को शिक्षित करने के लिए विख्यात हो गया इस प्रकार प्लटो की अकादमी के नाम से विख्यात सस्था का जन्म हुआ। वास्तव म, इस नयी सस्था और पाइथागोरस की पुरानी बिरादरी म कुछ समानता भी थी। यह भी धार्मिक आधार पर स्थित थी, इसके काय-कलाप Muses के एक सम्प्रदाय के अन्तर्गत आते थे और गणित को आधारभूत महत्व का विषय समझा जाता था। इस अकादमी का अस्तित्व १००० वर्षों तक अक्षुण्ण बना रहा, यद्यपि अन्तिम निर्देशको के नेतृत्व म इसका राजनीतिक महत्व कुछ कम हो गया। किन्तु, अकादमी की स्थापना के पश्चात् कुछ वर्षों तक विभिन्न प्रदेशो से पर्याप्त सख्या म विद्यार्थी इस आशय स आते रहे कि व प्लटो से वह प्राप्त कर सकेंगे जो उनके पूर्वज पाइथागोरस तथा अन्य समकालीन दार्शनिको स प्राप्त करना चाहते थे, अर्थात ऐसी शिक्षा जो उन्हे राजनीतिक महत्वा-

प्लटो की रचनाओं के मूल और सोक्रटीज के मुख से निकल हुए शब्दों म क्या सम्बन्ध है—इस विषय पर निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता है। किन्तु चूंकि एक पूवगामी अध्याय में हमने नगर राज्य के अध्ययन म सोक्रटीज के योगदान का मूल्यांकन करने का प्रयास किया था इसलिए यह उपयुक्त प्रतीत होता है कि हम सोक्रटीज के उन विचारों का पुन उल्लेख करें जिनका प्रयोग प्लटो ने अपने सम्वादों की रचना म किया। यद्यपि सोक्रटीज के विचारों और दृष्टिकोण का उल्लेख पर्याप्त सावधानी के साथ ही होना चाहिए, फिर भी राजनीतिक दशन पर सोक्रटीज के प्रभाव को समझने की दृष्टि से यह उपयोगी होगा। सबसे पहले तो यह उल्लेखनीय है कि प्लटो ने भी सोक्रटीज के इस विश्वास को अंगीकार किया कि सव व्यापी ज्ञान और सवव्यापी 'सम्यक' नाम की कोई वस्तु है और वयक्तिक जीवन अथवा नगर राज्यों के प्रबन्ध म अच्छाई के अभाव का मुख्य कारण ज्ञान का अभाव होता है। राजनीतिज्ञों म उसने सवत्र ज्ञान का अभाव ही पाया यद्यपि राजनीतिज्ञ का सवप्रथम योग्यता ज्ञान ही है विशेष कर अच्छे और बुरे का ज्ञान। प्लटो के अनुसार यह ज्ञान विशिष्ट परिस्थितियों और समस्याओं से सम्बन्धित सम्यक मत तक ही नहीं सीमित है। वास्तविक ज्ञान तो व्यापक सत्य और सम्यक का ज्ञान होगा 'दी टिकाइओन' का ज्ञान। जस जस समय व्यतीत होता गया उसका यह विश्वास दृढ होता गया कि 'राजनीतिक दशन के अन्तगत ज्ञान शास्त्र का समावेश करके सोक्रटीज ने जो काय किया वह उचित था। उसने ज्ञान के प्रकार और अवस्थाओं के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया और शिवत्व के ज्ञान को परम ज्ञान बताया। प्लटो और उसके पश्चात अरिस्टाटल भी सोक्रटीज की ही भाँति नगर राज्य (पोलिस) को स्वाभाविक मानते थे मानव-स्वभाव के अनुसार पशु की प्रकृति के अनुसार नहीं। सोक्रटीज के इस दृष्टिकोण को भी प्लटो ने स्वीकार किया कि अन्याय करने की अपेक्षा अन्याय का सहन करना कहीं अधिक श्रेष्ठ होता है क्योंकि इससे मनुष्य को कम हानि होती है। अन्याय का सहन करने से मनुष्य के शरीर मात्र को ही क्षति पहुचती है उसके मन अथवा आत्मा को नहीं और मन एव आत्मा मानव शरीर के एसे अग हैं जिनकी रक्षा उन्ह सदव करनी चाहिए। अन्याय सहन करने की अपेक्षा अन्याय करने का परिणाम यह होता है कि शारीरिक क्षति से तो मनुष्य सम्भवत बच जाता है किन्तु मन और आत्मा को अनिवाय रूप से क्षति पहुचती है। इस दृष्टिकोण को स्वीकार कर लेने के परिणामस्वरूप जो प्रश्न उठता है वह नीति शास्त्र का आधारभूत प्रश्न है और जसा कि हमने अध्याय ५ म देखा इस प्रश्न पर प्लटो सोक्रटीज से पृथक दृष्टिकोण रखता है। प्रश्न है कि इस दृष्टिकोण को स्वीकार कर लेने के उपरान्त सत्ता के सम्मुख व्यक्ति को किस अश तक आत्म-समपण करना चाहिए और यह सत्ता किस प्रकार की होगी? इसी प्रश्न पर सोक्रटीज ने भी प्रोटेगोरस

से पृथक् दृष्टिकोण अपनाया था। नैतिक सत्ता का अधिकारी नगर-राज्य (पॉलिस) है अथवा व्यक्ति या केवल ईश्वर? प्लेटो का दृष्टिकोण यह है कि नैतिक सत्ता ईश्वरीय वस्तु है। इस दृष्टिकोण को स्वीकार करने के परिणामस्वरूप उसके सम्मुख यह समस्या उत्पन्न होती है कि इस ईश्वरीय नैतिकता को मानव जीवन के स्तर पर किस प्रकार लाया जाय तथा ईश्वर और मनुष्य के अन्तर को किस प्रकार कम किया जाय। जैसे-जैसे प्लेटो वृद्धावस्था को प्राप्त होता गया यह समस्या उसके लिए तीव्र होती गयी (देखिए अध्याय १०)।

नगर राज्य (पॉलिस) के सम्बन्ध में सम्यक् और असम्यक् के प्रश्नों पर विचार करनेवाले संवादों में (Crito) प्रथम है।[1] इस पुस्तक के सम्बन्ध में पहले भी उल्लेख किया जा चुका है। जैसाकि उस स्थल (p ९२) पर संकेत किया गया था इस पुस्तक में नगर-राज्य की आज्ञाओं और इसके न्यायालयों के निर्णयों का पूर्णतया पालन प्राप्त करने के समर्थन में दो सिद्धान्त प्रस्तुत किये जाते हैं। इस प्रकार नगर राज्य को माता पिता के समकक्ष स्थान देना तथा सभी नागरिकों का यह कर्तव्य बनाना कि वे *नगर-राज्य के प्रति प्रेम और भक्ति की भावना रखें केवल प्लेटो की विशेषता नहीं है।* नगर राज्यों के उत्कर्ष के युग में नगर राज्य और नागरिकों के सम्बन्ध और उनके माता पिता और भक्त पुत्र के सम्बन्ध में अधिक अन्तर नहीं था। पारिवारिक दायित्व को स्वीकार करते हुए तथा नागरिकों को उनका उचित पालन करने के लिए प्रोत्साहन देते हुए भी नगर राज्य ने परिवार के अधिकांश अधिकारों को अपने हाथ में ले लिया था। अथवा उनके भाग निर्धारित कर दिये थे। प्लेटो ने एथेन्स के संविधान को एक पात्र के रूप में प्रस्तुत किया है और इससे अपनी सत्ता के समर्थन में प्राचीन तर्कों का प्रयोग बड़ी सफलता के साथ कराया है। सोक्रेटीज के अनेक समकालीन व्यक्तियों ने इन तर्कों को अस्वीकार किया था और पुत्र अथवा नागरिक द्वारा प्रत्युत्तर देने के

---

१ यह अनुमान किया जाता है कि (Crito) और (Apology) की रचना काल सोक्रेटीज, की मृत्यु के पश्चात का दशक है। और (Gorgias) की रचना भी इसके बहुत वर्ष बाद नहीं हुई। प्रत्येक दशा में ई० पू० ३८७ के पूर्व इसकी भी रचना हो चुकी थी। 'Republic और Politicus' की रचना ३८६ और ३६७ ई० पू० के मध्य हुई होगी और 'Laws और Letters उसके जीवन के अन्तिम वर्षों की रचनाएँ हैं । यह भी अनुमान किया जाता है कि Crito Apology और Gorgias में प्लेटो ने सोक्रेटीज के विचारों का प्रयोग पर्याप्त मात्रा में किया है, किन्तु ३८६ ई० पू० की रचनाओं में स्वयं प्लेटो के विचार ही प्रधान हैं।

अधिकार का समर्थन किया था।[1] प्लेटो के इस संवाद में एथेन्स की विधि-व्यवस्था की ओर से कहा जाता है: 'क्या तुम यह भूल गये हो कि तुम्हारा देश तुम्हारे माता-पिता अथवा सभी पूर्वजों से अधिक महत्त्वपूर्ण, अधिक ऐश्वर्यवान और अधिक पुनीत है और बुद्धि एवं विवक्षण मनुष्य तथा देवता दोनों को माता-पिता और पूर्वजों की तुलना में देश का अधिक आदर करना चाहिए, सम्मान करना चाहिए तथा पिता के क्रोध की तुलना में पितृ-भूमि के क्रोध को शान्त करने के लिए अपेक्षाकृत अधिक प्रयत्नशील होना चाहिए। यदि तुम्हें अपने दृष्टिकोण को स्वीकृत कराने में सफलता नहीं मिलती है तो भी तुम्हारा कर्त्तव्य है कि देश के आदेशों का पालन करो और जो भी कष्ट तुम्हें दिया जाय उसे बिना किसी आपत्ति के सहन करो, चाहे कोड़ों की मार हो अथवा कारावास, घाव हो अथवा देश के लिए युद्ध में प्राण दान...माता और पिता के साथ हिंसापूर्ण आचरण करने से मनुष्य पाप का भागी होता है। देश के प्रति इस प्रकार का व्यवहार इससे भी बड़ा पाप है' (Crito ५१)। दूसरा सिद्धान्त नगर राज्य और नागरिक के सम्बन्ध को संविदा पर आधारित करता है। प्लेटो के संवाद में इस सिद्धान्त के विषय में अधिक नहीं कहा गया है किन्तु जो कुछ कहा गया है वह उपर्युक्त प्रश्न से सम्बन्धित है। राज्य में नागरिक के दीर्घ कालीन आवास को इस बात का प्रमाण मान लिया जाता है कि उसने राज्य की विधि-व्यवस्था का पालन करना स्वीकार कर लिया है। यह तर्क भी प्रस्तुत किया जाता है कि इस प्रकार की संविदा को नागरिक ने स्वेच्छा से स्वीकार किया है क्योंकि यदि वह उस राज्य विशेष में रहना नहीं पसन्द करता जिसमें उसका जन्म हुआ है तो दूसरे राज्य में जाने के लिए वह स्वतन्त्र था। यहाँ प्लेटो यह भूल जाता है कि अधिकांश लोगों को यह स्वतन्त्रता नहीं थी कि वे जहाँ चाहें रह सकें। इस प्रकार की भूल प्लेटो के स्वभाव के अनुकूल ही है। किन्तु संविदा के आधार पर राज्य तथा इसके सदस्यों के पारस्परिक सम्बन्धों को निर्धारित करने का प्रयास प्लेटो ने नहीं किया है। अतः इस पर विशेष महत्त्व देना अनुचित होगा। हाँ, प्लेटो के भविष्य के विचारों की दृष्टि से इस सम्वाद के अन्त में दिया गया यह संकेत अधिक महत्त्वपूर्ण है कि मृत्यु के उपरान्त दूसरा जीवन भी होता है और इस लोक की विधि-व्यवस्था की भाँति दूसरे लोक (परलोक) में भी विधि-व्यवस्था होती है। तथा इहलोक और परलोक की विधि-व्यवस्थाएं सजातीय हैं और इस लोक की विधि परलोक की विधि की अपेक्षा कम ईश्वरीय नहीं है। यदि सोक्रेटीज के साथ अनुचित और अन्यायपूर्ण व्यवहार किया गया है तो इसका उत्तरदायित्व मनुष्यों पर है, विधि पर नहीं। कई वर्षों के उपरान्त जब

---

२ Crito ५१, इसी प्रकार Aristophanes के Clouds १३२१-१३४४ में पुत्र और पिता के सम्बन्ध में।

प्लटो ने Laws की रचना प्रारम्भ की तो उसने इस धारणा की ओर पुन ध्यान दिया और अपनी इस महान अन्तिम राजनीतिक कृति म उसने एक एसे सविधान की रचना करन का प्रयास किया है जो वधिक और धार्मिक दाता है।

कल्लिक्लीज के महा मानव के सिद्धान्त तथा जार्जियाज और पाल्स द्वारा राजनीतिज्ञो को प्रदान की जाने वाली शिक्षा तथा इन दोनो शिक्षको के पारस्परिक सम्बध पर प्रकाश डालते समय प्लटो की (Gorgias) नामक रचना की कुछ चर्चा हो चुकी है। जार्जियाज और पाल्स आलकारिक भाषा के कुशल प्रयोग को राजनीतिज्ञ के लिए अत्यधिक उपयोगी मानते थे और उनकी शिक्षा म इसी योग्यता के विकास की ओर विशेष ध्यान दिया जाता था। अलकार शास्त्र स्वय अपने म न तो नतिक है और न अनतिक, किन्तु इसका नाता दूसरे व्यक्तियो को प्रभावित कर सकना है तथा उन्हे अपने अधिकार मे करने म समर्थ हो जाता है। इस प्रकार अलकार शास्त्र द्वारा प्राप्त क्षमता निरकुश शासक का सत्वर अस्त्र और महामानव की शक्ति का उदगमस्थल बन जाती है। किन्तु प्लटो के इस सवाद (Gorgias) म साक्रटीज और प्लटो के विचारो के समर्थन म प्रस्तुत तर्क राजनीतिक दर्शन की दृष्टि स अधिक महत्त्वपूर्ण हैं। इन तर्कों म राजनीति की विद्या को शरीर से सम्बन्धित विद्याओ, जसे चिकित्सा और शारीरिक प्रशिक्षण के प्रतिरूप मस्तिष्क (मन) से सम्बन्धित विद्या के रूप म प्रस्तुत किया जाता है (४६४) इस सादृश्य म राजनीतिज्ञ की तुलना चिकित्सक अथवा शारीरिक शिक्षा देने वाले प्रशिक्षक से की जाती है क्योकि य सभी स्वास्थ्य को उद्देश्य मान कर काय करते हैं। इसके विपरीत अलकार शास्त्र का नाता उस पाक शास्त्री की भाति है जो रसना की सन्तुष्टि मात्र को ही अपना लक्ष्य मानता है। यदि राजनीतिज्ञ राज्य के कल्याण के उद्देश्य को सम्मुख रखकर काय करना चाहता है जो वास्तव म उसका उद्देश्य होना चाहिए तो अलकार शास्त्र स उसे विशेष सहायता नही मिल सकती है। इस शास्त्र से राज्य के कल्याण की अवस्था के सम्बध मे कोई जानकारी नही प्राप्त हो सकती। इस प्रकार जसा कि प्लेटो के एक बाद के अनुयायी[1] ने कहा है, (Gorgias) की रचना 'उन नतिक आधारो पर विचार विमर्श करने के उद्देश्य से की गयी है जिन पर राजनीतिक कल्याण का भवन निर्मित किया जा सकता है। इस सवाद मे विख्यात जार्जियाज को अनीतिवादी के रूप म नही चित्रित किया गया है। जिज्ञासु पालस तो सोक्रटीज के इस सिद्धान्त को भी मान लेता है (४८२D) कि अपराध करना अपराध का सहन करने की अपेक्षा कही अधिक लज्जास्पद है।' किन्तु कल्लिक्लीज अपनी बात पर दृढ रहता है

१ पाचवीं शताब्दी के नव प्लेटोवादी अलेक्जण्ड्रिया का ओलिम्पियोडोरस (Olympiodorus)

और यह मानने के लिए तैयार नहीं है कि राजनीति का कोई नैतिक आधार भी होता है। सोक्रेटीज और उसमें कोई समानता नहीं है। दोनों एक दूसरे से पूर्णतया भिन्न हैं। किन्तु बौद्धिक सच्चाई की उपासना दोनों ही समान रूप से करते थे (४८७ B ४८८ B)। प्लेटो के इस संवाद में जहाँ सोक्रेटीज आत्म नियन्त्रण और संयम को मानव जीवन की मुख्य विशेषता मानता है वहाँ कल्लिक्लीज आत्माभिव्यक्ति को महत्त्व देता है। और चूँकि राजनीतिक कल्याण का आधार मनुष्य का जीवन और उसका चरित्र ही होता है (Supra p ३०) इसलिए यह प्रश्न सर्वाधिक महत्त्व का है कि किस प्रकार का मनुष्य बना जाय और जीवन में किस उद्देश्य की पूर्ति हेतु प्रयास किया जाय' प्लेटो के इस संवाद में (५०० C) *सोक्रेटीज कहता है 'इतना तो स्पष्ट है कि हमारे विवाद का विषय ही* ऐसा है कि प्रत्येक साधारण बुद्धिवाले व्यक्ति को इस पर गम्भीरतापूर्वक विचार करना चाहिए और यह जानने का प्रयत्न करना चाहिए कि हमारे जीवन की क्या पद्धति होनी चाहिए। यह एक ऐसा प्रश्न है जो इतिहास के सोक्रेटीज के मस्तिष्क में सतह उपस्थित रहा होगा और उसका सम्पूर्ण जीवन इसी प्रश्न का उत्तर था। किन्तु प्लेटो के लिए यह समस्या बनी रही कि सोक्रेटीज के इस उत्तर को जो निश्चय ही सही रहा होगा अन्य व्यक्तियों के जीवन से किस प्रकार सामञ्जस्य स्थापित किया जाय। चूँकि सभ्य जीवन नगर राज्य के अंतर्गत ही सम्पन्न सम्भव हो सकता था इसलिए यह प्रश्न नगर राज्य के सन्दर्भ में ही उठाया जा सकता था। यहाँ यह प्रश्न उठता है कि इन दोनों (नगर राज्य और व्यक्ति के जीवन) में किसे प्राथमिकता दी जाय। क्या हम यह कहना चाहिए कि जीवन की अमुक पद्धति ठीक है इसलिए नगर राज्य की व्यवस्था इस प्रकार की होनी चाहिए कि इस पद्धति का जीवन सम्भव हो सके? *अथवा हम नगर राज्य से प्रारम्भ करके* पहले इसके स्वभाव और उद्देश्य को निर्धारित करें और उसके पश्चात् यह प्रयत्न करें कि मनुष्यों का जीवन नगर राज्य के स्वभाव एवं उद्देश्य के अनुकूल हो? किन्तु, जैसाकि इस पुस्तक के प्रारम्भ में (प्रस्तावना पृ० ६) संकेत किया जा चुका है इस प्रकार के प्रश्न राज्य और नागरिक का विरोध के रूप में प्रस्तुत करते हैं और यूनानी नगर राज्यों के जीवन में इस प्रकार के विरोध के लिए कोई स्थान न था। इस बात का स्मरण यहाँ इसलिए किया जा रहा है कि प्लेटो के सम्बन्ध में यह ध्यान रखना अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है कि राजनीति के आधार के सम्बन्ध में नानिकारी विचारों का प्रतिपादन करते हुए भी वह नगर राज्य और नागरिक को पृथक् न करके कट्टर परम्परावादी की भाँति एकता के एक सूत्र में बाँधता है जो किसी दशा में नहीं तोड़ा जा सकता।[1]

---

[1] तथापि, इससे एक दूसरा प्रश्न भी संलग्न है जो यूनानी नगर राज्य की सीमा के परे है। वह प्रश्न है क्या राज्य का संगठन इस प्रकार करना चाहिए कि सभी

साधारणतया मानव जीवन की दो पद्धतिया हैं और उन्हें विभिन्न नाम दिये जा सकते हैं। किन्तु नाम केवल विशिष्ट लक्षण व्यक्त करने अथवा प्रतिनिधि उदाहरण प्रस्तुत करने के अतिरिक्त विशेष उपयोगी नहीं होता है। अतएव इन पद्धतियों का नामकरण किये बिना हम यह कहेंगे कि एक पद्धति तो वह थी जिसका अनुसरण साक्रेटीज ने किया और दूसरी वह जिसे उसके विरोधियों या उस पर अभियोग लगाने वालों ने अपनाया। एक पद्धति दार्शनिक की है और दूसरी राजनीतिज्ञ की। इन दोनों में से किसी एक पद्धति को हम संसार की पद्धति कह सकते हैं सफल व्यक्ति की पद्धति, मसीडोनिया के आर्केलिस की क्रूर सक्षम और सशक्त पद्धति अथवा प्राचीन राजनीतिज्ञों में से परिक्लीज थेमिस्टाक्लीज (Themistocles) या सोलन की पद्धति। Gorgias का प्रारम्भ अलंकार-शास्त्र की समीक्षा से होता है और इनमें एक पक्ष राजनीतिज्ञ अथवा वक्ता के महत्त्व पर जोर देता है और दूसरा पक्ष दार्शनिक के महत्त्व पर। महत्त्वपूर्ण यह है कि समुदाय के जीवन से इन दोनों पद्धतियों का क्या सम्बन्ध होगा। जैसा कि हम इसी अध्याय में देखेंगे आइसोक्रेटीज इन दोनों पद्धतियों में किसी प्रकार का विरोध और वैषम्य नहीं स्वीकार करता है। किन्तु प्लेटो के अनुसार इन दोनों पद्धतियों का वैषम्य महत्त्वपूर्ण और आधारभूत है और इसका कारण यह है कि राजनीतिज्ञ ज्ञान से वञ्चित रहते हैं। निःसन्देह वे प्रशिक्षण प्राप्त कर सकते हैं। पांचवी शताब्दी के मध्य राजनीतिक श्रेष्ठता, राजनीतिक कौशल या राजनीति के दांव-पेंच की शिक्षा देने का दावा करने वाले पर्याप्त संख्या में उपलब्ध थे। किन्तु, यदि हम इस सिद्धान्त को स्वीकार करते हैं कि श्रेष्ठता प्राप्त करने के लिए ज्ञान आवश्यक है या जैसा कि प्लेटो ने कहा है श्रेष्ठता और ज्ञान एक ही वस्तु है तो हम यह भी मानना पड़ेगा कि ऐसा शिक्षक अथवा सॉफिस्ट जो स्वयं ज्ञान से वञ्चित है अपने शिष्यों को जो शिक्षा प्रदान करेगा उससे वे कुछ दांव पेंच भले ही सीख लें अथवा थोड़ा-बहुत अभ्यास प्राप्त कर लें किन्तु इसके अतिरिक्त वे और कुछ नहीं सीख पायेंगे। शब्दों का कुशल प्रयोग करने में वे दक्षता प्राप्त कर सकते हैं किन्तु इसके आधार पर वे अधिक से अधिक यही कर सकते हैं कि अपने

मनुष्यों को सही पद्धति का जीवन व्यतीत करने का अवसर मिल सके अथवा इस प्रकार कि सभी को सही पद्धति का जीवन व्यतीत करने के लिए बाध्य होना पड़े? Gorgias में इस प्रश्न पर विचार नहीं किया गया है। किन्तु जैसा कि हम देखेंगे (आगे चल कर अध्याय ९ में), प्लेटो के विचार से एक बार यह जान लेने के पश्चात कि जीवन की सही पद्धति क्या है, आप का कर्त्तव्य हो जाता है कि इसी पद्धति से जीवन व्यतीत करने के लिए मनुष्यों को बाध्य किया जाय। रोगी को सदैव चिकित्सक के आदेशों का पालन करना चाहिए।

विचार अथवा मत दूसरा को भली भाँति समझा लें तथा उन्हें स्वीकृत कराने में सफल हो सकें। किन्तु जानने योग्य कोई बात वे नहीं बता सकते। कवियों के विरुद्ध Gorgias में तथा अन्यत्र भी प्लेटो ने यह शिकायत की है कि वे अपने शब्द कौशल का प्रयोग लोगों के मनोरंजन मात्र के लिए ही करते हैं शिक्षा प्रदान करने के लिए नहीं। किन्तु वास्तविक राजनीतिज्ञ के लिए यह आवश्यक है कि वह स्वयं भी शिक्षा प्रदान करे और ऐसे कलाकारों की सेवा उपलब्ध कर सके जो वास्तव में कुछ सन्देश देने का सामर्थ्य रखते हैं। मनोरंजन अथवा आनन्द प्रदान करना न तो राजनीतिज्ञ का कार्य है और न कवि का है। दोनों का कार्य शिक्षा प्रदान करना है और प्लेटो के अनुसार विगत युगों में एथेन्स के राजनीतिज्ञ अपने इस कर्त्तव्य का पालन नहीं कर सके। साइमन (Cimon) मिल्टियाडीज (Miltiades) थेमिस्टोक्लीज (Themistocles) और पेरिक्लीज (Pericles) सभी प्लेटो की निंदा के भाजन होते हैं क्योंकि उन्होंने जनता को शिक्षित करने का प्रयास नहीं किया वे तो जनता को प्रसन्न करने में ही लगे रहे। इन राजनीतिज्ञों का यह मूल्यांकन स्पष्टतया अनुचित है और यथार्थ की अवहेलना करता है किन्तु ऐतिहासिक सत्य के बारे में तो प्लेटो ने कभी चिन्ता ही नहीं की। तथ्यों के सम्बन्ध में वह एक ही बात पर दृढ़ भी नहीं रहता है। इस प्रकार उसकी त्रुटियों में भी आत्मसंगति का अभाव है।[1] Phaedrus (२७० A) में उसने परिक्लीज का जो चित्र प्रस्तुत किया है उससे यह ज्ञात होता है कि परिक्लीज कुछ मात्रा में दार्शनिक ज्ञान पर अधिकार रखता था। 'Protagoras' में उसने परिक्लीज और थेमिस्टोक्लीज को 'राजनीतिक श्रेष्ठता' के उदाहरण के रूप में प्रस्तुत किया है। यह उस स्थल पर है जहाँ यह प्रश्न उठाया जाता है कि इन लोगों ने अपने पुत्रों को यह श्रेष्ठता क्यों नहीं हस्तान्तरित की। Meno में (९९B) भी इसी प्रकार का एक प्रश्न किया जाता है और उत्तर यह मिलता है कि वे असमर्थ थे क्योंकि वे केवल सम्यक् मत ही (right opinion) रखते थे ज्ञान से वे वञ्चित थे। किन्तु Gorgias में उनका जो चित्र प्रस्तुत किया गया है उसमें तो वे योग्यता और सम्यक् मत दोनों से वञ्चित प्रतीत होते हैं। तथापि प्लेटो द्वारा प्रस्तुत तर्क की दृष्टि से यह कदापि महत्त्वपूर्ण नहीं है कि जनता (डिमाज) के अत्यधिक आज्ञाकारी सेवक के रूप में परिक्लीज का जो चित्र उसने प्रस्तुत किया है वह सर्वथा गलत है। अपने इस मत पर प्लेटो दृढ़ है कि यदि राजनीतिज्ञ को शिक्षक के कर्त्तव्यों का भी पालन करना है तो उसे अनिवार्यतः ज्ञान प्राप्त करना पड़ेगा। इस ज्ञान का स्वरूप Enthyd

---

१ आइसोक्रेटीज, जिसने स्वयं इसकी ओर हमारा ध्यान आकृष्ट किया है (Panath) १७२, की रचनाओं में भी इसी प्रकार की असंगति मिलती है।

emus' और Republic मे सविस्तार प्रस्तुत की गयी है, Gorgias मे ता सकेत मात्र मिलता है। मुख्य प्रश्न यह है कि किस प्रकार के व्यक्ति के हाथ मे राजनीतिक सत्ता सौंपी जा सकती है। प्लेटो के अनुसार राजनीतिक सत्ता उसी व्यक्ति के हाथ मे जानी चाहिए जो वास्तव मे शिक्षा प्रदान करने की योग्यता रखता है केवल फुसलाना ही नही जानता है अपने काय मे प्रवीण होने के साथ नेक और न्यायप्रिय भी है और जो राजनीतिक सत्ता का प्रयोग अपने हित के उत्कर्ष के लिए नही करता है। जनता के प्रति उसका व्यवहार उसी प्रकार का होना चाहिए जैसे एक चिकित्सक का अपने रोगियो के प्रति होता है। उन्हे स्वस्थ रखने के लिए उसे प्रत्येक कष्ट उठाने के लिए तत्पर रहना चाहिए। किन्तु शरीर की अपेक्षा लोगो की आत्मा की ओर उसे अधिक ध्यान देना चाहिए। चिकित्सक ही की भाति उससे भी यह आशा की जाती है कि अपने आदेशो का पालन वह दृढतापूर्वक करायेगा। जैसे रोगी को जो अधिक खाने और पीने की अपनी आदत को छोडने के लिए तैयार नही है कोई भी चिकित्सक स्वास्थ्य-लाभ नही करा सकता।[1] काया सुख की अतिशयता आत्मा के लिए भी विशेष हानिकर होती है और राजनीतिज्ञ शिक्षक को इस प्रकार की अतिशयता को दृढ एव सबल हाथो से कम करने अथवा पूर्णरूप से वर्जित करने तथा सयम और अन्य गुणो का विकास करने के लिए उत्सुक रहना चाहिए। सयम को त्याग कर यदि कोई नागरिक अपराध करता है तो उसके लिए दण्ड उसी प्रकार आवश्यक हो जाता है जैसे एक रोगी के लिए औषधि। अपराध करनेवाले को जब तक दण्ड नही मिलता है उसकी आत्मा को क्लेश पहुँचता रहता। नेकी और सदाचरण के बिना मनुष्य को सुख नही मिल सकता है और इनकी प्राप्ति ही मानव जीवन का उद्देश्य है। नगर और नागरिक दोनो को इसी उद्देश्य का सम्मुख रख कर आचरण करना चाहिए। राजनीतिक सुख और कल्याण सद्गुण की रक्षा और दुर्गुण के लिए दण्ड पर ही निर्भर करता है। मनुष्य को सुखी बनाने के लिए आवश्यक है कि पहले उसे अच्छा बनाया जाय। सच्चा राजनीतिज्ञ इस कथन के सत्य मे किञ्चिन्मात्र भी सन्देह नही करता कि अपराध को सहन करने की अपेक्षा अपराध करना कही अधिक लज्जास्पद होता है। यह तो स्वाभाविक ही है कि अपराध को सहन करने से मनुष्य बचने की कोशिश करेगा किन्तु न्यायोचित दण्ड का भोग करना अपराध का सहन करना नही है। यह दण्ड तो उसके हित मे ही है[2] क्योकि दण्ड

---

१ यह उपमा प्लेटो को विशेष प्रिय थी। देखिए Epistle vii ३३० D–३३१ D। इसका इतना अधिक प्रयोग वह कदापि न करता यदि यह उसके दर्शन की प्रवृत्ति के अनुकूल न होती।

२ Like the Scots term 'Justified Plato like Protagoras

प्राप्त कर लेने से वह अपने अपराध के परिणामस्वरूप प्राप्त होने वाले कष्ट से मुक्ति पा जाता है। इतना ही नहीं यदि किसी व्यक्ति को अनुचित दण्ड भी मिल जाता है (जैसा कि सॉक्रेटीज को मिला इस संवाद में सॉक्रेटीज की मृत्यु के सम्बन्ध में भविष्य वाणी-सी की गयी है क्योंकि इसकी रचना के समय तक सॉक्रेटीज जीवित था) तो भी उस व्यक्ति को इससे कोई विशेष हानि नहीं पहुँचती है क्योंकि यद्यपि उसके शरीर पर कोड़ों के चिह्न अंकित हो जाते हैं अथवा घाव दिखाई पड़ते हैं फिर भी उसकी आत्मा पर इस यातना का कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। यदि इस दण्ड के स्वरूप उसकी मृत्यु भी हो जाती है तो भी दूसरे जन्म में उसकी आत्मा पर इस प्रकार का कोई भी चिह्न नहीं रहता है।[1] नागरिकों को ऐसी शिक्षा दी जानी चाहिए जिससे वे भली भाँति समझ जायें कि शरीर की अपेक्षा आत्मा अधिक मूल्यवान होती है तथा उनका यह कर्तव्य है कि वे न केवल सत्ताधारियों के आदेशों का पालन करें अपितु उनकी जीवन पद्धति का भी अनुकरण करें। आचरण का मान दण्ड सत्ता द्वारा ही निर्धारित किया जाता है चाहे यह सत्ता एक व्यक्ति के हाथ में हो अथवा कुछ या बहुत व्यक्तियों के हाथ में। सत्ताधारी व्यक्ति या व्यक्तियों का सब से अधिक अनुकरण करनेवाला व्यक्ति सबसे अधिक सफल हो सकेगा। सम्राट की अच्छी प्रजा अथवा दल का अच्छा सदस्य होकर वह यह आशा कर सकता है कि जीवन की सुरक्षा के साथ साथ वह आर्थिक उत्कर्ष भी प्राप्त कर सकेगा। किन्तु इस प्रकार का व्यक्ति अपने जीवन में जो भी सफलता प्राप्त करे पर वह सर्वथा प्रतिलिपि ही बना रहेगा। उसे यह भ्रम हो सकता है कि वह सफल राजनीतिज्ञ है किन्तु वास्तविक अर्थ में उसे राजनीतिज्ञ नहीं कहा जा सकता क्योंकि शिक्षा प्रदान करने की सामर्थ्य उसमें नहीं है और प्लेटो के अनुसार वास्तविक राजनीतिज्ञ वही हो सकता था जो शिक्षक के कर्तव्यों का भी पालन कर सके। यदि कभी प्लेटो को राजनीतिक जीवन में पदार्पण करनेवाले किसी आर्यर्थी का साक्षात्कार करना पड़ता तो वह उससे इस प्रकार की बात करता किन नागरिकों को आपने अच्छा मनुष्य बनाया है? क्या कोई भी ऐसा व्यक्ति है चाहे वह दास हो अथवा स्वतन्त्र नागरिक हो अथवा विदेशी जो पहले बुरा दुर्गुणी और असंयमित था किन्तु आपके प्रयासों ने उसे नेक ईमानदार और आदरणीय बना दिया है? क्या आपने अपने व्यक्तिगत जीवन में कोई ऐसा कार्य किया है जिसके आधार पर आप राजनीतिक जीवन के योग्य समझे जा सकते

(p ५६ n ३) moves away from traditional view of punishment as puraly retributive।

१ Gorgias ५२३–५२७ में प्लेटो इस किंवदन्ती का समर्थन करता है कि शरीर से पृथक होने के बाद भी किये गये पापों का चिह्न आत्मा पर बना रहता है।

है ? राजनीतिज्ञ बनने के सम्बन्ध मे आपके अपने विचार होगे, किन्तु मैं यह बता देने की अनुमति चाहूँगा कि राजनीतिज्ञ का मुख्य कर्त्तव्य यही है कि वह हम लोगो को, नागरिको को भरसक अच्छा मनुष्य बनाने का प्रयास करे (५१५-A-C)। तथाकथित राजनीतिज्ञो के तथाकथित सुधारो और निर्माण कार्यों जैसे पोतागण, पाननिवेश, भित्तियो एव कृत्रिम जलमार्गों का प्लेटो कुछ भी महत्त्व नही देता है।

शासक के लिए आवश्यक योग्यता की समस्या बारम्बार प्लेटो का ध्यान आकृष्ट करती है। सम्भवत Gorgias की रचना करते समय राजनीतिज्ञो को शिक्षा प्रदान करने के लिए एक शिक्षालय की स्थापना करने का विचार उसके मस्तिष्क मे था। किन्तु इस प्रकार शिक्षालय उस समय थे और प्लेटो की अकादमी इस प्रकार की सर्वप्रथम संस्था नही थी। आइसोक्रेटीज न तो अवस्था मे प्लेटो से कुछ ज्येष्ठ था किन्तु प्लेटो की मृत्यु के पश्चात भी कुछ समय तक जीवित रहा, ३९२ ई० पू० मे एक ऐसे ही शिक्षालय की स्थापना की थी। अपने इस शिक्षालय का उद्घाटन आइसोक्रेटीज ने एक घोषणा के साथ किया जिसका शीर्षक था 'Against the Sophists (सोफिस्टो के विरुद्ध)। इस घोषणा पत्र मे उसने अपने समकालीन शिक्षाविदो और शिक्षको पर साधारण बातो को अत्यधिक महत्त्व प्रदान करने प्रत्येक विषय का ज्ञानी होने का दावा करने तथा अत्यधिक शुल्क लेने का आरोप लगाया। युवावस्था मे आइसोक्रेटीज को सॉक्रेटीज तथा जार्जियास की वार्त्ता सुनने का अवसर मिला था। राजनीतिज्ञो को शिक्षित करने की अपनी योजना मे उसने इन दोनो व्यक्तियो के विचारो का समावेश किया। Phaedrus के अन्त मे (२७९) प्लेटो आइसोक्रेटीज का उल्लेख करता है और सोक्रेटीज से कहलाता है कि युवक आइसोक्रेटीज ज्ञान का प्रेमी है अत वह पर्याप्त प्रगति कर सकेगा। इसमे सन्देह नही कि दर्शन की जो धारणा आइसोक्रेटीज ने प्रस्तुत की उसके प्रति वह अपने दीर्घजीवन पर्यन्त निष्ठावान् रहा। राजनीतिज्ञ के लिए सामान्य शिक्षा को वह सबसे अधिक आवश्यक मानता था और इसे प्रदान करने मे उसने अपना समस्त जीवन व्यतीत कर दिया। यद्यपि दर्शन की जो परिभाषा उसने स्वीकार की वह प्लेटो की परिभाषा से भिन्न है फिर भी विशेषज्ञो और अपने समकालीन सोफिस्टो को प्लेटो की ही भाति वह भी सन्दिग्ध दृष्टि से देखता था, उनसे असन्तुष्ट था और शिक्षा के जिस विकृत स्वरूप को वे प्रदान करते थे उससे अत्यन्त क्षुब्ध था। प्लेटो और उसमे अन्तर यह था कि वह प्लेटो की इस बात से सहमत नही था कि जीवन पद्धति का विभाजन दो स्पष्ट और केवल दो ही प्रकार से किया जा सकता है। उसका मत था कि यदि इन दोनो पद्धतियो मे सामञ्जस्य स्थापित करना सम्भव नही है (V Supra) तो कम से कम इन दोनो ढगो की अच्छाइयो को अपनाने का प्रयास तो करना ही चाहिए। इस प्रकार यदि यह कहा जाता है कि अलकार शास्त्र

महत्त्वाकांक्षी राजनीतिज्ञ को एक शक्तिशाली साधन प्रदान कर देता है किन्तु उसे यह नहीं बताता कि इसका प्रयोग किस प्रकार करना चाहिए तो इस आलोचना के आधार पर हम अलंकार शास्त्र का सर्वथा त्याज्य न समझकर इसकी शिक्षा के साथ इसके सही प्रयोग का ढंग भी बताना चाहिए। आइसोक्रेटीज़ के अनुसार भाषण की कला, लिखने का कला तथा सुन्दर निबन्धों की रचना स्वतः शक्ति महत्त्व रखती हैं और इन्हें केवल प्रचार अथवा लोगों के मत को विकृत करने अथवा उनकी कामनाओं को उत्तेजित करने का साधन मात्र समझना अनुचित है। (xii २८१)। यह तो स्पष्ट है कि इससे नैतिकता की प्रत्यक्ष शिक्षा नहीं मिलती है (vii २१) किन्तु इसकी शिक्षा मात्र से अच्छा आचरण करना सुगम हो जाता है (xii २७)। इसके अतिरिक्त आइसोक्रेटीज़ ने ऐसी शिक्षा प्रदान करने का प्रयास किया जिसमें न केवल शब्दों के उचित प्रयोग की शिक्षा दी जाती थी अपितु वस्तुओं और समस्याओं को सही ढंग से समझने का कार्य करने के सर्वश्रेष्ठ ढंग की खोज करने तथ्यों को सर्वश्रेष्ठ ढंग से प्रस्तुत करने तथा सबसे उपयुक्त व्याख्या करने का प्रयास भी किया जाता था। संक्षेप में वह सम्यक् मन (लोगास) की शिक्षा देने का प्रयास करता था। इसके लिए उच्च स्तर की बौद्धिक योग्यता आवश्यक थी और आइसोक्रेटीज़ ने सोक्रेटीज़ के आत्मा का उत्कर्ष न केवल यह तात्पर्य निकाला कि मस्तिष्क को अनुशासित करने का प्रयत्न करना चाहिए। सोक्रेटीज़ के इस कथन को उसने प्लेटो की भाँति कोई पारलौकिक महत्त्व नहीं प्रदान किया। शिष्यों को वह साहसी और परिश्रमी बनाना चाहता था जिससे राजनीतिज्ञ सच्चरित्र हो सके तथा अपने विश्वासों पर साहस के साथ अडिग रह सकें और दूसरों के विचारों का उद्घोष मात्र करने वाले न बनें (xiii १७)। ऐसे राजनीतिज्ञों के लिए ज्ञान की आवश्यकता होगी किन्तु जो ज्ञान आइसोक्रेटीज़ देना चाहता था उसे प्लेटो ज्ञान की संज्ञा भी देने के लिए न तैयार होता। आइसोक्रेटीज़ के अनुसार राजनीतिज्ञ के लिए जो ज्ञान आवश्यक था वह था 'किसी विषय पर जानकारी के साथ बातचीत कर सकना और उपयुक्त अवसर पर उपयुक्त बात कहना'।[1] इस प्रकार भाषा और वाणी को निर्णायक मान कर आइसोक्रेटीज़ ने जॉर्जियाज़ का अनुसरण किया किन्तु अनीतिवादी वह नहीं था। इसके विपरीत स्वार्थपरता के सिद्धान्त से वह भी उतना ही दूर था जितना कि प्लेटो। उसके अनुसार सबसे भले व्यक्ति वह है जो अपने को समृद्ध बनाने की क्षमता तो रखता है किन्तु इसका प्रयोग नहीं करता है (१ २८)।

Gorgias में प्रस्तुत प्लेटो के शिक्षा सम्बन्धी विचारों तथा आइसोक्रेटीज़

---

१ वाक्यांश आइसोक्रेटीज़ का ही है xv २५७=१११९ किन्तु विचार पूर्णतया जॉर्जियाज़ के ही हैं Helen ८–१२।

के तदविषयक विचारो की मुख्य समानताओ और असमानताओ को ऊपर संक्षिप्त रूप मे प्रस्तुत किया गया है। तथापि, यह नही कहा जा सकता है कि जीवन की दोनो पद्धतियो के अन्तर को समाप्त करने मे आइसोक्रेटीज के प्रयत्न सफल रहे। जैसा कि प्राय देखा गया है मध्यस्थता करनेवाले व्यक्तियो को दोनो पक्षो की आलोचना सहनी पडती है। आइसोक्रेटीज के प्रयासो का भी यही परिणाम हुआ तथा जीवन की जिन दो पद्धतियो का उल्लेख ऊपर किया जा चुका है उन दोनो के समर्थको ने आइसोक्रेटीज की कटु आलोचना की। अपने दार्घजीवन के अन्तिम दिनो तक उसे सोफिस्टो के आक्रमण का सामना करना पडा। तथापि प्लेटो के अनुसार दर्शन के सम्बन्ध मे आइसोक्रेटीज का दृष्टिकोण सोफिस्ट दृष्टिकोण से किञ्चित मात्र भी भिन्न न था। जैसा कि हम देख चुके हैं एक शताब्दी पूर्व (p ६१) प्राडिकस (Prodicus) ने एक ऐसे प्रकार के सोफिस्ट की चर्चा की थी जो दार्शनिक और राजनीतिज्ञ की सीमाओ की रेखा पर स्थित रहता है। आइसोक्रेटीज चौथी शताब्दी ई० पू० का इसी प्रकार का एक सोफिस्ट है। वह अपना कर्तव्य समझता था कि राजनीतिज्ञो को अच्छी शिक्षा प्रदान करे और यह आशा करता था कि अपने इस प्रयास के लिए वह प्लेटो की सहानुभूति प्राप्त कर सकेगा। दर्शन को इस प्रकार व्यावहारिक राजनीति से सम्बद्ध करने के प्रयास मे प्लेटो से सहानुभूति प्राप्त करने की आशा करने के लिए पर्याप्त प्रत्यक्ष कारण थे, किन्तु इस प्रकार का समझौता करने के लिए प्लेटो तैयार नही था। इस प्रकार के प्रयास को वह 'ज्ञान प्राप्ति के मार्ग मे आने वाली आपदाओ और कष्टो से बचकर ज्ञान का फल प्राप्त करने का कातर प्रयत्न समझता था और इस प्रकार के प्रयत्नो की भर्त्सना करता है। उसके अनुसार एक ही साथ राजनीतिज्ञ और दार्शनिक बनने का प्रयास करनेवाले व्यक्ति न तो राजनीतिज्ञ बन पाते हैं और न दार्शनिक। निश्चित रूप से तो यह नही कहा जा सकता कि यहाँ[1] प्लेटो आइसोक्रेटीज की ओर संकेत कर रहा है किन्तु ऐसा आभास अवश्य होता है। यदि प्लेटो का संकेत आइसोक्रेटीज की ही ओर है तो इसमे सन्देह नही कि प्लेटो का निर्णय त्रुटिपूर्ण नहीं था क्योकि आइसोक्रेटीज को किसी भी क्षेत्र मे आशातीत सफलता नही प्राप्त हो सकी। फिर भी उसके शिक्षालय ने कुछ अच्छे वक्ता, लेखक और सेनाधिपति उत्पन्न किये और यद्यपि उसकी स्वयं की रचनाओ का तत्कालीन राजनीति[2]

---

१ Enthydemus ३०५–३०६

२ आइसोक्रेटीज के प्रभाव के सम्बन्ध मे पर्याप्त मत-विभिन्य है। उसके शिक्षा सम्बन्धी सिद्धान्तो के लिए Jaeger की Paideia III और H I Marrou, Histoire de l' Education dans l Antiquite (१९४८) देखिए।

पर विशेष प्रभाव नहीं पड़ा तथापि साहित्य के इतिहास में उन्हें पर्याप्त महत्त्व मिला।

राजनीतिक दर्शन के सन्दर्भ में उसकी रचनाओं का मूल्यांकन करना कठिन है। इन रचनाओं में दो ऐसे दोष हैं जिनके कारण उन्हें उच्चकोटि के साहित्य में नहीं रखा जा सकता है। प्रथम दोष तो यह है कि उसने अधिकांशतया दूसरों के विचारों को प्रस्तुत किया है तथा उसकी रचनाओं में मौलिकता का अभाव है। दूसरा दोष यह है कि उसकी रचनाओं पर देश काल और परिस्थिति का अत्यधिक प्रभाव पड़ा है। इन रचनाओं के आधार पर यह कहना अनुपयुक्त न होगा कि इनके लेखक के पास राजनीतिक विचारों का अभाव था और वह केवल राजनीति के सम्बन्ध में विचार रखता था। उदाहरणार्थ बृहत् यूनान की कल्पना जिसके लिए वह प्रायः स्मरणीय समझा जाता है, स्वयं उसके चिन्तन से आविर्भूत नहीं हुई थी। समस्त यूनानी द्वीपों को एकता के सूत्र में बाँधने की कल्पना के मूल तत्त्व एस्कीलस, हेराडोटस और जाजियाज के विचारों में मिलते हैं। आइसोक्रेटीज के कुछ समय पूर्व जाजियाज ने एन्टीफान तथा अन्य विचारकों की (p ६३) सम्भावना के सिद्धान्त को राष्ट्रों के पारस्परिक सम्बन्धों में भी लागू करने की इच्छा व्यक्त की थी। तथापि 'यूनानी' (Hellenic) शब्द के बारे में आइसोक्रेटीज की अपनी धारणा थी और वह इस शब्द को जाति की अपेक्षा एक संस्कृति का द्योतक मानता था (iv ५०)। किन्तु यूनानी एकता (Pan Hellenism) की उसकी धारणा मूलतः कुछ विशिष्ट लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए तथा उस समय परिस्थिति का सामना करने की योजना मात्र है। वह किसी राजनीतिक सिद्धान्त पर नहीं आधारित है और इस अध्याय के प्रारम्भ में उल्लिखित संघीय विचारों से सर्वथा भिन्न और पृथक् है। बस जैसा कि हम देख चुके हैं संघ के सम्बन्ध में प्रस्तुत इन विचारों का प्रतिपादन भी विशिष्ट परिस्थितियों को ध्यान में रख कर ही किया गया। सैद्धान्तिक दृष्टि से उनकी व्याख्या तथा पुष्टि करने का कोई प्रयास नहीं किया गया यद्यपि इस प्रकार का प्रयास किया जा सकता था और उसमें पर्याप्त सफलता भी मिल सकती थी। परस्पर युद्ध करनेवाले यूनानी राज्यों में एकता स्थापित करने तथा फारस के अतिक्रमण के विरुद्ध संयुक्त मोर्चा स्थापित करने के लिए आइसोक्रेटीज ने सशक्त भाषा में अपार ... है। उसकी यह रचना अच्छा अध्ययन सामग्री प्रस्तुत करता है किन्तु राजनीतिक विचारों के इतिहास में उसका Panegyricus को उच्च स्थान नहीं दिया जा सकता है। उसकी अन्य रचनाओं में भी यही बात मिलती है। उनमें कहीं भी राजनीतिक सिद्धान्त नहीं दृष्टिगोचर होता। कारण यह है कि आइसोक्रेटीज ने राजनीतिक सिद्धान्तों का निर्माण करने का प्रयास ही नहीं किया। वह तो परिस्थिति विशेष का सामना करने के लिए उचित एवं उपयुक्त ढंग की तलाश में था। किसी

भी विषय के गूढ़ तत्वों को समझने, किसी भी परिस्थिति को प्राचीन अथवा अर्वाचीन वास्तविक अथवा काल्पनिक परिस्थितियों का तुलनात्मक अध्ययन कर सकने की क्षमता उसमें नहीं थी। किन्तु अपनी इस अक्षमता को वह दोष नहीं मानता था। प्रोटेगोरस और जार्जियाज के विचारों से वह पर्याप्त मात्रा में लाभान्वित हुआ किन्तु इन महापुरुषों की महानता तथा अपनी अक्षमता का आभास उसे नहीं था। यही कारण है कि उनके प्रति इतना ऋणी होते हुए भी वह उनके सैद्धान्तिक निष्कर्षों का भर्त्सना करता है (XI 5) और स्वयं व्यवहार कुशल व्यक्ति होने का दावा करता है। किसी भी प्रकार के संविधान के गुणों की विवेचना वह सदैव स्थान एवं परिस्थिति तथा श्रोता अथवा पाठक को ध्यान में रख कर ही करता है। और चूंकि उसका मुख्य उद्देश्य उपयुक्त अवसर पर उपयुक्त बात कहना है इसलिए कोई आश्चर्य नहीं कि विभिन्न अवसर पर कही गयी उसकी बातों में असंगति दिखाई दे। प्रायः वह एक अवसर पर एक बात कहता है तो दूसरे अवसर पर दूसरा। किन्तु इस प्रकार की असंगति से वह हतप्रभ नहीं होता है। वह यह प्रश्न नहीं उठाता है कि आदर्श राज्य की क्या विशेषता है यही नहीं इस प्रश्न पर भी कि सम्भावित सर्वश्रेष्ठ राज्य का क्या रूप होगा। वह देश और काल की विशिष्ट परिस्थिति तथा राज्य के निवासियों को ध्यान में रख कर ही विचार करता है। साइप्रस (Cyprus) में नक सम्राट् इवागोरस (Evagoras) के शासन से यह सिद्ध हो गया था कि जनता के हितों के लिए राजतन्त्र उपयुक्त शासन प्रणाली है। अतः जहां तक साइप्रस के निवासियों का प्रश्न है राजतन्त्र श्रेष्ठ शासन प्रणाली है। इसके विपरीत एथेन्स-वासियों के लिए संयमित लोकतन्त्र श्रेष्ठ शासन प्रणाली सिद्ध हुई थी क्योंकि इस प्रकार के शासन के अन्तर्गत उन्होंने पर्याप्त समृद्धि प्राप्त की। इसी प्रकार स्पार्टा निवासियों के लिए दोहरा राजतन्त्र श्रेयस्कर सिद्ध हुआ था।

आइसोक्रेटीज़ के विचारों की इन त्रुटियों की ओर विशेष ध्यान देने की अपेक्षा यह अधिक उपयुक्त होगा कि एक व्यक्ति द्वारा शासन तथा संविधान के अनुसार संचालित शासन के सम्बन्ध में उसके विचारों का संक्षिप्त विवरण दे दिया जाय। उसके अनुसार राजतन्त्र अधिकांश यूनानी राज्यों के लिए उपयुक्त नहीं था किन्तु मसीडोनिया के निवासियों का जीवन राजतन्त्र के अन्तर्गत ही व्यतीत हुआ था इसलिए उनके लिए शासन की कोई अन्य व्यवस्था उपयुक्त नहीं हो सकती थी (V १०७ १०८)। किन्तु मैसी-डोनिया का राजतन्त्र फारस के राजतन्त्र से भिन्न था (IV १५०)। फारस के राजतन्त्र में तो मानवता की अधोगति हो जाती थी और प्रत्येक व्यक्ति को समान रूप से दासता का जीवन व्यतीत करना पड़ता था। स्वतन्त्र संस्थाओं और राजनीतिक जीवन का वहां सर्वथा अभाव था। स्पार्टा के राजतन्त्र में आइसोक्रेटीज़ इस प्रकार के दोष नहीं देखता है किन्तु साइप्रस के इवागोरस (Evagoras) तथा उसके पुत्र और उत्तराधिकारी

और अपने शिष्य निकाक्लीज (Nicocles) के शासन को राजतन्त्र का सर्वोत्कृष्ट रूप मानता है। नैतिक दृष्टि से भी वह इस प्रकार के राजतन्त्र को अच्छा मानता है। इवागोरस की प्रशस्ति में वह जो कहता है तथा उसके पुत्र निकोक्लीज को अपने पिता के आदर्शों के अनुकूल आचरण करने के लिए जिन शब्दों में उद्बोधन करता है वह एक सर्वश्रेष्ठ शासक के गुणों का ही वर्णन है। इस प्रशस्ति में शासक के उन सभी गुणों का वर्णन मिलता है जिन्हें बाद की पीढ़ी के यूनानी अपने शासकों में देखने की आशा करते थे। स्पष्ट है कि एक व्यक्ति के शासन में शासक का चरित्र सर्वाधिक महत्त्व रखता है और उसकी शिक्षा-दीक्षा की समस्या राजनीतिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण हो जाती है। साथ ही शासक को स्वयं कार्य और वचन दोनों से जनता का शिक्षक होना चाहिए। शासक को शिक्षक के रूप में भी देखने की अभिलाषा प्लेटो और आइसोक्रेटीज दोनों में समान रूप से मिलती है। आइसोक्रेटीज का मत था कि शासक की सत्ता आदर और प्रशंसा पर आधारित होनी चाहिए भय पर नहीं, शासक का उच्च पद उच्च स्तर के आचरण और योग्यता की अपेक्षा करता है (II ९ २६)। साहित्य के सम्बन्ध में उसका मत था कि जनता को शिक्षित करने तथा उनको उत्थान करने के उद्देश्य से ही साहित्य की रचना होनी चाहिए। किन्तु प्लेटो की भाँति प्राचीन यूनानी कवियों की रचनाओं (II ४०-४९) एवं दुखान्त नाटकों को शिक्षा में स्थान देने का विरोध आइसोक्रेटीज नहीं करता है। कठोरता को वह शासक का आवश्यक गुण नहीं मानता है। शासक के लिए आवश्यक गुणों में आइसोक्रेटीज ने बुद्धिमत्ता संयम न्याय और विशेषकर शालीनता पर विशेष बल दिया है। शासक को इन गुणों से सम्पन्न करने हेतु शिक्षा देना निःसन्देह एक कठिन कार्य था किन्तु आइसोक्रेटीज ने इसका उपाय खोज लिया था। साधारण जनों के जीवन में वस्तुतः कितने ऐसे नियन्त्रण रहते हैं जो उन्हें पथभ्रष्ट होने से बचा लेते हैं किन्तु एक निरंकुश शासक को अपने को स्वयं शासित करना पड़ता है (II २ ५)। अवसर प्राप्त होने पर कोई भी व्यक्ति निरंकुश शासक होना पसन्द करेगा अथवा नहीं यह एक ऐसा प्रश्न था जिस पर यूनानी प्रायः विचार किया करते थे किन्तु यह प्रश्न कोई विशेष महत्त्व नहीं रखता था यद्यपि जेनोफन के Hiero का मुख्य विषय यही प्रश्न है। निरंकुश शासन के समर्थन में आइसोक्रेटीज ने कुछ ऐसी बातें कही हैं जो गूढ़ न होते हुए भी उस समय के प्रचलित तर्कों का अच्छा उदाहरण प्रस्तुत करता है (Supra p १२०)। किन्तु यहाँ फिर से इस बात का उल्लेख कर देना उपयुक्त होगा कि आइसोक्रेटीज इस प्रकार के शासन को उन लोगों पर नहीं लादना चाहता था जो इसके लिए इच्छुक नहीं थे।

आइसोक्रेटीज के अनुसार राजतन्त्र का सबसे बड़ा गुण यह है कि यह वैधानिक शासन के, चाहे वह लोकतन्त्र हो अथवा अल्पतन्त्र, सबसे गम्भीर दोष से मुक्त रहता है।

और यह दोष है योग्यता की ओर ध्यान न देकर[1] समस्त नागरिकों को समानाधिकार एवं विशेषाधिकार प्रदान करना। इस प्रकार की समानता निर्धनता को ही प्रोत्साहन देती है और उन्हीं के पक्ष में होती है। 'किंतु राजतंत्र में (अधिकारों और विशेषाधिकारों का) सबसे अधिक भाग सर्वश्रेष्ठ व्यक्ति को दिया जाता है, इसके बाद द्वितीय श्रेणी के व्यक्तियों को और इसी प्रकार योग्यता के अनुपात में अधिकारों और विशेषाधिकारों का वितरण होता है। यद्यपि यह सिद्धान्त सर्वत्र कार्यरूप में परिणित नहीं हो पाया है फिर भी राजतंत्रात्मक संविधान का अभिप्राय यही है (III १४ १५)। इस स्थल पर आइसोक्रेटीज राजतंत्र को ज्यामितिक समानता की श्रेणी में रखता है तथा प्लेटो और अरिस्टाटल द्वारा प्रतिपादित समानुपातिक समानता[2] से मिलती जुलती विशेषता प्रदान करता है। इस प्रकार वह राजतंत्र को उन गुणों से विभूषित करता है जिन्हें वह अन्यत्र (VII २१ ff आगे देखिए) पैतृक शासन की विशेषता बताता है। आइसोक्रेटीज द्वारा बताये गये राजतंत्र के अन्य गुण सन्देह प्रदान होते हैं और उन पर किसी प्रकार की टीका की आवश्यकता नहीं। उसके अनुसार राजतंत्र में निर्णय शीघ्रता से लिये जा सकते हैं अधिकारी स्थायी होते हैं अपने कर्तव्यों को समझते हैं और उनका पालन करने में व्यक्तिगत हितों से नहीं प्रभावित होते हैं तथा युद्ध काल में इस प्रकार का शासन अपेक्षाकृत अधिक कुशलता और योग्यता का परिचय देता है (III १६ २६)

यदि आइसोक्रेटीज ने आदर्श राज्य की कोई कल्पना की, (यद्यपि निश्चित रूप से यह नहीं कहा जा सकता है) तो प्लेटो की भांति उसका आदर्श राज्य स्वर्ग की वस्तु नहीं है और न आधुनिक विचारकों के आदर्श राज्यों की भांति भविष्य की ही वस्तु है। उसका आदर्श राज्य तो इतिहास के स्वर्णिम पृष्ठों की वस्तु है। उसका विश्वास था कि सोलन और क्लाइस्थनीज के समय में एरोपेगस के न्यायालय के नैतिक प्रभाव में एथेन्स को सम्यक् संविधान उपलब्ध था। Reopagiticus शीर्षक अपने

---

१ अल्पतन्त्र के सम्बन्ध में ... कार की आलोचना (जो साधारणतया उग्र लोकतन्त्र के सम्बन्ध में ही की जाती थी (देखें पृ० २०), देखकर कुछ आश्चर्य होता है, किंतु आइसोक्रेटीज का ध्यान प्रचलित अल्पतन्त्र की ओर है, जिसमें केवल 'अल्पसंख्यकों को ही नागरिकता के अधिकार तथा शासन में भाग लेने का अधिकार प्राप्त' होता था (IV १०४ १०५)।

२ Plato Repub VIII ५५८, Laws ७५७ c Aristotle, Polit III १२८०, a V infra, p २२१ n १।

निबन्ध में उसने 'इस प्राचीन संविधान'[1] का ही आदर्श रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास किया है और इसका समर्थन करने के लिए चौथी शताब्दी के लोकतन्त्र की आलोचना की है। इस निबन्ध के अर्द्ध एतिहासिक स्वरूप की उपेक्षा करके यदि हम आइसोक्रेटीज के सर्वश्रेष्ठ राज्य का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत करें, तो निम्नलिखित विशेषताएं सम्मुख आती हैं —

१ राज्य का उद्देश्य समृद्धि है और यह मुख्यतया सामरिक शक्ति अथवा जनसंख्या पर नहीं अपितु अच्छे शासन पर निर्भर करती है। (vii १३)

२ शासन करने वाले अधिकारियों की नियुक्ति जनता द्वारा की जानी चाहिए तथा अधिकारियों को अपने कार्यों का विवरण जनता के समक्ष प्रस्तुत करना चाहिए। (vii २६)।

३ पूर्ण समानता नाम की कोई वस्तु नहीं है अतः लाटरी द्वारा अधिकारियों को चुनने की प्रथा होनी चाहिए। समानुपातिक समानता का सिद्धान्त स्वीकार किया जाता है। इस सिद्धान्त के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को योग्यता के अनुपात में अधिकार मिलता है। (vii २१ २३)

४ पदलोलुपता नहीं होनी चाहिए। इसलिए उचित होगा कि पद आय के साधन न होकर व्यय के साधन हों। ऐसी दशा में अधिकार और उत्तरदायित्वपूर्ण पद साधन सम्पन्न व्यक्तियों के ही हाथ में रहेंगे। इस प्रकार सम्पत्ति-तन्त्र का सिद्धान्त लोकतन्त्रात्मक सिद्धान्त का स्थान ले लेता है। (xii १३१ ff vii २४ २७)

५ नागरिकों से उच्च स्तर की सार्वजनिक सेवा की उपेक्षा की जाती है (iv ७९) और विशेषकर धनिक वर्ग का यह कर्त्तव्य हो जाता है कि वह निर्धनों की सहायता करें जिससे कोई भी व्यक्ति अभावग्रस्त न रहे (vii ८३)

६ इसी से यह निष्कर्ष निकलता है कि धनिक और निर्धन दोनों वर्गों के हित में यह आवश्यक है कि सम्पत्ति की सुरक्षा की उचित व्यवस्था हो किन्तु सम्पत्ति से प्राप्त होने वाले लाभ और सुविधाओं का प्रयोग सभी की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए होना चाहिए। (vii ३५)

७ अच्छा शासन जिस पर राज्य की समृद्धि निर्भर करती है अत्यधिक विधि और नियम से नहीं प्राप्त किया जा सकता है। इसके लिए आवश्यक है कि सत्ताधारी

---

१ डियोडेकेसिस पट्रिआ vii ५८, Jaeger Paideia iii, पृष्ठ ११४ के अनुसार आइसोक्रेटीज पट्रिओस पोलिटीया का प्रयोग इसलिए नहीं करता है क्योंकि वह इस प्रचलित राजनीतिक नारे से जो Theramanes के समय से चला आ रहा था बचना चाहता था।

व्यक्तियो का चरित्र उनकी नतिकता एव व्यावहारिक योग्यता का स्तर ऊँचा हो (XII १३२ १३३ XV ९९-८३)।

८ इसी प्रकार, केवल अनकानेक नियम बना कर नागरिको से सदाचरण की आशा नहीं की जा सकती है। आचरण सम्बन्धी अनेक एव विस्तत नियम तो समाज के दोषपूर्ण वातावरण का ही परिचय देते हैं (VII ४०)।

९ इससे यह निष्कर्ष प्राप्त होता है कि बालको की शिक्षा की समुचित व्यवस्था करना राज्य का प्रमुख कर्तव्य है। किन्तु चूकि केवल साधन-सम्पन्न व्यक्ति ही सावजनिक पदो के लिए प्रत्याशी होंगे इसलिए केवल उन्ही को उच्च शिक्षा दी जानी चाहिए। (VII ४३)।

१० राज्य को चाहिए कि अपने धार्मिक कर्तव्यो का पालन गम्भीरतापूर्वक विवेकपूर्ण ढग से करे (VII २९)।

आइसोक्रेटीज की इस राजनीतिक योजना की व्यावहारिकता के सम्बन्ध म कोई निर्णय देना अथवा यह निश्चित करना कि किस मात्रा म यह चौथी शताब्दी ई० पू० के एथेन्स म प्रचलित पुरातन पन्थी विचारधारा का प्रतिनिधित्व करती है, हमारे विषय के पर है। हा, हमारे अध्ययन की दृष्टि से इतना अवश्य ध्यान देने योग्य है कि इस योजना को आइसोक्रेटीज लोकतन्त्रात्मक शासन के एक रूप म देखता था और अपने को जनता का मित्र समझता था, जनविरोधी (मिसोडिमोस) अथवा अल्पतन्त्र का समर्थक नहीं। किन्तु इस योजना के कुछ लक्षण (४ ५ ७ और ८) प्लेटो के कुलीनतन्त्र तथा स्वय आइसोक्रेटीज के सम्पत्ति-तन्त्र (देखिए, अध्याय ८) के लक्षणो से मिलते हैं और यह भी सम्भव हो सकता है कि उसने इन लक्षणो को यही से ग्रहण किया हो।[1] '३० व्यक्तियो के अल्पतन्त्र को वह शासन का निकृष्टतम स्वरूप समझता था। इस वह शासन का रूप न मान कर बल का रूप[2] मानता था और इसकी तुलना मे तत्कालीन लोकतन्त्र को अधिक सन्तोषजनक मानता था (VII ७०)। किन्तु साथ ही वह यह भी कहता है कि 'इससे किसी को यह नही मान लेना चाहिए कि इस लोकतन्त्र को स्वीकार करने का यह भी अर्थ हुआ कि मैं उन लोगो का भी अनुमोदन करता हूँ जिनके हाथ म आज सत्ता है। वास्तव म बात तो इसके विपरीत है (७६)। तत्कालीन समाज म उसे वही अनैतिकता दृष्टिगोचर हुई जो पेलीपोनीशियन युद्ध के

---

१ Areopagiticus (VII) की रचना प्लेटो की 'रिपब्लिक' के पर्याप्त समय पश्चात हुई।

२ प्लेटो (Laws ६८० B) के अनुसार डयूनास्टेइआ का प्रयोग प्रारम्भिक अवस्था की असभ्य पद्धति के लिए किया जाता था।

समय में व्याप्त थी और जिसका विरोध अरिस्टोफन्स तथा अनौनिमस आयमब्लीची (अध्याय ५) आदि परम्परावादी लेखकों ने किया था। लोकप्रिय राजनीतिज्ञों के विरुद्ध इस काल में भी यही आरोप लगाया जाता था कि वे सभी प्रकार के मान-दण्डों का उल्लंघन और सभी नैतिक मान्यताओं का विपर्यय कर रहे हैं। इन आलोचकों की पंक्ति में आइसोक्रेटीज़ भी खड़ा होता है और राजनीतिज्ञों के विरुद्ध यह आरोप लगाता है कि वे स्वच्छन्दता तथा मुक्त जैसे शब्दों का अर्थ बदल दे रहे हैं और इस प्रकार का व्यवहार कर रहे हैं जिससे ऐसा प्रतीत होने लगता है कि इन शब्दों का तात्पर्य अपरिमित ऐन्द्रिक सुख[१] प्राप्त करने का अवसर मान उपलब्ध करना है। किन्तु साथ ही वह यह भी दिखाने का प्रयास करता है कि प्राचीन लोकतन्त्र इन दोषों से मुक्त था। इस प्रकार उसकी रचनाओं में आदि से अन्त तक तत्कालीन राजनीतिक और नैतिक स्थिति की कटु आलोचना मिलती है जो डिमास्थनीज़ और प्लेटो दोनों का स्मरण दिलाती है। आइसोक्रेटीज़ पुनः अर्द्ध राजनीतिज्ञ और अर्द्ध दार्शनिक के रूप में सामने आता है।

चौथी शताब्दी ई० पू० के पूर्वार्ध के अन्य दार्शनिकों की रचनाएँ इतनी न्यून मात्रा में सुरक्षित रह सकी हैं कि राजनीतिक दर्शन के इतिहास में उनका स्थान निर्धारित करना सम्भव नहीं है। स्फेटस (Sphettus) निवासी एस्कीन्स (Aeschines) के सोक्रेटीज़ पद्धति पर आधारित संवादों का कुछ अंश अवश्य मिलता है। किन्तु राजनीति की दृष्टि से ये अधिक महत्त्वपूर्ण नहीं हैं। उसने किसी वाद का प्रतिपादन भी नहीं किया। साइरीन (Cyrene) निवासी अरिस्टिपस (Aristippus) अपने नगर से एथेन्स आया और सोक्रेटीज़ का सहयोगी बना। उसकी समस्त रचनाओं में से एक भी उपलब्ध नहीं है। प्रायः सब की सब नष्ट हो गयीं। जेनोफन ने उसे एक स्थल पर पात्र के रूप में प्रस्तुत किया है जहाँ सोक्रेटीज़ और अरिस्टिपस सत्ता (एर्खी) तथा शासकों और शासितों के लिए आवश्यक शिक्षा के विषय पर विचार विमर्श करते हैं। दोनों यह मान कर चलते हैं कि शासक और शासित एक दूसरे से भिन्न होंगे और एक ही व्यक्ति दोनों नहीं हो सकता है। सोक्रेटीज़ का कहना है कि शासन करने वालों के लिए शारीरिक सुखों में आत्म-संयम तथा शारीरिक श्रम में अध्यवसाय और दृढ़ता अत्यन्त आवश्यक है। अरिस्टिपस भी सोक्रेटीज़ की इस बात का समर्थन करता है और कहता है कि शासन सत्ता धारण करने वालों को अथक परिश्रम करना पड़ता है

---

१ नैतिक एवं भाषा विज्ञान की दृष्टि से मान्यताओं के विपर्यय का अध्ययन पर्याप्त रोचक होगा। देखिए Hesiod, Works and Days २७१-२७२। Thucydides III ८२, Plato Republic VIII ५६० D Isocrates VII २० XII १३१, XV २८३ और Diogenes को।

और बहुत-से सांसारिक सुखों का त्याग करना पड़ता है। अपने सम्बन्ध में वह यह कहता है कि शासन करने के कार्य से वह सदैव दूर रहेगा, क्योंकि अन्य नागरिकों के लिए व्यवस्था करने का उत्तरदायित्व स्वीकार किये बिना ही एक व्यक्ति के लिए स्वयं अपनी देख भाल के लिए ही पर्याप्त कार्य करना पड़ता है। सार्वजनिक पदों पर कार्य करने को वह दासता बताता है और ऐसे जीवन को उपेक्षित वर्गों के जीवन की ही भांति हेय समझता है। उसका कहना है कि कोई भी समझदार व्यक्ति इन दोनों प्रकार के जीवन से बचने का प्रयत्न करेगा और इन दोनों के मध्य का मार्ग अपनायेगा। उसी के शब्द हैं—'मेरा तो विचार है कि (इन दोनों मार्गों के अतिरिक्त) एक मध्यम मार्ग भी है जो सत्ता और दासता से हट कर स्वतन्त्रता का अनुसरण करता है और इसी मार्ग पर चल कर सुख प्राप्त किया जा सकता है।' इस पर साक्रेटीज़ यह आपत्ति करता है कि Cyrenaic hedonism (सुखवाद) का यह प्रयोग व्यवहार में असम्भव है। इस प्रकार के मार्ग का अनुसरण करने वाला व्यक्ति या तो नागरिक के अधिकारों से वञ्चित अपने ही नगर में विदेशी का जीवन व्यतीत करेगा अथवा शासितों की भांति अधिकारों से वञ्चित रह कर नागरिकता के कर्त्तव्यों का पालन करेगा। अरिस्टिपस के पास इसका कोई उत्तर नहीं है। वह केवल सार्वजनिक पदों पर कार्य करने वालों की कठिनाइयों तथा शासन करने की कला को सीखने की श्रमसाध्य एवं कष्टप्रद प्रक्रिया का उल्लेख करता है। इस पर सोक्रटीज़ यह उत्तर देता है कि सभी वाञ्छनीय वस्तुओं को प्राप्त करने के लिए परिश्रम (पानोज) करना पड़ता है और होसिएड, एजाकामस और प्रोडीकस जैसे प्राचीन काल के मनीषियों ने भी यही मार्ग दिखाया है। तदनन्तर जनोफन के इस संवाद में हेराक्लीज़ के निर्णय के सम्बन्ध में प्रोडीकस की कथा का सविस्तार उल्लेख किया जाता है और अरिस्टिपस की तथाकथित राजनीतिक विचारधारा का उल्लेख नहीं किया जाता है। जनोफन के इस प्रकरण का अभिप्राय यह सिद्ध करना प्रतीत होता है कि अरिस्टिपस तो संयम एवं कष्ट सहन करने की सोक्रटीज़ की परम्पराओं को नहीं स्वीकार करता था किन्तु एन्टीस्थीन्स इसी परम्परा का समर्थक था।

जेनोफन की रचना के एक प्रकरण में एन्टीस्थीन्स को भी प्रस्तुत किया गया है किन्तु इसमें उसके बारे में विशेष विवरण नहीं मिलता है। यदि उसे सिनीसिज़्म या 'सनक' (Cynicism) का प्रवर्तक[1] न भी स्वीकार किया जाय तो भी इतना

---

१ प्राचीन विद्वानों के अनुसार Cynicism का प्रवर्तक एन्टीस्थीन्स ही था। D R Dudley की A History of Cynicism (१९३७) में इसका खंडन किया गया है। कुछ अन्य विद्वानों का भी यही मत है। किन्तु

तो मानना ही पड़ेगा कि वह इसका पूर्वगामी था तथा इस वाद के लिए भूमि तैयार करने में महत्त्वपूर्ण योग दिया। उसकी रचनाएँ तो उपलब्ध नहीं हैं किन्तु उसके नाम से अनेक कहावतें प्रसिद्ध हैं और उसकी रचनाओं के शीर्षकों की एक लम्बी सूची मिलती है। सिसरो (Cicero) ने उसे magis acutus quam eruditus कहा है किन्तु आधुनिक विद्वान् उसके गुणों के सम्बन्ध में एकमत नहीं हैं। हाँ प्रत्यक्ष दर्शन में चौथी शताब्दी ई० पू० का प्लेटो की राजनीतिक विचारों से पृथक राजनीतिक विचारधारा के बारे में हमारे ज्ञान में पर्याप्त वृद्धि हो जाती यदि एंटीस्थीनीज की राजनीतिक रचनाओं में से कोई भी रचना हमें उपलब्ध होती। परम एवं पूर्ण व्यक्ति[1] की विवेचना करते हुए अरिस्टाटल एंटीस्थीनीज के एक उपाख्यान का उल्लेख करता है। इस उपाख्यान में खरगोशों की ओर से पशु जगत में समानता के सिद्धान्त को स्थापित करने की माँग की जाती है। इस पर सिंहों की ओर से प्रश्न किया जाता है कि 'तुम्हारे नख और दाँत कहाँ हैं?' नेता के गुणों को स्पष्टीकरण करने के लिए गड़रिये और भेड़ों की उपमा का श्रेय भी जनाफन ने (Symp iv ६) एंटीस्थीनीज को ही दिया है यद्यपि होमर[2] के समय से ही यह उपमा प्रचलित थी। इन आधारों पर एंटीस्थीनीज के नाम से किसी राजनीतिक विचारधारा का पुनर्रचना करना सम्भव नहीं है। अधिक से अधिक इतना कहा जा सकता है कि उसकी नैतिकता का आधार नगर राज्य और विधि व्यवस्था (नोमाइ) नहीं थे। वह इन दोनों का विरोधी था और उसकी नैतिकता व्यक्ति पर आधारित थी। बुद्धिमान् व्यक्ति नगर राज्य द्वारा निर्धारित विधि नियम के अनुसार

R Hostad ने Cynic Hero and Cynic King (१९४८) में तथा दर्शन-शास्त्र के कुछ अन्य इतिहासकारों ने प्राचीन मत का समर्थन किया है। इस अध्याय के अन्त में तथा अध्याय १२ के अन्त में दी गयी टिप्पणी भी देखिए।

१ Aristotle pol iii १२८४ a

२ इस उपमा का प्रयोग प्लेटो ने अपनी 'रिपब्लिक' में किया है (I ३४२-३४३) यद्यपि वह अधिक सफल नहीं हुआ है। Politicus २६७-२७५ में प्लेटो ने इसे त्याज्य समझा। Xenophon Memo iii अध्याय २-७ में इसी के आधार पर एक विचार विमर्श प्रस्तुत किया गया है और राजतन्त्र के समर्थन में प्रस्तुत Cyropaedia के अधिकांश विचारों को इसी उपमा से प्रेरणा मिलती है (देखिए अध्याय ९)। अतः यह सम्भव हो सकता है कि इन प्रकरणों के लिए जनोफन एंटीस्थीनीज का आभारी हो, क्योंकि साइरस (Cyrus) की प्रशस्ति में उसने भी लिखा था (K goel, ii १०५३-१०६१, इस अध्याय के अन्त में दी गयी टिप्पणी भी देखिए)।

अपना जीवन नहा व्यतीत करेगा। वह तो सद्गुण के विधि नियम का पालन करेगा।' अन्तरात्मा द्वारा विरोध करने के लिए बाध्य होने वाले व्यक्तियों की समस्या का यह एक उत्तर है। किन्तु साक्रटीज निमक जीवन म यह समस्या उत्पन्न हुई इस प्रकार का उत्तर कदापि न दता। इस प्रकार के उग्र व्यक्तिवाद का किसी भी प्रकार की शासन-व्यवस्था से मेल नहीं खाता। Cynic डायोजनीज (Diogenes) का भी यही मत था (अध्याय १२) किन्तु यद्यपि एंटास्थेनीस तत्कालीन समाज और राजनीतिज्ञों से प्लेटो की ही भांति असन्तुष्ट था, फिर भी मानव-समाज को सर्वथा त्याज्य नहीं समझता है। जनोफन (Symp iv ६४) सोक्रटीज के मुख से उसकी प्रशंसा कराता है तथा मनुष्यों और नगरों म सद्भावना और सौहार्द का प्रचार करने की दृष्टि से उन अत्यन्त उपयोगी कहलवाता है। उसके विशिष्ट सिद्धान्तों म परिश्रम का सिद्धान्त है। यह सिद्धान्त प्राडिकस के सिद्धान्त से भी आगे जाकर कठिन परिश्रम को साध्य के रूप म स्वीकार करता है। 'बुद्धिमान व्यक्ति जिस किसी कार्य को हाथ म लेता है उसम अपनी सारी शक्ति और कौशल लगा देता है (Pr ३१)। हेराक्लीज के सम्बन्ध म उसने लिखा कि मानव कल्याण और सभ्यता के लिए योगदान देने वालों म केवल प्रामीथियस ही उसम श्रेष्ठ था। इस विचार से आइसाक्रटीज भी परिचित था और मसीडोनिया के सम्राट फिलिप के सम्मुख उसने हेराक्लीज का आदर्श के रूप म प्रस्तुत किया है (Isocr v ७६, ११४)। बड़े सम्राटों म फारस के साम्राज्य का संस्थापक महान् साइरस हेराक्लीज का प्रतिमूर्ति के रूप म प्रस्तुत किया गया है। वह भी कठिन परिश्रम करने वाला सम्राट था और एंटीस्थीनीस ने उसके बारे में कई पुस्तकों की रचना की। यद्यपि एंटीस्थीनीस की पुस्तकें भी उतनी ही अनतिहासिक हैं जितनी कि जनोफन की Cyropaedia (अध्याय ९)। यह कहने की आवश्यकता नहीं कि एंटास्थनीस के विचारों में Cynicism, यूनानी राजतन्त्र और Stoic 'दर्शन' सभी के अंकुर विद्यमान है।

कुछ अतिरिक्त टिप्पणियां और प्रसंग निर्देश

अध्याय—७

GENERAL Cambridge Ancint History, Vol vi, Ch iii (M Cary) और Gh xvi (E Barker) W Jaeger, Paideia ii (Eng Trans), पृष्ठ १२६ १६० G C Field, Plato and his Contemporaries (१९३०) part ii अल्सी बयाडीज के सम्प्रदाय का सूत्रपात उसके जीवन काल म ही हो गया था। जेनोफन द्वारा उसके पुनरागमन के

विवरण से तुलना कीजिए (Hellen १४, ११ २०) तथा I Bruns की Das literarische Portrat (१८९६), pp ५०९ ff देखिए।

PLATO Episte vii ३२४ ३२७ B Crito ५० end Gorgias passim किन्तु ४८८ ४९२ विशेष रूप से।

ISOCRATES उसकी अनेक रचनाएँ है और प्रायः एक ही बात कई स्थलों पर दुहराई जाती है। इस अध्याय में Teubner के मूल Blass २ nd edit १८८६) में दिये हुए भाषणों और खण्डों के क्रम की ओर संकेत किया गया है। क्रमसंख्या xiii Against the Sophist अपूर्ण है। राजतन्त्र के सम्बन्ध में विशेष कर साइप्रस के भाषणों के लिए ii iii ix और v Philip J Sykutris का Hermes Lxii (१९२७) में प्रकाशित Evagoras और F Taeger Isokrates und die Anfang des hellenistischen Herrchers kultes (Hermes) Lxxii (१९३७) देखिए। polity' के लिए मुख्यतया vii Areopagiticus और xii Panathenaicus (अंतिम रचना xv Antidosis की ही भांति वृद्धावस्था की है किन्तु उसकी दृष्टि निरंतर अपने विगत जीवन पर ही रहती है और उस समय के अपने कार्यों को उचित सिद्ध करने के लिए वह सतत प्रयत्नशील दिखाई देता है x Helen और I Ad Demonicum देखिए।

G Mathieu की Les Idees politiques a Isocrate १९२५ Chs xi, xii, xiv और w Jaeger, Paideia iii pp ४७ ७० भी, (Jaeger के अनुसार Against the Sophists की रचना प्लेटो की Gorgias के बाद हुई और उसका यह विचार है कि Gorgias के प्रत्युत्तर के रूप मे ही इसकी रचना की गयी)।

ARISTIPPUS Xenophon Mem ii १ १ १८ Diogens Laertius के उपाख्यान ही मिलते हैं। Stobaeus (Ecl iv, Ch viii १८ Hense iv p ३०) में उसके एक कथन का उल्लेख है जिसके अनुसार राजतन्त्र और निरंकुशता में वही अन्तर है जो विधि की व्यवस्था और अराजकता अथवा स्वतन्त्रता और दासता में हैं।

ANTISTHENES Mullach Ff Philos Gr ii में संगृहीत खण्ड उसकी असख्य रचनाओं के निराशाजनक अवशेष हैं। उसकी रचनाएँ प्रारम्भ में ही नष्ट हो गयी। एंटीस्थीनेस की विचारधारा की पुनरचना करके तथा सोक्रटीज प्लेटो और डायोजनीज के विचारों से इसका सम्बन्ध स्थापित करने का प्रयास गम्भीर त्रुटियाँ उत्पन्न कर सकता है। इस अध्याय में एंटीस्थीनेस के सम्बन्ध में

जो कुछ कहा गया है उसे भी पूर्णरूपेण विश्वसनीय नहीं कहा जा सकता। जो लोग एंटीस्थीनीस की विचारधारा का सविस्तार अध्ययन करना चाहते है वे R Hoistad की Cynic Hero and Cynic King (Uppsala, १९४८) पृष्ठ १०४–११५ का अवलोकन करें, यद्यपि यह शीर्षक भी भ्रमोत्पादक है। इस पुस्तक म एंटीस्थीनीस का राजनीतिक विचारधारा का विशद विवरण प्रस्तुत किया गया है। Xenophon की Mem ii Ch i म अरिस्टिपस के विरुद्ध जो तर्क प्रस्तुत किये गये है, विशेष कर हराक्लीज का परिश्रम का सिद्धान्त, उनसे एंटीस्थीनीस के प्रभाव का आभास मिलता है। K Joel Der echte und der Xenophontische Sokrates के अनुसार Mem iii Chs २-७ और Cyropaedia के अधिकांश भाग म एंटीस्थीनीस के विचारों की झलक मिलती है।

अध्याय ८

प्लेटो 'रिपबलिक'

प्याले के मुह पर मधु लप करके बालकों को कोई कड़वी औषधि भी सुगमता पूर्वक दी जा सकती है। इसी सिद्धान्त का अनुसरण करके लुक्रेशस (Lucretius I ९३६ ९५०) ने अपने दार्शनिक सिद्धान्तो को पद्य म प्रस्तुत किया। प्लेटो के ग्रथ रिपब्लिक के बारे मे भी यही कहा जा सकता है। इसका प्रारम्भ का स्वाद तो मधु का है और उसके आधार पर यह अनुमान नहीं लगाया जा सकता कि प्याले के अन्दर कुछ अमृत और दुष्कर तथा कुछ कडुवे घूट भी मिलेंगे। सुख और एश्वर्य के वातावरण के दृश्य के साथ इस पुस्तक का प्रारम्भ होता है। कुछ सौम्य रुचि और व्यवहार वाले व्यक्ति वार्ता में संलग्न हैं। वार्ता का विषय न तो अधिक गूढ है और न अधिक क्षुद्र ही। युवा और वृद्धावस्था स्वार्जित अथवा पतृक सम्पत्ति इसके गुण-दोष पर वार्ता प्रारम्भ होती है और इन विषयों से पाठक उत्तरोत्तर आगे बढ़ता जाता है—गूढ़ और दुरूह विषयो की ओर। दयालु और वृद्ध आतिथेय, वार्ता में सलग्न सज्जनो से अवकाश की प्रार्थना करता है और उसके सत्कारपूर्ण गृह का दृश्य विलीन हो जाता है। सदा-कदा नाटकीय प्रभाव उत्पन्न करने के अतिरिक्त यह दृश्य प्राय स्मृति-पट से ओझल ही हो जाता है। यह अब अचानक नहीं होता है और न वार्ता का तार ही टूटता है। सोक्रेटीज तथा अन्य उपस्थित सज्जनो से अवकाश ग्रहण करने के पूर्व वृद्ध सफलस (Cephalus) कहता है कि धनवान होने से एक सब से बडा लाभ यह होता है कि मनुष्य बेईमानी करने की आवश्यकता से बच जाता है और अच्छा बन सकता है। स्वभावत इस प्रकार के प्रश्नो पर विचार होने लगता है—जैसे 'अच्छा बनने का क्या तात्पर्य है?' 'मनुष्य अच्छा क्यो बने?' और शीघ्र ही प्लेटो की कडुवी औषधि की पहली घूट हम गले से नीचे उतारनी पड़ती है। Gorgias में प्रस्तुत समस्या पर पुन विचार होने लगता है और बुद्धिमान् व्यक्ति के सम्मुख उत्पन्न होने वाली सब से गम्भीर समस्या अर्थात् उसके जीवन का क्या ढंग होगा[१] सम्मुख आ जाती है। सामान्यतया सज्जन कहे जाने वाले व्यक्तियो के इस उत्तर पर कि ईमानदारी के साथ जीवन व्यतीत करना और मित्रों की सहायता तथा शत्रुओं का दमन करना विचार किया जाता है और इसे

---

१ Republic I ३५२ D Gorgias ५०० c

अपर्याप्त बताया जाता है। थ्रैसीमेकस का यह उत्तर भी, कि मनुष्य कर्त्तव्यों के बन्धन से मुक्त है सन्तोषजनक नहीं माना जाता, यद्यपि इस निर्णय पर पहुँचने में कुछ कठिनाई अवश्य होती है। तत्पश्चात सोक्रेटीज को चुनौती दी जाती है कि वह यह सिद्ध करे कि उचित जीवन पद्धति अनुचित की अपेक्षा अधिक श्रेयस्कर है। इसी चुनौती से सम्पूर्ण वाद विवाद का सूत्रपात होता है। इस प्रश्न का निर्णयात्मक उत्तर तो 'रिपब्लिक' की नवी पुस्तक तथा पुरस्कार और दण्ड की कथा के प्रसंग में ही मिलता है जिसका उल्लेख 'रिपब्लिक' की १०वीं पुस्तक में किया गया है। इसी पुस्तक के साथ 'रिपब्लिक' समाप्त भी की जाती है। वैसे तो उचित जीवन व्यतीत करना एक कठिन कार्य है और जैसा कि कुछ प्राचीन नीतिवादियों[1] का कहना था इस प्रकार का जीवन श्रेयस्कर इसीलिए है कि मनुष्य ने सभी के हित में दूसरों के प्रति अन्यायपूर्ण व्यवहार न करने का निश्चय किया था।[2]

यद्यपि इस प्रारम्भिक पर्यवेक्षण का मुख्य उद्देश्य नीतिवादियों तथा अनीतिवादियों द्वारा प्रस्तुत न्याय की कुछ प्रचलित परिभाषाओं की त्रुटियों का उद्घाटन मात्र है, फिर भी यदि ध्यानपूर्वक इसका अध्ययन किया जाय तो प्लेटो के उस आदर्श राज्य के कुछ लक्षणों का पूर्वाभास इसमें मिलता है जिसकी रचना वह आगे चल कर करता है। ये लक्षण इस प्रकार हैं—शासन का संचालन शासक के हित में न होकर शासितों के हित में होना चाहिए, आर्थिक शक्ति को राजनीतिक शक्ति से पृथक रखना चाहिए, राज्य के महत्त्वपूर्ण पदों पर कार्य करने में किसी प्रकार का आकर्षण नहीं होना चाहिए और न इन पदों से कोई वैयक्तिक लाभ ही प्राप्त होना चाहिए राज्य में संघर्ष और विभाजन मानव-मस्तिष्क के संघर्ष और विभाजन की ही भाँति हैं और इनके फलस्वरूप मानव-मस्तिष्क की ही भाँति राज्य भी अपना सन्तुलन और स्वास्थ्य खो देता है। किन्तु इस प्रारम्भिक पर्यवेक्षण के आधार पर यह अनुमान करना सम्भव नहीं है कि आगे चल कर क्या कहा जायगा। हाँ पाठकों को यह आभास अवश्य हो जाना चाहिए कि 'पोलिटिआ' की यूनानी धारणा कितनी व्यापक थी और प्लेटो की पुस्तक के इस शीर्षक का अंग्रेजी अनुवाद रिपब्लिक (Republic) कितना अनुपयुक्त है। इसमें सन्देह नहीं कि आइसाक्रेटीज की रचनाओं तथा स्वयं प्लेटो की 'Gorgias' से परिचित बुद्धिमान् पाठक

---

१ देखिए, अध्याय ५।

२ विशेष कर निबलों के हित मे। इसके विपरीत थ्रेसीमकस ने सबल के हित का समर्थन किया था। किन्तु प्लेटो सबल और निबल के हित के अन्तर की ओर ध्यान नहीं देता है। देखिए K R Popper The Open Society I १०२ ff

शासकों की शिक्षा को प्रदान किये जाने वाले महत्त्व से आश्चर्यान्वित नहीं होंगे यद्यपि शिक्षा के सम्बन्ध में रिपब्लिक (Republic) में एक सर्वथा नवीन और अप्रत्याशित दृष्टिकोण प्रस्तुत किया गया है। शिशु शिक्षा एवं प्राथमिक शिक्षा को जो महत्त्व दिया गया है, वातावरण और अनुकरण द्वारा अच्छी बातें सीखने एवं अवांछनीय एवं कुरूप से बचने पर जो जोर दिया गया है वह सहज ही ध्यान आकृष्ट करता है। प्लेटो के इन विचारों की ओर शिक्षाविदों ने पर्याप्त ध्यान दिया है, कुछ ने उनका नीर-क्षीर विवेक का विवेकपूर्वक विवेचन करने का प्रयास किया है तो कुछ ने इन विचारों को बिना किसी संकोच अथवा समीक्षा के स्वीकार कर लिया है। यहाँ केवल इतना कहना आवश्यक प्रतीत होता है कि प्लेटो ने शिक्षा की जिस व्यवस्था की कल्पना की है वह सर्व राज्य (पोलिस) की आवश्यकताओं का ध्यान में रख कर ही संचालित होती है। प्लेटो के अनुसार शिक्षा स्वयं अपने में महत्त्वपूर्ण नहीं है। यह साध्य नहीं है, केवल साधन मात्र है और इसका महत्त्व केवल इसलिए है कि यह मनुष्य को राज्य का योग्य और उपयुक्त सदस्य बनाता है। इस सम्बन्ध में यह ध्यान देने योग्य है कि यद्यपि रिपब्लिक (Republic) में वार्ता का प्रारम्भ वैयक्तिक नैतिकता तथा न्यायप्रिय व्यक्ति के न्यायसंगत जीवन की विशेषताओं से होता है तथापि पाठक को शीघ्र ही यह आभास हो जाता है कि प्लेटो के अनुसार न्याय समुदाय का ही विशिष्ट गुण है। जिस प्रकार न्याय अथवा औचित्य और अन्याय अथवा अनौचित्य (एडिकिया) किसी व्यक्ति के गुण और दोष हो सकते हैं उसी प्रकार राज्य के भी। यद्यपि न्याय और औचित्य पर, जो प्लेटो और सोक्रटीज की राजनीतिक विचारधारा का केन्द्रीय विषय है, नागरिक के स्थान पर नगर के सन्दर्भ में विचार करना सोक्रटीज और प्लेटो के विचारों के अन्तर का द्योतक है तथापि इससे यह सिद्ध नहीं होता है कि प्लेटो ने सोक्रटीज के सिद्धान्तों का त्याग दिया है।[1] प्लेटो ने देखा कि यूनानी नगर राज्यों के सार्वजनिक जीवन में सोक्रटीज जैसे व्यक्ति के लिए कोई स्थान नहीं था। साथ ही उसने यह भी अनुभव किया कि राजनीति के क्षेत्र में सोक्रटीज जैसे व्यक्तियों की ही आवश्यकता है। ऐसी दशा में उसने अपना कर्त्तव्य समझा कि वह एक ऐसे राज्य की रचना करे जिसका मार्गदर्शन वास्तविक दार्शनिक द्वारा हो और जिसमें इस प्रकार के दार्शनिक को बेकार समझ कर घृणास्पद और खतरनाक समझ कर भय और आशंका का पात्र न समझा जाय। इस कर्त्तव्य का पालन करने में वह लग भी गया और इसी हेतु उसने अपने आदर्श राज्य की रचना की। कदाचित् इस कार्य में वह सफल नहीं हुआ क्योंकि प्लेटो के इस आदर्श राज्य में सोक्रटीज को उतने समय तक भी जीवित रहने का अवसर नहीं मिल सकता था। एथेन्स की

---

१ वैसे प्लेटो और अरिस्टाटल के सिद्धान्तों में भी अन्तर था। देखिए अध्याय ५।

तुलना म इस राज्य म तो उसे शीघ्र ही मृत्यु का सामना करना पडा। परन्तु प्लेटो वास्तव म इतिहास के सुकरात के सम्बन्ध म नहीं सोच रहा था। वह तो विशुद्ध न्यायोचित व्यक्ति की कल्पना कर रहा था और इस प्रकार का व्यक्ति पूर्णतया न्याय सगत राज्य म भली प्रकार रहन म किसी प्रकार की कठिनाई का अनुभव नहीं कर सकता था।

तो फिर राज्य (पोलिस) की क्या स्थिति है? इसकी व्युत्पत्ति क्या है? इसका आधार क्या है? जसा कि हम देख चुके है प्लटो के अनुसार राज्य का आधार पारलौकिक है। आदर्श रूप (Forms) अथवा प्रत्यया (Ideas) का सिद्धान्त राज्य क सम्बन्ध म भी उसी प्रकार से प्रयुक्त किया जा सकता है जस मनुष्य द्वारा निर्मित साधारण वस्तुओं के सम्बन्ध म। उदाहरणार्थ जिस प्रकार हम दष्टिगोचर होने वाली सभी मेजों म कुछ रूप साम्य होता है जिसके आधार पर वे मेज की श्रेणी म आती है किसी अन्य वस्तु की श्रेणी म नहीं, उसी प्रकार राज्य का भी एक निश्चित और निर्धारित आदर्श रूप होता है। सभी वर्तमान राज्य इस आदर्श रूप के न्यूनाधिक मात्रा म अपूर्ण अनुकरण मात्र हैं—उसी प्रकार जसे दृष्टिगोचर होने वाली सभी मेज मेज के 'आदर्श रूप' के अपूर्ण अनुकरण हैं। प्लटो के अनुसार इस 'आदर्श राज्य' का अस्तित्व वास्तविक है केवल नाम मात्र के लिए ही नहीं। किन्तु इसका अस्तित्व अमूर्त है और वह सम्भवत् स्वर्ग मे स्थित है। इसके वास्तविक स्वरूप को समझना अथवा इसके सम्बन्ध म ज्ञान प्राप्त करना अत्यन्त कठिन है। इसलिए प्लटो न अपनी पुस्तक के महत्त्वपूर्ण भाग म ज्ञान के सिद्धान्त तथा ज्ञान प्राप्त करने के लिए आवश्यक मानसिक अनुशासन की चर्चा की है। राज्य का आदर्श रूप क्या है? इस प्रश्न का सीधा उत्तर प्लटो नहीं देता है। वह दे भी नहीं सकता था। लिखित शब्दों मे इतनी सामर्थ्य नहीं है कि उनके माध्यम से इस प्रकार के प्रश्नों का उत्तर दिया जा सके (अध्याय ७)। सही उत्तर की अनुभूति तो भावना के स्तर पर ही हो सकती है और उस दिव्य दृष्टि द्वारा ही देखा जा सकता है। अनुराग और भक्ति से युक्त व्यक्ति ही दार्शनिक हो सकता है। इन्हीं की सहायता से शाश्वत 'रूप' का दर्शन सम्भव हो सकता है। भावी राजनीतिक सुधारक के मुख मे इस प्रकार की बात सुनना कुछ विचित्र सा प्रतीत होता है किन्तु यह तो वही प्लटो है जो Phaedrus' और Symposium' जसी पुस्तकों की रचना करन क पश्चात राज्य का समझने का प्रयास कर रहा है। अतएव हम यह समझने म कठिनाई नहीं होनी चाहिए कि Republic का भाग बहुत अशो म राजनीतिक समस्याओं पर विचार करन की दष्टि म अनुपयुक्त क्यों है। मूलभूत' अथवा आदर्श राज्य मे तो राजनीतिक समस्याएँ होती नहीं। प्रत्येक वस्तु अपरिवर्तनशील और शाश्वत होती है। राज्य के वास्तविक कल्याण के लिए आवश्यक ज्ञान केवल उन्हीं व्यक्तियों को प्राप्त हो

सकना है जो अदृश्य ससार को समझने तथा इसकी विचित्रताओ पर गम्भीर चितन करने म क्यों यतीत कर देते हैं। इस ज्ञान से सम्पन्न व्यक्ति ही राज्य के वास्तविक कल्याण के लिए कायकलाप भी निर्धारित कर सकते हैं क्योंकि जिस वस्तु को आप समझ नहीं सकते उसका सुधार भी नहीं कर सकते।

प्लेटो की रिपबलिक की इस द्विगुणात्मक विचारधारा के कारण जो लौकिक और पारलौकिक राज्य पर एक साथ विचार करता है इसका व्याख्या करने म विशेष रूप से कठिनाइ उत्पन्न होता है। यह निश्चय करना कठिन हो जाता है कि रिपबलिक के किस अश म राज्य के आदश रूप प्रत्यय एव इसके तात्त्विक स्वभाव का वणन किया गया है और किस अश म लौकिक जगत का विवरण है जिसम मनुष्य निवास करते हैं खाते और मरते हैं। इसम सन्देह नहीं कि पहले अश का अपेक्षा दूसरा अश अधिक है। पहले का वणन करने की क्षमता शायद म नहीं है। किन्तु चूकि राजनीतिक सुधारक आदश राज्य से निकटतम सम्भावित सादृश्य स्थापित करने के उद्देश्य से प्रेरित होकर ही काय करता है इसलिए आदश एव शाश्वत राज्य तथा लौकिक एव परिवतनशील राज्य म किसी प्रकार के आधारभूत अन्तर का प्रश्न नहीं उठता। तथापि प्लेटो दो विभिन्न स्तरों पर लिखता है। कभी कभी तो वह स्पष्ट रूप से एथेन्स[1] को ध्यान में रख कर लिखता है। यह वही राज्य था जहा प्लेटो को विशेष सफलता नहीं मिल सकी। प्लेटो की दृष्टि म एथेन्स एक ऐसा रोगग्रस्त राज्य था जो उपचार के लिए तैयार नहीं था और जिसे स्वास्थ्य लाभ कराना असम्भव था। तथापि व्यावहारिक राजनीति से असम्बन्धित प्रतीत होते हुए भी रिपबलिक का वह अश जिसम प्लेटो ने अत्यन्त सूक्ष्म एव आध्यात्मिक विषयों पर चिन्तन किया है इस पुस्तक का सब से महत्त्वपूर्ण अश है। पुस्तक का यह भाग शासक को न केवल दार्शनिक बुद्धिमत्ता का आधार प्रदान करता है अपितु प्लेटो के इस मूल एव आधारभूत सिद्धान्त को भी प्रस्तुत करता है कि उचित राजनीतिक कायकलाप किसी विशिष्ट काल जिसे यूनानी कहा करते थे पर न निभर करके 'परमश्रेष्ठ म सम्बन्धित पारलौकिक ज्ञान पर निभर करता है।

आदश अथवा विचार जगत म स्थित राज्य तथा राजनीतिक सुधार के साथ ही प्लेटो ने एक तीसरे विषय को भी महत्त्व दिया है। यह सब एक ऐसा विषय है जो उपयुक्त उभय विषयों म समान रूप से विद्यमान है और जिसका सम्बन्ध व्यक्ति और राज्य के जीवन और स्वभाव (बाइआम टोम्राइ) के सादृश्य से है। जीव और राज्य

---

१ उदाहरणार्थ Republic vi ४९५ A–४९६ D and iv ४२५ C–४२७A (इनके साथ Epistle vii ३३० C–३३१ B की तुलना कीजिए) और ii ३७२ D–३७४।

(बाइओस-पोलिटिया) की यह उपमा तो मार्मिक है और गूढ़ भी। यूनानी राजनीतिक विचार धारा में यह पहले से स्वीकार किया जा चुका था (देखिए अध्याय ३) कि किसी राज्य का चरित्र वहां के नागरिकों के चरित्र में प्रतिबिम्बित होता है और इसी प्रकार नागरिकों के चरित्र का प्रतिबिम्ब उनके राज्य के चरित्र में दिखाई देता है। किंतु प्लेटो ने अपनी 'रिपब्लिक' में इस साम्य को उपमा से अधिक महत्त्व दिया है। उसके अनुसार किसी भी व्यक्ति का जीवन उसके शरीर की अपेक्षा उसके मस्तिष्क और आत्मा (फाइकी) पर अधिक निर्भर करता है। ऐसी दशा में प्लेटो राज्य को प्राणतत्वीय कार्य-कलापों के समूह मात्र के रूप में न देख कर मस्तिष्क अथवा आत्मा के रूप में देखता है जो पूरे समुदाय पर वही अधिकार रखता है जो एक व्यक्ति की आत्मा उसके शरीर पर रखती है। सोक्रेटीज का कहना था कि आत्मा का उत्कर्ष (एपिमालिआटाल फाइकोस) उन भौतिक कार्यकलापों से कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण है जिन्हें सम्पन्न करने में मनुष्य अपनी समस्त शक्ति लगा देता है। प्लेटो का कहना है कि राज्य के सम्बन्ध में भी सोक्रेटीज का यह कथन चरितार्थ होता है तथा प्रत्येक राज्य का यह कर्तव्य है कि वह अपनी आत्मा के उत्कर्ष के लिए विशेष रूप से जागरूक रहे क्योंकि राज्य स्वयं आत्मा और शरीर दोनों है और इसकी संरचना भी मानव-आत्मा के ही सदृश है।

इस दृष्टिकोण के परिणाम महत्त्वपूर्ण होंगे, किंतु प्लेटो ने राज्य की विवेचना इससे नहीं प्रारम्भ की है। इस विवेचना का प्रारम्भ तो राज्य के लिए आवश्यक न्यूनतम भौतिक आधार तथा राज्य के प्रारम्भिक स्वरूप के विश्लेषण से प्रारम्भ होता है। किसी तत्कालीन राज्य के अध्ययन के आधार पर यह विश्लेषण नहीं किया गया है और न राज्य की व्युत्पत्ति का एतिहासिक विवरण ही प्रस्तुत किया गया है। राज्य के अस्तित्व के लिए आवश्यक न्यूनतम वस्तुओं का विवरण मात्र प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। राज्य का अस्तित्व प्रकृति पर आधारित है अथवा विधि पर? इस प्राचीन प्रश्न का उत्तर देना प्लेटो अनावश्यक समझता है। उसका विचार है कि चूंकि राज्य मनुष्य की आवश्यकताओं की पूर्ति करता है, इसलिए निश्चित रूप से यह मानव प्रकृति के अनुकूल है। मनुष्य की भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए, भोजन- वस्त्र, आवास तथा इनके उत्पादन के लिए आवश्यक साधारण यन्त्रों का निर्माण करने के लिए आवश्यक है कि प्रत्येक व्यक्ति अपने निजी उद्योग में विशेष दक्षता प्राप्त करे तथा सार्वजनिक हित के लिए अपने कौशल का प्रयोग करे, उसके कौशल और उसकी सेवाओं का लाभ दूसरे उठा सकें और दूसरों की सेवाओं तथा कौशल का लाभ वह उठा सके। इस प्रकार के सहयोग और कार्य विभाजन द्वारा ही राज्य के निवासियों का भरण-पोषण

सम्भव हो सकता है। हिप्पियास[1] की व्यक्तिवादी पद्धति जिसमें प्रत्येक व्यक्ति अपनी आवश्यकता की सभी वस्तुओं का निर्माण स्वयं करता है का अनुसरण करके यह नहीं सम्भव हो सकता। जिन आवश्यक वस्तुओं का स्थानीय उत्पादन सम्भव नहीं है उनका आयात किया जाना चाहिए और आवश्यकता से अधिक उत्पन्न की जाने वाली स्थानीय वस्तुओं का निर्यात किया जाय। आयात निर्यात का यह व्यापार भी एक विशिष्ट वृत्ति है जिसे कुछ विशिष्ट व्यक्तियों को ही सौंपा जा सकता है। इसी प्रकार राज्य की सुरक्षा की व्यवस्था करने का काम भी एक विशिष्ट वृत्ति है जिसे विशिष्ट व्यक्ति ही सम्पन्न कर सकते हैं। प्रत्येक व्यक्ति सैनिक नहीं हो सकता। सैनिकों की भी एक पृथक वृत्ति होनी चाहिए और राज्य के अन्तर्गत अन्य वृत्तियों की अपेक्षा सैनिक वृत्ति के सदस्यों को अपने काम में विशेष रूप से दक्ष होना चाहिए। सेना का प्रयोग सुरक्षा एवं आक्रमण दोनों के लिए किया जायगा अथवा केवल सुरक्षा के लिए ही? इसका निर्णय इस प्रश्न के उत्तर पर निर्भर करेगा कि नागरिकों के जीवन का क्या ध्येय है। साधारण आवश्यकताओं की पूर्ति के साथ-साथ आधुनिक सभ्य राज्यों में उपलब्ध सुख एवं सुविधा के साधनों की अभिलाषा रखने वाले राज्य को अपने पड़ोसियों पर आक्रमण करना पड़ेगा क्योंकि इसके बिना सुख और सुविधा के इन साधनों को उपलब्ध करना सम्भव नहीं हो सकता। प्लेटो भली भाँति जानता था कि पाँचवीं शताब्दी ई० पू० के एथेन्स का वैभव अनेक अन्य राज्यों के शोषण पर ही आधारित था। युद्ध के पश्चात् सुख और सुविधा के ऊँचे स्तर को कायम रखने के प्रयत्नों के। यह आर्थिक दृष्टि से अहितकर तथा नैतिक और शारीरिक दृष्टि से अस्वास्थ्यकारी सम्पन्नता थी। यह ऐसी स्थिति थी जिसके फलस्वरूप राज्य में वकीलों और चिकित्सकों की संख्या में अवांछित वृद्धि होना अवश्यम्भावी हो जाता था और इन दोनों वृत्तियों का अनुसरण करने वालों की संख्या में अवांछित वृद्धि प्लेटो की दृष्टि में राज्य के नैतिक एवं शारीरिक अस्वस्थता का द्योतक था।

यहाँ तक तो राज्य अथवा शासन के सम्बन्ध में प्लेटो के सिद्धान्त हमारे सम्मुख नहीं आते हैं। हम केवल यह जान सके हैं कि सरलतम रूप में तथा ऐश्वर्य की अवस्था में राज्य का क्या स्वरूप होता है। फिर भी, प्लेटो द्वारा राज्य की दो विशेषताओं का पूर्वाभास हो जाता है—प्रथम प्रत्येक मनुष्य को व्यक्ति के रूप में न देख कर कर्त्ता के रूप में देखा जाता है—किसी विशेष कौशल अथवा शिल्प की प्रतिमूर्ति के रूप में जिसका सम्पादन वह समुदाय के हित में करता है। यह दृष्टिकोण आद्योपान्त कायम रहता है। द्वितीय यद्यपि अभी तक औपचारिक शासन की कोई चर्चा नहीं की गयी है तथापि राज्य

१ मूल में हिप्पियास का नाम नहीं लिया गया है। किन्तु प्रायः अन्य विचारकों के दृष्टिकोण की ओर संकेत करते हुए प्लेटो उनका नाम नहीं लेता है।

की प्रतिरक्षा के उत्तरदायित्व को एक ऐसे विशिष्ट वर्ग के हाथ में सौंपने की बात की जाती है जो वृत्ति से सैनिक है और जो न केवल कौशल और साहस से सम्पन्न है अपितु बौद्धिक योग्यता से भी युक्त है और ज्ञान का प्रेमी है। किन्तु इन संरक्षकों (guardians) के भरण-पोषण तथा उनकी शिक्षा की क्या व्यवस्था होगी? यह प्रश्न सोक्रेटीज करता है (३७६ C) और इसी के उत्तर से प्लेटो के आदर्श राज्य की रचना का समारम्भ होता है। यह बात महत्त्वपूर्ण है कि प्लेटो के आदर्श राज्य का विवरण एक विशिष्ट वर्ग के बच्चों की शिक्षा से प्रारम्भ होता है। सामान्य नागरिकों की शिक्षा के लिए प्लेटो के राज्य में कोई व्यवस्था नहीं की गयी है। निश्चित रूप से यह भी नहीं कहा जा सकता कि सामान्य नागरिकों को प्लेटो अपनी विशिष्ट वृत्ति के अतिरिक्त[1] भी किसी प्रकार की शिक्षा देना चाहता था अथवा केवल यही चाहता था कि सामान्य नागरिक जुलाहे, बढ़ई, व्यापारी या साहूकार रह कर ही समुदाय की आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति करें। किन्तु जिन लोगों के हाथ में समुदाय की प्रतिरक्षा का उत्तरदायित्व सौंपा जाता है उनमें तो साहस और शालीनता का अनुपम सम्मिश्रण होना चाहिए जिससे वे विदेशी शत्रुओं के साथ कठोरता का व्यवहार कर सकें और स्वजनों के प्रति शिष्ट और शालीन व्यवहार कर तथा उनके हितों की रक्षा कर सकें। जनता के भावी संरक्षकों की शिक्षा बाल्यावस्था से ही प्रारम्भ होनी चाहिए। यद्यपि अभी तक प्लेटो ने कुछ संकेत नहीं किया है फिर भी हम यह अनुमान कर सकते हैं कि इन भावी संरक्षकों का चुनाव उनके पिता के साहस और गुणों के आधार पर ही किया जायगा। उनकी शिक्षा में शारीरिक और मानसिक दोनों पक्षों पर ध्यान दिया जायगा। दूसरे शब्दों में मोसिकी और गुमनास्टिकी (Music and Gymnastics) दोनों को शिक्षा में स्थान दिया जायगा। किन्तु शिक्षा के ये दोनों अंग पृथक एवं भिन्न नहीं हैं। एक का दूसरे पर उपयोगी प्रभाव पड़ता है। विशेष कर 'gymnastics' का मस्तिष्क अथवा आत्मा पर हितकारी प्रभाव पड़ना चाहिए और इनका उत्कर्ष ही शिक्षा का मुख्य उद्देश्य है। तत्कालीन शिक्षा में शिशु कक्षाओं से लेकर उच्च शिक्षा के स्तर तक प्रयुक्त होने वाली सामग्री को प्लेटो अधिकांशतया

---

१ किन्तु जब तक साधारण नागरिकों को सामान्य शिक्षा नहीं प्राप्त होती वे पदोन्नति की आशा नहीं कर सकते थे। Class Quart XL iii १९४१ पृष्ठ ५८–६० में G F Hourani का लेख देखिए। दूसरी ओर साधारण नागरिकों की पदोन्नति की ओर प्लेटो का ध्यान इतना कम है कि यह आभास होता है कि इस प्रकार की पदोन्नति के पक्ष में वह नहीं था। K R Popper The Open Society i और Class Quart XL iv, १९५० पृष्ठ ३८ में J A Faris का लेख भी देखिए।

अनुपयुक्त पाता है। प्रचलित पौराणिक कथाओं में देवताओं के सम्बन्ध में अशोभनीय कहानियाँ भरी पड़ी हैं, नाटक-साहित्य अतिशयोक्ति एवं अस्वस्थ भावनाओं को जागृत करता है, अधिकांश संगीत भी इसी प्रकार का है। प्लेटो के अनुसार यह अत्यन्त आवश्यक है कि राज्य के भावी संरक्षकों को धर्मशास्त्र का उचित ज्ञान दिया जाय, किन्तु इस विषय से सम्बन्धित साहित्य मिथ्या विवरणों से भरा हुआ था। प्लेटो के अनुसार ईश्वरीय स्वभाव अच्छा ही होता है और इसकी अच्छाई में कभी भी कोई परिवर्तन नहीं होता है। इस जीवन में अथवा इसके बाद के जीवन में यह किसी प्रकार की बुराई का कारण नहीं बन सकता। शिक्षा की प्रक्रिया की जो कल्पना प्लेटो करता है उसके अनुसार बालकों के सम्मुख सत्य, शिव, सुन्दर और श्रेष्ठ वस्तुएँ कार्य एवं आत्मा ही प्रस्तुत किये जाते हैं। मिथ्या, अशोभन, अयोग्य, असुन्दर एवं दूषित से उन्हें दूर रखा जाता है।

यदि यह मान लिया जाय कि पुरुषों (और जैसा कि प्लेटो की रिपब्लिक के बाद के पृष्ठों का अध्ययन करने से पता चलता है बाद में स्त्रियों का भी) के एक वर्ग का ऐसा उचित चयन कर लिया जाता है और २० वर्ष की अवस्था तक उन्हें ऐसी शिक्षा दी जाती है जिसके फलस्वरूप यह वर्ग अपनी देशभक्ति, साहस तथा बुद्धि के आधार पर दूसरों की देख भाल के योग्य हो जाता है तो हम एक कदम और आगे जाकर इन संरक्षकों में से एक ऐसे विशिष्ट वर्ग का चयन करना होगा जो सर्वदा तत्परता के साथ राज्य के हित के कार्यों में ही संलग्न रहता है और किसी भी दशा में कोई ऐसा कार्य करने को तैयार नहीं होता जो राज्य के हित के विरुद्ध है। इस विशिष्ट वर्ग में अधिकांशतया वृद्ध व्यक्ति ही होंगे किन्तु उसके लिए योग्य सदस्यों को चुनने के लिए आवश्यक होगा कि युवावस्था से ही इस बात का ध्यान रखा जाय कि संरक्षकों में कौन-से व्यक्ति ऐसे हैं जो बुद्धि और साहस में सबसे श्रेष्ठ हैं। साथ ही परीक्षण द्वारा यह भी देखना पड़ेगा कि इनमें से कितने लोग ऐसे हैं जो अपने राज्य के प्रति उस राज्य के प्रति जिसका प्रबन्ध उनके हाथों में सौंपा जा रहा है अटूट आस्था रखते हैं। इस प्रकार राज्य में तीन वर्ग होंगे, शासक अथवा संरक्षक जिनके हाथ में राज्य का शासन करने का उत्तरदायित्व और आज्ञा देने का अधिकार होगा, सहायक संरक्षक जो सेना और पुलिस का निर्माण करेंगे तथा संरक्षकों के विभिन्न आदेशों को कार्यान्वित करेंगे और तीसरा वर्ग होगा साधारण नागरिकों का जो अपनी वृत्ति व्यवसाय अथवा उद्योग का अनुसरण करेंगे किन्तु शासन में कोई भाग न लेंगे। अपने राज्य की श्रेष्ठता में सभी वर्ग दृढ़ आस्था रखेंगे। प्राचीन अथवा अर्वाचीन किसी प्रकार का राज्य तब तक दृढ़ एवं स्थायी नहीं हो सकता जब तक कि उसके सदस्य राज्य में आस्था नहीं रखते तथा इस आस्था के वातावरण में ही उनका विकास नहीं होता। प्रत्येक राष्ट्र की अपनी कहानी होती है और सदस्य

की देन भक्ति की भावना अगत उस आस्था की ही प्रतिबिम्ब है जो राष्ट्र के सदस्य अपने राष्ट्र की इस कहानी के प्रति रखते हैं। कालान्तर में इस कहानी का रूप न्यूनाधिक मात्रा में बदल सकता है तथा एतिहासिक सत्यता में भिन्नता आ सकती है। किन्तु भिन्न-भिन्न किसी रूप में राष्ट्र का इतिहास सदैव जीवित रहेगा। इस इतिहास को सत्य माना चाहिए। प्लेटो के काल्पनिक राज्य का कोई वास्तविक इतिहास नहीं हो सकता इसलिए काल्पनिक इतिहास (पयडोस ४१४) आवश्यक हो जाता है। उन प्रचलित लोकप्रिय किवदन्तियों में भी सम्भवतः सत्य का कुछ अंश है जो सोलन को एथेन्स के नागरिकों की स्वतन्त्रता का स्रष्टा एवं मग्नाकार्टा (Magna Charta) को अंग्रेजों के अधिकारों की प्रतिमूर्ति बताती है। किन्तु इन कथाओं में सत्य की मात्रा इतनी न्यून है कि इन्हें भी इतिहास की श्रेणी में न रख कर श्रेष्ठ कथाओं एवं किंवदन्तियों की श्रेणी में रखना उचित प्रतीत होता है क्योंकि कथाओं में श्रेष्ठता अत्यावश्यक है। क्षुद्र एवं साधारण उपाख्यान जो सुनने वालों में विश्वास एवं आस्था उत्पन्न करने में समर्थ नहीं होते श्रेष्ठ कथाओं की श्रेणी में नहीं रखे जा सकते। किन्तु दुर्भाग्यवश, प्लेटो ने अपने काल्पनिक राज्य के सम्बन्ध में जो कथा प्रस्तुत की है वह क्षुद्र एवं साधारण ही प्रतीत होती है और विश्वासोत्पादक नहीं है। स्वयं प्लेटो ने भी यह अवश्य अनुभव किया होगा कि जो कथा वह प्रस्तुत कर रहा है वह पर्याप्त एवं परिपूर्ण नहीं है अन्यथा इस कथा को प्रस्तुत करने का ढंग भिन्न होता। जिस ढंग से कथा प्रस्तुत की गयी है उसी से यह आभास मिलता है कि अपनी कथा की श्रेष्ठता से प्लेटो संतुष्ट नहीं था। अन्यमनस्क सोक्रटीज यह कथा प्रस्तुत करता है और साथ ही यह भी कहता है कि उस समय का निश्चित वर्ग इन पर विश्वास नहीं करेगा यद्यपि प्राचीन कवियों द्वारा भी इसी प्रकार की कथा प्रस्तुत की गयी थी। इस कथा में दो पौराणिक कथाओं का सम्मिश्रण है—एक तो वह जिसके अनुसार मनुष्य अपने विकसित रूप में आवश्यक उपकरणों के साथ पृथ्वी से उत्पन्न होता है और दूसरी वह जिसके अनुसार विभिन्न प्रकार एवं जाति के मनुष्यों को विभिन्न धातुओं से सम्बन्धित किया जाता है। इन दोनों कथाओं के सम्मिश्रण से यह सिद्ध करने का प्रयास किया गया है कि यद्यपि एक राज्य के सभी सदस्यों की उत्पत्ति का स्थान एक ही है और इसलिए सभी परस्पर सजातीय हैं, तथापि इनमें से कुछ लोगों की रचना सोने से हुई है तो कुछ की चांदी से और शेष की लोहा अथवा कांसा से। इस प्रकार राज्य के निवासियों का तीन श्रेणी अथवा वर्गों में विभाजन एतिहासिक परम्परा का अंग बन जाता है। यह परम्परा ही राज्य को जीवित रखती है तथा इसी के आधार पर राज्य के नागरिक पीढ़ी दर पीढ़ी संविधान की रूपरेखा को अपने स्वभाव की अभिव्यक्ति के रूप में स्वीकार करते जाते हैं। यद्यपि वंश परम्परा के सिद्धान्त के अनुसार यह आशा की जा सकती है कि पुत्रों में स्वभावतः पिता के गुण

आ जायेंगे तथापि प्लेटो के अनुसार सदैव ऐसा नहीं होता है। ऐसी दशा में प्लेटो ने एक ऐसी व्यवस्था की आवश्यकता अनुभव की जिसके द्वारा तृतीय वर्ग के असाधारण योग्यता रखने वाले शिशुओं को सहायक संरक्षक वर्ग (संरक्षकों के वर्ग में भी) में पदोन्नत करना सम्भव हो सके तथा उच्च वर्ग में जन्म लेने वाले अयोग्य शिशुओं को निम्न वर्गों में पदच्युत किया जा सके। यह व्यवस्था किस प्रकार की जायगी इसके सम्बन्ध में प्लेटो स्पष्ट नहीं है। मुख्य बात तो केवल यह है कि राज्य के कार्यों का संचालन उन्हीं लोगों के हाथ में रहेगा जो इस काम के लिए सर्वाधिक योग्य और उपयुक्त हैं और विशेष कर यह कि शासन तथा संरक्षण का कार्य सामान्य नागरिक वर्ग को जो प्रायः अयन्त्रारूप होता है कभी भी नहीं सौंपा जायगा। इस व्यवस्था को और भी बल प्रदान करने के लिए देवताओं के आदेश तथा उस भविष्यवाणी का भी सहारा लिया जा सकता है जिसमें यह कहा गया था कि 'जब कभी लौह एवं काँसा से निर्मित व्यक्तियों के हाथ में राज्य का शासन सूत्र चला जायगा, देश का विनाश अवश्यम्भावी हो जायगा। यह वैसी ही स्थिति होगी जैसे, भेड़ों को गड़रिया और कुत्तों का स्थान मिल जाना।'[1] कुत्तों को इस प्रकार प्रशिक्षित किया जा सकता है कि वह भेड़ों की देखभाल करते हुए उन्हें परेशान न करें। इसी प्रकार सहायक संरक्षकों को भी ऐसी शिक्षा दी जायगी जिसके फलस्वरूप शत्रुओं का सामना करने के लिए उनके साहस में तथा स्वजनों की देखभाल करने के लिए उनकी आत्मीयता में पर्याप्त वृद्धि हो सके और शासकों के आदेशों का पालन तथा सर्वत्र अवज्ञा का दमन तत्परता के साथ कर सकें।

इस प्रसंग के बाद (तृतीय पुस्तक के अन्त) प्लेटो की 'रिपब्लिक' में सामान्य नागरिकों का उल्लेख नहीं होता है और सहायक संरक्षकों का उल्लेख भी यदा-कदा ही होता है यद्यपि सहायक संरक्षक और संरक्षक वर्ग के अन्तर को बहुत सावधानी के साथ स्पष्ट नहीं रखा गया है। 'रिपब्लिक' के शेष तथा अधिकांश भाग में संरक्षक वर्ग की ही चर्चा है क्योंकि भेड़ों के झुण्ड की सुरक्षा कुत्तों की अपेक्षा गड़रिये पर अधिक निर्भर करती है। यह आवश्यक प्रतीत होता है कि प्लेटो के त्रिवर्गीय समाज की धारणा के सम्बन्ध में कुछ और टिप्पणी दी जाय क्योंकि समाज के इस वर्गीकरण की समीक्षा करने वाले प्रायः प्लेटो के मूल अभिप्राय समझे बिना ही इस प्रकार के वर्गीकरण की

---

१ प्लेटो के 'दार्शनिक श्वान' की धारणा का संक्षिप्त विवेचन लेखक ने Classical Review Lxii १९४८ पृष्ठ ६१ में किया है। उस लेख में यह संकेत किया गया है कि प्लेटो ने उन विचारकों के तर्कों का खण्डन किया है जो यह कहते थे कि मनुष्य के स्वभाव को पशुओं के स्वभाव पर आधारित किया जा सकता है। तथापि, प्लेटो ने भी पशु जगत से ली गयी उपमाओं का पर्याप्त प्रयोग किया है।

प्रशंसा अथवा आलोचना करने लग जाते हैं। आधुनिक भाषा में 'Classes' (वर्ग) के अर्थ को ध्यान में रखते हुए प्लेटो के वर्गीकरण के सम्बन्ध में इस शब्द का प्रयोग अनिवार्य होते हुए भी खेदजनक ही है। प्लेटो के वर्गीकरण का आधार समाज के अन्तर्गत सम्पन्न होने वाले कार्य और कर्तव्य तथा उन्हें सम्पन्न करने की योग्यता है। उसके तृतीय वर्ग में अन्तर्गत स्वामी और सेवक दोनों ही आते हैं सहायक संरक्षकों में सेना पुलिस और नागरिक सेवाएँ आती हैं और सार्वभौम सत्ता के अधिकारी वास्तविक संरक्षक होते हैं किन्तु शिक्षाविद और न्यायाधीश भी इन्हीं वर्ग के अन्तर्गत आते हैं (४३३ C)। प्लेटो के इन तीन वर्गों के सदृश सामाजिक वर्ग (Social Classes) कहीं भी नहीं दिखाई देते। किन्तु यह कहा जा सकता है कि अराजकता अथवा निरंकुशता के अतिरिक्त किसी भी राजनीतिक व्यवस्था में तीन प्रकार के समूह—शासन शासन द्वारा नियुक्त कर्मचारी तथा शेष जन समूह—वास्तव में पाये जाते हैं। चूंकि ये किसी भी राज्य के आवश्यक अंग हैं इसलिए एक दूसरे से इनका अन्तर इन समूहों की रचना तथा दूसरे समूहों के सम्बन्ध में प्राप्त एवं प्रयुक्त होने वाली शक्ति के आधार पर ही निश्चित किया जा सकता है। इस प्रकार विविधता के लिए असीम सम्भावना हो जाती है। यह विविधता मुख्यतया निम्नलिखित बातों पर आधारित होगी —

१ शासकों अथवा शासन के स्वरूप को चुनने की विधि,
२ शासकों के लिए मान्य योग्यताएँ,
३ सत्ता-संयुक्त पद पर कार्य करने की निर्धारित अवधि,
४ शासकों द्वारा अपने अभिकर्ताओं (agents) के माध्यम से नियन्त्रित होने वाले कार्यों की संख्या एवं विविधता तथा उन कार्यों की संख्या एवं विविधता जिन्हें समस्त नागरिक स्वतन्त्र रूप से करते हैं।

इस सूची को और भी विस्तृत किया जा सकता है, किन्तु प्लेटो के तीनों वर्गों के विशिष्ट लक्षणों को दर्शाने के लिए यह पर्याप्त है। ये लक्षण हैं —(१) शासकों एवं सहायक संरक्षकों के चुनाव में पैतृकता के सिद्धान्त की मान्यता। यद्यपि इस सिद्धान्त को संशोधित रूप में ही स्वीकार किया गया है तथापि यदि इन दोनों वर्गों को एक साथ कर दिया जाय तो वे एक सामाजिक वर्ग का रूप धारण कर लेते हैं। पैतृकता के इस सिद्धान्त को मान्यता प्रदान करने का एक कारण यह भी था कि स्वयं प्लेटो का जन्म और पालन-पोषण एक कुलीन परिवार में हुआ था। किन्तु (२) शासक की योग्यताएँ जन्म पर न आधारित होकर चरित्र पर आधारित होती हैं प्राविधिक या कौशल सम्बन्धी न होकर बौद्धिक एवं नैतिक होती हैं। दीर्घकालीन दार्शनिक शिक्षा के बिना कोई भी व्यक्ति शासक होने के योग्य नहीं हो सकता। (३)

ऐसा प्रतीत होता है कि शासक ५० वर्ष की अवस्था के उपरान्त ही पदग्रहण करते हैं और जीवनपर्यन्त अथवा जब तक वे जीर्णावस्था को नहीं प्राप्त होते अपने पद पर बने रहते है। किन्तु क्या किसी अयोग्य शासक को उसके सहयोगी सेवा मुक्त कर सकते हैं? इस प्रकार की स्थिति संघर्ष का पर्याप्त कारण बन सकती थी किन्तु प्लेटो इस बात से सन्तुष्ट प्रतीत होता है कि शासकों को दी जाने वाली शिक्षा और प्रशिक्षण का ३० वर्ष की अवधि असन्तोषजनक व्यक्तियों को हटाने के लिए पर्याप्त है। निर्धारित अवधि के लिए बारी-बारी से पदग्रहण करने की लोकतन्त्रात्मक पद्धति को प्लेटो अव्यावहारिक और असन्तोषजनक बताता है। (४) सहायक संरक्षक वर्ग के कर्तव्यों के सम्बन्ध में इतनी कम चर्चा की गयी है कि उनके अधिकारों एवं उत्तरदायित्व के बारे में अधिक कहना सम्भव नहीं है। तथापि किसी भी राज्य की सामान्य व्यवस्था को चलाने में यह वर्ग विशेष महत्त्व रखता है। दूसरे वर्ग (सहायक संरक्षक) और तीसरे वर्ग (सामान्य नागरिक) के पारस्परिक सम्बन्ध के बारे में वह गम्भीरतापूर्वक विचार नहीं करता। किन्तु वह अनुभव करता है कि कुछ आवश्यक बातों की ओर उसने ध्यान नहीं दिया है (४२५ D, E)। उदाहरण के तौर पर वह यह कहता है कि आगे चल कर नीति तथा कुछ विशिष्ट व्यावसायिक विषयों को निर्धारित करने के लिए नियम बनाना आवश्यक होगा। ऐसी दशा में यह कहा जा सकता है कि सहायक संरक्षकों को बहुत थोड़े अधिकार दिये गये है। वे केवल शासकों के आदेशों का पालन करते हैं तथा लिखित (?) नियमों के अनुसार कार्य करते है। किन्तु यह निष्कर्ष संदिग्ध ही है। (५) शिक्षा के ऊपर शासन का पूर्ण नियन्त्रण रहता है तथा शिक्षा की सभी समस्याओं पर विशेष ध्यान दिया जाता है। शासन करने वाले दोनों वर्गों की नैतिक शिक्षा को विशेष महत्त्व दिया जाता है। संगीत और कलाओं को प्रोत्साहन मिलता है किन्तु साथ ही शाश्वत एवं अपरिवर्तनीय मान दण्डों को कायम रखने पर विशेष बल दिया जाता है। इसके लिए कड़े सेंसर की व्यवस्था की गयी है। व्यापार आर्थिक नीति अथवा उत्पादन के साधनों को नियन्त्रित करने के लिए किसी प्रकार की व्यवस्था का उल्लेख प्लेटो नहीं करता है, केवल अस्पष्ट आदेश देता है कि अनावश्यक आर्थिक असमानता को प्रश्रय नहीं दिया जायगा। यह सब तीसरे वर्ग के स्वतन्त्र उद्योग पर छोड़ दिया गया है। इसी वर्ग के लोग ही इन कार्यों में रुचि रखते हैं और वही इन्हें सम्पन्न करेंगे चाहे स्वामी के रूप में, कर अथवा सेवक या श्रमिकों के रूप में। हाँ सभी लोग यह मान कर चलते हैं कि अपनी क्षमता के अनुसार वे समुदाय के हितों का वर्द्धन करेंगे।

इस प्रकार प्लेटो के अनुसार यह आवश्यक है कि प्राकृतिक सिद्धान्तों[1] के आधार

---

[1] इस शब्दों को प्लेटो बिना किसी संकोच के प्रयोग करता है। G R

पर निर्मित राज्य में सदस्यों का विभाजन अपेक्षित कार्यों को सम्पन्न करने की योग्यता पर किया जाय। साथ ही नागरिकों के नैतिक गुण पर विशेष बल दिया जाता है उस अस्पष्ट और भ्रमोत्पादक 'राजनीतिक श्रेष्ठता' पर नहीं जिसकी खोज में पांचवीं शताब्दी के शिक्षक लगे हुए थे। शासकों का विशिष्ट गुण बुद्धिमत्ता है, सहायकों (सहायक संरक्षकों) का साहस और शेष जनता का आज्ञा पालन। किन्तु, इन गुणों को स्पष्ट रूप से पृथक नहीं किया जा सकता। शासकों में भी साहस की अपेक्षा की जाती है सहायक संरक्षकों के लिए परम ज्ञान तो आवश्यक नहीं है किन्तु ज्ञान के प्रति प्रेम तथा सद्विश्वास उनमें भी वांछनीय है साथ ही उनके लिए भी आवश्यक है कि वे आज्ञापालक हों। इसके अतिरिक्त यूनानी शब्द सोफ्रोस्यूना से जिस गुण का बोध होता है वह आज्ञापालन मात्र से अधिक विस्तृत और व्यापक है निष्ठा, दृढ़ता और संयम भी इसी गुण के अन्तर्गत आ जाते हैं। तीनों वर्गों में यह गुण अनिवार्यतः होना चाहिए।[1] किन्तु नागरिक वर्ग के लिए जो बहुसंख्यक वर्ग होगा वास्तविक ज्ञान एवं बुद्धिमत्ता न तो आवश्यक है और न इस वर्ग के लोग इसे प्राप्त ही कर सकते हैं। उनके लिए अपने शिल्प अथवा उद्योग से सम्बन्धित ज्ञान और कौशल ही पर्याप्त होगा। ऐसी दशा में न्याय की क्या स्थिति होगी ? दृढ़ राज्यभक्ति की भांति न्याय भी सर्वत्र होना चाहिए और तीनों वर्गों का विशेषता होना चाहिए। न्याय को प्लेटो विभिन्न वर्गों के पारस्परिक सम्बन्ध को निर्धारित करने वाले सिद्धान्त के रूप में प्रस्तुत करता है न्यायोचित यही है कि प्रत्येक वर्ग अपने अपने कर्त्तव्य का पालन करे और दूसरे वर्गों के कार्यों में हस्तक्षेप न करे। इसके विपरीत आचरण न्याय विरुद्ध होगा। सामाजिक व्यवस्था के गुण के रूप में न्याय की धारणा को इससे अधिक प्रभावपूर्ण शब्दों में नहीं व्यक्त किया जा सकता है। किन्तु प्लेटो का 'रिपब्लिक' का प्रारम्भ तो न्यायसंगत व्यक्ति के गुणों से हुआ था और न्याय की इस धारणा और व्यक्ति के गुणों में किसी प्रकार का सादृश्य नहीं दिखाई देता। अतः प्लेटो को यह निश्चित करने के लिए बाध्य होना पड़ता है (४३४ D) कि क्या व्यक्ति विशेष के गुणों के सम्बन्ध में भी न्याय की इस धारणा का प्रयोग किया जा सकता है। यदि ऐसा सम्भव है तो कोई कठिनाई नहीं उपस्थित होती है

Morrow ने 'Plato and the Law of Nature (Essays in Political Theory presented to George H Sabine) (१९४८) में यह तर्क प्रस्तुत किया है कि प्लेटो विचार जगत को ही प्रकृति जगत (realm of physis) मानता था।

१ प्राचीनकाल के मनुष्यों की निष्ठा और देश भक्ति की प्रशंसा में डेमास्थेनीज का यह कथन कि वे अपने देश की पोलिटीआ का प्रतिनिधित्व करते थे, प्लेटो के अभिप्राय को व्यक्त करता है।

हैं। न्याय एक सम्यक व्यवस्था है व्यक्ति अथवा राज्य की स्वस्थ अवस्था है। अन्याय से यह प्रत्येक दशा में श्रेष्ठ है।

यहाँ प्लेटो के आदर्श राज्य के संविधान की संक्षिप्त रूप रेखा है। इसका अभिप्राय विशुद्ध अर्थ में कुलीनतन्त्र (एरिस्टाक्रेटिआ) की स्थापना है, सर्वश्रेष्ठ व्यक्तियों अर्थात् सर्वाधिक बुद्धिमान् व्यक्तियों के शासन की स्थापना है। 'रिपब्लिक' की आठवीं पुस्तक में अन्य संविधानों से इसकी तुलना करते हुए प्लेटो ने अपने इस संविधान को कुलीनतन्त्र एरिस्टाक्रेटिया की ही संज्ञा दी है। किन्तु अन्य दोषपूर्ण संविधानों की विवेचना करने के पूर्व इन 'सर्वश्रेष्ठ और सर्वाधिक बुद्धि सम्पन्न' शासकों तथा इनके आचरण को निर्धारित करने वाले सिद्धान्त के सम्बन्ध में वह कुछ और कहता है। उसका कहना है कि इन शासकों का प्राथमिक उद्देश्य राज्य में एकता और संगठन एवं सुनीति[1] की स्थापना होना चाहिए। प्लेटो के समय में राज्य के विघटन के लिए वास्तविक संकट उत्पन्न था और लोग उस उपाय की खोज कर रहे थे जो राज्य को एकता के सूत्र में बाँध सकता। प्लेटो के पूर्व के लेखकों ने एक ऐसी सामान्य भावना की आवश्यकता बताई थी जो राज्य के सभी सदस्यों में सामान्य रूप से विद्यमान हो और उसे होमोनोइया की संज्ञा दी थी। प्लेटो इस शब्द के अतिरिक्त सोफ्रोसिने शब्द का प्रयोग करता है और होमोडॉक्सिया (सभी सदस्यों में सामान्य रूप से विद्यमान विश्वास) को आवश्यक बताता है। डेमन[2] के इस मत से वह सहमत है कि राज्य की स्थिरता की दृष्टि से यह आवश्यक है कि सभी सदस्यों की संगीत के प्रति अभिरुचि का एक ही स्तर हो। तीन वर्गों में समाज के विभाजन की ओर ध्यान देते हुए यह प्रतीत हो सकता है कि प्लेटो की यह शर्त कभी भी पूरा नहीं हो सकता थी। किन्तु इन तीनों वर्गों के सामान्य हितों पर भी तो वह निरन्तर जोर देता रहता है। 'राज्य तथा जिस कथा के आधार पर इसका निर्माण किया गया है उसके प्रति तीनों वर्गों का अटूट विश्वास होना चाहिए। शासक एवं सहायक संरक्षक वर्ग के लिए तो यह विश्वास आवश्यक है ही, सामान्य जनता के लिए भी यह विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण है क्योंकि

---

१ अन्ततोगत्वा तो राज्य और शासन का उद्देश्य न्याय ही होगा किन्तु न्याय तो पूर्ण व्यवस्था की अभिव्यक्ति मात्र है और एकता का अभाव इस पूर्णता का विपर्यय है।

२ अध्याय दो के अन्त में दी गयी टिप्पणी का अवलोकन कीजिए। प्लेटो के पूर्वगामी विचारकों में डमन उन थोड़े से लोगों में आता है जिसका आभार प्लेटो ने स्वीकार किया है। डमन के प्रति प्लेटो का आभार उन उल्लिखित प्रसंगों से कहीं अधिक है जो 'रिपब्लिक' में मिलते हैं। देखिए H Ryffel, Museum Helveticus iv, १९४७ पृष्ठ २५।

इस विश्वास के अतिरिक्त किसी अन्य प्रकार के विश्वास की अपेक्षा उनसे नहीं की जाती है। इतना ही नहीं उनसे तो यह भी आशा नहीं की जाती कि वे स्वयं किसी विषय पर विचार एवं चिन्तन करने का कष्ट करेंगे। यहाँ तक कि सहायक संरक्षक वर्ग से भी यही आशा की जाती है कि वह अपना मत एवं विचार शासक वर्ग से ही ग्रहण करेगा। इससे न केवल यह निश्चित हो जाता है कि उनके विचार एवं मत सदैव समान होंगे अपितु राज्य के शासक एवं अशासक (सहायक संरक्षक) वर्ग में पूर्ण एकता भी स्थापित हो जाती है। राज्य के अस्तित्व के लिए यह एकता अत्यन्त आवश्यक है। इस एकता की स्थापना के लिए शिक्षा अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। किन्तु शिक्षा के अतिरिक्त भी कुछ अन्य व्यवस्थाओं और उपायों की आवश्यकता पड़ेगी। संविधानिक एवं वैधानिक व्यवस्था और उपायों जैसे अपराधों के लिए दण्डादि तथा उनकी प्रभावहीनता को वह एथेन्स में प्रचुर मात्रा में देख चुका था। अतः इनमें उसकी आस्था किञ्चित मात्र भी नहीं हो सकती थी। वह तो कोई ऐसा उपाय ढूँढ़ना था जो संविधान के प्रति अविश्वास उत्पन्न करने वाले कारणों तथा संविधान की कार्यपद्धति में हस्तक्षेप करने और संरक्षकों में पारस्परिक कलह उत्पन्न करने वाली प्रेरणा को अन्त कर सके। स्वर्गोपुत्रों को वह उत्पादक एवं परिग्रही वर्ग तक ही सीमित रखना चाहता था और इस वर्ग द्वारा भी धनार्जन को समाज के हित में ही रखने के लिए नियन्त्रण आवश्यक समझता था। अन्य दोनों वर्गों से तो वह अन्य संचय करने की प्रवृत्ति का उन्मूलन ही करना चाहता था। उपर्युक्त शिक्षा दोनों व्यवस्था द्वारा यह सम्भव हो सकता था। किन्तु केवल इतना ही पर्याप्त नहीं था। स्वामित्व मात्र चाहे वह मकान पर हो अथवा भूमि पर स्त्री पर हो अथवा परिवार पर मनुष्य की आत्मा में एक ऐसे हित को जन्म देता है जो राज्य के हित का विरोधी होता है। इससे मनुष्य के अन्दर एक प्रकार की वैयक्तिक आसक्ति एवं निष्ठा उत्पन्न हो जाती है। अनुभव ने यह सिद्ध कर दिया है कि यह आसक्ति मनुष्य के हृदय में सर्वोपरि स्थान प्राप्त कर लेती है। चूँकि समुदाय के संरक्षकों में केवल समुदाय के हितों के प्रति ही निष्ठा और भक्ति होनी चाहिए तथा किसी अन्य निष्ठा और मोह से उन्हें दूर रहना चाहिए, इसलिए यह आवश्यक हो जाता है कि वैधानिक वैयक्तिक सम्पत्ति एवं पारिवारिक जीवन से वे वञ्चित रहें। निश्चय ही निर्धनता और निष्क्रियता की शपथ वे नहीं ग्रहण करेंगे। उनकी सुख सुविधा का यथेष्ट ध्यान रखा जायगा और राजकीय नियन्त्रण में वे नया पीढ़ी का प्रजनन भी करेंगे। किन्तु स्वामित्व के अधिकार से वे वञ्चित ही रहेंगे उनके न तो अपने निजी मकान होंगे और न अपने बच्चे। उनमें से कोई भी यह नहीं कह सकता कि यह मेरा पति है अथवा यह मेरी पत्नी है और ये मेरे बच्चे हैं। अपने मित्रों का आतिथ्य सत्कार करने अथवा विदेश भ्रमण करने की अनुमति भी उन्हें नहीं दी जायगी। साधारण मनोरंजन पर व्यय करने के लिए

भी उनके पास धन नहीं रहेगा। उनकी स्थिति उस सैनिक दल की भाँति होगी जो सदैव समर में रहता है और कभी भी अवकाश प्राप्त करने की आशा नहीं रखता। इस अवस्था में केवल वे ही लोग रह सकते हैं जो अपने कर्त्तव्य पालन में ही सब-सुख का अनुभव करते हैं। ऐसे लोग तो यह समझते हैं कि राज्य का एकमात्र उद्देश्य उनके जीवन को सुखी बनाना है, शासकों और संरक्षकों की पंक्ति में नहीं आ सकते। सबसे महत्त्वपूर्ण तो यह है कि समग्र के कल्याण की ओर ध्यान दिया जाय, किन्तु यह कल्याण वास्तविक होना चाहिए हम राज्य की रचना कर रहे हैं, आनन्द मेला की नहीं (४२१ B)।

यदि प्लेटो का अभिप्राय यह है कि सहायक संरक्षक वर्ग के लोगों के लिए भी वैयक्तिक सम्पत्ति वर्जित होगी तो इसमें सन्देह नहीं कि दोनों वर्ग (शासक अथवा संरक्षक वर्ग और सहायक संरक्षक वर्ग) एकता के सूत्र में बंधे रहेंगे। इन दोनों वर्गों तथा शेष जन समुदाय में संघर्ष उत्पन्न हो सकता है इसकी आशंका प्लेटो को नहीं है। जिन लोगों को सम्पत्ति का अधिकार प्राप्त है उनमें भी अधिक आर्थिक विषमता की अनुमति प्लेटो नहीं देता है। इस प्रकार की विषमता के बुरे परिणामों को वह अपने जीवन-काल में ही देख चुका था (अध्याय ७) उसका कहना है कि युद्धकाल में जब कोई राज्य अपने विरोधी राज्य में अमीर और गरीब का अन्तर देखता है तो उसे अत्यन्त प्रसन्नता होती है (४२२ E)। विशाल आकार को भी वह उसी प्रकार अवांछनीय बताता है जैसे विपुल सम्पत्ति को। दोनों ही एकता में बाधा उत्पन्न करते हैं।[1] विस्तृत नगर राज्य में संरक्षकों की उचित शिक्षा-दीक्षा की व्यवस्था करना भी सम्भव नहीं हो पाता, क्योंकि विस्तृत राज्य में शिक्षा व्यवस्था पर वह निरीक्षण और नियन्त्रण नहीं सम्भव है जो इस योजना का प्राण है। प्रजनन प्रणाली अर्थात् जनन शक्ति के आधार पर चुन गये उपयुक्त स्त्री पुरुषों का अस्थायी मिलन तथा प्रसव के पश्चात् शिशु को माता से पृथक करने की व्यवस्था भी बड़े राज्यों में नहीं की जा सकती क्योंकि अत्यधिक गोपनीयता एवं प्रवंचन के बिना अधिकारी गण[2] इस व्यवस्था को कार्यान्वित करने में सफल न हो सकेंगे।

---

१ बड़े पमाने पर राज्य को भी सम्पत्ति का स्वामित्व प्रदान करने की कल्पना प्लेटो नहीं करता है।

२ सम्भवत इस पातकीय एवं भ्रष्ट कार्य के लिए प्लेटो एक उप समिति की व्यवस्था करना चाहता था। इसका सामाजिक उद्देश्य था समुदाय के लिए श्रेष्ठ शिशुओं के प्रजनन की व्यवस्था करना। इस प्रकार के शिशुओं का अधिक संख्या में प्रजनन सभव नहीं था। साथ ही, चूंकि राज्य का क्षेत्र सीमित ही होता है, अत सामान्य

राज्य की एकता को और भी सुदृढ़ करने के लिए प्लेटो ने स्त्री और पुरुष को समानाधिकार देने की व्यवस्था की है। इस योजना के अन्तर्गत प्रस्तुत प्रस्तावों के समर्थन में वह उत्साह और विश्वास नहीं मिलता है जो प्रजनन व्यवस्था के समर्थन में प्लेटो ने दिखाया है। सम्भवतः प्लेटो का अनुमान था कि इन प्रस्तावों में लोग अब अपेक्षाकृत अधिक क्षुब्ध होंगे। यह सम्भावना भी वह देखता था कि लोग इन प्रस्तावों का मखौल उड़ायेंगे। समाज में स्त्रियों की स्थिति प्लेटो से कई वर्ष पूर्व विवाद का विषय बन चुकी थी। यूरीपाइडीज (Euripides) ने 'Alcestis' Medea तथा अपने अन्य नाटकों द्वारा एथेन्स के कुछ नागरिकों का ध्यान स्त्रियों की स्थिति की ओर आकृष्ट किया था। उन्हें राजनीतिक अधिकार देने का समर्थन भी किया जा रहा था यद्यपि इस दिशा में विशेष सफलता नहीं मिल सकी। फिर भी इसके समर्थन में पर्याप्त प्रचार किया गया और अरिस्टोफेनीज ने इस विषय पर एक सुखान्त नाटक की रचना भी की थी।[१] किन्तु प्लेटो स्त्रियों के अधिकारों के सम्बन्ध में नहीं सोच रहा है। जब उसने पुरुषों के अधिकारों के सम्बन्ध में ही इतना कम ध्यान दिया तो स्त्रियों के अधिकारों के बारे में कैसे सोच सकता था? वह तो अपने सिद्धान्तों के तर्कों का अनुसरण मात्र कर रहा है। समाज के प्रत्येक सदस्य को अपने कर्त्तव्यों का पालन अपनी क्षमता और योग्यता के अनुसार करना चाहिए। स्त्रियों और पुरुषों में कोई ऐसा अन्तर नहीं है जो किसी भी प्रकार से स्त्रियों को विभिन्न वृत्तियों का अनुसरण करने अथवा उच्च शिक्षा[२] प्राप्त करने से वर्जित करता हो और बुनाई तथा भोजन बनाने तक ही स्त्रियों का कार्य क्षेत्र सीमित करता हो। संक्षेप में राज्य का कोई भी कार्य ऐसा नहीं है जो स्त्रियों को केवल इसलिए करना है कि वे स्त्रियाँ हैं अथवा पुरुषों को केवल इसलिए करना है कि वे पुरुष हैं (४५५D)। इसलिए स्त्रियाँ सैनिक हो सकती हैं सहायक संरक्षकों एवं शासकों का कार्य कर सकती हैं। यदि उनमें संरक्षकों के लिए आवश्यक मानसिक एवं शारीरिक गुणों का अभाव रहता है तो उन्हें संरक्षकों को प्रसव करने की अनुमति कैसे दी जा सकती है? इसके अतिरिक्त ये गुण इतने सामान्य नहीं हैं कि उनसे सम्पन्न व्यक्तियों को चाहे वे पुरुष हों अथवा स्त्री समाज में हीन कार्य करने के लिए छोड़ दिया जाय।

नागरिकों की संख्या में भी अधिक वृद्धि पर नियन्त्रण आवश्यक था। किन्तु इसका क्या उपाय होगा इसके बारे में प्लेटो कुछ नहीं कहता है। पशु पालन विधि का प्रयोग तो केवल शासक वर्ग के लिए ही किया जाता।

१ The Ecclesiazusae में भी इस नाटक की ओर संकेत किया जा चुका है।

२ यूरीपाइडीज की Medea १०८५ से तुलना कीजिए।

इस प्रकार हम देखते हैं कि प्लेटो ने किसी प्रकार की मानवीयता अथवा सहानुभूति की भावना[1] से प्रेरित होकर स्त्रियों की स्वतन्त्रता तथा उन्हें पुरुषों के समान अधिकार देने का समर्थन नहीं किया है। यूरीपाइडीज़ के नाटकों में यही भावना मिलती है। प्लेटो के अनुसार तो स्त्री हो अथवा पुरुष यदि उसमें आवश्यक योग्यता है तो उसे अपनी इच्छा और अनिच्छा की ओर ध्यान न देकर देशवासियों की सेवा करनी चाहिए। अतः दोनों उच्च वर्गों में स्त्रियों और पुरुषों को जन्म के उपरान्त से ही समान शिक्षा दी जायगी।

प्लेटो के आदर्श—राज्य की ये दोनों विशेषताएँ—वैवाहिक जीवन का उन्मूलन तथा स्त्रियों को पुरुषों के समान अधिकार देना—परस्पर अन्योन्याश्रित हैं। अलग-अलग पारिवारिक जीवन के स्थान पर सामुदायिक जीवन स्थापित करके साहस और बुद्धि से सुसम्पन्न स्त्रियों को संरक्षकों के रूप में कार्य करने का अवसर प्रदान किया जा सकेगा। विशेषज्ञता और विशिष्ट कौशल के सिद्धान्त का अनुसरण करते हुए यह व्यवस्था की गयी है कि सामुदायिक शिशुशाला और सामुदायिक भोजनालय का प्रबन्ध ऐसे स्त्री पुरुषों को सौंपा जायगा जो बच्चों के लालन पालन और पाक शास्त्र में सर्वाधिक योग्यता रखते हैं।[2] अपने सिद्धान्तों का अनुसरण प्लेटो कितनी दृढ़ता के साथ करता था तथा सैद्धान्तिक स्तर पर वह किसी भी प्रकार का समझौता करने के विरुद्ध तैयार नहीं था, इसका ज्वलन्त उदाहरण हमें इस बात में मिलता है कि एक ओर तो वह मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति की दृष्टि से नगरों के जीवन को आवश्यक समझता है किन्तु, दूसरी ओर अपने राज्य के श्रेष्ठ नागरिकों को मातृ-स्नेह और पुत्र-स्नेह की गहनतम मानवीय संवेदनाओं से वञ्चित रखता है। इस स्नेह की शक्ति को वह भली भाँति समझता था, किन्तु उसे राज्य के प्रतिद्वन्द्वी के रूप में देखता था। उसका विचार था कि इस प्रकार का स्नेह राज्य के लिए संकट का कारण बन सकता है। ऐसी दशा में उसने यह उचित समझा कि इस स्नेह को भी राज्य-हित साधन की ओर उन्मुख किया जाय। जैसा कि उस समय के न्यायालय के समक्ष दिये गये उन भाषणों से जो अब भी उपलब्ध हैं प्रतीत होता है, अभी तक एथेन्स में पारिवारिक एकता

---

१ इसके विपरीत युद्ध काल में वीर सैनिकों के 'गर्भाधान करने के अधिकार' की निष्ठुरता तथा नृशंसता पर ध्यान दीजिए (४६८ C)

२ समुदाय की दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति का कार्य तो बहुसंख्यक वर्ग (तीसरे वर्ग) का उत्तरदायित्व होगा। इस वर्ग के लोगों को अपने इच्छानुसार विवाह करने और जीवन व्यतीत करने की स्वतन्त्रता रहेगी। दासों के सम्बन्ध में कोई उल्लेख नहीं है। देखिए, पृष्ठ १५०।

मुक्त थी। प्लेटो का अभिप्राय था कि इस पारिवारिक एकता के स्थान पर राज्य की एकता स्थापित की जाय। जैसा कि उसने स्वयं कहा है किसी भी राज्य के लिए सब से भयावह संकट तो उन शक्तियों से उत्पन्न होता है जो राज्य को विभाजित कर देती हैं और उस एक के स्थान पर अनेक में परिवर्तित कर देती हैं। इसी प्रकार राज्य के लिए सब से अधिक कल्याणकारी शक्ति वही है जो इसे एकता के सूत्र में बाँधती है और अनेक से एक का रूप देती है (४६२ A)।[1]

कागज पर प्लेटो का आदर्श संविधान अब तैयार है। जहाँ तक शब्दों की सामर्थ्य है राज्य (पोलिस) की धारणा अथवा प्रत्यय (Idea) का वर्णन भी प्रस्तुत किया जा चुका है। संसार का कोई भी वास्तविक राज्य पूर्ण रूप में इसके समान नहीं हो सकता किन्तु इससे सर्वाधिक साम्य रखने वाला राज्य सर्वश्रेष्ठ होगा। इससे अधिक आशा रखना तर्कसंगत न होगा (४७३ A)। वर्तमान राज्यों में कोई भी ऐसा राज्य नहीं है जो इस श्रेणी में आ सकता हो। किन्तु इस योजना में कोई ऐसी बात नहीं है जो असम्भव हो यद्यपि तत्कालीन यूनान के किसी भी नगर राज्य को इस बात के लिए तैयार करना कि वह इस योजना को कार्यान्वित करे और सर्वथा नये आधारों पर अपनी व्यवस्था का निर्माण करे कठिन कार्य था। प्लेटो के अनुसार इस प्रकार के राज्य की स्थापना सम्भव हो सकती थी, यदि राजनीतिक शक्ति ऐसे व्यक्तियों के हाथ में होती जो वास्तव में ज्ञान संयुक्त हैं तथा ऐसे व्यक्तियों के हाथ में न होती जो केवल यह समझते हैं कि वे ज्ञान से युक्त हैं और प्रायः यह नहीं जानते कि ज्ञान का क्या अर्थ होता है। परम शक्ति को परम ज्ञान से संयुक्त करना ही प्लेटो के जीवन का परम ध्येय था।[2] राजनीतिक सुधारों के सम्बन्ध में उसका समस्त चिन्तन इसी पर आधारित था। दोनों में स्वाभाविक सम्बन्ध भी है।[3] किन्तु जिस ज्ञान एवं बुद्धिमत्ता के सम्बन्ध में प्लेटो सोच रहा था वह अलंकार शास्त्रियों के वाक्-कौशल अथवा आइसोक्रेटीज की सुसंस्कृति की धारणा से सर्वथा भिन्न थी। जैसा कि हम अध्याय ७ में देख चुके हैं दोनों के

---

१ Politics की दूसरी पुस्तक के प्रारम्भ मे अरिस्टाटल प्लेटो की Republic के इस अंग की कटु आलोचना करता है। उसका कहना है कि ऐक्य स्थापित करने के लिए इस प्रकार का प्रयास स्वयं अपने उद्देश्य से विमुख हो जाता है और राज्य के अन्दर विविधता को समाप्त कर देता है जो राज्य (पोलिस) का मुख्य लक्षण है। किन्तु प्लेटो के लिए तो राज्य में जितना ही ऐक्य हो उतना ही अच्छा है।

२ Epist vii ३२६ B से तुलना कीजिए।

३ Epist ii ३१० E, इस पत्र का सन्दर्भ तो अज्ञात है किन्तु इसकी भावना पूर्णतया प्लेटो की है।

सम्बन्ध में आइसोक्रेटीज की धारणा से भी उसने अपने को पूर्णतया पृथक रखा। जिस ज्ञान की खोज में प्लेटो का दार्शनिक संलग्न रहता है उसे उस समय के सवश्रेष्ठ शिक्षक भी नहीं प्रदान कर सकते थे। इन शिक्षकों द्वारा प्रदान किये जाने वाले ज्ञान से यह ज्ञान सर्वथा भिन्न है। प्लेटो का दार्शनिक परम सत्य की खोज में ध्यान मग्न रहता है और अमूर्त विचार और अविकल्प स्वरूप के जगत को समझने का प्रयास करता है। सुन्दर वस्तुओं की ओर वह ध्यान नहीं देता है। वह तो सौंदर्य का अध्ययन करता है। यह कार्य केवल ऐसे ही व्यक्तियों द्वारा किया जा सकता है जो अप्रतिम बौद्धिक शक्ति और गहनतम संवेदना से युक्त हों तथा निरंतर सत्य की आराधना में संलग्न रहें। ऐसे दार्शनिक ही जन्मजात शासक होते हैं। लोकप्रिय विचारों अथवा अपनी विशिष्ट संस्कृति का प्रचार करने वालों के मत से यह सर्वथा भिन्न है। प्लेटो यह भी स्वीकार करता है कि उच्चादर्शों की प्राप्ति के लिए अपना जीवन व्यतीत करने वाले व्यक्ति प्रायः सांसारिक जीवन में सफलता से वञ्चित रह जाते हैं। किन्तु इसे वह समाज का दोष मानता है, दार्शनिकों का नहीं। ज्ञान से वञ्चित भ्रष्ट तथा इन्द्रिय-सुख के पीछे दौड़ने वाले समाज में वास्तविक दार्शनिक की उपेक्षा ही होगी। ऐसे समाज में तो वास्तविक दार्शनिक सदैव अनुपयुक्त ही सिद्ध होगा। एथेन्स में सोक्रेटीज का जीवन इसका उदाहरण है। इतना ही नहीं भावी दार्शनिक युवावस्था में ही भ्रष्ट कर दिये जायेंगे, और जैसा कि प्रायः देखा गया है उनकी प्रतिभा और विलक्षण योग्यता अपराधों में अभिव्यक्ति पायेगी (४९१ E) इन तथ्यों पर ध्यान देने से स्थिति निराशाजनक प्रतीत होती है किन्तु इनसे प्लेटो हतोत्साह नहीं होता है। उसके अनुसार इन तथ्यों से यह नहीं सिद्ध होता है कि दार्शनिक शासक की कल्पना व्यवहार में सम्भव ही नहीं है। हाँ, इतना वह अवश्य कहता है कि 'पूर्ण राज्य या पूर्ण संविधान अथवा पूर्ण व्यक्ति की कल्पना उस समय तक साकार नहीं हो सकती जब तक राज्य को यह सौभाग्य नहीं प्राप्त होता कि वह उन दुर्लभ एवं उत्कृष्ट दार्शनिकों को राज्य का प्रबंध करने के लिए बाध्य कर सके जिन्हें आज सर्वथा अनुपयोगी और व्यर्थ समझा जाता है (४९९ B)। वे वास्तव में अनुपयोगी नहीं हैं। सम्भवतः एक दिन सामान्य जनता भी यह समझ जायेगी कि शाश्वत पूर्णता पर नित्यप्रति चिन्तन करने वाले दार्शनिक जब लौकिक समस्याओं की ओर ध्यान देंगे तो वे 'न्याय, देशभक्ति और नागरिक गुणों के भी उत्कृष्ट स्रष्टा' होंगे। दैवी प्रतिभा को आदर्श स्वरूप स्वीकार करने वाला चित्रकार ही विधान द्रष्टा अथवा पूर्णता का चित्र प्रस्तुत कर सकता है।

दार्शनिक शासक को प्रदान की जाने वाली उच्च शिक्षा, कन्दरा तथा परछाइयों का रूपक, ज्ञानार्जन के सिद्धान्त तथा ज्ञान की अवस्थायें, गणित और

द्वन्द्वात्मक शास्त्र के अध्ययन का अवधि, अनुपयुक्त सदस्यों के उन्मूलन सेना तथा अन्य व्यावहारिक कार्यों के अनुभव तथा ३० वर्ष के उपरान्त ५० वर्ष की अवस्था तक के उन सभी कार्यों का जो सुविकसित संरक्षकों का तैयार करने के लिए आवश्यक बनाये गये हैं, यहा सारांश प्रस्तुत करने का प्रयास नहीं किया जायगा। किन्तु यह उल्लेख करना आवश्यक है कि दार्शनिक शासक के निर्माण की योजना प्लेटो ने स्वयं अपने तथा अपनी शिक्षा दीक्षा को ध्यान में रख कर ही प्रस्तुत की है। Republic को सम्पूर्ण करते समय उसकी अवस्था ५० वर्ष से एक या दो ही वर्ष कम या अधिक रही होगी गणित तथा अध्यात्म शास्त्र का अध्ययन उसने कई वर्ष किया था और अपनी अकादमी में वह इसी योजना के अनुरूप सर्वश्रेष्ठ शिष्यों के प्रवरण और प्रशिक्षण का पर्याप्त अनुभव प्राप्त कर चुका था। राजनीतिक शक्ति का वरण करने के लिए वह अपने को सर्वथा योग्य और उपयुक्त समझता था और उसके परिचित व्यक्तियों में कोई भी ऐसा नहीं था जिसे वह अपना सहयोगी बनाने के योग्य समझता। अपने समय के लब्ध प्रतिष्ठ दार्शनिक आइसोक्रेटीज तथा एंटीस्थनीज को तो वह इसके लिए सर्वथा अयोग्य समझता था। इस प्रकार दार्शनिक शासकों के एक दल का निर्माण अर्थात बुद्धि के आधार पर एक कुलीनतन्त्रात्मक शासक वर्ग की रचना करने में वह असफल रहा। किन्तु एक व्यक्ति द्वारा शासन उसके आदर्श राज्य के सिद्धान्तों के प्रतिकूल नहीं था (५४० D) एक कुछ अथवा बहुत के आधार पर संविधानों का वर्गीकरण करने की परम्परागत पद्धति के स्थान पर संविधानों के वर्गीकरण की एक नयी पद्धति के सम्बन्ध में वह विचार कर रहा था (आगे देखिए)। जहां तक शासन करने का अवसर प्राप्त होने का प्रश्न है प्लेटो को उस समय तक प्रतीक्षा करनी पड़ी जब तक कि उसने ६० वर्ष की अवस्था नहीं पार कर ली। इसके बाद ही उसे शासन करने का अवसर मिला और जैसा कि हम अगले अध्याय में देखेंगे यह अवसर भी नाम मात्र के लिए ही था। अपने राज्य के बाहर ही उसे यह अवसर मिला और वहां भी आदर्श राज्य की स्थापना के लिए आवश्यक सुविधाओं में से एक भी उपलब्ध न थी। न तो सर्वथा नये आधारों पर राज्य का निर्माण (५०१ A ५४१ A) करने की उसे स्वतन्त्रता प्राप्त थी और न उसे प्रशासक वर्ग की पूर्ण निष्ठा ही प्राप्त हो सकी।

आदर्श राज्य अर्थात राज्य का शुद्ध रूप जो स्वर्ग में स्थित है परिवर्तन और भ्रष्टाचार के परे है। यह शाश्वत है और सदैव एक सा रहता है। यदि संसार में कहीं भी कोई ऐसा राज्य है जो इसका अनुसरण करता है और इसके सदृश है, तो अन्य राज्यों की अपेक्षा वह अधिक स्थायी और अपरिवर्तनशील होगा। स्थायित्व और दृढ़ता तथा संघर्ष से मुक्त होने की जो आवश्यकता यूनान के नगर राज्य अनुभव कर रहे थे उसकी पूर्ति करने का एक मात्र उपाय यही था कि इन राज्यों को आदर्श राज्य के सदृश व्यवस्थित

करने का प्रयास किया जाय। किन्तु इस प्रकार व्यवस्थित किया गया राज्य भी अनश्वर नहीं होगा। अनश्वरता तो विचार जगत में ही पायी जाती है, अदृश्य वास्तविकता ही अनश्वर है। इस संसार की सभी वस्तुएँ नश्वर हैं, यहाँ की कोई भी वस्तु स्थायी नहीं हैं। जैसा कि हेराक्लाइटस ने कहा था, प्रत्येक वस्तु अस्थिर है। यह अस्थिरता भी विभिन्न पदार्थों में विभिन्न अंशों में पायी जाती है। सिन्धु की लहरें जिस चट्टान से टकराती हैं, वह इन लहरों की अपेक्षा अधिक स्थिर है और अधिक दिनों तक स्थायी रहती है। इसी प्रकार श्रेष्ठ राज्य निकृष्ट राज्यों की अपेक्षा अधिक स्थायी होंगे। तत्कालीन सभी राज्य निकृष्ट ही थे और प्लेटो ने तत्कालीन वस्तु स्थिति का ध्यान में रख कर ही अपने आदर्श राज्य की रचना की। यदि 'रिपब्लिक' की आठवीं पुस्तक (जिसमें उसने तत्कालीन राज्यों की स्थिति का अध्ययन किया है) की रचना प्लेटो ने इस पुस्तक के शेष भाग की रचना करने के पहले नहीं भी की तो भी इतना तो मानना ही पड़ेगा कि इसकी सामग्री सदैव उसके सम्मुख थी। अन्यथा वह शासक और प्रशासक वर्गों के एकत्व पर इतना जोर क्यों देता? इसका कारण यही है कि उसने देख लिया था कि समस्त यूनानी राज्यों में केवल स्पार्टा ही एक ऐसा राज्य था जहाँ की शासन-व्यवस्था स्थायी संविधान से मिलती जुलती थी, क्योंकि वहाँ शासकों ने अपने को एक जाति के रूप में संगठित कर लिया था और वे एक साथ मिल कर कार्य करते थे। किन्तु प्लेटो यह भी भली भाँति जानता था कि स्पार्टा में भी समस्या का वास्तविक समाधान नहीं हो पाया था और वहाँ भी विरोध की ज्वाला भभक रही थी। स्पार्टा की शिक्षा-व्यवस्था तथा वहाँ के निवासियों के चरित्र में उसे गुण भी दिखाई दिये और दोष भी। किन्तु उसका मुख्य निष्कर्ष यही था कि किसी भी राज्य के अस्तित्व के लिए सबसे महान् संकट शासक वर्ग के पारस्परिक मतभेद से ही उत्पन्न होता है। प्लेटो के राज्य में शासकों में पारस्परिक मतभेद नहीं रहेगा। किन्तु मतैक्य प्राप्त करने के लिए जो उपाय बताये गये हैं वे सम्भवतः व्यावहारिक स्तर पर पूर्ण रूप से सफल न हो सकेंगे। पतृक आधार को तो स्वयं प्लेटो ने अविश्वसनीय स्वीकार किया था। प्रजनन-व्यवस्था की सफलता पर भी अधिक विश्वास नहीं किया जा सकता। इसका संचालन तो उन्हीं लोगों द्वारा किया जायगा जो स्वयं इस व्यवस्था के फलस्वरूप उत्पन्न होंगे। न तो उन्हें अपने कार्य का पूर्ण ज्ञान है और न वे इसके परिणाम को ही निश्चित रूप से जान सकते हैं। यदि गणित की ही भाँति सौजनिकी (Engenics) में निश्चित नियम[1] हों भी तो भी वे अदृश्य जगत की वस्तु हैं और स्त्रियों और पुरुषों के ज्ञान से परे हैं। ये तो केवल

---

१ पूर्ण अंकों एवं रेखागणित के अंकों के सम्बन्ध में प्लेटो के रहस्यवादी अनुच्छेद का भी अभिप्राय कुछ इसी प्रकार का है (५४ B–D)।

अनुभव और निरीक्षण के आधार पर ही गणना कर सकते हैं। ऐसी दशा में परिणाम यह है कि संरक्षकों की एक पीढ़ी ऐसी होगी जिसके लोग अपने अग्रजों की तुलना में तनिक कम श्रेष्ठ होंगे और संगीत तथा कलाओं की शिक्षा के स्तर के प्रति कुछ कम सावधान रहेंगे। इसके बाद के पीढ़ी अवनति की दिशा में कुछ और आगे बढ़ेगी। उसकी शिक्षा-दीक्षा उतनी अच्छी नहीं हो पायेगी और शासन और संरक्षण सम्बन्धी कर्त्तव्यों का पालन करने की यथेष्ट योग्यता से इस पीढ़ी के लोग वञ्चित रह जायेंगे। धातुओं की विशुद्धता लुप्त हो जायगी। राज्य के विभाजन और संघर्ष की स्थिति का सामना करना पड़ेगा।

इस प्रकार व्यावहारिक सर्वश्रेष्ठ से एक बार विलग हो जाने पर तो यह प्रक्रिया चलती रहेगी। स्थिति उत्तरोत्तर बिगड़ती जायेगी और संविधान की एक भ्रष्ट अवस्था भ्रष्टतर अवस्था को जन्म देती जायेगी। प्रत्येक नयी अवस्था अपनी पूर्वगामी अवस्था से निकृष्ट होगी[1] क्योंकि यद्यपि सर्वश्रेष्ठ राज्य का एक ही रूप है किन्तु निकृष्ट राज्य के कई रूप होते हैं जो समान रूप में निकृष्ट न होकर निकृष्टता के विभिन्न प्रकारों एवं विभिन्न प्रकार के निकृष्ट व्यक्तियों के अनुरूप होते हैं। न्याय का स्वरूप एक है किन्तु अन्याय के कई रूप हो सकते हैं। प्लेटो से यह आशा की जा सकती थी कि वह यह कहता कि निकृष्ट राज्य में सोफ्रोसिनी का अभाव रहता है। इसमें सन्देह नहीं कि वह इस कथन से सहमत होता किन्तु इसके आधार पर संविधानों का वर्गीकरण[2] सम्भव नहीं था। यूनानी राजनीतिक चिन्तन की इसी प्राचीन समस्या की ओर अब प्लेटो की 'रिपब्लिक' में ध्यान दिया जाता है। इसी प्रसंग में प्लेटो लिखता है 'मेरा अनुमान है कि आप जानते होंगे कि चरित्र के आधार पर मनुष्य की उतनी ही श्रेणियाँ हैं जितनी

---

१ क्या इसे इतिहास का व्यापक नियम माना जाय ? क्या प्लेटो का अभिप्राय यह है कि इतिहास की किसी अवस्था में प्रत्येक राज्य उसका इतिहास अथवा संविधान कुछ भी हो अपनी पूर्ववर्ती अवस्था से निकृष्ट है और निकृष्टतर होता जायगा, जब तक कि निकृष्ट की अंतिम अवस्था नहीं आ जाती और राज्य की सत्ता किसी क्रूर एवं प्रमादग्रस्त व्यक्ति के हाथ में नहीं आ जाती है ? Credat Iudaeus Apella सोलन का कहना था कि एक बार सुव्यवस्था खो देने पर राज्य के लिए निरंकुशता का भय सदैव बना रहता है।

२ किन्तु Politicus (२७६ E) में संविधानों का विभाजन दो प्रारम्भिक श्रेणियों में किया गया है। एक श्रेणी में ऐसे संविधान आते हैं जिनका आधार बल है और दूसरी श्रेणी में आने वाले संविधान शासितों की सम्मति पर आधारित रहते हैं।

कि सम्भाव्य सविधानो की, अर्थात् जीवन पद्धतियो की।'[1] अतएव सम्भाव्य सविधान अनेक प्रकार के हो सकते हैं। मध्यवर्ती तथा विदशी सविधानो को छोड कर प्लेटो ने निकृष्ट सविधानो को चार श्रेणियो म विभक्त किया है। इन सविधानो की निकृष्टता की मात्रा इस बात पर निर्भर करती है कि सविधान के श्रेष्ठ स्वरूप से चरित्र, आदर्श और जीवन पद्धति म वे किस अश तक भिन्न हैं। श्रेष्ठता के अवरोही क्रम म य चार वर्ग इस प्रकार है —सम्पत्ति-तन्त्र, अल्पतन्त्र, लोकतन्त्र और निरकुश-तन्त्र। इन चारो प्रकार के सविधानो को प्लेटो चार प्रकार के मनुष्यो से सम्बन्धित करता है।[2] निरकुशता को सविधानो की श्रेणी म स्थान दिया गया है यद्यपि यूनानी राजनीतिक विचारधारा की प्राचीन परम्परा का अनुसरण करने वाले अब भी इस प्रकार के शासन को सविधान (पालिटीआ) की मान्यता नहीं देते थे। उनके अनुसार तो निरकुश शासन सविधान को निरस्त कर देता था। इस विचारधारा से प्लेटो परिचित था और यदि उसके समक्ष यह विचार रखा जाता तो सम्भवत वह इसे अस्वीकार भी न करता। किन्तु, निरकुश शासन को सविधानो की श्रेणी म स्थान देना उसके लिए इस कारण से आवश्यक हो गया कि उस न्याय-सगत और सर्वश्रेष्ठ राज्य का पूर्ण विपर्यय निरकुश शासन म ही मिलता था। इसी प्रकार निरकुश व्यक्ति को वह न्याय सगत व्यक्ति का पूर्ण विपर्यय मानता

---

१ 'जीवन पद्धति (ways of life) को लेखक ने अपनी ओर से जोड दिया है। प्लेटो ने केवल पोलिटीआ (polity) का ही प्रयोग किया है (५४४ D)। किन्तु अंग्रेजी भाषा के Canstitution (सविधान) शब्द से पोलिटीआ के पूर्ण अभिप्राय का बोध नहीं होता है, क्योंकि यूनानी भाषा मे पोलिटीआ बाइओस है और जैसा कि प्लेटो ने इस प्रसग मे लिखा है, इसका उद्भव एक टोन ईथोन एन टाइस पोलीसीन से होता है, या जसा कि सेण्ट टामस एक्विनास (St Thomas Aquinas) ने कहा है, diversas vitas faciunt et per consequens di ersas respublicas इस अध्याय के प्रारम्भ मे दिये गये उद्धरण से भी तुलना कीजिए, क्योंकि इसका विषयय भी समान रूप से सत्य है।

२ अध्याय तीन पृष्ठ ३५ मे मनुष्यो के प्रकार के सम्बन्ध मे कही गयी बातों से तुलना कीजिए। किन्तु चौथी शताब्दी के एथेन्स के लोक तन्त्रवादियों का तो यह दावा था कि उनका सविधान किसी व्यक्ति के चरित्र पर नहीं निर्भर करता है। उनके अनुसार तो निरपेक्ष एव निष्पक्ष विधि सविधान को आधार प्रदान करती थी। उदाहरणाथ, देखिए Aeschines Ctesiph ६ प्लेटो इस बात की ओर ध्यान देना उपयुक्त नहीं समझता है।

है। इन चारों प्रकार के संविधानों का स्पष्टीकरण करने के लिए प्लेटो वास्तविक राज्यों का वर्णन नहीं प्रस्तुत करता है। हाँ सम्पत्ति-तन्त्र के उदाहरण स्वरूप स्पार्टा और क्रीट का उल्लेख अवश्य करता है।[1] इसमें सन्देह नहीं कि एथेन्स को वह सदैव ध्यान में रखता है और सम्पत्ति पर आधारित अल्पतन्त्र (plutocratic Oligarchy) तथा लोकतन्त्र (Democracy) के जिन लक्षणों का वर्णन उसने किया है उनमें बहुत-से ऐसे हैं जिन्हें उसने अपने राज्य के अनुभव से ही प्राप्त किया। किन्तु शासन के इन दोनों प्रकारों के वर्णन को एथेन्स का वर्णन मान लेना एथेन्स के प्रति अन्याय होगा क्योंकि प्लेटो का यह वर्णन एथेन्स की वास्तविक स्थिति का सही चित्र नहीं प्रस्तुत करता है।

अपने संविधान को वह कुलीनतन्त्र (aristocracy) का नाम देता है और उसका कहना है कि इस संविधान के अन्तर्गत शासन का संचालन वास्तव में सर्वश्रेष्ठ व्यक्तियों द्वारा होता है ऐसे व्यक्तियों द्वारा जो राज्य में सबसे अधिक बुद्धिमान हैं। इसके पश्चात् वह इस बात पर विचार करता है कि सर्वश्रेष्ठ व्यक्तियों का यह शासन किस प्रकार भ्रष्ट होकर स्पार्टा में प्रचलित संविधान का रूप धारण कर लेता है जो कुलीनतन्त्र और सम्पत्तिशाली व्यक्तियों के अल्पसंख्यात्मक शासन की मध्यवर्ती स्थिति है। इस प्रकार के संविधान को वह सम्पत्तितन्त्र (Timocracy) कहता है क्योंकि इसमें मर्यादा को अत्यधिक महत्त्व दिया जाता है। प्रजनन-व्यवस्था में उत्पन्न होने वाले दोषों के साथ सामाजिक जीवन के अन्य क्षेत्रों में भी दोष उत्पन्न होंगे जैसे सम्पत्ति की विषमता पर उचित नियन्त्रण नहीं रखा जा सकेगा। तीसरे वर्ग के कुछ व्यक्ति अन्य लोगों की अपेक्षा अधिक सम्पत्ति अर्जित कर लेंगे जिसके फलस्वरूप शासक वर्ग के लिए यह कठिन हो जायगा कि इनके द्वारा स्थापित संविधान का उचित पालन करा सकें। बल का प्रयोग अनिवार्य हो जाता है और चूंकि शासक वर्ग शस्त्र से सुसज्जित रहता है इसलिए इस संघर्ष में विजय[2] उन्हीं की होती है। इस संघर्ष और तदुपरान्त शासक वर्ग की विजय का परिणाम यह होता है कि शासक वर्ग के लोग भूमि और गृहों पर अपना स्वामित्व स्थापित कर लेते हैं। । सामान्य नागरिकों की स्वतन्त्रता समाप्त हो जाती है

१　अरिस्टोटेल Eth iv viii ११६० b १९ और ११६१ a २८ में टिमो क्रेटिआ को सर्वथा भिन्न अर्थ में प्रयोग करता है। देखिए, अध्याय ११।

२　इस संघर्ष के बारे में प्लेटो विशेष विवरण नहीं देता है और 'समझौता' की बात करता है (५४७ B) किन्तु इस संघर्ष के परिणाम-स्वरूप समझौता नहीं होता है। प्लेटो ने स्पष्ट शब्दों में कहा है कि अल्पतन्त्र और लोकतन्त्र दोनों की स्थापना के लिए बल और भय आवश्यक है।

और वे स्वतंत्र व्यक्तियों की भाँति अपने उदार संरक्षकों के समयक के रूप में न रह कर कृषि से जीविका निर्वाह करने वाले दास या जागीरदार हो जाते हैं। शासक वर्ग एवं सैनिक जाति का रूप ग्रहण कर लेता है और उनका मात्र कार्य युद्ध और आत्म रक्षा रह जाता है। भूस्वामी हो जाने के बाद भी वे कृषि कार्य नहीं करते हैं। फौजी शिविरों का सामुदायिक जीवन वे अब भी व्यतीत करते हैं। किन्तु उनका यह समुदाय अब ज्ञान और साहस के उपासकों का नहीं रहता है। नया फौजी गुट संगीत, कला तथा बौद्धिक संस्कृति की उपेक्षा करता है और शारीरिक शक्ति तथा कौशल को अधिक महत्त्व देता है। ज्ञान के प्रति उसमें किञ्चिन्मात्र भी अनुराग नहीं होता है। बौद्धिक शिक्षा की अपेक्षा शारीरिक शिक्षा (जिमनास्टिकी) को अधिक महत्त्वपूर्ण समझा जाता है। इनके अतिरिक्त, ये लोग अब अर्थ-लोलुप भी हो जाते हैं, धन की उदारता के साथ व्यय करने के स्थान पर गोपनीय ढंग से इसका संचय करते हैं। प्रत्यक्ष रूप से धन का संचय अब भी नहीं किया जा सकता था, क्योंकि धन एकत्रित करने का आनन्द अब भी वर्जित और विधि के विरुद्ध था। इस विवरण के उपरान्त यह कहने की आवश्यकता नहीं रह जाती कि यह समाज स्पार्टा के समाज की भाँति होगा। स्पार्टा तथा वहाँ के फौजी वर्ग से इस चित्र का इतना सादृश्य है कि सहज ही यह निष्कर्ष निकल आता है। तत्कालीन स्पार्टा का प्रभावशाली फौजी वर्ग बौद्धिक संस्कृति से विलग रह कर खेल-कूद और आखेट में व्यस्त रहता था और अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिए हिंसात्मक ढंग का निःसंकोच प्रयोग करता था।

संविधान का दूसरा भ्रष्ट रूप अल्पतन्त्र (Oligarchy) है। इसे सम्पत्ति-तन्त्र (Plutocracy)[१] भी कहा जा सकता है क्योंकि प्लेटो द्वारा दी गयी अल्पतन्त्र की परिभाषा इस प्रकार है (५५० c) अल्प-तन्त्र एक ऐसा शासन है जिसमें शासन करने का अधिकार सम्पत्ति की योग्यता पर आधारित रहता है। इस प्रकार की व्यवस्था में सम्पत्तिशाली वर्ग शासन करता है और सम्पत्तिहीन वर्ग शासन में कोई भाग नहीं पाता है। मर्यादा-तन्त्र (Timocracy) के अन्तर्गत शासक वर्ग गोपनीय ढंग से सम्पत्ति का संचय करने का क्रम जारी रखते हैं और मर्यादा अथवा सामरिक कौशल की अपेक्षा सम्पत्ति को अधिक महत्त्व मिल जाता है यह अधिक आदर

१ प्लेटो ने प्लूटोक्रेटिआ का प्रयोग नहीं किया है। इस शब्द का प्रयोग जेनोफन (Xenophon, Memorabilia iv ६,१२) करता है। किन्तु प्लेटो ने अल्पतंत्र के जिन लक्षणों का उल्लेख किया है उनके आधार पर अल्प-तन्त्र को सम्पत्ति-तन्त्र कहना अधिक उपयुक्त प्रतीत होता है और प्लेटो को भी इस शब्द का प्रयोग करना चाहिए था।

की वस्तु हो जाती है। जिस धन-लोलुपता को प्लेटो नियन्त्रित रखना चाहता था वह अब मुक्त और व्यापक हो जाती है। शासन करने की योग्यता का मूल्यांकन सम्पत्ति के मानदण्ड से किया जाता है। इसका परिणाम उतना ही विनाशकारी होगा जितना कि पोत पर कार्य करने वालों में से उसी व्यक्ति को नाविक बना देना जिसका जेब में सब से अधिक पैसा हो। इसके अतिरिक्त इस प्रकार का संविधान विशेष दक्षता के सिद्धान्त का भी उल्लंघन करता है, सैनिक कार्य की विशिष्टता समाप्त हो जाती है। भूमि के स्वामी कृषि और व्यवसाय दोनों करने लगते हैं और आवश्यकता पड़ने पर युद्ध में भी भाग लेते हैं। दूसरे लोग जो पर्याप्त धन संचय कर लेते हैं, किसी भी प्रकार का कार्य करने का कष्ट नहीं करते और अपने अर्जित धन पर जीवन व्यतीत करते हैं। समाज के ये मधु वृषभ (Drones) न तो शासक वर्ग में आते हैं और न शासित वर्ग में ही केवल भोक्ता के रूप में जीवन व्यतीत करते हैं। समाज का विभाजन धनिक और निर्धन वर्गों में हो जाता है पूँजीवाद के सभी दोष प्रत्यक्ष रूप से समाज में आ जाते हैं। ऐसी स्थिति में समाज में दो प्रकार की क्रान्तियों की आशंका उत्पन्न हो जाती है। एक क्रान्ति शासक वर्ग के पारस्परिक कलह और संघर्ष के परिणामस्वरूप उत्पन्न होती है और दूसरा शासित वर्ग और साधारण जनता के विद्रोह के फलस्वरूप। धन एकत्रित करने की प्रतियोगिता तीव्र हो जाती है। इस दौड़ में पीछे रह जाने वाले लोग दरिद्र और भिखारी की श्रेणी में आ जाते हैं और सफल होने वाले व्यक्ति मोटे होते रहते हैं और अन्त में क्षीणकाय एवं क्षुधाग्रस्त जनता के क्रोध का शिकार बन जाते हैं। इस क्रान्ति के परिणामस्वरूप जनता के शासन अर्थात् लोकतन्त्र की स्थापना होती है।

प्लेटो के कुलीन-तन्त्र को स्थायी बनाये रखने के लिए आवश्यक उपायों को एक एक करके त्याग दिया गया और भ्रष्ट संविधान के दो स्वरूप सम्मुख आये। मानव-आत्मा की शिक्षा की ओर अब कोई ध्यान नहीं दिया जाता है और इसकी सुवृत्तियों पर कुवृत्तियों का अधिकार हो जाता है। विशेषज्ञों के दल का स्थान एक ऐसा वर्ग ले लेता है जो ज्ञानी होने का दम्भ भी नहीं करता। समाज में इसी वर्ग की प्रधानता हो जाती है और यही शासन सूत्र सँभालता है। राज्य दो वर्गों में विभक्त हो जाता है। किन्तु निकृष्टता अब भी अपनी पराकाष्ठा पर नहीं पहुँची है। इससे भी निकृष्ट स्थिति उत्पन्न होती है। पहले तो लोकतन्त्र (democracy) या इसके उग्र रूप की स्थापना होती है जिसे बाद के लेखकों ने 'Ochlocracy' की संज्ञा दी है। इसे समूह का शासन कहा जा सकता है। धनोपार्जन करने की अभिलाषा अल्पतन्त्र के लोगों को कुछ मात्रा में कम-से-कम प्रत्यक्षतः सदाचरण के मार्ग का अनुसरण करने के लिए बाध्य करती है। वे स्थिर रहते हैं और निरंकुश शासकों की भाँति मद्यपान नहीं करते। (५७३ C) किन्तु पूँजीपतियों और शोषकों का अन्त करने

के पश्चात् जन-समूह केवल स्वतन्त्रता चाहता है और सभी प्रकार के आन्तरिक एवं बाह्य नियन्त्रण को दूर करने के अतिरिक्त किसी और विषय पर विचार ही नहीं करता। जहाँ तक शासन का सम्बन्ध है विशेषज्ञता का सिद्धान्त लोकतन्त्रात्मक सिद्धान्त के विपरीत समझा जाने लगता है, प्रत्येक व्यक्ति का शासन का अधिकार देना उचित समझा जाता है और महत्त्वपूर्ण सार्वजनिक पदों पर लॉटरी द्वारा नियुक्ति की जाती है। लोकतन्त्र अर्थात् बहु-संख्यक वर्ग द्वारा शासन की जो आलोचना प्लेटो ने की है वह अविस्मरणीय एवं शताब्दी पूर्व की है (अध्याय तीन में Megabvzus का Persian Dialogne देखिए)। किन्तु प्लेटो ने जो आलोचना प्रस्तुत की है वह अपेक्षाकृत अधिक विस्तारपूर्वक है और इसका आधार जनतन्त्र प्लेटो के पूर्वाग्रह हैं अर्थात् एथेन्स से सम्बन्धित उसका नाम और अज्ञात Old Olig arch और क्रिटियाज़ (Critias) जैसे लेखकों (देखिए अध्याय ५) की रचनाएँ हैं। प्लेटो के लिए तो यह कल्पना सर्वथा परे थी कि जनसाधारण में किसी का समय पर्याप्त बुद्धि और श्रेष्ठता आ सकेगी जिसके आधार पर वह शासन के योग्य समझा जा सके। समानाधिकार भाषण और कार्य की स्वतन्त्रता के लोकतन्त्रात्मक सिद्धान्तों को प्लेटो निश्चित रूप से निकृष्ट और अवाञ्छनीय मानता था। नागरिकों के वैयक्तिक जीवन का राजकीय नियन्त्रण से मुक्त रहने के जिस सिद्धान्त पर पेरिक्लीज़-युग का एथेन्स गर्व करता था वह भी प्लेटो की दृष्टि में बुरा ही था। जिस विविधता को एथेन्स में इतना महत्त्व दिया जाता था उसे प्लेटो अस्थिरता का लक्षण मानता था और एक ऐसी आत्मा की अभिव्यक्ति के रूप में देखता था जिस पर किसी भी प्रकार का नियन्त्रण नहीं है। उसका यह कथन कि लोकतान्त्रिक व्यवस्था में भाँति भाँति के लोग मिलेंगे (५५७ C) लोकतन्त्र के एक गम्भीर दोष को सम्मुख रखने के अभिप्राय से ही कहा गया है। लोकतन्त्रात्मक संविधान एक नहीं अनेक होता है, क्योंकि जीवन प्रकार का जीवन-पद्धतियों में से चुनने का अवसर इस व्यवस्था में मिलता है। प्लेटो के इस कथन का अभिप्राय भी लोकतन्त्र की भर्त्सना करना ही है। सम्भवतः प्लेटो का ध्यान इस ओर नहीं गया कि एथेन्स के इसी दोष के कारण सोक्रेटीज़ को अपने विशेष ढंग से जीवन व्यतीत करने का अवसर उपलब्ध हो सका था। प्लेटो यह भी भूल जाता है कि यूनानी लोकतन्त्र का सैद्धान्तिक आधार विधि ही था। विधि (नामोस) तथा सम्पूर्ण संविधान का आदर करके ही वैयक्तिक स्वतन्त्रता की रक्षा की जा सकती है यह विश्वास इस लोकतन्त्र का आधारभूत सिद्धान्त था। जैसे-जैसे प्लेटो वृद्ध होता गया उसके चिन्तन में विधि को उत्तरोत्तर महत्त्व मिलता गया, किन्तु इसे वह शासन की सज्जा का अंग मात्र समझता था। जनता की स्वतन्त्रता को सुरक्षित रखने के साधन के रूप में विधि का महत्त्व उसने नहीं स्वीकार किया। इस प्रकार यदि Politicus (आलो-

अध्याय देखिए) म उसने यह स्वीकार किया है कि लोकतन्त्र का एक अच्छा स्वरूप भी सम्भव हो सकता है और Laws (अध्याय १० देखिए) म विधि-व्यवस्था और लोकतन्त्र की विशेषताओं को कुछ महत्त्व प्रदान किया है तो उसस यह नही समझना चाहिए कि प्लेटो का हृदय-परिवर्तन हो गया है अथवा उसने अपने मूल सिद्धान्तों को त्याग दिया है ।

जिस प्रकार अल्पतन्त्र का विनाश अत्यधिक अथलोलुपता के कारण होता है उसी प्रकार स्वतन्त्रता का अत्यधिक मोह अन्ततोगत्वा लोकतन्त्र के विनाश का कारण बनता है। जिस भाषा म प्लेटो ने स्वतन्त्रता के प्रति इस मोह का वणन किया है वह Old Olig arch की शैली का स्मरण दिलाता है। (अध्याय ५)। स्वतन्त्रता विकृत होकर अराजकता का रूप धारण कर लेती है समानता का जोश इतना प्रबल हो जाता है कि स्वामी और सेवक अभिभावक और शिशु शासक और शासित का अन्तर हा समाप्त हो जाता है। इस सब का सम्मिलित परिणाम यह होता है कि नागरिकों की नतिक शक्ति क्षीण हो जाती है किसी भी प्रकार की अनिवार्य सेवा के नाम पर हा वे रुष्ट और कुपित हो जाते हैं और अन्ततोगत्वा लिखित और अलिखित विधि की पूण अवहेलना करने लगते हैं। किसी भी क्षेत्र म वे अपने ऊपर किसी भी प्रकार के स्वामित्व को नहीं देख सकते एक दिशा म अतिशयीय क्रिया दूसरी दिशा म विरोधात्मक और हिंसात्मक प्रतिक्रिया उत्पन्न करता है। इसे हम ऋतु वनस्पति और जन्तु सभी म देख सकते हैं। संविधान और राज्य के संविधान म तो यह सत्य विशेष रूप से परिलक्षित होता है। अतिशय स्वतन्त्रता अतिशय दासता की स्थिति को जन्म देती है कोई आश्चय की बात नहीं कि निरकुशता की उत्पत्ति सदव लोकतन्त्र स हो होती है और लोकतन्त्रात्मक व्यवस्था म स्वतन्त्रता का जितना ही अतिरेक होता है इससे उत्पन्न निरकुशता उतना ही पूण और कठोर होती है।[1] इस प्रकरण को प्लेटो अधिक विस्तृत नहीं करता है। इसका कारण यह है कि प्लेटो भली भाति जानता था और यह आशा करता था कि उसके पाठक भी यह जान लेंग कि यूनान के निरकुश शासकों ने प्राय प्रारम्भ म अपने समय के शासकों के विरुद्ध जनता के अधिकारों का समथन करके ही राजनीतिक सत्ता हस्तगत की और तब अपनी रक्षा के लिए सशस्त्र म रक्षकों की नियुक्ति की माँग की। बाद मे इन सरक्षकों का प्रयोग उन्होंने अपने आपको राज्य का एकमात्र स्वामी बनाने के लिए किया। इन बातों की ओर प्लेटो उस समय ध्यान देता है जब वह भ्रष्ट संविधान के चौथ प्रकार अर्थात् निरकुशता अथवा अधिनायकत्व पर विचार करता है। किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि प्लेटो ने इस ओर ध्यान नहीं दिया कि

[1] ५६३D ५६४A प्लेटो के वाक्यों का सारांशमात्र प्रस्तुत किया गया है अनुवाद नहीं।

निरकुश शासन की व्युत्पत्ति की दोनो प्रक्रियाओ मे अन्तर है। सम्पत्ति के स्थापित विशेषाधिकार (५६६ A) के विरुद्ध जनता के अधिकारो का समर्थन करके राजनीतिक सत्ता हस्तगत करने की प्रक्रिया तथा प्लेटो द्वारा वर्णित लोकतन्त्र के ह्रास के फलस्वरूप निरकुश शासन स्थापित होने की प्रक्रिया मे पर्याप्त अन्तर है। प्लेटो इन दोनो प्रक्रियाओ को एक ही प्रक्रिया की दो अवस्थाओ के रूप मे देखता है।

तथापि, राजसत्ता हस्तगत करने वाला निरकुश शासक दोनो दशाओ मे एक ही सा होगा। प्रारम्भ मे उसका शासन कितना ही मृदुल और कल्याणकारी क्यो न हो, एकाधिकार से उत्पन्न होने वाले दोषो से वह बच नही सकता। प्लेटो के इस प्रकरण का अध्ययन करते समय हमारा ध्यान पुन हेरोडोटस (अध्याय ३) आर्टेस तथा पौरस्त्य निरकुशता के विरुद्ध परम्परा से चली आने वाली समस्त यूनानी धारणाओ की ओर जाता है। किन्तु यहा भी प्लेटो का विवेचन अधिक गहराई तक पहुँचता है। निरकुश शासक का जो चित्र वह प्रस्तुत करता है वह राजनीतिक अध्ययन न प्रतीत होकर मनोवैज्ञानिक अध्ययन प्रतीत होता है।[1] धनलोलुप होते हुए भी कुछ लोग ईमानदार बने रहते हैं सुख-सुविधा की आकाक्षा भी लोकतन्त्रात्मक मनुष्य को उन आचरणो के लिए नही प्रेरित करती जिन्हे वह अपनी पाशविक प्रवृत्ति के कारण कर सकने की क्षमता रखता है। किन्तु, निरकुश शासक को नियन्त्रण मे रखने के लिए इस प्रकार की कोई वस्तु नही है। अप्राकृतिक कुचेष्टाएँ, जन-सहार की प्रवृत्ति, मानव-आत्मा की गहनतम कालिमा जिनके अस्तित्व का आभास स्वप्नो मे मिलता है (५७१ २) ऊपर आ जाते हैं और लोगो के आचरण मे अभिव्यक्ति पाते हैं। निरकुश स्वभाव वाले व्यक्ति ऐसी शक्तियो से प्रेरित होकर कार्य करते हैं जिन पर उनका किञ्चिन्मात्र भी अधिकार नही रहता है। चाहे किसी राज्य का ऐसा निरकुश शासक हो जो उन्माद से इतना ग्रस्त है कि मनुष्यो और देवताओ दोनो पर शासन करने का स्वप्न देखता है अथवा साधारण अपराधी स्वभाव का मनुष्य —दोनो समान रूप से इसी श्रेणी मे आते हैं। निरकुश स्वभाव वाला व्यक्ति न तो शक्तिशाली राजकुमार की क्षमता रखता है और न सबल मनुष्य की ही। वह निर्बल और शक्तिहीन दास की भाति होता है क्योकि उसने अपनी तार्किक शक्ति और विवेक को खो दिया है। अब समाज दूसरे छोर पर

---

१ लगभग ५० वर्ष बाद के Theophrastus के पात्रो के चरित्र से प्लेटो द्वारा प्रस्तुत निरकुश शासक का चित्र कितना मिलता-जुलता है और साथ ही कितना भिन्न है। Theophrastus के ३० प्रकार के चरित्रों में लोकतन्त्रात्मक या निरकुश चरित्र का उल्लेख नहीं है। वह केवल अल्पतन्त्रात्मक चरित्र का ही उल्लेख करता है (No २६) अध्याय १२।

पहुँच गया है। एक छोर पर तो प्लेटो का कुलीन-तन्त्र है जिसमें बुद्धि विवेक और ज्ञान का शासन चलता है और दूसरे छोर पर इस प्रकार का निरंकुश शासन है जिसमें बुद्धि का स्थान पागलपन ग्रहण कर लेता है शक्ति का संचार ज्ञान से न होकर अज्ञान से हो जाता है। प्लेटो के आदर्श राज्य के सम्बन्ध में हमारा जो भी विचार हो उसके विनाश का जो चित्र प्लेटो ने प्रस्तुत किया है वह विश्वासोत्पादक प्रतीत होता है। आज भी ऐसे लोग मिलेंगे जिन्हें दुर्भाग्यवश पीडनोन्माद ग्रस्त व्यक्तियों के शासन में रहने का अवसर मिल चुका है और वे प्लेटो तथा अरिस्टाटल की इस सूझ की सत्यता प्रमाणित कर सकेंगे जिसे अरिस्टाटल ने अपने इस वाक्य में व्यक्त किया है — साधारण नागरिक को शासन के दोष उस समय दृष्टिगोचर नहीं होते हैं जब वे शासन व्यवस्था में भाग लेने प्रवृत्त होने लगते हैं इसे तो राजनीतिज्ञ ही देख सकता है।[1]

प्लेटो का 'रिपब्लिक' एक ऐसी रचना है जिससे उसके शत्रुओं एवं प्रशंसकों को समान रूप से निराशा हुई। शत्रुओं की निराशा का कारण तो यह था कि वे प्लेटो का उस प्रभाव और प्रतिष्ठा के लिए नहीं क्षमा कर सकते थे जो उसने प्राप्त कर लिया था और इसके कारण उसकी अवहेलना करने के लिए भी अपने को असमर्थ पाते थे। उसके मित्रों को इसलिए निराशा हुई कि वह उनके विचारित मार्ग का अनुसरण न करके कभी कभी शत्रुओं के शिविर में चला जाता है। स्थिरता के नाम पर वह बुर्जुआ समाज के स्तम्भों जैसे वैयक्तिक सम्पत्ति और पारिवारिक जीवन पर प्रहार करता है। 'रिपब्लिक' में एक ओर तो साम्यवादी नीति का सन्देश मिलता है पूँजीवाद और सम्पत्ति की सत्ता को समाप्त करने का आह्वान मिलता है और दूसरी ओर दो प्रकार की शिक्षा की व्यवस्था की जाती है—अल्पसंख्यकों के लिए एक व्यवस्था और बहुसंख्यकों के लिए दूसरी—और शासकों को कामनाओं के आधार पर स्थायी बनाये रखने की अनुमति दी जाती है। रूसो, बर्क और मार्क्स सभी के राजनीतिक सिद्धान्त 'रिपब्लिक' के पृष्ठों में मिलेंगे। शासन के दो विरोधी स्वरूपों के समर्थन में इस पुस्तक को प्रस्तुत किया जा सकता है। 'रिपब्लिक' के आधार पर आप एक ऐसे मन्त्रि-मण्डल का समर्थन कर सकते हैं जिसके सदस्यों अर्थात् मन्त्रियों के लिए अपने विभाग के कार्यों का सम्पादन करने के लिए विशेष शिक्षा-दीक्षा आवश्यक हो तथा इन विभागों का संचालन करने के लिए आवश्यक व्यावसायिक शिक्षा भी उन्हें प्राप्त हो। इसके विपरीत प्लेटो की 'रिपब्लिक' के आधार पर ही एक ऐसे मन्त्रि-मण्डल की स्थापना का भी समर्थन किया जा सकता है जिसके सदस्यों को शासन के कार्य का कोई भी अनुभव न होगा और वे सब विश्वविद्यालयों की वाद-विवाद-सभा में प्राप्त ख्याति के आधार पर चुने जा सकेंगे। इसी प्रकार मानव-

---

१ Aristotle Politics v १३०८ a fin

जाति के सम्बन्ध में भी प्लेटो के विचारों में विरोधाभास परिलक्षित होता है। कभी तो वह मानव जाति को अविश्वसनीय श्रेष्ठता प्रदान करता है और कभी अत्यधिक हेय मानता है। देश के सर्वश्रेष्ठ स्त्रियों और पुरुषों के जीवन और प्रेम का वह विवाह की समिति' द्वारा निर्धारित और नियन्त्रित करना चाहता है और बहुसंख्यक नागरिकों का भेड़ों की भांति विचारशून्य जीवन व्यतीत करने के लिए बाध्य करना चाहता है। एक छोर पर अल्पसंख्यकों की बुद्धिमत्ता है तो दूसरे छोर पर बहुसंख्यकों की दासता। इन दोनों छोरों के बीच मानव-जाति को न तो किसी ने इतना ऊंचा उठाया है और न इतना नीचे ही गिराया है। प्लेटो की ख्याति को जितना आघात उसके आलोचकों से पहुंचा है उतना ही उसके प्रशंसकों से भी। उसकी प्रतिष्ठा के प्रकाश से चकाचौंध होकर तथा उसकी कविता से मन्त्र-मुग्ध होकर बहुत-से लोग प्लेटो की रचनाओं में केवल अच्छाई ही देखते हैं। इसके दोषों की ओर उनका ध्यान नहीं जाता। इसी प्रकार दूसरे लोग उसके अमानवीय विचारों तथा पाण्डित्य प्रदर्शन से क्षुब्ध होकर उसे समझने का प्रयास ही छोड़ देते हैं। सम्भवतः 'रिपब्लिक' के राजनीतिक सिद्धान्तों का सबसे गम्भीर दोष यह है कि इसमें एक ऐसे सर्व शक्ति सम्पन्न शासन की धारणा प्रस्तुत की गयी है जिसका सचालन कुछ ऐसे व्यक्तियों के हाथ में होगा जिनकी बौद्धिक श्रेष्ठता और ज्ञान सन्देह के परे समझा जायगा।

कुछ अतिरिक्त टिप्पणियां और प्रसंग-निर्देश

अध्याय—८

प्लेटो की 'रिपब्लिक' विश्व की सबसे प्रभावशाली पुस्तकों में से है और इसी कारण यह निरंतर अध्ययन और टीका टिप्पणी का विषय बना रहा। नीचे (अ) इस पुस्तक की योजना को ध्यान में रखते हुए 'रिपब्लिक' के कुछ चुने हुए अनुच्छेदों की सूची तथा (ब) 'रिपब्लिक' के राजनीतिक सिद्धान्तों को समझने की दृष्टि से उपयोगी, कुछ आधुनिक ग्रन्थों की संक्षिप्त सूची प्रस्तुत की गयी है। किन्तु इन शीर्षकों के अन्तर्गत आने वाले प्रसंगों एवं रचनाओं के सम्बन्ध में पाठक को चाहिए कि अपने अध्ययन को लेखक के मन्तव्य तक ही न सीमित रखे यद्यपि लेखक ने निरपेक्ष एवं उदार रहने का भरसक प्रयास किया है। किन्तु फिर भी एक पर्याप्त अंश को, जिसे प्लेटो राजनीति का ही अंग समझता था इस सूची में स्थान नहीं दिया गया है क्योंकि हम उन्हें राजनीतिक विचारधारा के अन्तर्गत नहीं मानते। उदाहरणार्थ साहित्य और कला का जो विवेचन प्लेटो ने प्रस्तुत किया है (Books ii, iii, x) उसकी ओर ध्यान नहीं दिया गया है। किन्तु आधुनिक युग में ये विषय भी राजनीतिक क्षेत्र के अन्तर्गत आ गये हैं।

Pravda २१ st Aug १९४६) म प्रकाशित लख के निम्नलिखित अश को प्लटो भी लिख सकता था नवयुवको को उचित शिक्षा देने म राज्य की सहायता करना इसकी आवश्यकताओ की पूर्ति करना नयी पीढ़ी का वीरता की शिक्षा देना बाधाओ के सम्मुख निर्भय होकर उन पर विजय प्राप्त करने के लिए तत्पर करना तथा राज्य के आदर्शों क प्रति विश्वास उत्पन्न करना सोवियत साहित्य का गुरुतर उत्तरदायित्व है (इसकी सब स महान् शक्ति का कारण यह है कि इसके समक्ष) सोवियत जनता तथा राज्य के हितो के अतिरिक्त कोई दूसरा हित नही है।

(अ)

Mise-en Scene का वणन और नतिक समस्याओ पर प्रारम्भिक विचार विमर्श रिपब्लिक' का प्रथम पुस्तक तथा द्वितीय पुस्तक के कुछ भागो म (३६८) दिया गया है।

न्यूनतम राज्य और एश्वयशाली राज्य के लिए ३६९ ३७४

'सरक्षक वग के लिए आवश्यक गुण उनकी प्रारम्भिक शिक्षा, ३७५ ४१२

तीना वर्गों तथा धातुओ की कथा, ४१२ ४१५

राज्य और व्यक्ति की श्रेष्ठता, ४२६ ४४४

शासक वग म वयक्तिक सम्पत्ति का उन्मूलन ४१६ ४२६, विवाह और परिवार की प्रथा का उन्मूलन ४५७ ४६५

स्त्रियो का समानाधिकार ४५० ५५५

सच्चा दार्शनिक ४७० ४८७

उसके सम्बन्ध म प्रचलित विचार ४८७,

Theaet १७२ १७५ Gorgias ४८६ (Callicles)

दार्शनिक शासक ४९९ ५०२ Epist vii ३२६ B, सविधाना के सम्बन्ध म Timocracy (मर्यादा-तन्त्र) ५४५ ५४९ C, Oligarchy या Plutocracy (अल्पतन्त्र या सम्पत्ति-तन्त्र) ५५० c ५५३ D Democracy या Ochlocracy (भीडतन्त्र या जन समूह का शासन) ५५५ ५५८ C, Tyranny (निरकुशता) ५६२ A ५६९ C

भ्रष्ट सविधान के प्रत्येक प्रकार के अनुरूप व्यक्तियो के सम्बन्ध म प्लटो न निरकुश स्वभाव वाले व्यक्तियो का उल्लेख करते समय चर्चा की है (tyrannic type ५७० ff bk ix)। यदि प्लटो ने नाटककार होना पसन्द किया होता तो इन अनुच्छेदो के आधार पर विश्व साहित्य को तीन उत्कृष्ट सुखान्त नाटक प्रदान कर सकता था। पहले नाटक म माता और पुत्र पिता को महत्त्वाकाक्षाओ से विमुख और असफल समझते और उसका विरोध करते, दूसरे म पुत्र परिवार की खाई हुई

समृद्धि को वापस लाता है और तीसरे नाटक के नायक का पिता एक कमठ व्यक्ति है जिसने अपने अध्यवसाय और प्रयासो से अपने भाग्य का निर्माण किया है । क्या उसका पुत्र भी उसका अनुसरण करेगा अथवा प्रत्यक्षत दोषरहित प्रतीत होने वाला अर्थ लिप्सा और धनोपार्जन का विरोध करेगा ।

(ब)

F M Cornford, Plato s Commonwealth Dill Memorial Lecture for १९३३ Printed in Greece and Rome iv १९३५ p ९२ and reprinted in the Unwritten Philosophy, १९४९

R L Nettleship Lectures on Plato s Republic मध्य विक्टोरिया-युग की इस रचना (१८८७) तथा पर्याप्त पहले की लिखी Grote की रचना (Plato and the Companians of Sokrates, vol ३) और बाद की रचनाओं, जसे Ernst Cassirer, The Myth State, ch vi (१९४६), R H S Crossman, Plato To-day (१९३७), H W B Joseph, Ancient and Modern Philosophy, Essays 1—iv (१९३५) का तुलनात्मक अध्ययन रोचक और लाभप्रद होगा ।

A Verdross Drossberg, Grundlinien der antiken Rechts und Staatsphilosophie Vienna १९४६, २ nd, ed १९६८ K R Popper, The open Society and Its Enemies vol I, १९४५ Ernest Barker, Greek Political Theory Plato and his Predecessors १९१८

अंग्रेजी म प्लेटो की 'रिपब्लिक' के कई अनुवाद उपलब्ध है किन्तु F M Cornford (१९४१) का अनुवाद इन सब मे श्रेष्ठ और रोचक है तथा मूल पुस्तक का समझन म विशेष रूप स सहायक सिद्ध होता है ।

अधिक और परम्परागत वस्तुओं और विधि (नोमोइ) के अनुसार सभी कार्यों को न्याय समझना है। एक दूसरे उपाख्यान में यही बात सोक्रेटीज द्वारा कहलाया जाता है।[1] विधि और परम्परा के विरुद्ध प्रस्तुत किया जाने वाला यह प्राचीन तर्क कि ये तो प्रत्येक राज्य में अलग अलग होते हैं अलग रख दिया जाता है और वार्तालाप के अन्त में यह निष्कर्ष निकलता है कि कुछ अलिखित विधि जैसे अच्छाई का पुरस्कार अच्छाई से देना तथा आत्मीय जनों में वैवाहिक सम्बन्ध अथवा स्त्रीगमन वर्जित करना किसी राज्य विशेष तक ही सीमित न रह कर सार्वत्रिक मान्यता रखते हैं। इसी प्रकार की सार्वभिक मान्यता प्राप्त अलिखित विधि यह भी है कि ऐसा समुदाय जिसमें सद्भावना और कल्याण व्याप्त होते हैं देवताओं की कृपा का पात्र होता है।[2] संविधानों के वर्गीकरण के सम्बन्ध में भी एक टिप्पणी है जो इन उपाख्यानों की अपेक्षा कहीं अधिक महत्वपूर्ण है। यूनानियों के इस प्रिय विषय पर जेनोफन की टिप्पणी में संविधानों का वर्गीकरण इस प्रकार किया गया है —

राजतन्त्र—प्रजा की सम्मति पर आधारित एक व्यक्ति का वैधानिक शासन।

निरंकुश या आततायी शासन—प्रजा की सम्मति के विरुद्ध तथा विधि पर न आधारित होकर शासक की इच्छा पर आधारित एक व्यक्ति का शासन।

कुलीन-तन्त्र—विधि और परम्परा[3] के अनुसार कर्तव्य का पालन करने वाले कुछ व्यक्तियों द्वारा शासन का सचालन।

साइरस ने दो लड़कों को परस्पर अपने अपने कोट बदलने का आदेश दिया, क्योंकि एक का दूसरे को ज्यादा फिट होता था। न्याय की इस भूल के लिए साइरस को दण्ड दिया गया (Cyro p १३, १७)

१ इस उपाख्यान में कही गयी बात के लिए अध्याय ५ देखिए। यह माना जाता है कि जेनोफन इस सम्बन्ध में तो कुछ सूचना देता है कि सोक्रेटीज ने क्या किया किन्तु यह नहीं बताता है कि सोक्रेटीज ने क्या कहा अथवा सोचा। किन्तु कई लोगों का मत इसके विरुद्ध है।

२ नेकी और सद्भावना को जेनोफन विशेष महत्त्व देता है। पर्याप्त समय पूर्व के लोग यह स्वप्न देख रहे थे कि एक ऐसे राज्य की स्थापना हो जिसमे सदभावना व्याप्त हो। यद्यपि Democritus (Fr २४८) ने यह कहा था कि विधि का उद्देश्य जन कल्याण होना चाहिए। अब अच्छे सम्राट से इस प्रकार के कल्याणकारी कार्य की आशा की जाने लगी थी। देखिए Eilív Skard Eurgetes Concordia (Oslo, १९३२) तथा इसी पुस्तक का अध्याय १४।

३ तुलना कीजिए Lac pol x ७, लाइकरगस द्वारा स्थापित विधि व्यवस्था का स्पार्टा निवासियों द्वारा पालन।

सम्पत्ति-तन्त्र —सम्पत्ति अर्हता रखने वाले[1] कुछ व्यक्तियों द्वारा शासन का सचालन।

लोकतन्त्र—सब को राजकीय पदो पर कार्य करने का समान अवसर।

जेनोफन के इस रोचक प्रकरण के मूल स्रोत का पता लगाना सम्भव नही है।[2] इसके सम्बन्ध मे उसने स्वय कोई ऐसी महत्त्वपूर्ण बात का उल्लेख नही किया है जिससे यह अनुमान किया जा सके कि उसने सविधानों के इस विभाजन को कहाँ से प्राप्त किया है। किन्तु यह ध्यान देने योग्य है कि वह वैधानिक अथवा अवैधानिक तथा प्रजा की सम्मति तथा उसकी सम्मति के विरुद्ध शासन के अन्तर को केवल एक व्यक्ति के शासन के प्रसग मे ही महत्त्व देता है। शासन के अन्य स्वरूपो के प्रसग मे भी प्लेटो इस अन्तर पर ध्यान देना आवश्यक समझता है।

जेनोफन दार्शनिक शिक्षा तथा राजनीति के व्यावहारिक अनुभव दोनो से वञ्चित था। राजनीतिक समस्याओं का अध्ययन करने, उन पर प्रकाश डालने मे वह इनका प्रयोग नही कर सकता था। फिर भी उसे एक दूसरे प्रकार का अनुभव प्राप्त था और वह था कठिन और दुरूह परिस्थिति मे सेना की एक टुकडी का नेतृत्व करने का अनुभव। दस हजार यूनानियो को फारस के आन्तरिक अचल से काला सागर तक और वहाँ से यूनान वापस लाने मे उसने कार्य किया था और उसका स्वय का कहना है कि इस कार्य मे उसका प्रमुख भाग था। इस कार्य मे उसने लोगो को समझा-बुझा कर अपनी बात मनवा लेने की शक्ति का सफल प्रयोग किया और इसे भली भाँति समझ लिया कि सेनानायक की प्रभावपूर्ण वक्तृता का क्या महत्त्व होता है। इसलिए कोई आश्चर्य की बात नही कि शासन की समस्या को वह मुख्यतया अनुशासन[3] स्थापित करने तथा इसे कायम रखने की समस्या के रूप मे ही देखता है और अच्छे नागरिक की उसकी धारणा तथा अच्छे सैनिक या यह कहना अधिक उपयुक्त होगा कि अच्छे अधिकारी की धारणा मे कोई अन्तर नहीं है। प्रतिष्ठा के आधार पर तथा समझा-बुझा कर ही लोगो से आज्ञा का पालन कराया जा सकता है। भय और बल के आधार पर यह सम्भव

---

१ अरिस्टाटेल इसे 'सम्पत्ति-तन्त्र' (Timocracy) कहता है। देखिए अध्याय ११

२ Xenophon, Mem iv ६, १२ अध्याय के अन्त मे दी गयी टिप्पणी भी देखिए।

३ जिस प्रकार Oeconomicus मे कृषि फाम की देख भाल करने की समस्या है। P Chantraine के सस्करण (Paris, Bude Series), १९४९ की भूमिका देखिए।

'रिपब्लिक' की रचना करने के लगभग १२ या १५ वर्ष उपरान्त प्लेटो ने स्टेट्समन (Statesman पोलिटिकोस Politicus)[1] की रचना की। एथेंस में रिपब्लिक को पाठकों से किस प्रकार का स्वागत प्राप्त हुआ इसके सम्बन्ध में कुछ नहीं कहा जा सकता है । हाँ यह अनुमान लगाया जा सकता है कि प्लेटो के विद्यापीठ (Academy) में कला और ज्ञान की उपासना करने वाले उसके मित्रों ने इसका अध्ययन अवश्य किया होगा और इस पुस्तक में प्रस्तुत विचारों पर यथेष्ट विचार विमर्श भी किया गया होगा। सम्भवत उन्होंने इसके कुछ अंशों की आलोचना भी की होगी। स्वयं प्लेटो ने भी यह स्वीकार किया होगा कि राजनीति के बहुत से विषयों की ओर इस पुस्तक में ध्यान नहीं दिया गया है । सर्वोपरि अभिभावकों के वास्तविक अधिकारों का विस्तृत और स्पष्ट विवरण रिपब्लिक' में नहीं दिया गया था उनकी सत्ता सर्वोपरि मानी गयी थी और इसके विरुद्ध किसी भी प्रकार की आपत्ति नहीं की जा सकती थी लिखित संविधान का कहीं उल्लेख नहीं किया गया था। फिर भी सामाजिक व्यवस्था में परिवर्तन लाने तीन वर्गों में समाज के विभाजन तथा बौद्धिक शिक्षा और सांस्कृतिक परम्परा में संशोधन करने का अधिकार उन्हें नहीं था। इस प्रकार सर्वोपरि होते हुए भी रिपब्लिक' के शासकों को वास्तव में पूर्णाधिकार नहीं प्राप्त था। निकृष्ट संविधानों का वर्गीकरण करते हुए प्लेटो ने कुछ प्रकार के राज्यों और नागरिकों के चरित्र तथा उनकी आदतों पर तो विशेष बल दिया था, किन्तु उन राज्यों के संवैधानिक आधारों के सम्बन्ध में मौन था। रिपब्लिक' के सम्बन्ध में इस प्रकार की टीका टिप्पणी हुई हो अथवा नहीं, 'रिपब्लिक' के इन अभावों की ओर प्लेटो ने अपनी बाद की रचनाओं Statesman और 'Laws' में ध्यान दिया है। किन्तु इन दोनों पुस्तकों में से कोई भी 'रिपब्लिक' की आलोचनाओं का प्रत्युत्तर नहीं है और यदि प्लेटो की यह विख्यात कृति लुप्त हो गया होता तो स्टेटसमन अथवा 'लाज' के आधार पर यह नहीं कहा जा सकता था कि इन पुस्तकों को लिखने के पूर्व प्लेटो 'रिपब्लिक' की भी रचना कर चुका था।

शासक के कर्त्तव्यों अथवा राजनीतिज्ञ की योग्यताओं के विषय पर 'स्टेटसमन' को निर्देश-पुस्तिका के रूप में देखने की आशा करने वाले पाठकों के लिए उचित होगा

---

१ अनुमान किया जाता है कि ३६२ ई० पू० में सिसली की अन्तिम यात्रा के पूर्व ही प्लेटो ने Politicus (Statesman) की रचना की थी । ३६७ ई० पू० की अल्पकालीन यात्रा में उसने जो अनुभव प्राप्त किया था उससे उसे इस पुस्तक में व्यक्त कुछ विचार अवश्य मिले होंगे । सिसली में प्राप्त प्लेटो के अनुभव के सम्बन्ध में इसी अध्याय में आगे देखिए ।

कि वे लिखित शब्दों की सीमाओं के सम्बन्ध में प्लेटो की चेतावनी पर ध्यान दें। 'Politicus' (स्टेटसमन) का मुख्य विषय शब्दों की परिभाषा देने का प्रयास माना गया है। ज्ञान को व्यावहारिक ज्ञान अथवा 'कैसे ?' का ज्ञान (Knowing Law) और सैद्धान्तिक ज्ञान अथवा 'जानना (Knowing) में विभाजित किया गया है। शासन की कला सम्राट राजनीतिज्ञ अथवा किसी परिवार के प्रमुख के लिए आवश्यक ज्ञान को सैद्धान्तिक ज्ञान 'gnostic' की श्रेणी में रखा गया है, क्योंकि इस प्रकार के ज्ञान 'जानने' पर आधारित रहता है। इसका उप विभाजन निर्णय करने (Judging) और आदेश देने अथवा अनुशासन रखने (commanding or controlling) में किया गया है। किन्तु मनुष्य द्वारा मनुष्य को अनुशासित रखने तथा मनुष्य द्वारा पशुओं का नियन्त्रण में रखने में अन्तर है। शासक और गडरिये की तुलना या सादृश्य को प्लेटो उसी दशा में मान्य समझता है जब शासक वास्तव में देवता हो। अब तो मनुष्य पर प्रत्यक्षतया देवताओं का शासन नहीं रह गया है। एक प्राचीन पौराणिक कथा के अनुसार एक युग ऐसा था जब मनुष्य वास्तव में देवताओं के शासन में रहता था। क्रोनस (Kronos) के उस युग में देवतागण मनुष्यों पर शासन करते थे उनकी देख भाल करते थे। मनुष्यों को स्वयं अपने लिए कुछ भी करने की आवश्यकता नहीं थी। आधुनिक सभ्यता की संस्थाओं, जैसे, 'परिवार', 'राज्य' आदि की भी कोई आवश्यकता नहीं थी। क्रोनस के उस युग में सूर्य और नक्षत्रों के परिभ्रमण की दिशा भी वह नहीं थी जो आज है। किन्तु जब क्रोनस का स्थान ज़ियूस (Zeus) ने ले लिया तो सूर्य और नक्षत्रों के परिभ्रमण की दिशा बदल गयी, उनका परिभ्रमण पहले से विपरीत दिशा में होने लगा। देवताओं ने मनुष्य की देख भाल करना छोड़ दिया और मनुष्यों को बाध्य होकर अपनी देख भाल स्वयं करनी पड़ी। चूंकि मनुष्यों में इस नये कार्य के लिए आवश्यक योग्यता और क्षमता नहीं थी, इसलिए देवताओं ने प्रामीथियस (Prometheus) और हेफस्टस (Hephaestus) के आविष्कारों की अनुमति दी। मानव-समाज की यह स्थिति उस समय तक रहेगी जब तक चक्र पुनः विपरीत दिशा में नहीं घूमता और देवतागण फिर से मनुष्यों की देख भाल का उत्तरदायित्व अपने ऊपर नहीं लेते और जिस प्रकार एक गडरिया अपनी भेड़ों की देख भाल करता है उसी प्रकार वे भी मनुष्यों की देख भाल करना नहीं प्रारम्भ कर देते। किन्तु जब तक यह नहीं होता है और आज की सी स्थिति विद्यमान रहती है शासक की तुलना गडरिये से नहीं की जा सकती।[1] 'मनुष्यों द्वारा मनुष्यों की देख-

---

१ इस विशद प्रस्तावना (२६७-२७५) के उपरान्त यह निष्कर्ष राजनीतिक सिद्धान्त के रूप में अपेक्षाकृत कम महत्त्व रखता है। किन्तु धर्म शास्त्र की दृष्टि से यह

भाल सर्वथा भिन्न वस्तु है और सम्राट एवं राजनीतिज्ञों को इन्हीं कार्यों का सम्पादन करना पड़ता है।

इस प्रकार प्लेटो इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि मनुष्यों द्वारा मनुष्यों की देखभाल करने के अन्तर्गत आने वाले कार्यों का सम्पादन ही शासन है। यह पूर्णतया बल पर आधारित हो सकता है अथवा शासितों की सम्मति पर। यदि यह बल पर आधारित है तो इसे निरंकुश शासन (टीरनिकी) कहा जायगा और यदि यह शासितों की सम्मति पर आधारित है तो राजतन्त्र (बसिलिकी)।

निरंकुश शासन एवं राजतन्त्र के अन्तर को इस ढंग से व्यक्त करने की प्रथा सम्भवतः चौथी शताब्दी ई० पू० में प्रचलित थी क्योंकि जैसा कि इसी अध्याय में उल्लेख किया जा चुका है जेनोफन ने इस आधार पर शासन का विभाजन किया चौथी शताब्दी के विचारकों की रचनाओं में पढ़ रखा था। किन्तु वास्तव में पाये जाने वाले अन्तर से यह विभाजन पूर्णतया नहीं मिलता है। क्योंकि ऐसी स्थिति उत्पन्न हो सकती थी जब कि प्रजा सम्राट के शासन को न स्वीकार करके जनसाधारण से उत्पन्न किसी लोकप्रिय व्यक्ति के शासन को स्वीकार करने के लिए तैयार हो। तथापि राजनीतिक विचारधारा के विकास की दृष्टि से शासितों की सम्मति पर शासन के स्वरूपों को पृथक करने का यह सिद्धान्त उपयोगी था और राजतन्त्र के अतिरिक्त शासन के अन्य प्रकारों के सम्बन्ध में इसका प्रयोग किया जा सकता था। प्लेटो ने (२९१ E) इस सिद्धान्त का प्रयोग कुलीनतन्त्र (aristocracy) तथा इसके विकृत रूप अल्पतन्त्र (Oligarchy) के अन्तर को दिखाने के लिए किया है। सम्मति पर आधारित लोकतन्त्र तथा बल और हिंसा पर आधारित लोकतन्त्र के अन्तर को भी प्लेटो स्वीकार करता है यद्यपि इन दोनों प्रकार के शासनों के लिए वह लोकतन्त्र (डिमोक्रेटिआ) शब्द का ही प्रयोग करता है। किन्तु सम्मति के इस सिद्धान्त को उसने इससे अधिक विकसित नहीं किया है। जैसा कि हम आगे चलकर देखेंगे प्लेटो के लिए इस सिद्धान्त का महत्त्व प्राथमिक न होकर गौण ही था और केवल द्वितीय तथा तृतीय श्रेणी के शासनों के अन्तर को स्पष्ट करने के लिए ही यह उपयोगी हो सकता था। इस पुस्तक (Politicus or

---

महत्वपूर्ण है। H Ziese (अध्याय के अन्त में दी गयी टिप्पणी देखिए) ने इस कथा तथा इसके आधार पर निर्मित राजनीतिक सिद्धान्त के पारस्परिक सम्बन्ध का विश्लेषण करते हुए यह दिखाया है कि ईश्वर और संसार ईश्वर द्वारा शासित संसार और स्वयं अपना शासन करने वाले संसार के पारस्परिक वैषम्य की भाँति ही सच्चा राजनीतिज्ञ और झूठा राजनीतिज्ञ तथा वास्तविक राज्य और उसकी प्रतिलिपि या अनुकृति में भी वैषम्य है।

the Statesman) में प्लेटो ने इस सिद्धान्त का केवल इतना ही उल्लेख किया है और इस प्रकरण के उपरान्त एक दूसरे सिद्धान्त के पक्ष में सम्मति दे इस सिद्धान्त को छोड़ देता है। यह दूसरा सिद्धान्त भी राजनीतिक दर्शन की दृष्टि से प्राथमिक महत्त्व का नहीं है केवल गौण महत्त्व ही रखता है। इस सिद्धान्त के अनुसार शासन का विभाजन लिखित विधि-व्यवस्था अथवा वैयक्तिक शासन के आधार पर किया जाता है। किन्तु इस प्रकार के अन्तर का ध्यान में रखते हुए भी प्लेटो शासन के इन प्रकारों में से किसी एक प्रकार को निश्चित रूप से अच्छा कहने के लिए तैयार नहीं है। 'रिपब्लिक' की रचना करते समय भी उसकी यही मनोदशा थी। स्टेटसमैन में शासन के निकृष्ट अथवा विकृत रूपों का वर्णन करने की पद्धति को उसने अवश्य बदल दिया है और अब वह यह नहीं कहता है कि एक निकृष्ट शासन दूसरे निकृष्ट शासन को जन्म देता है, एक बुराई से दूसरी बुराई उत्पन्न होती है। 'रिपब्लिक' की आठवीं पुस्तक में उसने इसी क्रम का वर्णन किया था। 'स्टेटसमैन' में आगे चल कर श्रेष्ठता के क्रम में भी वह कुछ परिवर्तन करता है। वह और कम बुरे के अन्तर को अब वह संविधान के प्रकार का अन्तर मानता है किन्तु अच्छे और बुरे के अन्तर को वह ज्ञान और अज्ञान के अन्तर के रूप में ही देखता है। वही राज्य वास्तव में अच्छा हो सकता है जिसका शासन एक ऐसे व्यक्ति अथवा व्यक्तियों के समूह के हाथ में हो जो 'राज करने के ज्ञान' से युक्त हैं। अपने समय के राजनीतिज्ञों पुरोहितों और पैगम्बरों को प्लेटो विविध रूपधारी व्यक्तियों[1] का एक ऐसा समूह बताता है जो केवल अज्ञान के आधार पर ही एक सूत्र में बंधा हुआ है। यदि कोई ऐसा व्यक्ति मिल जाय जो वास्तव में इस 'राजसी ज्ञान' (राज करने का ज्ञान) से युक्त है, तो वह निःसन्देह राजा कहलाने का अधिकारी होगा, चाहे उसे वास्तव में शासन करने का अवसर उपलब्ध है अथवा नहीं। इसी प्रकार 'रिपब्लिक' में भी प्लेटो ने निरंकुश शासक के लिए अनिवार्यतः निरंकुश होना आवश्यक नहीं बताया है।

यह ध्यान देने योग्य है कि आधुनिक साम्यवादियों की भांति प्लेटो भी शासितों की सम्मति को विशेष महत्त्व नहीं देता है, यदि शासन सूत्र ऐसे लोगों के हाथ में है जो वास्तव में सत्य का ज्ञान रखते हैं। यद्यपि वे कुछ लोगों को मौत के घाट उतार देते हैं और कुछ को राज्य के कल्याण हेतु देश से निष्कासित कर देते हैं मधु मक्खियों की भांति उपनिवेशों को अलग करके राज्य के आकार को छोटा कर देते हैं अथवा विदेशियों को नागरिकता का अधिकार देकर राज्य की जनसंख्या में वृद्धि कर देते हैं तथापि यदि वे अपने ज्ञान और न्यायपूर्ण व्यवहार से अपनी समस्त शक्ति द्वारा राज्य की प्रतिरक्षा

१ विविधता को प्लेटो पसन्द नहीं करता था। किसी भी कार्य को 'परिवर्तन मात्र के लिए करना' प्लेटो की दृष्टि में सब से बुरा कारण था।

करते हैं और इस प्रगति के मार्ग पर अग्रसर करते रहते हैं तो हम इसी संविधान को सम्यक (अरथा) संविधान कहने के लिए बाध्य होना पड़ेगा। यदि हम अन्य संविधानों का उल्लेख करते हैं तो हमारा तात्पर्य यह नहीं है कि वे वास्तविक अथवा शुद्ध संविधान है वे तो इसी सम्यक संविधान के अनुकरण मात्र हैं (२९३ D)। वैधानिकता को भी प्लेटो विशेष महत्त्व नहीं देता है संविधान को भी आवश्यक नहीं मानता है। समय-समय पर शासकों द्वारा संचालित विधि और नियम को पर्याप्त समझता है। शासन करने की कला तथा चिकित्सा करने की कला का विख्यात तुलना यहां प्रस्तुत की जाती है। इन दोनों कलाओं में कोई भी किसी विधि के अनुसरण पर आधारित नहीं मानी जाती। रोगी की इच्छा और अनिच्छा की ओर ध्यान दिये बिना ही छुरी और पालिटिस का प्रयोग किया जाता है। शल्य चिकित्सक अपनी निपुणता और कौशल के आधार पर ही कार्य करता है[१] लिखित निर्देशों के आधार पर नहीं। जिस प्रकार एक चिकित्सक अथवा शारीरिक प्रशिक्षण प्रदान करने वाला प्रशिक्षक अपने रोगी अथवा शिष्य को अच्छा बनाने के कर्त्तव्य का पालन करने का प्रयास करता है उसी प्रकार शासक को भी अपने नागरिकों को अच्छा बनाने उनके व्यवहार को न्यायसंगत बनाने के उद्देश्य को सम्मुख रख कर ही कार्य करना चाहिए। शासक से इसी प्रकार के कर्त्तव्यों के पालन करने की आशा प्लेटो ने Gorgias में भी की थी। चिकित्सक शारीरिक प्रशिक्षण प्रदान करने वाला प्रशिक्षक अथवा शासक के कार्यों की सार्थकता के सम्बन्ध में किसी भी प्रकार का निर्णय परिणाम के आधार पर ही दिया जा सकता है पूर्व निर्धारित नियमों के पालन करने के आधार पर नहीं। उत्तम तो यह होगा कि किसी विधि-व्यवस्था को सर्वोच्च न मान कर सर्वोच्च सत्ता बुद्धि एवं राजसी ज्ञान-युक्त व्यक्तियों के हाथ में समर्पित कर दी जाय। मानव प्रक्रियाओं का क्षेत्र इतना विस्तृत और परिवर्तनशील है कि किसी भी प्रकार की विधि व्यवस्था में यह क्षमता नहीं है कि वह सभी परिस्थितियों का सामना कर सके। शासन के इस सिद्धान्त तथा 'रिपब्लिक' में प्रतिपादित दार्शनिक शासक के सिद्धान्त में पूर्ण सामञ्जस्य है। अभी भी प्लेटो इस बात पर ही बल देता है कि वास्तविक राजनीतिज्ञ के लिए ज्ञान ही सब से अधिक आवश्यक होता है। शासन की राजसी कला का सविस्तार वर्णन स्टेटसमैन में नहीं किया गया है। इस अर्जित

---

१ काटा टेक्नीन जिसका अनुवाद लैटिन में 'Secundrumm artem' और अंग्रेजी में according to art (कला के अनुसार) होता है। औषधि और शुश्रूषा सम्बन्धी निर्देश पुस्तिकाओं में इसका पर्याप्त प्रयोग होता रहा है। आज भी इस प्रकार की पुस्तकों के पाठकों को इसका वास्तविक अर्थ समझने में कठिनाई होती है।

करने के ढग पर भी विशेष प्रकाश नही डाला गया है, किन्तु इतना अवश्य कहा गया है कि यदि इस ज्ञान से युक्त कोई व्यक्ति उपलब्ध है तो वह निश्चित रूप मे 'मनुष्यो म देवता तुल्य होगा' (३०३ B), साधारण मनुष्यो और उसम बहुत बडा अन्तर है। प्लेटो का यह वाक्यांश सूत्र रूप म आदर्श सम्राट् के गुणो का वणन करने के लिए प्रयुक्त होने लगा।[1]

इस प्रकार इतना तो निश्चित हो जाता है कि कोई भी दण्ड नायक अथवा सम्राट जो वास्तव म बुद्धिमान् है अपने को एसी विधि-व्यवस्था और नियमो म नही बाँधना चाहेगा जिन्हे वह स्वय न तोड सके। चिकित्सा कला अथवा नौ परिवहन का कोई भी विशिष्ट प्रत्येक स्थिति मे निर्देश-पुस्तिका का ही सहारा नही लेता है और यदि वह एसा करता है तो इसका परिणाम रोगियो अथवा यात्रियो के लिए तो भयावह होगा ही साथ ही चिकित्सा अथवा नौ-परिवहन का सम्पूर्ण विज्ञान सकट म पड जायगा (२९९ E)। प्लेटो के अनुसार प्रशासन-कला के सम्बन्ध म भी यही चरितार्थ होता है। तथापि कुछ लोग (प्लेटो का तात्पर्य एथेन्सवासियो स है) अपने ऊपर अनेकानेक नियमो को लाद लेना किञ्चिमात्र हास्यास्पद नही समझते हैं। इतना ही नही इस प्रकार के लोग तो इस बात पर भी गर्व करते हैं कि उनके राज्य म प्रत्येक व्यक्ति को यह अधिकार प्राप्त है कि 'नियमो का उल्लघन' करने के लिए किसी भी व्यक्ति पर अभियोग लगा सके (२९९ A)। इस प्रकार किसी भी व्यक्ति को जो स्वय विज्ञ नही है अपने को विधि के ऊपर समझने तथा नवयुवको को कुत्सित और भ्रष्ट करने की अनुमति मिल जाती है।[2] फिर भी, यदि हम अपने इस ससार पर दृष्टिपात करें जिसम हम रहते

---

१ Aristotle, Politics III १२८४ मे थिओसएन एथ्रोपोइ (मनुष्यो मे देवता) का प्रयोग सिकन्दर के लिए था, यह धारणा पर्याप्त प्रचलित थी। किन्तु अब यह मत स्वीकार नहीं किया जाता है। मुहावरो के रूप मे इस कथन का प्रयोग Theognis (३९९) से प्रारम्भ होता है। Isocrates ने (IX ७२) कवियो द्वारा प्रयुक्त भाषा के अतिरजन के उदाहरण के रूप मे (Iliad XXIV २५८) इसे उद्धृत किया है। यूनानी भाषा की अपेक्षा अंग्रेजी मे इसका भाषान्तर कहीं अधिक सशक्त हो जाता है।

२ स्पष्ट है कि इस वाक्य मे प्लेटो ने अवध प्रस्तावो के लिए एथेन्स मे प्रचलित अभियोग की प्रथा तथा सोक्रेटीज पर लगाये गये अभियोग की ओर सकेत किया है। प्लेटो का ध्यान उस परिस्थिति की ओर है जिसका सामना उसके वृद्ध गुरु को करना पडा और वह भी एक ऐसे राज्य मे जहाँ इस बात पर गर्व किया जाता था कि वहाँ विधि का पूर्णरूपेण पालन होता है। किन्तु इस राज्य (एथेन्स) में

हैं तो हम यह अनुभव करेंगे कि विधि की सीमाओं और न्यूनताओं की खिल्ली हम नहीं उड़ा सकते। चूंकि संसार में ऐसे व्यक्ति का सर्वथा अभाव है जो इतना महान् और बुद्धिमान हो कि विधि के बिना शासन कर सके, इसलिए व्यवहार में विधि की आव श्यकता अनिवार्य हो जाती है। एक मात्र न्यायसंगत और सम्यक् संविधान के स्वरूप की तुलना में सामाजिक शासनों को (पालिटिआ) की संज्ञा देना अनुचित होगा। ये तो अनुकरण मात्र हैं।[1] इस प्रकार के संविधान चाहे उनमें एक व्यक्ति के हाथ में सत्ता हो अथवा कुछ या बहुत व्यक्तियों के हाथ में श्रेष्ठता में द्वितीय श्रेणी के संविधानों से ऊपर नहीं होंगे।

इस प्रकार वस्तु स्थिति ऐसी है कि हमारे राज्यों में कोई भी ऐसा जीवित व्यक्ति नहीं है जो मधुछत्ते में रानी मधुमक्खी की भांति स्वाभाविक सम्राट हो जिसकी शारीरिक और मानसिक श्रेष्ठता ऐसी हो कि देखने वाले उसे सहज ही सम्राट कह सकें। परिणामतः हम बाध्य होकर एक होना पड़ता है और कुछ लिखित नियम बनाने पड़ते हैं और इन लिखित नियमों के आधार पर वास्तविक संविधान (पालिटीआ) द्वारा प्रदर्शित मार्ग का अनुसरण करना पड़ता है (३०१ D E)। अपना अस्तित्व सुरक्षित रखने के लिए यही एक उपाय है। वस्तुतः राज्य (पालिस) में कुछ दृढ़ता निहित रहती है (३०२) किन्तु ऐसे व्यक्तियों के जो जानते तो कुछ नहीं, किन्तु समझते यह हैं कि वे सब कुछ जानते हैं दुर्व्यवहार और कदाचार का शिकार होने पर इसे अन्ततोगत्वा नष्ट होना पड़ता है। ऐसी स्थिति में राज्य को स्थायी बनाये रखने का सबसे अच्छा अवसर द्वितीय श्रेणी का सबसे अच्छा संविधान ही प्रस्तुत करता है जिसके तत्वाव धान में राज्य का कोई भी निवासी विधि के प्रतिकूल कार्य करने का साहस नहीं कर पाता और यदि कोई ऐसा दुस्साहस करता भी है तो उसे मृत्यु अथवा इसी प्रकार के किसी अन्य कठोर दण्ड का भागी होना पड़ता है (२९७ E)। रिपब्लिक में इस प्रकार के विचार किसी भी स्थल पर नहीं मिलते हैं किन्तु क्राइटो (Crito) के अन्त में तत्कालीन विधि का कठोर पालन करने के सम्बन्ध में जो विचार व्यक्त किये गये हैं उनसे ये काफी मिलते-जुलते हैं और 'स्टेट्समैन' के बाद की प्लेटो की पुस्तक लाज (Laws) में व्यक्त विचारों का पूर्वाभास भी यहीं मिलता है। जैसा कि हम अगले अध्याय में देखेंगे। उस पुस्तक में भी प्लेटो सर्वश्रेष्ठ राज्य और द्वितीय श्रेणी के सर्वश्रेष्ठ राज्य का अन्तर कायम रखता है। रिपब्लिक का विषय सर्वश्रेष्ठ राज्य है

विधि निर्माण का कार्य ज्ञान से युक्त व्यक्तियों को ही न सौंप कर प्रत्येक व्यक्ति द्वारा किया जाता था।

[1] Laws iv ७१२ E से तुलना कीजिए।

और 'लाज' में द्वितीय श्रेणी के सर्वश्रेष्ठ पर विचार किया गया है। 'स्टेट्समन' के नाम से विख्यात उसकी रचना 'पोलिटिक्स' (Politicus) इन दोनों प्रकार के राज्यों के मध्य सोपान का काम करता है।

यह कुछ विचित्र सा लगता है कि विधिहीन प्रस्तावों के लिए अभियोग लगाने का एथेन्स की प्रचलित प्रथा (ग्राफ परानोमान) का मजाक उड़ाने के उपरान्त स्वयं प्लेटो विधि के इस कठोर तथा अनुल्लंघनीय शासन की संस्तुति करता है। किन्तु यह असंगति केवल बाह्य है। द्वितीय श्रेणी के राज्यों में भी वह सर्वश्रेष्ठ राज्य के संविधान की रचना केवल उन्हीं व्यक्तियों द्वारा कराना चाहता है जो ज्ञान से युक्त हैं। उनका कहना है कि इस प्रकार का संविधान भी वास्तव में आदर्श राज्य का अनुकरण ही होना चाहिए और अतीत के बुद्धिमान् व्यक्तियों द्वारा निर्धारित तथा प्राचीन परम्पराओं द्वारा मान्य विधि-व्यवस्था का बिना किसी परिवर्तन के अनुकरण और अनुसरण करने का प्रयास स्वरूप होना चाहिए। राजनीतिज्ञों और शासकों को स्मरण रखना चाहिए कि वे सर्वोच्च ज्ञान से सम्पन्न नहीं हैं। अतः उन्हें ऐसा काम नहीं करना चाहिए जिसे सर्वोच्च ज्ञान से युक्त व्यक्ति ही कर सकते हैं। प्राचीन विधियों में परिवर्तन संशोधन अथवा उनकी उपेक्षा करने का अधिकार केवल उन्हीं व्यक्तियों का है जो 'राजसी विज्ञान' से युक्त हैं। द्वितीय श्रेणी के राज्यों के शासक इस विज्ञान के अधिकारी कभी भी नहीं हो सकते हैं। ऐसी दशा में उन्हें विधि का पालक मात्र होना चाहिए, निर्माता नहीं। प्लेटो यह अनुमान नहीं कर सकता था कि विधि का पालन करने वाले लोग ही विधि का निर्माण भी करें। वह कहता है (३०० E ३०१)। 'सभी वास्तविक संविधान एक बार अपनी विधि (नोमोइ) निर्धारित कर लेने के पश्चात् लिखित विधि अथवा पूर्वजों की प्रथाओं के प्रतिकूल कार्य नहीं करेंगे, यदि वे उस सच्चे राजतन्त्र का अनुसरण करना चाहते हैं जो सर्वोच्च ज्ञान सम्पन्न एक व्यक्ति द्वारा शासित होता है।' यह केवल रूढ़िवादिता नहीं है, अपितु प्राचीन प्रथाओं के अवशेषों को बनाये रखना है। अपने जीवन काल में निरन्तर होने वाले राजनीतिक परिवर्तनों को देख कर ही प्लेटो इस असाधारण सीमा तक जाने के लिए बाध्य हुआ। प्राचीन पद्धतियों से इस प्रकार दृढ़ता के साथ चिपके रहने की सम्भावना किसी भी प्रकार के शासन में हो सकती है। यहाँ तक कि उन शासनों में भी जिन्हें हम 'अत्यधिक प्रगतिशील'[1]

---

१ प्लेटो के लिए यह मुहावरा निरर्थक ही होता किन्तु अंग्रेजी में इसे मान्यता प्राप्त हो गयी है। और 'Advanced Tory' अथवा 'last-ditch Radical' जैसे मुहावरों का प्रयोग जानबूझ कर विरोधाभास व्यक्त करने के उद्देश्य से ही किया जाता है।

कहते हैं। विधि और प्रथा का पूर्णरूपेण अनुसरण करते हुए शासन करने वाला सम्राट वास्तव में राजनी विज्ञान में दक्ष नहीं हो सकता है। वह केवल द्वितीय श्रेणी का ही सम्राट होगा। उसे हम राजा अथवा सम्राट की संज्ञा अन्य उपयुक्त शब्द के अभाव के कारण ही देते हैं। यदि वह इस भ्रम में विश्वास करके कि वह वास्तव में ज्ञान से युक्त है अपनी इच्छा के अनुसार शासन करने लगता है तो वह निरंकुश शासक (टीरनोज) की श्रेणी में आ जाता है। जब अल्पसंख्यक अर्थात् सम्पत्तिशाली वर्ग विधि का अनुसरण करते हुए शासन करते हैं तो इस प्रकार के शासन को हम कुलीनतन्त्र कहते हैं और जब यही वर्ग विधि की उपेक्षा करके शासन करने लग जाता है तो वह शासन अल्पतन्त्र अर्थात् विकृत कुलीनतन्त्र कहा जायगा। अल्पसंख्यक और सम्पत्तिशाली का पर्यायवाची शब्दों की भांति प्रयोग करना उस समय भी सामान्य वस्तुस्थिति के अनुकूल ही था और यहाँ प्लेटो वस्तुस्थिति का ही उल्लेख कर रहा है जो 'रिपब्लिक' के कल्पना-जगत के आदर्श राज्य और अपरिग्रही कुलीन वर्ग से सर्वथा भिन्न है। उस आदर्श राज्य और आदर्श परिस्थिति में तो एक और अनेक का अन्तर कोई महत्व ही नहीं रखता था। इसी एक व्यक्ति के शासन तथा कुछ व्यक्तियों के शासन की भाँति ही प्लेटो ने लोकतन्त्र को भी दो प्रकारों में विभाजित किया है किन्तु इसके दोनों स्वरूपों के लिए पृथक नामों का प्रयोग नहीं किया है। इसलिए विधियुक्त और विधिहीन विशेषणों से ही काम चलाना पड़ेगा। विधि का अनुसरण अथवा उसकी अवहेलना करने के आधार पर शासन के इन प्रकारों का उपविभाजन करने के उपरान्त उन्हें श्रेष्ठता के क्रम में लिपिबद्ध किया गया है। अच्छी विधि-व्यवस्था का अनुसरण करने वाला राजतन्त्र सर्वश्रेष्ठ उत्कृष्ट शासन है अनियन्त्रित राजतन्त्र अथवा निरंकुश शासन सब से निकृष्ट। बहुसंख्यकों का शासन अर्थात् लोकतन्त्र सबसे निर्बल और प्रभावहीन शासन होता है इसमें न्यूनतम अच्छाई और न्यूनतम बुराई की क्षमता रहती है। अतः विधियुक्त शासनों में यह सबसे बुरा होगा और विधिहीन शासनों में सब से अच्छा। शेष दो रिक्त स्थानों की पूर्ति अल्पसंख्यकों के शासन के दोनों रूपों से की जाती है। अल्पतन्त्र का विधियुक्त रूप लोकतन्त्र से श्रेष्ठ बताया गया है और इसके विधिहीन रूप को लोकतन्त्र के विधिहीन रूप से निकृष्ट स्थान दिया गया है। रिपब्लिक में प्लेटो ने अल्पतन्त्र के किसी भी रूप को लोकतन्त्र की तुलना में निकृष्ट नहीं बताया था और विधियुक्त राजतन्त्र का उल्लेख ही नहीं किया था। स्टेटसमैन में प्रस्तुत शासन के स्वरूपों के वर्गीकरण की इस सम्पूर्ण योजना को निम्नलिखित ढंग से सारिणीबद्ध किया जा सकता है —

सम्यक्	'मनुष्यों में देवता' द्वारा शासन विधि की कोई आवश्यकता नहीं	
असम्यक् (निकृष्टता के क्रम में)	विधियुक्त	विधिहीन
	१ एक व्यक्ति द्वारा शासन राजतन्त्र	४ बहुसंख्यकों (निर्धनों) द्वारा शासन लोकतन्त्र
	२ अल्पसंख्यकों (सम्पत्तिशालियों) द्वारा शासन कुलीनतन्त्र	५ अल्पसंख्यकों (सम्पत्तिशालियों) द्वारा शासन अल्पतन्त्र
	३ बहुसंख्यकों (निर्धनों) द्वारा शासन लोकतन्त्र	६ एक व्यक्ति द्वारा शासन निरंकुश शासन

यद्यपि शासन के उपर्युक्त तीनों विधियुक्त रूपों में विधि को यथेष्ट महत्त्व प्रदान किया जाता है फिर भी उन्हें संविधान (पोलिटिआ) की संज्ञा नहीं दी जा सकती है। शासन के इन सभी स्वरूपों में एकता और संगठन का अभाव रहता है। यह सच है कि प्रत्येक प्रकार के शासन में शासक कुछ निर्धारित नियमों की सहायता से शासन का संचालन करते हैं किन्तु ये नियम उस शासन विशेष की आवश्यकताओं को ही ध्यान में रख कर बनाये जाते हैं। परिणामतः उनकी सत्यता और उपयोगिता उसी शासन विशेष के लिए ही होती है। दूसरे प्रकार के शासन के लिए वे उपयोगी एवं उचित नहीं हो सकते हैं। इस प्रकार इन विभिन्न प्रकार के विधियुक्त शासनों के शासक अवसरवादिता के ऊपर नहीं उठ पाते और वास्तविक राजनीतिज्ञ नहीं हो सकते हैं।

प्लेटो पुनः आदर्श शासन और शासकों की इन अनुकृतियों को छोड़ कर वास्तविक एवं पूर्ण राजनीतिज्ञ की ओर ध्यान देता है। दोनों के अन्तर को उसने पर्याप्त रूप से स्पष्ट कर दिया है। प्लेटो को चाहिए था कि वह यह भी इंगित कर देता कि यदि ऐसी विधि-व्यवस्था का निर्माण करना असम्भव है जो सभी परिस्थितियों और घटनाओं में उपयुक्त हो तो एक शासक के लिए चाहे वह कितना ही योग्य और बुद्धिमान् क्यों न हो यह सम्भव नहीं है कि वह स्वयं सभी कार्यों का निर्धारण कर सके। किन्तु प्लेटो के इस संवाद में किसी वक्ता ने यह नहीं कहा है। सम्भवतः प्लेटो यह नहीं चाहता था कि राजनीतिक कला की पूर्णता को किसी भी प्रकार की जबरदस्त आलोचना द्वारा खण्डित करने का प्रयास किया जाय। प्लेटो यह भली भांति समझता था कि सर्वश्रेष्ठ एवं पूर्ण शासक की धारणा विचार-जगत की वस्तु है विशुद्ध विचार है और इसीलिए उसने इस धारणा में किसी भी प्रकार की अपूर्णता नहीं आने दी। एक प्रारम्भ

सम्भावना नही थी। उसे केवल इतना अवसर मिला कि सेराक्यूज़ के नव युवक शासक को समझाने एवं शिक्षा प्रदान करने का अपनी शक्ति का प्रयोग कर सके। डायोनीसियस (Dionysius) द्वितीय नाम से विख्यात इस नव युवक को इसी समय सराक्यूज़ तथा सारी सिसली का एकछत्र शासन अपने पिता से उत्तराधिकार में प्राप्त हुआ था। उसके पिता ने कार्थेज निवासियों के आक्रमणों को अवरुद्ध कर रखा था और यह कहा जाता था कि उसने उन्हें द्वीप के बाहर इसलिए नहीं खदेड़ा कि वह इनके आक्रमण से उत्पन्न संकटकालीन स्थिति से लाभ उठा कर अपना सामरिक शक्ति कायम रख सके। अन्यथा उसकी वंश सेना तथा एकछत्र अधिकार के लिए कोई उचित कारण न रह जाता। समस्त यूनान में वह एक निर्मम किन्तु निपुण निरंकुश शासक के रूप में विख्यात था। २० वर्ष पूर्व इस नये निरंकुश शासक के चाचा डायोन से प्लेटो मिल चुका था। यह वही डायोन था जो अपने पलायन काल में प्लेटो की अकादमी में शिक्षा प्राप्त कर चुका था। डायोन एक संयमी पुरुष था तथा निरंकुश सम्राट के दरबार के असंयम और स्वेच्छाचारिता का उसने सख्त विरोध किया था। नये शासक ने प्लेटो से दर्शन का अध्ययन करने की इच्छा व्यक्त की थी और इसके आधार पर यह अनुमान किया जा सकता था कि सम्भवतः उसमें कुछ परिवर्तन आ सके और दार्शनिक ज्ञान एवं राजनीतिक सत्ता का कुछ संयोजन सम्भव हो सके। प्लेटो भली भाँति जानता रहा होगा कि इस मार्ग में अनेक व्यवधान उपस्थित होंगे। अपनी प्रथम यात्रा में उसे यह ज्ञात हो गया था कि सिसली और दक्षिणी इटली के तथाकथित उच्च वर्गों के लोग विशेष रूप से स्वेच्छाचारी और उदरसेवी होते थे। वह यह भी अवश्य जान गया होगा कि निरंकुश शासकों के दरबारों में सदैव ऐसे व्यक्तियों की ही प्रधानता रहती है तथा यही लोग दरबार की मर्यादा निर्धारित करते हैं। सेराक्यूज़ के नगर राज्य के संविधान का स्वरूप निरंकुशवादी था और केवल शासक में परिवर्तन लाकर समस्त राज्य के स्वभाव को परिवर्तित करना सम्भव नहीं था। तथापि, प्लेटो इस निमन्त्रण को अस्वीकार नहीं कर सका। इस अवसर का प्रयोग न करना तथा सराक्यूज़ के शासक के इस निमन्त्रण को अस्वीकार करना उसे कायरता दिखाने के सदृश प्रतीत हुआ। उसने यह भी अनुभव किया कि अपने पुराने मित्र डायोन तथा दर्शन के प्रति अपने कर्तव्यों का पालन करने हेतु उसे सराक्यूज़ अवश्य जाना चाहिए। बहुत कुछ सोच विचार करने के बाद वह इस निर्णय पर पहुँचा कि अपने समस्त राजनीतिक विचारों को व्यवहृत करने के लिए यह एक उपयुक्त अवसर है और इसका सदुपयोग करने के लिए उसे भरसक प्रयास करना चाहिए (Ep vii ३२८C)। ऐसी दशा में अपनी ६० वर्ष की अवस्था पर ध्यान न देते हुए उसने इस निमन्त्रण को स्वीकार किया और सेराक्यूज़ के लिए प्रस्थान किया।

डायानीसियस द्वितीय और प्लटो के सम्पर्क का यह पहला प्रयास ३६६ ई० पू० तक ही चला। ३६१ ई० पू० म दूसरा प्रयास भी किया गया किन्तु वह भी असफल रहा। इन दोनो यात्राओं के पश्चात प्लेटो ने जो पत्र लिखे उनसे इस प्रसग पर प्रकाश डाला जा सकता है, तथा प्लेटो के इन प्रयासो का विवरण प्रस्तुत किया जा सकता है।[1] पूरी कहानी की पुनरावृत्ति तो यहाँ नहीं की जा सकती है क्योकि प्लेटो के विरुद्ध किये गये षडयन्त्र डायोनीसियस की उच्छृखलता तथा डायान के प्रति उसकी ईर्ष्या, जिसे उसने प्लेटो के आने ही सेराक्यूज से निष्कासित कर दिया, प्लेटो द्वारा दी जाने वाली शिक्षा के प्रति उसकी उदासीनता तथा काय करने की उसकी अक्षमता का हमारी पुस्तक के विषय से कोई सम्बन्ध नहीं है। किन्तु वास्तविक राजनीतिक परिस्थिति का सामना करने तथा विचार के स्तर पर ही सही, उसे हल करने का जो प्रयास प्लेटो ने किया उसका अवलोकन करना शिक्षाप्रद होगा। जहाँ तक अपने विचारो को काय रूप म परिणत करने का सम्बन्ध है यह अवसर तो प्लेटो को कभी भी नहीं मिला। सिसली के सम्मुख इस समय दो महत्त्वपूर्ण प्रश्न थे जो प्राय एक निरकुश सम्राट की मृत्यु के उपरान्त उठते हैं। डायोनीसियस प्रथम ने सेराक्यूज पर तो अपना निरकुश शासन स्थापित ही किया था, सिसली के अन्य राज्यो को भी उसने अपने साम्राज्य के अन्तगत कर लिया था। सेराक्यूज की ये दोनो विशेषताएँ—अपने राज्य म निरकुश शासन तथा अन्य राज्यो की स्वतन्त्रता का अपहरण—प्लेटो के आधारभूत सिद्धान्तो के प्रतिकूल थी। उसके अनुसार सेराक्यूज म निरकुश शासन का अन्त होना तथा अधीन यूनानी राज्यो को स्वतन्त्र राज्यो के रूप मे पुनर्स्थापित करना अत्यन्त आवश्यक था। जहाँ तक दूसरे प्रस्ताव का सम्बन्ध है इसके लिए तो उसने सम्राट् की मौखिक सम्मति भी प्राप्त कर ली थी। डायोनीसियस का तो यह कहना था कि वह सदा से इन राज्यो को स्वतन्त्रता प्रदान करना चाहता था। किन्तु, सेराक्यूज के आन्तरिक शासन म हस्तक्षेप करना एक दूसरी बात थी और वह भी एक ऐसे सम्राट् के कार्यों म जिसकी सत्ता सुदृढ और सुव्यवस्थित थी। फिर भी प्लेटो ने इस दिशा म कदम उठा कर जिस साहस का परिचय दिया वह सराहनीय था और कोई भी इसके लिए प्लेटो की प्रशसा किये बिना नहीं रह सकता।

'क्राइटो' से 'पोलिटिक्स' तक प्लेटो की समस्त रचनाओ का अध्ययन कर लेने के बाद यह अनुमान करना कठिन न होगा कि प्लेटो ने डायोनीसियस को क्या परामर्श दिया होगा। सेराक्यूज म 'रिपब्लिक' के आदर्श राज्य अर्थात विचार-जगत

---

१ इस प्रसग पर प्रकाश डालने का दूसरा प्रमुख साधन Plutarch की 'Life of Dion' है।

के उस राज्य की पार्थिव प्रतिलिपि की स्थापना करने का तो कोई प्रश्न ही नहीं उठता था। इसकी स्थापना के लिए कोई भी आवश्यक परिस्थितियां वहाँ विद्यमान नहीं थीं। प्लेटो के लिए अब यह सम्भव नहीं था कि वह ३० वर्ष तक सेराक्यूज के लिए शासकों को शिक्षित करता। यह आशा भी नहीं की जा सकती थी कि डायोनीसियस मनुष्यों में देवता बन सकेगा और पॉलिटिकस का आदर्श शासक हो सकेगा। उसके अतिरिक्त किसी अन्य नश्वर प्राणी को प्लेटो इस स्थान के योग्य समझता भी नहीं था और सेराक्यूज में इस प्रकार का कोई पद उसे नहीं दिया गया था। फिर भी इसमें सन्देह नहीं कि प्लेटो ने सेराक्यूज की यात्रा इस आशा से की थी कि वह नवयुवक शासक को कुछ मात्रा में अपने प्रभाव में रख सकेगा। किन्तु परिस्थिति कुछ ऐसी उत्पन्न हुई कि युवक डायोनीसियस को वास्तविक अधिकार नाम मात्र के लिए ही मिला। प्लेटो के इन पत्रों में जहाँ कहीं भी संविधान का उल्लेख किया गया है वहाँ आदर्श संविधान के स्थान पर द्वितीय श्रेणी के संविधान की ही चर्चा की गयी है—ऐसे संविधान की जो व्यावहारिक सम्भावना रखता हो अथवा विधि पर आधारित हो। जैसा कि हमने इसी अध्याय में उल्लेख किया है केवल तीन प्रकार के विधियुक्त शासनों में से ही चयन किया जा सकता था। सेराक्यूज में लगभग ४० वर्षों से एक व्यक्ति का शासन चला आ रहा था और प्लेटो के सेराक्यूज आगमन के समय भी एक शासक पदासीन था। ऐसी स्थिति में विधियुक्त शासन के तीनों स्वरूपों में से केवल राजतन्त्र को ही चुना जा सकता था। अतः सबसे सरल उपाय यही था कि एक व्यक्ति द्वारा निरंकुश शासन के स्थान पर राजतन्त्र की स्थापना की जाय। प्लेटो और डायोन ने अपने सम्मुख एक मात्र लक्ष्य यही रखा कि डायोनीसियस को एक ऐसा लिखित संविधान को स्वीकार करने के लिए तैयार किया जाय जिसका पालन स्वयं डायोनीसियस तथा उसके दरबारी और सेराक्यूज की समस्त जनता समान रूप से करे। यह हृदय-परिवर्तन की प्रक्रिया थी जो डायोनीसियस से प्रारम्भ होती। इस लक्ष्य की प्राप्ति तथा इस प्रक्रिया को प्रारम्भ करने के लिए आवश्यक था कि डायोनीसियस को ऐसी शिक्षा प्रदान की जाय जिससे उसमें आत्म-संयम और मैत्री भाव का विकास हो सके। एक राजा के लिए ये दोनों ही आवश्यक गुण हैं किन्तु निरंकुश शासक संयम और मित्र दोनों से ही दूर रहता है। प्लेटो ने यह आशा की थी कि डायोनीसियस में इन गुणों का प्रादुर्भाव हो जाने के पश्चात् इस प्रक्रिया का विस्तार उसके दरबारियों तथा सेराक्यूज के अन्य नागरिकों तक होगा और इसके फलस्वरूप सेराक्यूज के जीवन में प्रचलित निरंकुश पद्धति के स्थान पर एक श्रेष्ठ और शालीन पद्धति की स्थापना होगा। निरंकुश शासक के दरबारियों के लिए स्वाभाविक था कि वे इस पद्धति का विशेष विरोध करते। उन्होंने इस समस्त आयोजना को निरंकुश शासन का उन्मूलन करने के षड्यन्त्र के रूप में देखा। वास्तव में इस

आयोजना का उद्देश्य भी यही था। सविधान के क्षेत्र में प्लेटो ने एक स्मृतिपत्र भी तैयार कर लिया था और इसमें अपनी प्रस्तावित विधि-व्यवस्था के सामान्य उद्देश्यों को प्रस्तुत किया था। नागरिकता की शिक्षा की दृष्टि से यह एक उपयोगी विचार था और अपनी दूसरी वृहत् रचना लाज में प्लेटो ने इसका उपयोग भी किया। किन्तु सेराक्यूज में इस स्मृतिपत्र को तैयार करने के अतिरिक्त कुछ और करने में वह सफल नहीं हो सका। डायोनीसियस और डायोन में मतभेद उत्पन्न हो गया और इसने उग्र रूप धारण कर लिया। इसका परिणाम यह हुआ कि सेराक्यूज से डायोन को निष्कासित कर दिया गया और इस घटना के साथ ही प्लेटो और डायोनीसियस का प्रथम राजनीतिक सहयोग भी प्राय समाप्त हो गया। यह सब ३६६ ई० पू० में हुआ। ३६२ ई० पू० में पर्याप्त सोच विचार के पश्चात् प्लेटो ने डायोनीसियस का दूसरा निमन्त्रण स्वीकार किया। उसने यह आशा की थी कि वह डायोन को पुन सेराक्यूज वापस लाने के लिए मार्ग तैयार कर सकेगा। किन्तु जैसा कि अरिस्टोक्सीनस (Aristoxenus) ने कहा है 'उसका (प्लेटो का) यह सिसली यात्रा सफलता के उतनी ही समीप थी जितनी कि निसियास की।'[1]

जैसे-जैसे समय व्यतीत होता गया प्लेटो का यह विश्वास भी दृढ होता गया कि ससार की व्यावहारिक आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए राज्यों का विधि पर ही आधारित होना चाहिए। 'सिसली अथवा अन्य किसी भी राज्य को मनुष्यों के अधीन न करके विधि के अधीन करो' (Epist vii ३३४ C)। किन्तु विधि पर आधारित सविधान के नाना प्रकारों में से कौन सा सेराक्यूज के लिए सब से उपयुक्त था? इस प्रश्न का निश्चित उत्तर प्लेटो नहीं दे सका। डायोनीसियस को निरकुश शासक से एक विधिपालक सम्राट के रूप में परिवर्तित करने में वह सफल नहीं हो सका था। डायोन के सम्बन्ध में प्लेटो का विश्वास था कि सेराक्यूज का शासक बनने का अभिलाषी वह नहीं रखता है, यद्यपि अन्य लोग इस विचार से सहमत नहीं थे। जो भी रहा हो डायोनीसियस के विरुद्ध डायोन ने शस्त्र उठाया और उसे पराजित भी किया, ३५४ ई० पू० में वह भी मारा गया। इन सात वर्षों में सेराक्यूज में होने वाले परिवर्तनों को देखते हुए प्लेटो विधि पर आधारित राजतन्त्र की अपेक्षा विधि पर आधारित कुलीनतन्त्र की ओर आकृष्ट हुआ। कुलीनतन्त्र की तुलना में श्रेष्ठ शासन होने हुए भी राजतन्त्र द्वारा डायोनीसियस और डायोन के समर्थकों में होने वाले गृह-युद्ध का नहीं समाप्त किया जा सकता था। इस गृह-युद्ध को बल और हिंसा की अपेक्षा समझौते से ही

---

१ Lucian De Parasito ३४ (८६२) = Aristoxenus Fr ६२ Wehrli

तीन राजाओं के इस राजतंत्र के संविधान की रूपरेखा भी प्लेटो ने प्रस्तुत की है। राजा के कर्त्तव्य प्रधानतया (यद्यपि पूर्णतया नहीं) धार्मिक होंगे, शासन का अधिकार अधिकार ३५ व्यक्तियों के एक दल के हाथ में होगा जो 'विधि के संरक्षक' कहे जायेंगे। नागरिकों की एक सभा तथा एक परिषद की भी व्यवस्था की गयी है जिसके लिए क्रमशः एथेन्स में प्रचलित इक्लीज़िया और बुली शब्दों का प्रयोग किया गया है। इस प्रकार सेराक्यूज़ के लिए जिस संविधान का रूपरेखा प्लेटो ने प्रस्तुत की है उसमें लोकतन्त्र, कुलीनतन्त्र और राजतन्त्र के गुणों का समावेश किया गया है। सेराक्यूज़ की समस्या के समाधान के लिए प्लेटो का यह आखिरी सुझाव है। 'लाज़' में प्रस्तुत शासन के वृहद स्वरूप और इस प्रस्ताव में महत्वपूर्ण सादृश्य है।

कुछ अतिरिक्त टिप्पणियाँ और प्रसंग-निर्देश

अध्याय—६

XENOPHON

Memorabilia १२, ४० ४६ (एल्सीबियाडीज़ और पेरिक्लीज़), iii ५, १३ २४, iv ४, ८ २५ (सोक्रटीज़ और हिप्पियाज़), iv ६, १२ (संविधान) इनकी टिप्पणी में और भी देखिए। Lacedaemonian Polity, अध्याय ८–९।

Cyropaedia ii, २, ६, ७ २४, vii ५, ५८ ८६, viii १, २, ३, १-१४

PLATO

Politicus (प्लेटो की यह रचना 'स्टेट्समैन' के नाम से विख्यात है) २६८ C २७६, २९१ C-३०३ D, ३०३ D-३०५ E हमारे विषय की दृष्टि से ये भाग सीधा और निकटतम सम्बन्ध रखते हैं, किन्तु इतना स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि जिस संवाद के ये भाग है वह शासन के विषय से प्रासंगिक सम्बन्ध ही रखता है। विस्तृत विश्लेषण के लिए तथा विशेषकर Republic और इसके सम्बन्ध के लिए Hans Zieuse की Der Staatsmann (१९३८) Philologus Supptbd xxxi ३) देखिए।

Epistles तीसरा और आठवां पत्र। सातवां लम्बा पत्र का मुख्यतया ३२६ B-३३० E, ३५० B ३५२

G R Morrow, Studies in Platonic Epistles (Illinois १९३५) पृष्ठ ११४ १७३

G C Field Plato and his Contemporaries (१९३०, repr १९४८), ch 11

जाफिन का Mem iv ६ १२ के 'Framnent' पर टिप्पणी

यह अनुच्छेद पृथक और असम्बद्ध है। अनुच्छेद के पूर्व और उपरान्त की बातों का इसस कोई सम्बन्ध नहीं है। सम्भवत जनाफन न किसी अन्य राजनीतिक संवाद से इस लिया है। इसी प्रकार का एक संवाद Florentine papyrus म भी मिलता है जिसम चौथी शताब्दी की यूनानी भाषा म अल्प तन्त्र और लोक-तन्त्र क सिद्धान्तो की समीक्षा की गयी है और इस सिद्धान्त को अस्वीकृत किया गया है कि अल्प तन्त्र की अपेक्षा लोक-तन्त्र म वाक्-पटुता और वक्तता अधिक महत्त्व रखता है। Papirj della Societa Italiana xi, १९३५, Aegyptus xxviii, १९४८ (M Gigante) और xxix १९४९ (M Gigante and R Merkelbach)

अध्याय १०

प्लेटो का विधि-विधान

साधारणतया वृद्धावस्था को प्राप्त होने पर लोग अपने विचारों के प्रति अधिक दृढ़ हो जाते हैं और उनके प्रतिपादन में अनावश्यक रूप से अधिक वाग्जाल का प्रयोग करने लग जाते हैं। किन्तु कुछ लोग ऐसे भी होते हैं जो अपने विचारों और विश्वासों का विरोध तो नहीं सहन कर सकते, परन्तु परिपक्वता प्राप्त कर लेते हैं और दूसरों के प्रति अधिक सहिष्णु हो जाते हैं, उनके विचारों तथा उनकी कमजोरियों का समर्थन के लिए तैयार रहते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि प्लेटो भी इसी प्रकार के व्यक्तियों में था। अपनी वृद्धावस्था में उसने जिस पुस्तक की रचना की उसे दुहराने का अवसर उसे नहीं मिल सका। Laws नामक यह पुस्तक वाग्जाल से भरी है और इसमें विषय को सीमाबद्ध भी नहीं किया जा सका है। इस पुस्तक में प्लेटो अधिकार के साथ विधि निर्धारित करता है और आदि से अन्त तक अपने मूल सिद्धान्तों पर दृढ़ रहता है। विधि की अवहेलना करने की अनुमति तो वह किसी को भी देना नहीं चाहता है और न उन व्यक्तियों को क्षमा कर सकता है जो विधि की सत्ता का निरादर करते हैं, तथापि मानवोचित दुर्बलताओं, सुख और मनोरंजन के लिए मनुष्य की लालसा तथा अपनी निजी वस्तुओं और अपने सम्बन्धियों के प्रति मानव की सहज ममता के प्रति सहानुभूति इस पुस्तक में परिलक्षित होती है। प्लेटो यह स्वीकार करता है कि मनुष्य न तो शैतान है और न देवता ही। वह मनुष्य है और यदि उसे उचित शिक्षा मिल जाती है तो उसका व्यवहार, तर्क और विवेक युक्त होगा। प्लेटो का विचार है कि यदि मनुष्य को यह मालूम हो जाय कि उसे किस प्रकार का व्यवहार करना चाहिए तथा किन मान्यताओं का अनुसरण करना चाहिए और इन मान्यताओं के औचित्य तथा इनके अनुसरण करने का कारण ज्ञात हो जाय, तो वह इनसे विचलित नहीं होगा, अपने जीवन और व्यवहार में उनका अनुसरण करेगा। किन्तु मनुष्य को यह स्वतन्त्रता नहीं दी जा सकती है कि वह स्वयं यह निर्धारित करे कि उसे किन मान्यताओं का अनुसरण करना है। मान्यताओं को प्लेटो निश्चित एवं शाश्वत मानता है। इन्हें वह परिवर्तन के परे समझता है। उसका विश्वास है कि मान्यताओं का निर्माण मनुष्य द्वारा नहीं किया जा सकता है। मनुष्य तो इन्हें स्वतः ही प्राप्त करता है। प्रोटागोरस ने कहा था कि 'प्रत्येक वस्तु का मापदण्ड

मनुष्य है। प्लेटो का कहना है 'नहीं ईश्वर ही प्रत्येक वस्तु का मापदण्ड है।

इस प्रकार इस दार्शनिक के सम्मुख एक नया कार्य उपस्थित हो जाता है। और वह है एक ऐसे राज्य का चित्र प्रस्तुत करना जो एक ओर तो सुव्यवस्था और सद्भाव सम्पूर्ण होगा मनुष्यों के रहने योग्य होगा, और दूसरी ओर, वह ईश्वर की इच्छा का अनुसरण करेगा। अपने पहले के विश्वास को कि ऐसे राज्य की स्थापना करने का सब से अच्छा उपाय यही है कि शासन का समस्त कार्य सबसे अधिक बुद्धिमान सबसे अधिक नेक तथा पूर्ण विकसित व्यक्तित्व वाले ईश्वरीय गुणों से युक्त शासक के हाथ में सौंप दिया जाय यदि ऐसा व्यक्ति उपलब्ध हो सके वह भूला नहीं गया है। इस पुस्तक में भी वह बहुधा अपने इस विश्वास को दुहराता है (७११ ७१२ ८७५)। किन्तु वय और अनुभव से उसने यह सीख लिया था कि कोई भी मनुष्य मानवीय कार्यकलापों पर पूर्णाधिकार तथा पूर्ण नियन्त्रण का प्रयोग करने में अव्यवस्था (हाइब्रिस) और अन्याय (एडिकिया) के प्रभाव से मुक्त नहीं हो सकता है (७१३ C)। उसका यह भी विचार है कि राजनीतिक क्षेत्र में मनुष्य के लिए सर्वश्रेष्ठ मार्ग का निर्धारण कर सकने की नैसर्गिक क्षमता किसी भी व्यक्ति में नहीं है और यदि कोई ऐसा करने में समर्थ भी हो जाता है तो उसके लिए यह सम्भव नहीं है कि उस मार्ग का अनुसरण करने तथा दूसरों को भी उसी मार्ग पर चलाने के लिए तत्पर हो (८७५)। पारिवारिक जीवन तथा वैयक्तिक सम्पत्ति से शासकों को वञ्चित करने तथा उनके जीवन में राज्य मात्र के हित के अतिरिक्त अन्य सभी प्रकार के हितों का उन्मूलन करने की उपयोगिता को वह अब भी स्वीकार करता है। किन्तु अब प्लेटो अधिक व्यावहारिक हो गया है और जैसा कि वह स्वयं लिखता है अब हम मनुष्यों के बारे में विचार कर रहे हैं देवताओं के बारे में नहीं (७३२ E)। ऐसी दशा में जैसा कि उसने पालिटिकस (स्टेट्समन) में स्पष्ट किया था आवश्यक हो जाता है कि अनेक सीमाओं के होते हुए भी विधि का शासन यह जानते हुए भी स्वीकार किया जाय कि इस प्रकार का शासन श्रेष्ठता में द्वितीय श्रेणी का ही होता है। मनुष्यों द्वारा प्रयुक्त होने वाले सभी अधिकारों को विधि-व्यवस्था के अधीन होना चाहिए और चूंकि हमें ईश्वरीय शासक के शासन का सौभाग्य नहीं प्राप्त है इसलिए राज्य के अन्तर्गत किसी भी व्यक्ति को यह समझने का अवसर नहीं प्राप्त होना चाहिए कि वह विधि-व्यवस्था के ऊपर है। पालिटिकस में प्लेटो ने यह आपत्ति की थी कि मनुष्यों के सभी कार्यकलापों को लिखित विधि-व्यवस्था के अन्तर्गत नहीं लाया जा सकता। लाज में भी वह इस आपत्ति को नहीं भूलता है किन्तु इसके निराकरण के लिए यह सुझाव देता है कि विधायक को विधि निर्धारण के अतिरिक्त भी बहुत कुछ करना चाहिए। उसका यह भी कर्तव्य है कि नागरिकों को विधि की शिक्षा प्रदान करे उन्हें विधि के आधारभूत सिद्धान्तों को समझने तथा अपने जीवन में उनका

अनुसरण करने योग्य बनाये, तथा विधि के दैवी उत्पत्ति के सिद्धान्त में उनके विश्वास को दृढ़ कर। विधि के लिए अत्यन्त सूक्ष्म प्रतीत होने वाले मामलों को प्लेटो परामर्श के क्षेत्र के अन्तर्गत रखता है (७८८)। नागरिकों से भी वह यह अपेक्षा करता है कि वे निष्क्रिय और आज्ञाकारी मात्र न होकर अपनी शिक्षा में सक्रिय भाग लें (७२४) और यह स्मरण रखें कि शरीर की अपेक्षा आत्मा कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण होती है। ऐसी दशा में उनका यह कर्त्तव्य होगा कि वे अपनी बुद्धि के विकास तथा अपने अन्दर अनश्वर प्रतीत होने वाले गुणों की ओर विशेष ध्यान देने का प्रयास करें (७१३ E)।

प्लेटो के जीवन के संकटमय काल (३६६ ३५४ ई० पू०) की उसके विचारों पर अमिट छाप पड़ी (अध्याय ९ देखिए) सम्भवतः 'लाज' की रचना उसने इस काल के अन्तिम चरणों में ही प्रारम्भ कर दी थी और ३४७ ई० पू० में अपनी मृत्यु के कुछ समय पहले तक इसी में लगा रहा। संवाद की शैली में लिखित १२ पुस्तकों[1] की इस रचना में एक ही बात को कई बार दुहराया जाता है और अनेक स्थलों पर प्रसंग को छोड़ कर इधर-उधर की बात भी कही जाती हैं। प्लेटो के सम्मुख अब भी वही पुरानी समस्या है।[2] मनुष्य किस प्रकार सर्वश्रेष्ठ जीवन व्यतीत कर सकता है? यह तो मान कर चला जाता है कि सर्वश्रेष्ठ जीवन केवल नगर राज्यों में ही सम्भव हो सकता है। यह भी स्वीकार किया जाता है कि नेक जीवन ही सर्वश्रेष्ठ और सुखद जीवन है। इस सत्य को समझा-बुझा कर स्वीकार कराने की राय दी जाती है, क्योंकि बल की अपेक्षा समझा-बुझा कर सही बात स्वीकार कराने को प्लेटो श्रेष्ठ समझता है। यद्यपि वह स्वीकार करता है कि समझाने की इस प्रक्रिया में कभी-कभी प्रवंचना का प्रयोग करना पड़ता है (६६२ ६६३)। नैतिक एवं राजनीतिक शिक्षा के लिए अलंकार शास्त्र एवं वक्तृता की उपयोगिता को अब प्लेटो स्पष्ट रूप से स्वीकार करता है। 'रिपब्लिक' की ही भाँति 'लाज' में भी वह नागरिकों की शिक्षा की व्यवस्था करना राज्य का प्राथमिक कर्त्तव्य मानता है किन्तु शिक्षा के विषय पर अब वह अधिक व्यापक ढंग से विचार करता है। साथ ही कला एवं साहित्य पर कठोर पड़ताल और प्रतिबन्ध का भी अनुमोदन करता है। क्रीट और स्पार्टा द्वारा प्रस्तुत नगर राज्य की डोरियाई पद्धति को वह सामान्यतया

१ प्लेटो के शब्दों के आधार पर Philip of Opus द्वारा संकलित अथवा सम्पादित Epinomis को मिलाकर कुल १३ पुस्तकें होंगी। फिलिप ने Epinomis को 'लाज' के परिशिष्ट के रूप में संलग्न किया है और यदि 'लाज' की प्रामाणिकता पर सन्देह किया न जाय तो Epinomis में व्यक्त विचारों को भी प्लेटो के विचारों के रूप में ही स्वीकार किया जा सकता है।

२ ७१४ B

उचित मानता है। रिपब्लिक की आठवीं पुस्तक में इन संविधानों के विरुद्ध जो आपत्तियाँ की गयी थीं उनकी ओर 'लॉज़' में ध्यान नहीं दिया जाता है और यह स्वीकार किया जाता है कि ये दोनों संविधान विशेष किसी देवता की स्वीकृति पर आधारित हैं। क्रीट में मिनास ने जिस संविधान को स्थापित किया था वह ज़्यूस की अनुमति पर और स्पार्टा में जिस संविधान को लाइकरगस ने स्थापित किया वह अपोलो (Apollo) की स्वीकृति पर आधारित माना जाता है। 'लॉज़' में प्लेटो ने स्पार्टा की आलोचना अवश्य की है किन्तु यह आलोचना केवल दर्शाती है कि नागरिक प्रशिक्षण पर स्पार्टा में अधिक ज़ोर दिया जाने लगा था। जहाँ तक वहाँ के संविधान के गुणों का सम्बन्ध है प्लेटो उधर ध्यान नहीं देता है। नागरिक प्रशिक्षण के महत्त्व को भी प्लेटो स्वीकार करता है (८३०, ९४२) किन्तु इसे केवल साध्य नहीं मानता है। केवल साधन मानता है। उसका कहना है कि नागरिक प्रशिक्षण के समर्थकों का यह दावा कि इससे नागरिकों में साहस का प्रादुर्भाव होता है यदि सच मान लिया जाय तो भी राज्य के लिए केवल एक गुण (साहस) पर्याप्त नहीं है। स्पार्टा के इस दोष के आधार पर वह संविधान के दैवी उत्पत्ति के सिद्धान्त का खण्डन नहीं करता है। प्लेटो की तो यह धारणा है कि जब तक ईश्वरीय शासक नहीं उत्पन्न होंगे, हमें अनिवार्यतः ईश्वरीय विधि पर निर्भर करना पड़ेगा। निःसन्देह वह तत्कालीन स्पार्टा और क्रीट की विधि-व्यवस्था को ईश्वरीय नहीं मानता था। स्पार्टा के संविधान की जिस मुख्य विशेषता से प्लेटो सर्वाधिक प्रभावित हुआ वह यह था कि यद्यपि वहाँ प्राय विद्रोह होते रहे, फिर भी वहाँ का संविधान अक्षुण्ण बना रहा।

विगत घटनाओं और अनुभवों से शिक्षा ग्रहण करने की आशा[1] से प्लेटो 'लॉज़' की तीसरी पुस्तक में संविधान के इतिहास का सर्वेक्षण करता है और आदि काल से लेकर ऐतिहासिक युग के स्पार्टा के संविधान की आलोचना आद्योपान्त वहाँ प्रस्तुत करता है। एक राजनीतिक विचारक के लिए इस प्रकार का अध्ययन अवांछनीय नहीं है यद्यपि नैतिक चिंतन का स्थान यह नहीं ले सकता है। फिर भी इस प्रकार का अध्ययन सुनिश्चित तथ्यों पर आधारित होना चाहिए कल्पित कथानकों पर नहीं[2]। किन्तु ऐतिहासिक सत्यता का जो पाठ थ्यूसीडिडीज़ ने सिखाया था उसकी ओर प्लेटो तथा अन्य दार्शनिकों ने कोई भी ध्यान नहीं दिया और 'लॉज़' की तीसरी पुस्तक में प्लेटो ने प्राचीन इतिहास के पुनर्रचना के साथ साथ अपने नवीन सिद्धान्तों का प्रतिपादन भी किया है। प्लेटो [illegible] के इस ऐतिहासिक अंश की ऐतिहासिकता

---

१ [illegible] हो यहाँ निष्कर्ष भी देखिए ६९०C।
२ Thucydides। -- तुलना कीजिए अध्याय ६।

अस्पष्ट और दूषित हो गयी है। जिस ढंग से प्लेटो कहता है कि उसने ऐतिहासिक तथ्यों का खोज कर ली है उसी से उसकी सत्यता पर सन्देह होने लगता है और पाठक स्वतः सावधान हो जाता है। यद्यपि प्लेटो स्वयं यह स्वीकार करता है कि प्रारम्भिक इतिहास को प्रस्तुत करने में वह या तो उन घटनाओं का वर्णन करता है जो सम्भवतः घटित हुई (काटा टो एइकोज) (Kata To Eikos) अथवा किसी प्राचीन दन्त-कथा (पलइओस लोगोस) का। इतिहास का जो विवरण उसने प्रस्तुत किया है वह अधिकतर होमर की रचनाओं पर आधारित है, और यही आशा भी की जा सकती थी। (मंजिका अध्याय एक देखिए।) इस दीर्घ काल के इतिहास का विकास की चार अवस्थाओं में विभाजित किया गया है। पहली अवस्था पृथक परिवारों की है—ओडेसी, (Odessey) में वर्णित साइक्लोप्स (Cyclops) परिवारों की भांति। किन्तु प्लेटो के वर्णन में इस अवस्था का जीवन साधारण सद्गुण और दया से पूर्ण था। सोना अथवा अन्य किसी धातु के प्रयोग ने लोगों के इस सादे जीवन को विकृत नहीं किया था। ज्ञान का अभाव[1] ही इस अवस्था का सबसे प्रधान दोष था। विकास की दूसरी अवस्था में कृषि का आविष्कार होता है। विधि की स्थापना तीसरी अवस्था में होती है जब विभिन्न पृथक् परिवार एक साथ मिल कर एक बृहत् समुदाय की स्थापना करते हैं। प्रारम्भिक विधायकों द्वारा स्थापित शासन का स्वरूप सदैव कुलीन-तंत्र अथवा राजतन्त्र ही होता था। यथार्थ या तो विभिन्न परिवारों के प्रमुख सम्मिलित रूप से शासन का कार्य करते थे अथवा एक प्रमुख सरदार सभा के ऊपर शासन करता था। चौथी और अंतिम अवस्था का प्रादुर्भाव 'आधुनिक' नगर राज्यों की स्थापना के साथ हुआ, और यह अपेक्षाकृत अधिक जटिल था। इस समस्त वृत्तान्त का अभिप्राय यह सिद्ध करना प्रतीत होता है कि चूंकि भूमिधारी सामन्तों के कुलीन-तन्त्र की परम्परा प्राचीन काल से ही चली आ रही है, इसलिए शासन के अन्य स्वरूपों की अपेक्षा इस प्रकार का कुलीन-तन्त्र अधिक स्थायी होने की सम्भावना रखता है। इसी प्रकार ट्राय के युद्ध (Trojan-

---

१ इस प्रकार प्रारम्भिक जीवन में पूर्णता का अभाव था यद्यपि यह जीवन सरल और श्रेष्ठ था। प्लेटो ने इतिहास की जो रचना की है उसमें दो विरोधी सिद्धान्तों का समावेश करने का प्रयास दिखाई देता है—स्वर्ण युग से अध:पतन का सिद्धान्त और सभ्यता की प्रगति का सिद्धान्त। Hesiod ने भी कुछ इसी प्रकार का प्रयास किया था। लेखक के 'Works and Days' के संस्करण में दी गयी टिप्पणी एवं प्रमाणों का अवलोकन कीजिए (Macmillan १९३२-pp १५-१७) और अध्याय १३ में दिये गये Lucretius के दृष्टिकोण से तुलना कीजिए।

War) के उपरान्त की घटनाओं के आधार पर प्लेटो एक दूसरी बात सिद्ध करने का प्रयास करता है। वैसे इन सम्बन्ध में जिन घटनाओं का वर्णन उसने किया है वह प्राय कल्पनात्मक ही हैं। आरगस (Argos) तथा मेसीन (Messene) के राजतन्त्र के पतन का वर्णन करते हुए वह लिखता है कि स्पार्टा का राज-तन्त्र उन्नति ही करता गया। इस सम्बन्ध में वह प्रश्न करता है—"क्या राजतन्त्र अथवा किसी अन्य प्रकार के शासन का विघटन उसके सदस्यों के अतिरिक्त कोई अन्य व्यक्ति कर सकता है?" (६८३ E) दूसरे शब्दों में प्लेटो अपने इस मत की पुष्टि करना चाहता है कि एक अच्छे शासन में जनता के विद्रोह की सम्भावना इतनी अधिक नहीं रहती है जितनी की शासक वर्ग के आन्तरिक कलह एवं असफलता की। सम्भवत प्लेटो का यह मत अधिक त्रुटिपूर्ण नहीं है। प्राचीन काल में सर्वसाधारण का कोई अपना संगठन नहीं होता था और उनके असन्तोष तथा उनकी शिकायतों का लाभ महत्त्वाकांक्षी राजनीतिज्ञ अथवा कभी-कभी विदेशी आक्रमणकारी ही उठाया करते थे। इसके अतिरिक्त दासों और स्वतन्त्र[1] नागरिकों के दो वर्गों में विभक्त होने के कारण भी साधारण जनता शासन के विरुद्ध विद्रोह करने में असमर्थ रहती थी।

इन दोनों बातों से डोरियाई (Dorian) संविधान का ही समर्थन प्राप्त होता है। किन्तु प्लेटो इस बात से भी भली भांति अवगत था कि इस प्रकार के समुदाय में सामरिक श्रेष्ठता को अत्यधिक महत्त्व दिया जाता है और उसका परिणाम यह होता है कि बौद्धिक एवं भावनात्मक गुणों की उपेक्षा होने लगती है। प्लेटो की दृष्टि में यह एक गम्भीर दोष था। उसका कहना है कि अज्ञान के स्थान पर ज्ञान की स्थापना होनी चाहिए। किन्तु इस प्रसंग में ज्ञान से प्लेटो का क्या तात्पर्य है? उसका तात्पर्य सम्यक् और असम्यक् के ज्ञान से है जिसे यूनानी भाषा के एमाथिया शब्द से आसानी से व्यक्त किया जा सकता है। सुनिश्चित एवं निर्धारित[2] आचरण को सम्यक् और उचित समझने से इनकार करने को तथा जिसे निश्चित रूप से अन्याय और असम्यक् समझा जाता है उसे जानबूझ कर अपनाने को वह मूर्खता कहता है। यदि हम यह प्रश्न करें कि सम्यक् एवं उचित को निर्धारित करने वाला कौन है, तो प्लेटो का यही उत्तर होगा कि यह तो देवताओं द्वारा निर्धारित किया जा चुका है और विधि के रूप में देवताओं का निर्णय

---

१ F W Walpank, Causes of the Creek Decline (Journal Hell Studies Lxiv, १९४४) देखिए।

२ 'that which has been decided upon डोक्सोन प्रोटगोरस ने निश्चय अथवा निर्णय करने का अधिकार समुदाय को दिया था—टी कोलनी डोक्सान अध्याय ४ देखिए।

हमारे समक्ष है। राज्य के अन्दर एकता और समानता तभी स्थापित हो सकती है जब लोग धार्मिक विश्वास के साथ विधि का पालन करें। इस सन्दर्भ में प्लेटो का एक वाक्य उसकी इस स्थापना का निरस्त कर देता है कि बौद्धिक योग्यता राज्य के लिए प्रधान महत्त्व की वस्तु है। वह लिखता है कि शासन की उपाधि तथा राज्य के पद को उन्हीं लोगों के लिए सुरक्षित रखना चाहिए जो विधि का अनुसरण करते हैं चाहे वे 'बहुत प्रतिभाशाली भले ही न हों।'[1] आश्चर्य की बात है कि क्लियोन (Cleon)[2] की भांति प्लेटो भी यहाँ राजनीतिक नियन्त्रण से मुक्त बुद्धि से भयभीत प्रतीत होता है।

इस अर्द्ध-ऐतिहासिक विवरण के आधार पर प्लेटो एक तीसरा शिक्षाप्रद तथ्य भी प्राप्त करता है। और वह यह है कि यदि राजनीतिक सत्ता का अनुचित केंद्रीयकरण न किया जाय तो संविधान अपेक्षाकृत अधिक स्थायी होगा। स्पार्टा ने संविधान की सफलता ने इसे सिद्ध कर दिया था क्योंकि वहाँ एक साथ दो राजा शासन करते थे और elders तथा ephors को राजनीतिक अधिकार देकर इन राजाओं की *शक्ति को भी सन्तुलित करने की व्यवस्था की गयी थी।* वास्तव में स्पार्टा का राजतन्त्र एक व्यक्ति का शासन नहीं था। वह एक मिश्रित सुसन्तुलित संविधान था। प्लेटो के अनुसार एक व्यक्ति के शासन का सबसे अच्छा उदाहरण फारस में मिलता था और उसने सही ही कहा है कि यूनान ने न केवल फारस के राजनीतिक आधिपत्य से अपनी रक्षा की अपितु फारस की शिक्षा[3] से भी अपनी रक्षा की। यूनानी राज्यों का स्वतन्त्र, विवेकपूर्ण एवं संयत रहने तथा अपने अपने राज्य में मैत्री भाव रख सकने का अवसर उपलब्ध था। किन्तु वास्तव में केवल स्पार्टा ही इस आदर्श के समीप आ सका। एथेन्सवासियों ने उस सिद्धान्त की रक्षा नहीं की जिसके अनुसार समस्त जनता अपने को विधि के अधीन करने के लिए तत्पर रहती है (७००)। प्लेटो का कहना है कि

---

१ मूल में 'nor very bright' का प्रयोग किया गया है। यूनानी कहावत थी, 'न पढ़ सकते हैं न तैर सकते हैं' (६८९ D)

२ अध्याय ६ से तुलना कीजिए तथा Laws ६८९ A E के साथ Thucydides iii ३७ का अध्ययन कीजिए।

३ 'साइरस के सम्बन्ध में वास्तविक तथ्य यह है युद्ध-क्षेत्र में वह एक श्रेष्ठ एवं वेश भक्त नेता था, किन्तु वास्तविक शिक्षा (पडिआ) के बारे में वह कुछ भी नहीं जानता था और 'आइकोनोमिआ' की ओर उसने किञ्चिन्मात्र भी ध्यान नहीं दिया (६९४ C)। क्या इस कथन का अभिप्राय जेनोफन की Cyropaedia की मूढ़ता दर्शाना है ? अथवा Antisthens को लक्ष्य बनाया गया है ?

एथेन्सवासियों ने भी वही भूल की जो फारस के सम्राटों ने की थी और अनियन्त्रित स्वतन्त्रता और सर्वमहानता को ही आदर्श स्वरूप स्वीकार कर लिया था। संगीत और कला के क्षेत्र में इस प्रकार की भावना सबसे अधिक विद्यमान था। एथेन्स का प्रत्येक निवासी संगीत और कला के सम्बन्ध में अपनी स्वतन्त्र मान्यता रखता था और एक व्यक्ति के विचार उतने ही अच्छे माने जाते थे जितने कि दूसरे के। इस सम्बन्ध में प्लेटो अब भी रिपब्लिक में व्यक्त अपने विचार का ही समर्थन करता है और उसका मत है कि संगीत और कला के क्षेत्र में व्याप्त अराजकता राजनीतिक अराजकता को जन्म देती है।[1]

इतिहास से प्राप्त होने वाले इन तीनों पाठों को सम्मुख रखते हुए प्लेटो हमारा ध्यान भविष्य की ओर आकृष्ट करता है और उसके पात्र (क्योंकि राज्य भी सवाद शैली में ही है)। मौलिक रूप में निगमियास करने का कार्य प्रारम्भ कर देते हैं। (७०२ E)। यह कार्य एक काल्पनिक स्थिति के आधार पर किया जाता है। यह कल्पना की जाती है कि किसी विधायक को क्रीट में एक नये राज्य की स्थापना करने का कार्य सौंपा जाता है और उसे व्यावहारिक परामर्श की आवश्यकता है। इसी आधार पर हम यह भी अनुमान कर सकते हैं कि ई० पू० ३५५ में प्लेटो की अकादमी में राजनीति की शिक्षा प्राप्त करने वाले नवयुवकों को रिपब्लिक की धारणाओं की अपेक्षा लॉज की धारणाओं के अनुसार ही शिक्षा दी जाती रही होगी। इस समय तक प्लेटो पर्याप्त अनुभव प्राप्त कर चुका था। अब वह स्वीकार करने लगा है कि किसी भी नगर राज्य की सफलता अथवा शासन का कोई भी प्रयोग बाह्य परिस्थितियों, जैसे जाति, जलवायु, मिश्रित जनसंख्या के पारस्परिक सम्बन्धों तथा वहाँ के निवासियों के लिए संविधान की उपयुक्तता पर निर्भर करता है। इस नये उपनिवेश की रूपरेखा प्रस्तुत करते हुए प्लेटो ने आर्थिक दशा पर जितना बल दिया है वह रिपब्लिक की तुलना में कहीं अधिक है। इस नये राज्य के लिए वह इतनी भूमि आवश्यक बताता है जो राज्य के निवासियों के भरण-पोषण के लिए तो पर्याप्त हो किन्तु इतनी अधिक न हो कि उत्पादन की वस्तुओं का निर्यात करना आवश्यक हो जाय। इससे न केवल अत्यधिक सम्पत्ति की समस्या नहीं उत्पन्न होगी वरन् विदेशी प्रभाव से भी राज्य मुक्त रहेगा क्योंकि बाहर के देशों से व्यापार करने वाले राज्य पर अनिवार्यतः उन देशों का प्रभाव पड़ता है। इसी परिस्थिति से बचने के लिए प्लेटो यह भी सुझाव रखता है कि यह नया राज्य समुद्र तट पर न स्थित होकर ऐसी जगह हो जो अन्य राज्यों से परिचित और प्रचलित मार्गों से दूर हो (क्योंकि उस समय समुद्र ही परिवहन और

१ Republic ४२४ B C, Laws ७०१, ८१२-८१५।

यातायात का मुख्य माग था)। नौसेना का निर्माण करने का महत्त्वाकांक्षा में ना प्लेटो इस राज्य को मुक्त रखना चाहता है। अन्तर्राष्ट्रीय सेना उत्पन्न होने की सम्भावना से प्लेटो उतना भयभीत नहीं था जितना कि नौसेना से उत्पन्न होने वाली सामाजिक दुष्परिणामों से क्योंकि वह अपनी युवावस्था में पैलोपोनेशियन युद्धों के समय एथेन्स में देख चुका था।

एक नये राज्य के संस्थापन के प्रारम्भ में अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है और प्राय वह हताश हो सकता है क्योंकि उन सभी परिस्थितियों के अधीन होकर निर्णय लेना होता है जिन पर उसका नियन्त्रण या अधिकार नहीं है। किन्तु दूरदर्शितापूर्ण कार्य करने से कितना ही समस्याओं का निराकरण किया जा सकता है। इसलिए प्रारम्भ में मात्रा और शक्ति बाहु की आवश्यकता पड़ेगी। इसके लिए एक एक अधिनायक की आवश्यकता होगी जो उक्त शक्ति बाहु द्वारा राज्य के कार्यों को तत्परता और निपुणता के साथ सम्पन्न करा सके। अत प्रारम्भ में राज्य का शासन निरंकुश शासक के हाथों में होना चाहिए। हाँ प्लेटो यह स्पष्ट कर देता है कि नव उपनिवेश का यह शासक निरंकुश स्वभाव वाला व्यक्ति न होगा अपितु अच्छी स्मरण शक्ति कुशाग्र बुद्धि और और ऊँचे सिद्धान्तों वाला नवयुवक होगा' (७०९ E)। उसमें इतनी क्षमता होनी चाहिए कि सबसे पहले वह स्वयं अपने पर शासन कर सके, अपने मन को काबू में रख सके, संयमित और नियन्त्रित जीवन व्यतीत कर सके। सैराक्यूज से प्राप्त निमन्त्रण को स्वीकार करते समय प्लेटो ने यह सोचा था कि वहाँ इसी प्रकार की परिस्थिति का सामना होगा। वह स्वयं विधायक होगा और डायोनीसियस इसी प्रकार का एक निरंकुश शासक। उसने आशा की थी कि डायोनीसियस का हृदय परिवर्तन करने तथा निरंकुश शासक के अपने इस आदर्श का अनुसरण कराने में वह सफल हो सकेगा। डायोनीसियस कुशाग्र बुद्धि वाला युवक अवश्य था किन्तु यह सम्भव नहीं था कि उसमें विधि के प्रति निष्ठा, देश भक्ति, दक्षता एवं संयम आदि गुणों का विकास किया जा सके। (यूनानी भाषा का एक शब्द साफ्रोस्यूना' इन सभी गुणों को व्यक्त करता है)। ऐसी दशा में उससे यह आशा करना उचित नहीं था कि अपने अधिकारों का त्याग करके विधि पर आधारित संविधान स्वीकार करेगा। प्लेटो के अनुसार यह आवश्यक था (तुलना कीजिए अध्याय ९)। किन्तु नगर राज्य की स्थापना करने तथा अवाञ्छनीय तत्त्वों का उन्मूलन करने (७३५) के लिए विधायक को निरंकुश शासक से सहायता लेने का जो परामर्श प्लेटो ने दिया है उसका एक कारण यह है कि अपना कार्य पूरा कर देने के उपरान्त इस प्रकार के शासक को सम्प्रति हटा देना कठिन नहीं होता है (७१० D)। विशिष्ट अधिकारों से युक्त सुरक्षित कुलीन वर्ग की तुलना में इस प्रकार के निरंकुश शासक को बहुत आसानी से हटाय

जा सकता है । इसके अतिरिक्त, विनायक का कल्याणकारी प्रभाव एक वग की अपेक्षा एक व्यक्ति पर शीघ्र पड सकता है और उसके दण्ड नतत्व म सवसाधारण तक सुगमता और शीघ्रता स पहुँचाया जा सकता है। किन्तु शासक अथवा शासकों के हृदय-परिवत्तन पर ही प्लेटो अब भी अधिक जोर देता है और वह आवश्यक समझता है कि शासक अथवा शासकों के अन्तस्तल म सद्व्यवस्था एव सदाचरण की उत्कट अभिलाषा उत्पन्न हो इस प्रकार के व्यवहार के लिए उन्हें ईश्वरीय प्रेरणा प्राप्त हो (७११ D) । रिपब्लिक का व्यक्तिक शासन हो अथवा विधि पर आधारित शासन, राजनीतिक शक्ति और ज्ञान तथा आत्म-सयम का सयोजन अत्यन्त आवश्यक माना जाता है । अपनी युवावस्था म प्लेटो प्राय कहा करता था कि किसी भी वास्तविक राज्य को शासन संविधान (पालिटीया) के नाम से विभूषित करने योग्य नहीं है । इसी मत की पुष्टि वह यहाँ भी करता है ।

अत इस नय नगर राज्य पर किसी एक व्यक्ति का पूर्णाधिकार और शासन नहीं होगा। यह तो विधि के शासन के अधीन होगा। विधि पर आधारित राज्य की रचना के लिए प्लेटो तीन आधारभूत सिद्धान्त प्रस्तुत करता है —

१ वास्तव म सच्ची विधि वही है जो सावजनिक कल्याण के हेतु लागू की गयी है ।

२ विधि का स्रोत ईश्वर या देवतागण हैं । इसलिए राज्य धम पर आधारित है।

३ नागरिकों को विधि-व्यवस्था से केवल परिचित ही नहीं होना चाहिए अपितु उन्हें उन कारणों को भी भली भाँति जानना चाहिए जिनसे वह लागू किया गया है।

इन सिद्धान्तों म कोई मौलिकता नहीं है । पहले सिद्धान्त का प्रतिपादन सोलन ने किया था (अध्याय २)। दूसरा सिद्धान्त भी परम्परा से चला आ रहा था और तीसरा सिद्धान्त तो एथेन्स के लोकतन्त्र में ही निहित था। किन्तु प्लेटो ने इन तीनों सिद्धान्तों म कुछ परिवत्तन और संशोधन अवश्य किया ।

डायोन (Dion) के अनुयायियों को उसने यह परामर्श दिया था कि वे अपने राजनीतिक विरोधियों से समझौता कर लें और निष्पक्ष विधायकों की सहायता से एक ऐसे संविधान की स्थापना करें जो एक वग के प्रति पक्षपात और दूसरे वग के प्रति प्रतिशोध की भावना से न प्रेरित हो। अब प्लेटो एक ऐसे राज्य के सम्बन्ध म जहाँ का अधिकारी वग अपने विरोधियों को दल से बाहर निकाल देता है और जहाँ एकता का सवथा अभाव है नगर राज्य और नागरिक शब्दों

का प्रयोग करने पर भी आपत्ति करता है। उसका कहना है कि 'इस प्रकार की व्यवस्था को हम न तो संविधान कह सकते हैं और न ऐसे नियमों को विधि की ही संज्ञा दे सकते हैं जो समस्त राज्य के सार्वजनिक कल्याण के उद्देश्य को सम्मुख नहीं रखते। अपने इस नये नगर राज्य में हम किसी भी व्यक्ति को किसी सार्वजनिक पद पर इसलिए नहीं नियुक्त करेंगे कि वह सम्पत्तिशाली अथवा सशक्त है, ऊँचे कद का है अथवा किसी कुलीन वंश में उसका जन्म हुआ है। इस प्रकार की किसी भी बात पर ध्यान नहीं दिया जायगा (७१५)। अपने सहनागरिकों में वही व्यक्ति आगे जा सकता है जो दूसरों की अपेक्षा विधि का अधिक पालन करता है। इसी प्रकार के व्यक्ति को हम इस नये राज्य में सर्वोच्च पद पर आसीन करेंगे और उसे विधि और देवताओं[1] दोनों की सेवा करने का अवसर देंगे। सार्वजनिक कल्याण का यह सिद्धान्त कितना अच्छा है यह तो आगे चल कर स्पष्ट हो जायगा। यहाँ केवल इतना कहना पर्याप्त होगा कि समस्त राज्य के कल्याण की प्लेटो की धारणा और नागरिकों के व्यक्तिगत कल्याण में बहुत अन्तर है।

यह विश्वास कि विधि का सृजन देवताओं द्वारा हुआ है और वे ऐसे व्यक्तियों की रक्षा करते जो विधि के अनुसार आचरण करते हैं दीर्घ काल में प्राचीन नगर राज्यों को शक्ति प्रदान करता रहा। किन्तु प्लेटो के 'लाज़' में जिस राज्य की कल्पना की गयी है वह अपेक्षाकृत अधिक धर्मावलम्बी है, इसका धर्म भी अधिक रूढ़िवादी है और साथ ही इसमें कुछ नये प्रकार के देवताओं का भी सर्जन किया गया है। 'लाज़' में प्रतिपादित धर्म शास्त्र इस आशय से प्रस्तुत किया गया है कि यह व्यापक होगा और सर्वत्र स्वीकार किया जा सकेगा। परिणाम-स्वरूप एक ओर तो धर्म और राज्य का घनिष्ठ सम्बन्ध अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हो जाता है और दूसरी ओर इस सम्बन्ध को कायम रखना अत्यधिक कठिन हो जाता है। एथेन्स (Athena) के पूर्ण वैभव के दिनों में भी एथेन्स में राज्य और धर्म का सम्बन्ध कायम रखना इतना दुष्कर नहीं था जितना कि 'प्लेटो' के 'लाज़' में प्रतिपादित राज्य में हो जाता है। धर्म और राज्य का यह सम्बन्ध अधिक महत्त्वपूर्ण इसलिए हो जाता है कि मनुष्यों के आचरण का प्रत्येक क्षेत्र इस नयी विधि व्यवस्था के नियन्त्रण में आ जाता है। इस सम्बन्ध को व्यावहारिक जीवन में परिणत करना कठिन इसलिए हो जाता है कि नागरिकों में यह भावना उत्पन्न हो सकती है कि जहाँ तक नागरिक धर्म का सम्बन्ध है वह तो उनका अपना निजी धर्म है किन्तु सार्वजनिक एवं व्यापक धर्म जो सभी का है उनसे दूर की वस्तु है। प्राचीन

---

१ ७१५ C ४ में थिओन के स्थान पर थिस्मोर नहीं होना चाहिए।

नगर राज्य में नागरिकों के व्यवहार में केवल बाह्य कानून का पालन ही देखा जाता था। परिवार एवं राज्य के प्रति कुछ कर्तव्यों का पालन करना तथा कुछ संस्कारों और कर्मकाण्डों का सम्पन्न करना मात्र पर्याप्त समझा जाता था। उनसे यह आशा नहीं की जाती थी कि वे देवताओं के अस्तित्व और स्वभाव के सम्बन्ध में एक ही प्रकार का विश्वास रखें।[1] किन्तु लाज़ में प्लेटो इसी प्रकार के सम्बन्ध का स्थापन करता है। धर्म पर आधारित राज्य के नागरिकों के धार्मिक विश्वासों में एकरूपता आवश्यक समझा जाता है और देवताओं में उचित आस्था अच्छे जीवन के लिए अनिवार्य हो जाती है (888 B)। किन्तु केवल इतना भी पर्याप्त नहीं समझा जाता है। धार्मिक कर्तव्यों के पालन पर पहले से कम ज़ोर नहीं दिया जाता है। और इसके अन्तर्गत अब केवल बलि और प्रार्थना तथा इस प्रकार के कार्य ही नहीं आते समाज के प्रति नागरिक के कर्तव्यों को भी धार्मिक कर्तव्यों की श्रेणी में ही रखा जाता है। इसका उल्लंघन करने वालों को क्षमा नहीं किया जा सकता है क्योंकि इनका प्रभाव समस्त समुदाय पर पड़ता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि धार्मिक नियम उपरिलिखित तीनों सिद्धान्तों में से प्रथम सिद्धान्त का अनुसरण करते हैं और समाज में एकता स्थापित करने में बाधक न होकर सहायक होते हैं। साथ ही यह भी आशा की जाती है कि धार्मिक नियम तीसरे सिद्धान्त का भी अनुसरण करेंगे और नागरिकों को समझने में स्पष्ट रूप से आ जायगा कि उन्हें अच्छा विधि नियम क्या कहा जाता है। (इस तीसरे सिद्धान्त को आगे चलकर स्पष्ट किया जायगा)। नास्तिकता का दमन करने के लिए आवश्यक है कि सर्वप्रथम इसके समर्थन में प्रस्तुत किये जाने वाले तर्कों का खण्डन किया जाय। दण्ड का प्रयोग उसी दशा में होना चाहिए जब तर्क से काम न चले। इसी प्रसंग में प्लेटो दर्शन के क्षेत्र में अपने पुराने विरोधियों अर्थात् प्राकृतिक भौतिकवादियों (physicist materialists) पर आक्षेप भी करता है और उन्हें अभिमानी कथाओं का वक्ता और शक्तिशाली लोगों के तथाकथित विशेषाधिकार का समर्थक बताता है। उसके अनुसार इन दार्शनिकों में सब से खतरनाक तो वे थे जिन्होंने इस भ्रान्त विश्वास का समर्थन किया कि देवता तो मनुष्यों के कार्यों की ओर ध्यान ही नहीं देते हैं और यदि कभी ध्यान देते भी हैं तो उन्हें अनुनय विनय अथवा उपहार द्वारा तुष्ट किया जा सकता है। प्रकृतिवादियों के इस मत का भी वह विरोध करता

---

१ किन्तु जैसा कि समय-समय पर अधार्मिकता के अभियोगों से पता चलता है धीरे धीरे देवताओं के सम्बन्ध में व्यक्त किये जाने वाले असामान्य विचारों से एथेन्स वासी घबराने लगे थे।

है कि राजनीति का विनाश प्रकृति पर आधारित न होकर केवल कृत्रिम परम्पराओं पर हो आधारित है। इस प्रश्न के उपरान्त आत्मा, गति, सख्या और यथार्थ के सम्बन्ध में कुछ आध्यात्मिक तर्क प्रस्तुत किये जाते है। इन तर्कों के आधार पर एक नये प्रकार के धर्म-शास्त्र और नये देवताओं की स्थापना की जाती है जो अदृश्य न होते हुए भी प्रकृत्यतीत है। आकाश में स्थित नक्षत्र ही प्लेटो के नये देवता हैं।[1] ये नये देवता परम्परागत देवताओं को स्थानच्युत तो नहीं करते हैं हाँ उनकी सख्या में वृद्धि अवश्य ही करते है। अपालो (Apollo) डायनीसस (Dionysus) जियूस (Zeus) थेमिस (Themis) तथा अन्य परम्परागत देवताओं की धारणा को भी प्लेटो परिष्कृत और परिमार्जित रूप में प्रस्तुत करता है। उसका आग्रह है कि मनुष्य को भी इन देवताओं के सदृश हो जीवन पद्धति अपनाने का प्रयास करना चाहिए। प्राचीन सस्थाओं और मान्यताओं का उन्मूलन करना तो प्लेटो की स्वाभाविक प्रवृत्ति के प्रतिकूल था। वह केवल सुधार करना चाहता था। इसके अतिरिक्त अपालो डेल्फि (Delphi) और सगीत तथा कला के देवता (Muses) की उपयोगिता में वह स्वय विश्वास करता था। किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि उसने यह निश्चित करने का कष्ट नहीं किया कि उसके समय में प्रचलित धार्मिक विश्वासों और नगर राज्य की सम्पूर्ण विचारधारा तथा ब्रह्मवादी एवं विश्वव्यापी धर्म की उसकी धारणा किस मात्रा में सगत हो सकते हैं।[2]

---

१ इस विषय पर Harvard and Theological Review xxxiii, Jan १९४० में M P Nilsson का निबन्ध देखिए। प्लेटो के धर्म शास्त्र से सम्बन्धित अन्य रचनाएँ भी हैं A J Festugiere Contemplation et vie contemplative Selon Platon (१९३६), Friedrich Solmsen, Plato s Theology (Cornell Studies १९४२), और E R Dodds Plato and the Irrational Journ Hell Stud Lxv (१९४५) O Reverdin, La Religion de la Cite platonicienne (१९४५) ने विशेष रूप से Laws के आधार पर इस विषय का अध्ययन किया है। इसी प्रकार Epinomis के आधार पर इस विषय का अध्ययन E des Places द्वारा L' Antiquite Clarsique vii, १९३८ १८६ २०० में किया गया है।

२ O Reverdin (उपयुक्त पुस्तक पृष्ठ २४६) का मत है कि विश्वासों की दो श्रेणियाँ रही होंगी, एक बुद्धिमान व्यक्तियों के लिए जो वास्तव में समझ

राज्य की सम्पूर्ण विधि व्यवस्या को ईश्वरीय महत्ता प्रदान करने के परिणाम स्वरूप प्लेटो को राजनीतिक जीवन के सम्बन्ध में भी कुछ महत्वपूर्ण निष्कर्षों पर पहुंचने के लिए बाध्य होना पड़ा। देवद्रोह और देशद्रोह[1] को समानरूप से राज्य और देवताओं दोनों के विरुद्ध अपराध मानना आवश्यक हो गया। धार्मिक जीवन के नियमों का उल्लंघन अथवा नये धर्म का अनुसरण अपराध समझे जाने के साथ धर्म और राज्य के अस्तित्व के लिए संकट का कारण भी माना गया। इस प्रकार के व्यवहार से सच्चे देवता क्षुब्ध हो जाते हैं वैयक्तिक एवं गोपनीय सम्प्रदायों का अनुसरण राज्य की शक्ति को क्षीण कर देता है क्योंकि राज्य का संचालन भी धार्मिक सम्प्रदाय की ही भांति होता है। विधि पर आधारित प्लेटो के इस राज्य का अधिकांश कार्य-कलाप, विशेष कर न्याय की पद्धति तो धार्मिक अनुष्ठान के ही सदृश है। वास्तव में यह विशेषता एथेन्स में प्रचलित प्रणाली से मिलती जुलती है। विधायक अथवा नये उपनिवेश के संस्थापक को सावधान करते हुए प्लेटो कहता है कि प्रचलित प्रथाओं में हस्तक्षेप करना उचित नहीं है क्योंकि ये प्रथाएँ उपयोगी सामाजिक उद्देश्यों की पूर्ति में सहायक होती हैं। किन्तु जिस अधार्मिकता के अभियोग में सुकरात को न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत होना पड़ा तथा मृत्यु दण्ड स्वीकार करना पड़ा, उसी प्रकार के अभियोगियों के लिए प्लेटो ने इस नये राज्य में एक ऐसे आवास की व्यवस्था की गयी है जहाँ मनुष्यों को अच्छा और जानकारी (सोफ्रोनिस्टेरिओन) बनाया जाता है। सदाचरण करने वाले नास्तिकों अथवा धर्म का प्रत्यक्ष विरोध करने वाले व्यक्तियों को इस आवास में एकान्त में रहना पड़ता है और रात्रि परिषद (Nocturnal Council) के सदस्यों के अतिरिक्त किसी अन्य व्यक्ति से मिलने का अवसर उन्हें नहीं दिया जाता है। रात्रि समिति के ये सदस्य बिना किसी व्यतिक्रम के प्रति रात्रि उनसे मिलते हैं और उसे शिक्षा देने तथा मानसिक स्वास्थ्य लाभ कराने का प्रयास करते हैं।[2] प्लेटो का विचार है कि मस्तिष्क के विकार से ही मनुष्य अधार्मिक

समझने की योग्यता रखते हैं और दूसरी, साधारण अल्पबुद्धि वालों के लिए। ९३१A में इन दोनों प्रकार के देवताओं—नक्षत्रों में व्याप्त देवता तथा अदृश्य एवं मानव विशेषताओं से युक्त देवता का अस्तित्व स्वतः स्पष्ट बताया जाता है।

१ Proximum Sacrilegio Crimen est quod maiestatis dicitutrlpian

२ सम्बन्धित यूनानी वाक्यांश का अर्थ 'आत्मा की रक्षा के हेतु' करना उचित न होगा। मृत्यु के पश्चात के जीवन के बारे में यहाँ कोई संकेत नहीं मिलता है।

विश्वासों को ग्रहण करता है। इस प्रकार ५ वर्षों तक मानसिक विकार दूर करने का प्रयत्न करने के बाद भी यदि अभियोगी स्वस्थ, शालीन, धर्मानुरागी और विधिपालक (अर्थात साफ्रोन) नहीं हो पाता तो उसे मृत्युदण्ड देना ही उचित होगा।[1]

तीसरे सिद्धान्त के अनुसार यह आवश्यक समझा जाता है कि नागरिक कुशाग्र बुद्धि होंगे, राज्य की समस्याओं के प्रति जागरूक रहेंगे और अपने संविधान की धाराओं को भली भाँति समझ सकेंगे। प्रारम्भ में तो ऐसा प्रतीत होता है कि प्लेटो कोई महत्त्वपूर्ण बात नहीं कह रहा है। पर्याप्त समय पहले से नागरिकों से यह आशा की जाती थी कि वे अपने राज्य की विधि-व्यवस्था को समझते हैं। उनकी शिक्षा का यह एक अभिन्न अंग था। स्वयं प्लेटो का यह विचार था कि देश की विधि व्यवस्था द्वारा नागरिकों को जो शिक्षा मिलती है वह होमर अथवा अन्य कवियों की रचनाओं पर आधारित शिक्षा से कहीं अच्छी है।[2] ऐसे विधि निर्माताओं का उदाहरण देते हुए जिन्होंने नागरिकों को शिक्षा प्रदान करने का भी प्रयत्न किया वह लाइकरगस (Lycurgus) सोलन (Solon) और कराण्डस (Charondas) का उल्लेख करता है। इस तीसरे विधि निर्माता के सम्बन्ध में हम केवल इतना ही जान पाये हैं कि जेल्यूकस (Zalecus) के साथ वह भी इस सिद्धान्त का अनुसरण करता था कि किसी नयी विधि का प्रख्यापन करने के पूर्व उसकी प्रशंसा करना आवश्यक है।[3] मेरोक्रेज में प्लेटो ने भी विधि निर्माण के पूर्व प्राक्कथन लिखने की पद्धति अपनायी थी। यह विचार पर्याप्त प्रचलित[4] हो चला था कि विधि को मूल रूप में

आधुनिक लौकिक राज्यों में दी जाने वाली यातना की भाँति इसका उद्देश्य अथवा बहाना भी सुरक्षा ही है।

१ अथवा आजीवन कैद की सजा दी जाय। इसे प्लेटो ने स्पष्ट नहीं किया है।

२ उदाहरणार्थ Laws IV ७१९, Republic X ५९९—जिसमें प्राचीन विधायक Charondas का उल्लेख किया गया है।

३ Cicero de Legibus II १४, तथा Stobaeus द्वारा सङ्कलित Mullach Fr Philosoph Gr (Didot) pp ५३२–५९३ में इन दोनों तथा अन्य 'पाइथागोरसवादियों' के सम्बन्ध में प्राप्त होने वाला प्रमाण नि:सन्देह के परे नहीं है। A Delatte, Essai sur la politique Pythagoricienne, pp १७७ ff तथा अध्याय १४ के अन्त में दी गयी टिप्पणी भी देखिए।

४ Laws ७२० ७२१ से यही आभास होता है तथा F Pfister (इस अध्याय के अन्त में दी गयी टिप्पणी देखिए) ने इसे सिद्ध कर दिया है। यदि Stoba-

ही न प्रस्तुत किया जाय। उदाहरणार्थ केवल यह लिख देना कि यदि मनुष्य अमुक ढंग से आचरण नहीं करता तो उसे अमुक दण्ड दिया जायगा पर्याप्त नहीं समझा जाना था। क्योंकि इस प्रकार की विधि अधिनायक के आदेश से किसी भी अर्थ में श्रेष्ठ नहीं मानी जा सकती है। और अधिनायक का शासन तो स्वभावतः अवधानिक समझा जाता था। प्लेटो का कहना है कि बिना कारण प्रस्तुत किये केवल यह आदेश दे देना कि क्या करना चाहिए और साथ ही साथ वैसा न करने पर दण्ड भी निश्चित कर देना तथा लोगों को इस प्रकार के आचरण की श्रेष्ठता को समझाने तथा इसका अनुसरण करने के लिए आवश्यक प्रेरणा प्रदान किये बिना (७२०) एक के बाद एक विधि का उल्लेख करने का अर्थ यह होता है कि जिन नागरिकों के लिए यह विधि निर्धारित की जा रही है वे न तो स्वतन्त्र हैं और न इतनी बुद्धि ही रखते हैं कि अपनी विधि व्यवस्था के आधारभूत सिद्धान्तों तथा उसके वास्तविक अर्थ को समझ सकें यद्यपि नागरिकों से यह आशा की जाती है कि वे कुछ अंशों में अपने को स्वयं निर्मित कर सकें (७२४)। प्लेटो के 'लॉज' की मौलिकता इस बात में नहीं है कि उसमें प्रत्येक विधि के साथ उसकी व्याख्या भी प्रस्तुत की गयी है। इसकी पहली मौलिकता तो यह है कि इसमें विधि के आधार पर विशेष ध्यान दिया गया है उन सिद्धान्तों को प्रस्तुत किया गया है जिन्हें व्यवहृत करने हेतु विधि का निर्माण किया गया है। दूसरी मौलिकता यह है कि विधि के अन्तर्गत सिद्धान्तों को भी प्रस्तुत करना सामान्य पद्धति[1] के रूप में स्वीकार किया गया है और यह आशा की गयी है कि इन सिद्धान्तों को भी नागरिक अपने जीवन में व्यवहृत करने की उसी प्रकार से प्रयास करेंगे जिस प्रकार विधि के आदेशों को। इस सम्बन्ध में प्लेटो लिखता है इस ढंग से विधि-व्यवस्था एवं संविधान का निर्माण हो जाने के पश्चात् किसी को सर्वश्रेष्ठ नागरिक कहने

---

eus की प्रतिमा को हम विशुद्ध प्राचीन भी स्वीकार करें तो भी पीधों और बाइओं को संयुक्त करने की धारणा में कोई नवीनता नहीं है यद्यपि प्लेटो मौलिकता का दावा करता है (७२२ B) इसी प्रकार प्लेटो का यह दावा भी कि पोलिटिकोस नोमोस क्योरोडिक्टोसे (७२२ D) दोनों के सम्बन्ध में प्रोओइमिओन शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम उसीने किया विशेष ध्यान देने योग्य नहीं है। Epistle III ३१५ A में वह इस प्रकार का कोई दावा नहीं करता है। इस स्थल पर उसने सेराक्यूज से अपने कार्य के सम्बन्ध में टा परी टोन नामोन प्रोआईमिया का प्रयोग करता है और उसे किसी भी प्रकार से असाधारण नहीं समझता है।

१ किमो ७२२ E

इसी आधार पर नहीं कहा जा सकता है कि अन्य लोगों की अपेक्षा वह विधि का सब से अधिक पालन करता है। अपेक्षाकृत अधिक श्रेष्ठ नागरिक सम्मान का अधिकारी तो वही व्यक्ति होगा जो विधायक के लिखित शब्दों का अनुसरण करते हुए चाहे व स्पष्ट विधि के रूप में हो अथवा स्वीकारोक्ति या अस्वीकारोक्ति के रूप में अपना समस्त जीवन व्यतीत कर देता है।[1] एक सच्चा विधायक केवल विधि ही नहीं प्रस्तुत करता है विधि के साथ साथ वह सम्यक और असम्यक के सम्बन्ध में अपना विचार भी व्यक्त करता चलता है। श्रेष्ठ नागरिक इन विचारों का भी उसी प्रकार अनुसरण करता है जिस प्रकार उन विधियों का जिनका उल्लंघन करने के परिणामस्वरूप उसे दण्ड की आशंका रहती है।' (८२२ E)।

यह ध्यान देने योग्य है कि इस प्रकार के विचार अनिवार्यतः विधि के पहले अर्थात प्रस्तावना या प्राक्कथन के रूप में ही नहीं प्रस्तुत किये जायें। विधि के अन्तर्गत भी इन्हें प्रस्तुत किया जा सकता है। प्रस्तावना को प्राथमिक महत्त्व देने में प्लेटो का अभिप्राय यह नहीं है कि उसे विधि के पहले ही रखा जाय। वह तो केवल यह चाहता है कि वास्तविक विधियों का स्वरूप निर्धारित करने के पूर्व उनके आधारभूत सिद्धान्तों उनके उद्देश्यों आदि पर भली भांति विचार कर लिया जाय। अतः चाहे विधि के पूर्व प्रस्तावना प्रस्तुत की जाय अथवा विधि के साथ साथ आवश्यक निर्देश और व्याख्या दी जाय नूथटिसिस, (८२२ D), सार की बात तो यह है कि संविधान की रूपरेखा प्रस्तुत करने का कार्य प्रारम्भ करने के पूर्व प्राथमिक कार्य अर्थात् उन सिद्धान्तों पर विचार कर लिया जाय जिन पर संविधान आधारित होगा। इस प्रकार जब एक बार संविधान तैयार हो जाता है और उसे लिपिबद्ध कर लिया जाता है तो वह सदा के लिए हो जायगा (कम से कम प्लेटो का तो यही विचार है) और मार्गदर्शन के लिए इसकी सहायता सदैव ली जायगी (८९१ A)। किन्तु धर्म पर आधारित राज्य के लिए विधि का निर्धारण धार्मिक सिद्धान्तों पर ही किया जा सकता है और किसी भी राजनीतिक सिद्धान्त का विवेचन मानव-स्वभाव के आधार पर ही किया जा सकता है। ऐसी दशा में प्लेटो समस्त पुस्तक में विशेष कर प्रारम्भ के एक तिहाई भाग में[2] इन्हीं आधारभूत सिद्धान्तों का स्पष्टीकरण करने का प्रयास करता है। उसका कहना है कि देवताओं की सहायता से हम स्वयं यह कार्य करना चाहिए और अपने पूर्वजों की अति प्राचीन

---

१ ७१५ C में प्लेटो ने जो कहा है यह उसके विपरीत है। किन्तु 'लाज़' की यह एकमात्र असगति नहीं है। सम्पूर्ण पुस्तक में इस प्रकार के कई विरोधी विचार मिलते हैं।

२ इस अध्याय के अन्त में दी गयी टिप्पणी देखिए।

व्यवस्थापकों द्वारा निर्धारित नैतिक एवं धार्मिक मानदण्डों पर ही नहीं निर्भर रहना चाहिए। नये मानदण्डों के निर्माण की वह नयी कविताओं की रचना करने में मदद देता है (८११)। संविधान का रूप रेखा प्रस्तुत करने के पूर्व इसके आधारभूत सिद्धान्तों की विवेचना का उपक्रम प्रस्तुत करने के अतिरिक्त प्लेटो ने कुछ पूर्ण प्राक्कथन भी लिखे हैं जो विधि के सामान्य एवं विशिष्ट दोनों पक्षों से सम्बन्ध रखते हैं (प्लेटो के अनुसार दोनों पक्ष महत्त्वपूर्ण हैं—७२३ B)। पुस्तक में जहाँ भी विधि प्रस्तुत की गयी है उनके साथ प्राक्कथन भी संलग्न है। एक अनुच्छेद (७१५ E-७१७ A) में यह शिक्षा दी जाती है कि विधि का मानदण्ड ईश्वर निर्धारित करता है मनुष्य नहीं। दूसरे में (७१९) विधायक को यह बताया जाता है कि कवि विधि का निर्माण करने में क्या असमर्थ होता है। यह भी स्पष्ट किया जाता है कि मृतकों के अंतिम संस्कार से सम्बन्धित विधि को आत्मा से सम्बन्धित सिद्धान्त पर आधारित होना चाहिए। इसी प्रकार विवाह सम्बन्धी विधि का निर्धारण करने में मानव समाज शास्त्र का शिक्षा आवश्यक माना जाता है (७२१)।

जिन दीर्घ प्राक्कथन के साथ (७२६) इन प्रारम्भिक एवं आधारभूत सिद्धान्तों का विवेचन समाप्त होता है उसे यूरोपीय साहित्य का सर्वप्रथम धर्मोपदेश कहा जा सकता है। जैसा कि हमने अध्याय ४ में देखा राजनीति शास्त्र के विज्ञान हो प्रश्न ऐसे हैं जिन्हें इन प्रश्नों से अलग—मनुष्य क्या है? संसार में उसका क्या स्थान है?—पृथक करना सम्भव नहीं। जिस प्रकार के धर्म पर आधारित शासन के बारे में 'लाज' में विचार किया गया है उसके सम्बन्ध में जो उत्तर दिया जा सकता है वह यह है कि मनुष्य देवताओं से हीन है और उसके जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में उनके अधीन है। इसके अतिरिक्त वह सर्वप्रथम आत्मा है उसके बाद शरीर। भौतिक सम्पत्ति तो अन्त में आती है। एक उच्च सत्ता के सम्बन्ध में हीनता की इस स्थिति का समर्थन में मनुष्य को बड़ी कठिनाई होती है विशेष कर युवावस्था में जब वह यह समझता है कि वह सब कुछ जानता है (७२७ A)। जब अज्ञान को ही ज्ञान समझा जाने लगता है तो उसे दूर करना अत्यधिक कठिन हो जाता है (८८६ B Epinom ९७८ A)। युवावस्था में प्लेटो भी जीवन की त्रुटि न पर ध्यान देता था और अत्यन्त रूप में इसका शिकार भी करता था। 'लाज' के इस प्रकरण में यह आभास होता है कि अब वह युवावस्था के अज्ञान और असहिष्णुता पर खेद प्रकट कर रहा है और यह अनुभव करने लगा है कि अब उसका सुधार और परिष्कार[1] हो गया है। किन्तु इस

---

[1] सम्भव है कि प्लेटो के जीवन में इस प्रकार का 'परिवर्तन' हुआ हो किन्तु यह कब हुआ तथा इसके परिणाम-स्वरूप उसमें कितना और किस प्रकार का परिवर्तन

रूप में उन्हें वध अस्तित्व नहीं प्रदान किया जाता।

इन पांच हजार व्यक्तियों को 'रिपब्लिक' के शासकों की भांति पारिवारिक जीवन और वैयक्तिक सम्पत्ति का त्याग नहीं करना पड़ता। 'लाज' में सम्पत्ति का महत्त्व सबसे निखाई देता है और बाद की राजनीतिक विचारधारा में तो इसका महत्त्व और भी बढ़ गया। सबसे पहले तो राज्य की समस्त भूमि का बँटवारा ५०४० व्यक्तियों में किया जाता है। नये उपनिवेशों की स्थापना करने की यह साधारण पद्धति मानी गयी है। इस प्रकार स्पार्टा निवासियों की भांति प्लेटो के इस नये राज्य के नागरिकों को भू सम्पत्ति प्राप्त होगी। किन्तु प्लेटो का यह आदेश है कि किसी भी व्यक्ति को सम्पत्ति का अधिकारी सदैव इस बात का ध्यान रखेगा कि उसकी सम्पत्ति समस्त राज्य की सम्पत्ति है। यह उसकी मातृभूमि की सम्पत्ति है और जिस प्रकार एक माता अपने शिशु की देखभाल करती है उसमें कहीं अधिक सतर्कता से वह अपनी सम्पत्ति का संरक्षण करेगा (७४०)। वैयक्तिक सम्पत्ति के अधिकार को इस प्रकार अनिच्छापूर्वक स्वीकार कर लेने के पश्चात् प्लेटो इस अधिकार को भांति भांति के नियन्त्रणों से सीमित करता है। भूमि के अतिरिक्त अन्य किसी प्रकार की सम्पत्ति के स्वामित्व पर नया प्रतिबन्ध लगाया जाता है। स्वर्ण और रजत का स्वामित्व वर्जित किया जाता है। मुद्रा के प्रयोग की अनुमति भी व्यापार के लिए अनिवार्य शासन पर ही दी जाती है। विदेशी मुद्रा अथवा यूनानी राज्यों द्वारा मान्य सामान्य मुद्रा रखने की अनुमति विदेश यात्रा के लिए ही दी जाती है और विदेश यात्रा के लिए शासन की अनुमति आवश्यक होती है। भूमि गृह अथवा मुद्रा को गिरवी तथा ब्याज पर ऋण देने की प्रथा को कठोरता के साथ दमन करने की व्यवस्था की जाती है। 'लाज' के इस समस्त राज्य में कोई भी ऐसा व्यक्ति न होगा जिसे सम्पत्तिशाली कहा जा सके क्योंकि सम्पत्तिशाली व्यक्ति अनिवार्यतः बुरा नागरिक होता है। इसके आधार पर यह अनुमान किया जा सकता है कि प्लेटो का अभिप्राय यह था कि नागरिकों में सभी प्रकार की सम्पत्ति का वितरण समानता के सिद्धान्त पर हो। किन्तु वास्तव में ऐसा नहीं है। 'रिपब्लिक' की भांति यहाँ भी प्लेटो का उद्देश्य केवल अत्यधिक आर्थिक विषमता को ही रोकना है। तथापि यह आश्चर्य की बात है कि प्लेटो नागरिकों को सम्पत्ति के आधार पर चार श्रेणियों में विभाजित करके अपने इस संविधान को सम्पत्ति तन्त्र[1] का स्वरूप प्रदान करता है। प्रथम दो सम्पत्तिशाली वर्गों को निर्वाचन के अवसर पर विशेष अधिकार भी दिया जाता है। वैवाहिक एवं पारिवारिक जीवन पर भी अनेक प्रकार के ऐसे प्रतिबन्ध लगाये गये हैं जिनके विषय में विश्वास करना कठिन होता यदि प्लेटो यह न कहता कि (७८१)

[1] अरिस्टाटल के अर्थ में अर्थात् सम्पत्ति की योग्यता पर आधारित।

भासित होने वाली सामान्य और अल्प महत्त्व वाली बातों को शामिल करने के परिणामस्वरूप यदि हमारी विधि-संहिता की काया विशाल हो जाती है तो इस पर आश्चर्य नहीं होना चाहिए। बच्चों के खेल-कूद से सम्बन्धित प्रथाओं का उदाहरण देते हुए वह कहता है कि ऐसा प्रतीत होता है कि अधिकांश राज्यों का तत्कालीन शासन यह नहीं समझता है कि जिन खेल-कूदों में बच्चे भाग लेते हैं वे भी विधि की दृष्टि में पर्याप्त महत्त्व रखते हैं। विधि को स्थायी बनाये रखने में इन खेलों का बड़ा हाथ होता है (७९७A)। उसके अनुसार राज्य को दृढ़ एवं स्थायी बनाने की दृष्टि से यह आवश्यक है कि राज्य के समस्त बच्चे एक ही प्रकार के खेल-कूद में एक ही समय तथा एक ही ढंग से भाग लें तथा एक ही प्रकार के खिलौने सभी बच्चों को प्रिय हों। वह एक ऐसे समाज की कल्पना करता है जिसने ईश्वर ने यह सौभाग्य प्रदान किया है कि वहाँ के नागरिक उसके सदस्य एक ही विधि-व्यवस्था का अनुसरण करते हुए अपना जीवन व्यतीत करते हैं और किसी सदस्य को किसी भी अन्य विधि के बारे में सोचने अथवा सुनने का अवसर भी नहीं मिलता है (७९८B)। बच्चों के खेल के सम्बन्ध में जो बात कही गयी है वही संगीत, नृत्य, व्यायाम आदि अनुष्ठानों एवं उन समस्त शारीरिक एवं कलात्मक क्रियाओं के सम्बन्ध में भी लागू होती है जो यूनानी जीवन के मुख्य अंग थे। इसलिए इन सभी को विधि के अन्तर्गत लाना चाहिए और सभी प्रकार की नवीनता अथवा भावनात्मकता से इनको मुक्त रखना चाहिए। राज्य के स्वीकृत मानदण्डों के विपरीत एक भी कविता की रचना नहीं की जायेगी। एक भी गायन, नृत्य अथवा नाटक का आयोजन नहीं होगा। और राज्य का यह मानदण्ड व्यक्ति की अभिरुचि पर न आधारित होकर अच्छे और बुरे, सम्यक और असम्यक की धारणा पर आधारित होगा। यह ऐसा मानदण्ड होगा जो विधि और न्याय के अनुकूल होगा। सभी नागरिकों को एक ही प्रकार की शिक्षा प्रदान करने का एक दूसरा भी कारण है और वह यह है कि वयस्कता प्राप्त करने पर सभी नागरिकों को एक ही प्रकार के कर्त्तव्यों का पालन करना पड़ता है। इसमें सन्देह नहीं कि इनमें से कुछ बड़ा महत्त्वपूर्ण पदों पर निर्वाचित होंगे। किन्तु कर्त्तव्यों का पालन तो सभी को करना पड़ेगा। शिक्षा समाप्त करने के उपरान्त इस नागरिक जीवन में प्रवेश करता है वह ग्रामों में व्यतीत किया जाने वाला प्रमाद या अकर्मण्यता का जीवन नहीं होगा। इसके विपरीत उसे सार्वजनिक सेवा में संलग्न रहना पड़ेगा, निरन्तर सार्वजनिक सभाओं और निर्वाचनों में भाग लेना पड़ेगा। यह कठिन कार्य और त्याग और अनुशासन का जीवन होगा। नागरिकों की शिक्षा की प्रक्रिया विद्यालय छोड़ने के साथ ही नहीं समाप्त हो जाती है। आत्म-शिक्षण का क्रम तो अबाध गति से चलता रहता है। विधि तथा इसके सामान्य सिद्धान्तों का अध्ययन सतत चलता रहेगा। शारीरिक प्रशिक्षण तथा गणित की शिक्षा के लिए कुछ समय देना पड़ेगा। साथ ही अन्य

बहुत-से काम होंगे और नागरिकों को प्राय रात दिन काम करना पड़ेगा। (९८१)। कितनी ही अच्छी विधि क्यों न हो संविधान को कार्यान्वित करने का उत्तरदायित्व तो सार्वजनिक पदों पर नियुक्त अधिकारियों का ही होगा। उन्हीं के गुणों और योग्यता पर संविधान की सफलता इसकी अच्छाई और बुराई निर्भर करेगी (७५१)। इस प्रकार सार्वजनिक पदों पर काम करने की क्षमता का विकास करने की दृष्टि से सभी नागरिकों को शिक्षा प्रदान की जाती है। फिर भी कुछ सर्वोच्च पदों पर निर्वाचित होने का अधिकार सभी को नहीं दिया जाता है और ऐसे पदों पर विशिष्ट योग्यता रखने वाले व्यक्तियों को ही नियुक्त करने के लिए अनेक नियंत्रणों और प्रतिबन्धों की व्यवस्था की जाती है।[1]

चूंकि विधि पर आधारित राज्य में सभी अधिकारियों का प्रमुख कर्तव्य विधि की रक्षा करना है इसलिए मुख्य अधिकारियों का कर्तव्य यह होगा कि वे राज्य के समस्त अधिकारियों का निरीक्षण करें और यह निश्चित कर लें कि विधि का उचित पालन हो रहा है। ये विधि के संरक्षक कहे जाते। यह कोई नया पद नहीं है। एथेन्स के संविधान में भी विधि के संरक्षकों का विधान था यद्यपि उनका कार्य क्षेत्र अपेक्षाकृत सीमित था।[2] डायान (Dion) के अनुयायियों से प्लेटो ने भी इस प्रकार के पदाधिकारियों की नियुक्ति करने का सुझाव दिया था। 'लाज' के राज्य में इन संरक्षकों की कुल संख्या ३७ होगी और इनकी नियुक्ति निर्वाचन द्वारा की जायगी। सभी नागरिक इन पदों के लिए अभ्यर्थी नहीं हो सकते हैं। संरक्षक पद के हेतु अभ्यर्थी होने के लिए कई प्रतिबन्ध लगाये गये हैं। निर्वाचन के समय अभ्यर्थी की आयु ५० और ६० वर्ष के बीच होनी चाहिए। निर्वाचित हो जाने के पश्चात् वह ७० वर्ष की अवस्था तक अपने पद पर कार्य कर सकता है। विधि के इन संरक्षकों का एक कर्तव्य यह भी होगा कि वे नागरिकों की आयु और सम्पत्ति का विवरण रखें क्योंकि इनके सम्बन्ध में विधि की रचना करना विशेष रूप से आसान होता है। संरक्षकों को न्याय करने एवं दण्ड देने का भी अधिकार प्राप्त होगा और व्यक्तिगत लाभ के लिए विधि की अवहेलना करने को वे विशेष रूप से घृणित अपराध समझ कर दण्ड देंगे (७५४)। इस प्रकार मुनाफाखोरी को समाज में केवल बुरी दृष्टि से ही नहीं देखा जाता (The-

---

१ इस कृत्रिम एवं जटिल व्यवस्था का यहां उल्लेख करना आवश्यक नहीं प्रतीत होता।

२ Journ Hell Stud XLVIII १९२८ पृष्ठ २२२ पर M Cary के मत का अवलोकन कीजिए।

ophrastus, Char xxx) अपितु दण्डनीय अपराध भी समझा जाता है।[1] नागरिकों की शिक्षा के उत्तरदायित्व का वहन करने वाला सम्भवतः सबसे महत्त्वपूर्ण व्यक्ति होगा। उसे नोमोफाइलेक्स की उपाधि से विभूषित किया गया है। समस्त नागरिकों द्वारा प्रत्यक्ष निर्वाचन के आधार पर उसकी नियुक्ति नहीं होगी। उसके निर्वाचन में मतदान का अधिकार विभिन्न पदों पर कार्य करने वाले अधिकारियों को ही प्राप्त होगा। और वे गुप्त मतदान की पद्धति से ५ वर्ष की अवधि के लिए उसे निर्वाचित करेंगे। प्रशासन, युद्ध एवं धर्म के विभागों के अन्य पदाधिकारियों का भी उल्लेख किया गया है। ३६० सदस्यों की एक सामान्य समिति (Boule) की व्यवस्था भी की गया है। अपराध विषयक विधियों की एक उचित संहिता की आवश्यकता पर प्लेटो विशेष जोर देता है (नवीं पुस्तक में)। उसका कहना है कि यह संहिता ऐसी होनी चाहिए जिसमें विभिन्न प्रकार के अपराधों, उनके कारणों अथवा प्रेरक तत्त्वों पर यथेष्ट ध्यान दिया गया हो और सविधि की अवहेलना करने से लोगों को रोकने तथा इस प्रकार का कार्य करने वालों के लिए उचित दण्ड निर्धारित हों। इसी प्रकार व्यावसायिक सम्बन्धों, झूठी शपथ आदि के लिए भी दण्ड निर्धारित हों। प्लेटो का विश्वास है कि मनुष्य अपनी इच्छा के विरुद्ध अपराध करता है। विधि-व्यवस्था के प्रति अपनी इस असाधारण और स्पष्ट रुचि के बावजूद भी प्लेटो यह छिपाने का प्रयास नहीं करता है कि वह अब भी सर्वोच्च ज्ञान और विवेक से युक्त, स्वतन्त्र किसी मनुष्य के वैयक्तिक शासन को विधि के शासन की तुलना में कहीं अधिक श्रेष्ठ समझता है। यदि ईश्वर की किसी विशेष अनुकम्पा से यह सम्भव हो सके और इस प्रकार का व्यक्ति उत्पन्न हो सके तो उसे इस प्रकार की किसी विधि-व्यवस्था की कोई आवश्यकता न होगी। इस प्रकार की लिखित सम्पूर्ण विधियों के प्रतिबन्ध से वह मुक्त होगा। ज्ञान की तुलना में विधि या अध्यादेश कोई भी श्रेष्ठ नहीं है। बुद्धि को दास बना करके विधि-पालन के लिए बाध्य करना गलत है। इसे तो सबके ऊपर शासन करने का अधिकार प्राप्त है। शर्त केवल यह है कि यह स्वयं शुद्ध और स्वतन्त्र हो। किन्तु चूँकि इस प्रकार की बुद्धि वाले व्यक्ति दुर्लभ हैं और कभी कभी ही उत्पन्न होते हैं इस लिए हम बाध्य होकर विधियों और अध्यादेशों पर ही निर्भर करना पड़ता है (८७५)। इस प्रकार वृद्धावस्था में प्लेटो को अपने विगत जीवन पर तथा अपने योग्यतानुरूप अवसर न प्राप्त करने पर खेद प्रकट करना पड़ता है। किन्तु प्लेटो के इन शब्दों में हम भविष्य का भी पूर्वाभास पाते हैं। अरिस्टाटल ने भी इसी प्रकार का विचार व्यक्त किया

---

१ जैसा कि १९१७ ई० में इंगलैण्ड, फ्रांस और बेलजियम में भी समझा जाता था। धनार्जन की अभिलाषा प्रायः न्याय को ध्वस्त कर देती है।

है (Pol III १२८४)। स्टोइक (Stoics) दार्शनिकों का 'ईश्वरीय तर्क' (Divine Reason) का सिद्धान्त भी इसी प्रकार के विचार से आविर्भूत हुआ था (अध्याय १२)। जो भी हो मानव-स्वभाव और संसार की ओर ध्यान देते हुए हम एक ऐसी निश्चित एवं निर्धारित विधि-संहिता की व्यवस्था करनी पड़ेगी जो सभी के ऊपर अनिवार्य रूप से लागू हो।

प्लेटो भली भांति जानता था कि किसी भी प्रकार की वधिक अथवा राजनतिक व्यवस्था आसानी से छिन्न भिन्न हो सकती है (७४५)। यद्यपि 'लॉज़' में प्रतिपादित राज्य में नागरिकोचित शिक्षा प्राप्त व्यक्ति ही समय समय पर सार्वजनिक पदों पर नियुक्त किये जाते हैं फिर भी यह शिक्षा 'रिपब्लिक' की दीर्घ एवं कष्टसाध्य शिक्षा अनुशासन की तुलना में कुछ भी नहीं है और इस शिक्षा द्वारा तयार किये जाने वाले व्यक्तियों पर अधिक भरोसा नहीं किया जा सकता है। अत आवश्यक समझा जाता है कि सभी अधिकारियों के कार्यों की यथेष्ट जाँच (इयूथना) की व्यवस्था हो। इसके लिए १२ सदस्यों की एक निर्वाचित समिति की व्यवस्था की गयी है। ५० और ७५ वय के बीच की आयु वाले व्यक्ति ही इस समिति के सदस्य होंगे। यदि कोई अधिकारी यह समझता है कि जाँच समिति के सदस्यों ने उन पर निराधार आरोप लगाया है तो वह इस समिति के निर्णय के विरुद्ध अपील कर सकता है। इस प्रकार जाँच समिति के कार्यों की भी जाँच की जायगी। प्रत्येक कार्य की निरीक्षा तथा त्रुटियों और अन्याय से अधिकारियों को सुरक्षित रखने के लिए उचित व्यवस्था की जायगी। जाँच समिति के सदस्य अपोलो' (Apollo) के भक्त होंगे और धर्म एवं विधि के प्रति लोगों में आदर की भावना जागृत करने के लिए वह अनेकानेक उत्सव एवं प्रभावोत्पादक अनुष्ठान और कर्मकाण्ड करते रहेंगे। इन सबके बाद भी प्लेटो का यह सन्तोष नहीं है कि वह एक ऐसी व्यवस्था का निर्माण करने में सफल हो सका है जो बिना किसी अवरोध के संचालित होती रहे और जिसमें अपने को स्वयं संचालित करने की सामर्थ्य हो। राज भक्ति तथा सार्वजनिक सेवा की भावना से युक्त नागरिकों की एक विशाल सेना निरंतर कर्तव्यरत रहती है। इन नागरिकों को एक ही प्रकार का नतिक एवं कलात्मक शिक्षा प्रदान की जाती है। इस शिक्षा का क्रम पीढ़ी दर-पीढ़ी अबाध-गति से चलता रहता है। सम्पूर्ण व्यवस्था की रक्षा के लिए एक विशद विधि-संहिता भी है। नियंत्रण, निरीक्षण की पूरी व्यवस्था है और सभी सार्वजनिक कार्यों का निरीक्षण किया जाता है। फिर भी, इस व्यवस्था में शक्ति और स्थायित्व का अभाव ही है। रिपब्लिक के लेखक के लिए यह कल्पना करना सम्भव नहीं था कि प्राण अथवा आत्मा विहीन राज्य भी सम्भव हो सकता है। इसीलिए 'लॉज़' के इस राज्य में उसने ईश्वरीय प्रेरणा प्राप्त व्यक्ति के शासन के स्थान पर ईश्वरीय प्रेरणा प्राप्त विधि के

शासन को आसान किया। इस प्रकार लाज के इन राज्य की आत्मा का आधार शाश्वत सार्वजनिक एवं दिव्य ईश्वरीय विधि है, किन्तु विधि पर आधारित इस राज्य में आत्मा प्रकट कहाँ होता है? इस विशाल और विस्तृत राजनीतिक यन्त्र का संचालन करने वाले मस्तिष्क कहाँ है? यदि विधि व्यवस्था का स्रोत ईश्वरीय सत्ता है और विधियों का पालन करना ईश्वर के आज्ञा का पालन करना है, तो राज्य में कुछ ऐसे भी व्यक्ति होने चाहिए जो इस ईश्वरीय विधि तथा सम्पूर्ण धार्मिक व्यवस्था से पूर्णतया अवगत हो। प्लेटो ने इस राज्य के लिए धर्म का व्याख्या करने वाला (एक्सीगटाइ) की नियुक्ति की भी व्यवस्था की है जो विधि के अनुसार की जाती है किन्तु इनका कार्य धार्मिक अनुष्ठानों और कर्मकाण्ड तथा उनकी पद्धति के सम्बन्ध में ही परामर्श देना है। धर्मशास्त्र के ज्ञाता व नहीं होते केवल धार्मिक प्रथाओं का ही ज्ञान है। पर्याप्त समय पूर्व प्लेटो ने यह अनुभव किया था कि लिखित शब्द की सहायता से परम सत्य को नहीं व्यक्त किया जा सकता। इसलिए प्रत्येक दशा में कुछ ऐसे व्यक्तियों की आवश्यकता रह जाती है जो दूसरों की अपेक्षा श्रेष्ठ बुद्धि रखते हो। इनका विशेष उत्तरदायित्व होगा और ज्ञान एवं शक्ति का कुछ संयोजन इनके द्वारा सम्भव हो सकेगा।

इस प्रकार अपने कार्य को प्रायः समाप्ति पर पहुँचाते हुए और अपने जीवन के अन्तिम दिनों में प्लेटो का ध्यान पुनः अपनी उत्कृष्ट कृति रिपब्लिक की ओर जाता है और विधि पर आधारित राज्य के सविधान में वह एक और संस्था की व्यवस्था करता है। यह संस्था ज्ञानियों का एक समिति है जिसे वह रात्रि समिति (Nocturnal Council) कहता है। इसके सदस्य भी विधि के ऊपर नहीं होंगे। विधि के ऊपर तो एकमात्र ईश्वर की सत्ता है। इस विख्यात रात्रि-समिति के सम्भवतः पोलिटिकस (स्टेट्समैन) के ईश्वरीय शासक के समकक्ष स्थान भी नहीं दिया जाता है क्योंकि लाज के राज्य में केवल विधि-व्यवस्था को ही ईश्वरीय माना जाता है। किन्तु ईश्वरीय विधि और मानवीय विधि में सम्बन्ध स्थापित करने का कार्य इसी समिति को सौंपा जाता है और यह एक ऐसा काम है जो मनुष्य के ईश्वरीय अंश द्वारा ही सम्पन्न किया जा सकता है। मनुष्य का यह ईश्वरीय अंश मानव मस्तिष्क है। लाज की दसवीं पुस्तक में प्लेटो ने धार्मिक ज्ञान और धार्मिक सत्य केवल दस व्यक्तियों की एक समिति के संरक्षण में था, और विधि के संरक्षकों की इस समिति को अधार्मिक तत्वों तथा जन-नीतियों का दमन करने का कार्य सौंपा गया था। लाज के इन राज्य में अभी तक यही समिति सर्वोपरि था किन्तु अब रात्रि समिति को केन्द्रीय स्थान प्रदान किया जाता है और इसे जो अधिकार और उत्तरदायित्व सौंपा जाता है वह ३७ सदस्यों वाली समिति के अधिकारियों की तुलना में कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण है। विधि-संरक्षकों की

सरक्षण का काय भी सापा जाता है। प्लटो का कहना है कि विधियों का पालन करना ही पर्याप्त नही है, उनका सरक्षण भी करना चाहिए। इसके लिए आवश्यक होगा कि नागरिकों के व्यवहार म विधियों के प्रति आदर की भावना परिलक्षित हो तथा वे इन्हे हृदय से स्वीकार कर। इस प्रकार नागरिको के मस्तिष्क को परिष्कृत तथा विधि के अनुरूप करके प्रारम्भ म बतायी गयी विशद यान्त्रिक व्यवस्था म प्राण का सचार किया जा सकता है और राज्य को स्थायित्व प्रदान किया जा सकता है। रात्रि समिति के कुछ सदस्य तो विधि-सरक्षक समिति से चुन जायेंगे और वे प्रयाप्त वय और अनुभव प्राप्त व्यक्ति होंगे तथा कुछ युवक होंगे जो सक्रिय और जागरूक रह कर राज्य म होने वाली घटनाओं पर दृष्टि रखगे। यह समिति राज्य का आख, कान, आत्मा, और मस्तिष्क का काय करेगी, जसा कि इसके नाम से ही विदित है (नूक्टरिनोस स्यूलोगोस) इसकी बठक रात्रि म ही होगी।[1] शक्ति, योग्यता, राजभक्ति, ज्ञान, और बुद्धिमत्ता या विवेक से युक्त व्यक्ति ही इस समिति के सदस्य हो सकग। राज्य के लक्ष्य और प्रयोजन स इन्ह भली भांति परिचित होना चाहिए तथा यह जानना चाहिए कि इसकी प्राप्ति किस प्रकार हो सकती है। अन्य राज्य सामरिक शक्ति, स्वतन्त्रता, सम्पत्ति आदि को ही अपना लक्ष्य मान सकते हैं। किन्तु प्लटो का कहना है कि इन लक्ष्यों को स्वीकार करने वाला राज्य अन्ततोगत्वा आत्म विनाश की स्थिति को ही प्राप्त होता है। श्रेष्ठता, कौशल, साहस, न्याय आत्म सयम और बुद्धि को ही प्लटो ने आदि स अन्त तक[2] अपने इस राज्य का लक्ष्य रखा है। इन लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु यह आवश्यक है कि नये सरक्षक इन गुणों को पथक न समझ। उनम इतना सामथ्य होना चाहिए कि व विविधता मे समानता अथवा अनेकता म एकता देख सक। यद्यपि प्रत्ययों के सिद्धान्त के विषय म प्लटो इस स्थल पर मौन रहता है फिर भी इसम कोई सन्देह नही है कि उसका ध्यान उधर अवश्य है, क्योंकि वह एक बार पुन अपनी पहले की रचनाओं का उल्लेख करता है। इसके अतिरिक्त विधि पर आधारित इस राज्य के सरक्षकों के लिए जो ज्ञान आवश्यक समझा जाता है, वह उस ज्ञान से बहुत भिन्न नहीं है जो 'रिपब्लिक' के सर्वोच्च सरक्षकों के लिए आवश्यक समझा गया था। महत्वपूर्ण अन्तर केवल यह है कि 'लाज' के सरक्षकों के लिए धम शास्त्र के ज्ञान को अपेक्षाकृत अधिक महत्व प्रदान किया जाता है। चूंकि 'ईश्वर ही सभी वस्तुओं का मान दण्ड है,' इसलिए धम शास्त्र के

---

१ अर्थात प्रात काल के पूव। यूनान और रोम की इसी प्रथा से 'burning the midnight oil' मुहावरा प्रचलित हुआ। दिन का समय तो सावजनिक कार्यों मे ही व्यतीत हो जाता था। (९६१ B)

२ केवल 'लाज' के आदि से ही नहीं (I ६३०, III ६८८) अपितु, प्लेटो की सविधान सम्बन्धी समस्त रचनाओं के आदि से अन्त तक।

ज्ञान को अधिक महत्त्व देना अपेक्षित भी हो जाता है। यह सच है कि धर्म शास्त्र के तीन आधारभूत सिद्धान्तों की उपेक्षा 'रिपब्लिक' में भी नहीं की गयी थी (ii ३६४) और देवताओं की शक्ति तथा श्रेष्ठता, मनुष्य के कार्यों में उनकी रुचि तथा उनकी शुचिता और भ्रष्टता से परे होने की उनकी विशेषता पर 'रिपब्लिक' में भी ध्यान दिया गया है। तथापि, 'रिपब्लिक' के शासकों को न तो प्रधानतया धार्मिक शिक्षा ही दी जाती थी और न 'रिपब्लिक' का समाज पूर्णतया धर्म-केन्द्रित समाज ही था। किन्तु, 'लॉज़' की रात्रि समिति के नये संरक्षकों से यह आशा की जाती है कि वे धर्म शास्त्र के ज्ञान की सहायता से ही राजनीतिक प्रभाव डालें। उन्हें इस योग्य होना चाहिए कि वे देवताओं, मानव-आत्मा तथा विभिन्न नक्षत्रों को गति प्रदान करने वाली ईश्वरीय आत्मा से सम्बन्धित मूल सिद्धान्तों का प्रतिपादन तो करें ही, साथ ही उन्हें सिद्ध भी कर सकें (तुलना कीजिए ८९९ B से)।

अतः आवश्यक होगा कि सबसे पहले इस प्रकार के व्यक्तियों की खोज की जाय और तब उन्हें उचित शिक्षा-दीक्षा दी जाय। किन्तु विधि पर आधारित इस राज्य में इस प्रकार की शिक्षा की कोई व्यवस्था नहीं की गयी है। इस राज्य में तो प्रत्येक नागरिक को समान शिक्षा प्रदान करने का सिद्धान्त स्वीकार किया गया है। ऐसी स्थिति में शिक्षा (पैडिया) और राजनीति (पॉलिटिया) का वही प्राचीन प्रश्न जो 'रिपब्लिक' में उपस्थित हुआ था पुनः सम्मुख आता है। जैसा कि हम देख चुके हैं, 'रिपब्लिक' में राज्य की सफलता एक विशिष्ट वर्ग को दी जाने वाली दीर्घकालीन नैतिक और बौद्धिक शिक्षा की सफलता पर ही निर्भर करती थी। यहाँ भी कुछ ऐसा प्रतीत होता है कि विधि पर आधारित राज्य की सफलता भी इसी प्रकार की शिक्षा पर निर्भर करेगी। किन्तु ऐसी दशा में प्लेटो को फिर से दो प्रकार की शिक्षा व्यवस्था की योजना प्रस्तुत करने का कार्य प्रारम्भ करना पड़ता—शासकों की शिक्षा की तथा नागरिकों की शिक्षा की। वह भली भाँति अनुभव करता है कि अब उसके सम्मुख यही कार्य है (९६८)। किन्तु इस प्रकार के कार्य से वह बचना चाहता है। यदि उचित व्यक्ति मिल भी जाय तो भी प्लेटो अब निश्चित रूप से यह जानने का दावा नहीं करता है कि उसे वह सब ज्ञात है जो उन्हें जानना चाहिए। वह सामान्य ढंग से केवल यह कह सकता है कि गणित और ज्योतिष की आवश्यकता पड़ेगी क्योंकि इनके अध्ययन द्वारा नक्षत्रों तथा उनकी गति-विधि का ज्ञान प्राप्त होता है और इस ज्ञान की सहायता से ईश्वरीय वस्तुओं का ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। कुछ लोगों के इस मत से कि इन विषयों के अध्ययन से मनुष्य नास्तिक हो जाता है, प्लेटो सहमत नहीं है।[1] किन्तु इससे आगे जाने के लिए वह

---

१ उसका ध्यान मुख्यतया अनेक्सगोरस की ओर है जिसकी मृत्यु लगभग ८० वर्ष

तयार नहीं है। इसके लिए जो कारण वह प्रस्तुत करता है वह भी सही नहीं प्रतीत होते हैं (९८)। सम्भवत वह वृद्धावस्था से आक्रान्त हो चुका था, उसकी शक्ति क्षीण हो चुकी थी। फिर भी यह प्रश्न उसके मस्तिष्क म रहा और वह एस व्यक्तियो म नहीं था जो अपन वक्तव्य स विचलित हो जाते हैं। अत यद्यपि उसने 'लाज' का सशोधन नहीं किया और न एक दूसरी शिक्षा व्यवस्था प्रस्तुत करने का ही प्रयास किया, फिर भी अपनी पाण्डुलिपियो[1] म इस विषय पर कुछ विचार अवश्य छोड गया है। यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि Epinomis 'लॉज' की बारहवीं पुस्तक म ९६८ अनुच्छेद के अन्त म प्रतीत होने वाले अभाव की पूर्ति के उद्देश्य से ही प्रस्तुत की गया है। इसका प्रारम्भ इस प्रकार होता है (९७३)—"मैं समझता हूँ कि जहाँ तक विधि के निर्माण का सम्बन्ध है हमने प्राय सभी आवश्यक प्रश्नो पर विचार कर लिया है। किन्तु अभी तक हमने न तो इस महत्वपूर्ण प्रश्न को उठाया और न इसका उत्तर ही दिया है कि एक नश्वर मनुष्य का बुद्धिमान् बनने के लिए क्या सीखना चाहिए?" अन्त म कहा जाता है कि इस प्रकार की विद्या दीर्घकालीन प्रशिक्षण द्वारा ही अर्जित की जा सकती है। इसी प्रशिक्षण द्वारा मनुष्यो को वह परम ज्ञान एवं बुद्धिमत्ता प्राप्त हो सकती है जिसके आधार पर वे रात्रि समिति (Nocturnal Council) का सदस्य होने के अधिकारी हो सकते हैं। 'लाज' की एक पुस्तक के आकार के इस खण्ड म इसी प्रकार की शिक्षा का विवरण प्रस्तुत किया गया है। राजनीतिक विचारधारा की दृष्टि से अधिक महत्वपूर्ण न होने हुए भी कई प्रकार स यह खण्ड पर्याप्त महत्व का रहा है। यह विवरण प्लेटो के सिद्धान्तो, अथवा यह कहना अधिक उपयुक्त होगा कि वृद्ध प्लेटो के सिद्धान्तो के सर्वथा अनुकूल है। सराक्यूज के दिनो के प्लेटो अथवा 'लाज' की रचना प्रारम्भ करने के समय के प्लेटो के विचार इसम नहीं है। इसम तो अपने जीवन के अन्तिम दिनो के प्लेटो के विचार मिलते है। इस रचना म प्लेटो स्वय अपने बारे म अथवा अपनी श्रेष्ठ राजनीतिक बुद्धि के बारे म भी पहले की भांति निश्चित नहीं रह गया है। राजनीति मे अब उसकी आस्था उठ चुकी है किन्तु अंकगणित, ज्यामिति, ज्योतिष तथा धर्म शास्त्र द्वारा प्रतिपादित सत्य के प्रति अब भी उसकी दृढ आस्था है।

पहले हो चुकी थी, यद्यपि 'ह्रासप्राय अनेक्सगोरस के कुछ अनुयायी इस समय भी रहें होगे। किन्तु वे इतनी ख्याति नहीं अर्जित कर सके कि उनका नाम जीवित रह सकता'—J Tate on Laws ८८९ Class Quart xxv, १९३६ pp ४८-५४।

१ इसी अध्याय के प्रारम्भिक पृष्ठो मे Epinomis के सम्बन्ध मे दी गयी पाद-टिप्पणी देखिए।

धार्मिक राज्य की स्थापना का लक्ष्य सम्मुख रखा जाता है और प्लेटो साधारण मनुष्यों को सम्बोधित करता है, उन शासकों को नहीं जो वास्तव में सम्भव हो नहीं हो सकते अथवा जो पृथ्वी पर देवताओं की भाँति हैं। 'रिपब्लिक' में प्लेटो ने स्वर्ग में स्थित लौकिक राज्य की रूप-रेखा प्रस्तुत की है, 'लॉज' में पृथ्वी पर स्थित धार्मिक राज्य का।

विधि पर आधारित राज्य के सामान्य सिद्धान्तों की चर्चा मुख्यतया 'लॉज' के प्रारम्भिक १।३ भाग में की जाती है जो पाँचवीं पुस्तक (७४०) तक है। इसके उपरान्त प्लेटो टिप्पणी तथा परिचर्चा के साथ विधि का उदाहरण प्रस्तुत करना प्रारम्भ कर देता है। सम्भवतः 'लाज' की पाँचवीं पुस्तक में प्रतीत होने वाले इस क्रमभंग पर ध्यान देते हुए ही अरिस्टाटेल ने यह लिखा था (Pol ii १२६५) कि प्लेटो के 'लाज' का अधिकांश भाग विधि के सम्बन्ध में है न कि विधान के सम्बन्ध में नहीं। किन्तु उसने यह भी अनुभव किया होगा कि यह विभाजन स्पष्ट नहीं है। 'लाज' के विधि विषयक अधिकांश पुस्तकों जैसे ८, ९, और ११ में व्याख्या और उपदेशों की भरमार है और दसवीं पुस्तक में आदि से अन्त तक प्रारवचन ही है। पुस्तक १२ (९६०) में भी इसी प्रकार का क्रम भी मिलता है किन्तु अरिस्टाटल ने इस पर कोई टिप्पणी नहीं की है। आधुनिक पाठ्य पुस्तक का लेखक 'लाज' को इन दो भागों में प्रस्तुत करता—१ राजनीति के अध्ययन की भूमिका और २ सामाजिक और राजनीतिक प्रयोग। किन्तु प्लेटो पाठ्य पुस्तक का लेखक बनने की आकांक्षा नहीं रखता था।

'लाज' की विभिन्न पुस्तकों के प्रारम्भ की पृष्ठ-संख्या इस प्रकार है (Stephanus) पुस्तक एक—६२४, पुस्तक दो—६५२,

पुस्तक तीन—६७६, पुस्तक चार—७०४,

„ पाँच—७२६, „ छ—७५१,

सात—७८८, „ आठ—८२८,

„ नौ—८५३, „ दस—८८४,

„ ग्यारह—९१३, „ बारह—९४१

एपिनामिस (Eponomis) ९७३

'लाज' के मुख्य अनुच्छेद

६२४–६३१	सामरिक राज्य के विरुद्ध आपत्तियाँ।
६४३–६४४ ६५२–६६२	शिक्षा-स्तर निर्धारित करना (सातवीं पुस्तक से भी तुलना कीजिए)।
६७६–६८२	इतिहास की पुनरचना। (देखिए G Rohr Platons Stellung Zur Geschichte, Berlin १९३२)

६८८–६८९ बुद्धि और सद्गुण राजनीतिक व्यवहार के रूप में।
६९१–६९४ इतिहास से कुछ और शिक्षा।
६९७–७०१ एथेन्स का उदाहरण अतिशयता से बचना।
७०१–७११ एक नया राज्य अथवा उपनिवेश किस प्रकार स्थापित किया जाय? प्रारम्भिक अवस्था में सत्तावान व्यक्ति की आवश्यकता।
७११–७१४–८७५ विधि पर आधारित राज्य की आवश्यकता।

विधि पर आधारित राज्य के तीन आधारभूत सिद्धान्त —

(i) ६९३ ७१४ ७१५ इत्यादि Epist vii ३३७ से तुलना कीजिए।
(ii) ७१६ ७१८ ८२८ ८३१, ८५३ ८५९ (अधार्मिक व्यवहार राज [द्रोह]) राज्य के धार्मिक आधार के लिए देखवा पुस्तक passism तथा पृष्ठ ७२० पर टिप्पणी १ में उल्लिखित साहित्य।
(iii) ६९३ ७०१ तथा ७१८-७२३ ८२२ ८२३ प्राक्कथन द्वारा शिक्षा। इसके साथ Fr Pfister Die Prooimia der Platonischen Gesetze in Melanges Boisacq (१९३८) ii १७३ १७९ [1]

७२६–७३४ प्रथम उपदेश—तुलना कीजिए ७१६–७१७।
७३५–७५८ अवाञ्छनीय तत्वों का उन्मूलन।
७३८–७३९ सर्वश्रेष्ठ तथा द्वितीय श्रेणी के राज्य।
७४२–७४४ मुद्रा और सम्पत्ति पर प्रतिबन्ध।

Book vii pancim (उपरि लिखित सविस्तार प्रमाणों के साथ) ५० हजार नागरिकों की शिक्षा।

९६०–९६९ शिक्षा और रात्रि समिति के विषय पर पुनर्विचार।

---

१ N B p ६५५ Laws iv ७२२ C I मत में Pfister एपोलीन।

अध्याय ११

अरिस्टाटेल

प्लेटो और अरिस्टाटेल के विचारों में इतना अन्तर है कि कभी-कभी यह कहा जाता है कि सभी विचारशील व्यक्तियों को जान-अनजान इन दोनों में से किसी एक का अनुसरण करने के लिए बाध्य होना पड़ता है। इस प्रकार के सभी कथन सत्य का कुछ अंश ही व्यक्त करते हैं और इन पर अधिक निर्भर नहीं रहा जा सकता। इन दोनों विचारकों के राजनीतिक दर्शन का अध्ययन करने वालों को प्रारम्भ में ऐसा प्रतीत होता है कि उपर्युक्त कथन सत्य से सर्वथा दूर है क्योंकि इनके विचारों में पर्याप्त साम्य मिलता है। सर्व प्रथम तो इन दोनों विचारकों ने होमर से साक्रटीज तक के राजनीतिक चिन्तन नीति तथा शिक्षा-सिद्धान्त की परम्परा से समान रूप से लाभ उठाया। अन्तर केवल इतना है कि अरिस्टाटेल को यह परम्परा एक पीढ़ी बाद प्राप्त हुई और इस पर विचारों और अनुभवों की एक नयी परत जम चुकी थी। प्लेटो और अरिस्टाटेल दोनों ही यूनान के अस्थिर राजनीतिक जीवन तथा नैतिक अव्यवस्था से चिन्तित थे और दोनों का ही विश्वास था कि इस स्थिति को एक ऐसी शिक्षा द्वारा ही सुधारा जा सकता है जो अच्छा जीवन सम्भव कर सके। दोनों का यह भी विश्वास था कि अच्छा जीवन एक साधारण और उन्नत आकार के नगर राज्य (पालिस) में ही सम्भव हो सकता है और केवल पर्याप्त साधन-सम्पन्न एवं शिक्षाप्राप्त व्यक्ति ही अच्छे जीवन के आदर्श को प्राप्त कर सकते हैं। सभी के लिए इस आदर्श की प्राप्ति सम्भव न थी। इसलिए दोनों ही इस आदर्श की प्राप्ति के लिए नागरिकता के अधिकारों को कुछ व्यक्तियों तक ही सीमित रखना चाहते थे और दोनों यह भी उचित समझते थे कि सभी प्रकार का शारीरिक श्रम दासों अथवा अनागरिकों द्वारा ही कराया जाय। किन्तु इस समानता के आधार पर यह निष्कर्ष निकालना भूल होगी कि प्लेटो के विचारों अथवा नागरिक जीवन के सम्बन्ध में यूनानी विचारधारा के विकास में अरिस्टाटेल ने जो योग दिया उसका महत्त्व न्यून है। इस प्रकार यह समझना भी भूल होगा कि प्लेटो और अरिस्टाटेल के विचारों का अन्तर उन मतभेदों तक ही सीमित है जहाँ अरिस्टाटेल ने स्पष्ट शब्दों में प्लेटो के विचारों की आलोचना की है। अरिस्टाटेल की रचनाओं में इस प्रकार की आलोचना बहुधा मिलती है जो कुछ स्थलों पर तो महत्त्वपूर्ण और कुछ स्थलों पर महत्त्वहीन एवं क्षुद्र है। फिर भी इन दोनों विचारकों को पृथक् करने का एकमात्र आधार ये आलोचनाएँ ही नहीं हैं।

अरिस्टाटल एथन्स का निवासी नहीं था। उसका पिता मेसिडन (Macedon) के सम्राट का चिकित्सक था किन्तु उसका परिवार मसिडोनियन न था। स्टेगिरा (Stagira) में उसका जन्म हुआ था और यह एक आयोनिक प्रान्त नगर था। अन्य यूनानी बालकों की भांति (जिसमें महान सिकन्दर भी था) उसकी प्रारम्भिक शिक्षा-दीक्षा भी होमर की रचनाओं पर ही आधारित थी। इस प्रकार जिन मसिडन निवासियों के सम्पर्क में वह आया व बर्बर और असंस्कृत नहीं थे (अन्यथा यूरिपाइडीज उन लोगों के बीच रहने के लिए न जाता।) किन्तु नगर राज्य की व्यवस्था को इन लोगों ने नहीं अपनाया था। मसिडन का सम्राट फिलिप वंशानुक्रम के आधार पर सिंहासनारूढ़ हुआ था तथा समय समय पर होने वाले वंशगत संघर्षों और हत्याओं सामावर्ती युद्धों और समय समय की दुर्घटनाओं के बावजूद भी मेसिडन का साम्राज्य विस्तृत ही होता गया। यद्यपि प्लेटो भी इन परिस्थितियों से कुछ मात्रा में परिचित था (Gorgias ४७० D) फिर भी वह इस वातावरण के सम्पर्क में नहीं आया। ३६७ ई० पू० में अरिस्टाटल अपने जन्मस्थान और वहां के वातावरण को छोड़कर एथेन्स में प्लेटो की अकादमी में शिक्षा प्राप्त करने हेतु गया और प्लेटो की मृत्यु तक वहीं रहा। इन बीस वर्षों में उसने शिक्षार्थी और शिक्षक दोनों रूपों में कार्य किया। प्लेटो की मृत्यु के पश्चात् गणित तथा जीवविज्ञान का पण्डित स्पयूसिपस (Speusipus) उसका उत्तराधिकारी नियुक्त किया गया। अरिस्टाटल एथेन्स छोड़कर माइसिया (Mysia) में एटारनियस (Atarnueus) नामक स्थान को चला गया और वहाँ अकादमी के कुछ पुरातन छात्रों की एक मण्डली में सम्मिलित हो गया। वहाँ का शासक हरमियॉज (Hermeias) इस मण्डली का प्रमुख था। इसी की भतीजी के साथ अरिस्टाटल ने विवाह किया। एशिया-माइनर के तटों और द्वीपों पर स्थित विभिन्न स्थानों[1] पर जाकर उसने सामुद्रिक जीव विज्ञान का अध्ययन किया। अकादमी की गणित प्रधान शिक्षा की अपेक्षा यह अध्ययन उसे अधिक रुचिकर प्रतीत हुआ। अरिस्टाटल के इस प्रकार के अनुभव प्लेटो को नहीं प्राप्त थे वह तो दाम्पत्य-जीवन के अनुभव से भी अनभिज्ञ था। पाँच वर्षों तक इस प्रकार का जीवन व्यतीत करने के पश्चात अरिस्टाटल फिलिप के पुत्र का व्यक्तिगत शिक्षक नियुक्त हुआ। अरिस्टाटल का यही शिष्य कालान्तर में महान सिकन्दर के नाम से विख्यात हुआ। इस पद पर अरिस्टाटल ३४३ ई०पू० से ३४० ई०पू० तक रहा और मसिडन के राजतन्त्र को निकट से जानने तथा उसके सम्पर्क में आने का उसे अवसर मिला। किन्तु यह एक

---

[1] H D p Lee, Class Quart XLii (१९४८) पृष्ठ ६१।

विस्मय का विषय रहा है कि वह अपनी बाद की रचनाओं में अपने इन शिष्य[1] को जीवन घटनाओं तथा प्रगति की चर्चा क्या नहीं करता है। ३३५ ई० पू० के समीप ५५ वर्ष की अवस्था में वह पुनः एथेंस जाता है और वहाँ के लोगों में मेसिडन विरोधी भावनाओं के होते हुए भी अपना शिक्षालय स्थापित करने में सफल होता है। 'लाइसियम (Lyceum) के नाम से विख्यात यह शिक्षालय आगे चल कर टहल-टहल कर पढ़ाने वाले दार्शनिकों (Peripatetic Philosophers) और जीव विज्ञान का केन्द्र बना।

अरिस्टाटेल और प्लेटो के वातावरण और अनुभव की इन भिन्नता में, एक मध्यमवर्गीय वृत्ति का अनुसरण करने वाले पति और पिता, वैज्ञानिक निरीक्षण और अध्ययन करने वाले तथा व्यावहारिक प्रशासक और एथेन्स के अभिजात्य वर्ग में उत्पन्न रहस्यवादी साधु और संयमी प्लेटो के अन्तर को जोड़ दीजिए, तब हम यह देख कर आश्चर्य नहीं होगा कि अरिस्टाटल के राजनीतिक विचारों में ऐसी विशेषताएँ व्याप्त हैं जो प्लेटो के विचारों के सर्वथा विपरीत हैं। उदाहरणार्थ—पारिवारिक जीवन की उपयोगिता, स्वास्थ्य और सुख प्राप्त करने के प्रयास (वाक्यांश जैक्सन का है) सम्पत्ति की महत्ता और उपयोगिता, लोकमत का आदर सर्वसाधारण की रुचि और इच्छाओं का आदर। इनके अतिरिक्त अरिस्टाटेल की विचार-पद्धति की सबसे महत्त्वपूर्ण विशेषता जो प्लेटो के विचारों के सर्वथा विपरीत है वह है, सम्भावित और व्यावहारिक के प्रति उसका आकर्षण, उसका यह विश्वास कि कम-से-कम आधी राजनीति उपलब्ध साधनों और प्रस्तुत परिस्थिति का श्रेष्ठतम प्रयोग करने में है। इसका यह तात्पर्य नहीं है कि परिस्थिति को बदलने तथा सर्वथा नयी दिशा में प्रारम्भ करने के बारे में सोचना निरर्थक कार्य है। इसके विपरीत इसे वह दर्शन शास्त्र के लिए एक उपयुक्त विषय मानता है और पूर्णता का अध्ययन करने के प्रयास को हेय नहीं समझता। किन्तु उसका विश्वास है कि राजनीति-शास्त्र का विषय-क्षेत्र आदर्श राज्यों की रचना तक ही नहीं सीमित है। वास्तविक राज्यों की सुरक्षा तथा सुधार की समस्याएँ भी इस शास्त्र के अन्तर्गत आती हैं। अध्ययन का उद्देश्य सैद्धान्तिक अथवा व्यावहारिक हो, इसका आधार सदैव एक ही होगा। और वह है नगर-राज्य, (पोलिस) से सम्बन्धित समस्याओं को समझना, इसके सन्दर्भ में मनुष्य को समझना, राजनीतिक प्राणी (ज़ोओन पालिटिकोन) के रूप में मनुष्य को समझना—एक ऐसे प्राणी के रूप में

---

१ उदाहरणार्थ Studies, June १९४२, पृष्ठ २२१ M Tierney का लेख V Ehrenberg की Alexander and the Greeks (१९३८) ch iii देखिए।

जिसका जन्म समाज में रहने के लिए ही हुआ है। राजनीति एक व्यापक शास्त्र है। Ethics के प्रारम्भ में ही अरिस्टाटल ने लिखा है कि 'परमश्रेष्ठ का ज्ञान ही राजनीति है। इस निष्कर्ष पर वह जिस तर्क-पद्धति द्वारा पहुँचा है उसे सारांश रूप में इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है—हम जो भी करते सोचते अथवा कहते हैं उन का लक्ष्य किसी न किसी प्रकार का कल्याण होता है। चिकित्सा का लक्ष्य स्वास्थ्य होता है नौका निर्माण से हम नौका प्राप्त करने की आशा करते हैं और इसी प्रकार हमारे सभी कार्य किसी न किसी लक्ष्य द्वारा प्रेरित होते हैं किन्तु परमश्रेष्ठ स्वयं अपने में लक्ष्य है किसी अन्य लक्ष्य का किसी दूसरी श्रेष्ठता का साधन नहीं है। इसलिए परमश्रेष्ठ के ज्ञान का हमारे जीवन पर अत्यधिक प्रभाव पड़ेगा। जैसे स्वास्थ्य का ज्ञान चिकित्सा कला का अभिन्न अंग है उसी प्रकार परमश्रेष्ठ का ज्ञान जीवन की कला का अंग होगा। इसी कला को अरिस्टाटिल राजनीति (पोलिटिका) की संज्ञा देता है। इसका कारण यह है कि अच्छा जीवन नगर राज्य (पोलिस) के अन्तर्गत ही सम्भव हो सकता है और राज्य व नागरिकों के लिए अच्छा जीवन प्राप्त करने का प्रयास किसी एक व्यक्ति के जीवन को अच्छा करने की अपेक्षा कहीं अधिक श्रेयस्कर है। अधिकांशतः व्यक्ति इससे सहमत है कि पोलिस का उद्देश्य नागरिकों के जीवन को सुखी बनाना होना चाहिए किन्तु सुखी जीवन किसे कहेंगे? इस प्रश्न के उत्तर के सम्बन्ध में विचार-वभिन्न्य हो सकता है। अरिस्टाटल के अनुसार जब तक कोई व्यक्ति कुछ करता कहता अथवा सोचता नहीं और जब तक उसके कार्य, कथन और विचारों में कोई गुण नहीं होता तब तक उसके सुखी होने की कोई कल्पना ही नहीं की जा सकती। इसी आधार पर उसने श्रेष्ठ कार्य करने को ही सुख बताया है। वह स्वीकार करता है कि इस अवस्था को प्राप्त करने के लिए अधिक साधना की आवश्यकता पड़ती है। इसीलिए वह यह भी कहता है कि सुखी होने के लिए आवश्यक है कि मनुष्य को पर्याप्त मात्रा में बाह्य भौतिक साधन उपलब्ध हों। श्रेष्ठ जीवन के लक्ष्य को प्राप्त करने की दिशा में सहायता अथवा बाधा पहुँचाने वाले गुणों और दोषों की विवेचना अरिस्टाटल ने अपनी नीति विषयक रचनाओं में की है और Ethics के अन्त में उसने इस विषय को नगर राज्य से सम्बन्धित किया है। उसका कहना है कि प्रौढ़ों की सभा में दिये जाने वाले नीति विषयक भाषणों को सुनकर नैतिक गुणों का अर्जन सम्भव नहीं है। प्रारम्भिक शिक्षा और अच्छी आदतों के अभ्यास से ही इन गुणों को अर्जित किया जा सकता है। इसलिए प्लेटो की भांति अरिस्टाटल भी अपनी मान्यताओं और विधियों के अनुसार नागरिकों को शिक्षित करना राज्य का प्रथम कर्तव्य मानता है। राज्य का दूसरा कर्तव्य विधि का उल्लंघन करने वालों को दण्ड देना तथा उनका सुधार करना है। किन्तु साथ ही वह यह भी कहता है (Eth N X • १८)

कि अभी तक शिक्षकों अथवा राजनीतिज्ञों ने विधि का निर्माण संतोषजनक ढंग से नहीं किया, यद्यपि मानवीय कार्यकलापों से सम्बन्धित विज्ञान (स्पष्टतः उसका तात्पर्य राजनीति से है) के अध्ययन की दिशा में यह निश्चित रूप से दूसरा कदम है (इस स्थल पर अरिस्टाटेल प्लेटो के 'लाज' का उल्लेख नहीं करता।) अपनी इस धारणा के अनुसार वह आगे कहता है (X ९, २३) 'सर्वप्रथम तो हम अपने से पहले के लेखकों की रचनाओं का सर्वेक्षण करना चाहिए और यह देखना चाहिए कि इस विषय पर उन्होंने कौन-सा अच्छा बात कहा है यद्यपि इस विषय की ओर उन्होंने आंशिक ध्यान ही दिया है। इसके पश्चात सभी संकलित संविधान का अध्ययन करके नगरों तथा उनके संविधानों को सुरक्षित रखने वाले तथा नष्ट करने वाले तत्वों की सूची बनानी चाहिए और यह जानने का प्रयास करना चाहिए कि क्या कारण है कि कुछ नगरों का शासन अच्छा है और कुछ का बुरा। इतना कर लेने के बाद हम यह निर्णय कर सकेंगे कि कौन-सा संविधान सर्वश्रेष्ठ है, इसमें शक्तियों का विभाजन किस प्रकार किया गया है तथा किन नैतिक और विधि सम्बन्धी आधारों पर यह स्थित है।

अरिस्टाटेल की Ethics का यह अंतिम अनुच्छेद 'पॉलिटिक्स (Politics) के नाम से विख्यात उसकी महत्वपूर्ण रचना की विषय-सामग्री का पूर्वाभास एवं आंशिक विवरण[1] प्रस्तुत करता है। राजनीति शास्त्र से सम्बन्धित प्रश्नों पर अरिस्टाटेल की कार्य विधि का समझने के लिए हम Ethics और Rhetoric के कुछ सम्बन्धित अंशों के साथ मुख्यतया Politics पर ही निर्भर करना पड़ता है। अरिस्टाटेल की कार्य विधि ऐसी है कि उसके लिए 'approach' ही उचित शब्द है, क्योंकि जिन विषयों का विवेचन वह करता है उन्हें समस्या के रूप में ही देखता है और यह आभास देता है कि अपने विषय के समक्ष खड़ा होकर वह भरसक प्रयत्न कर रहा है कि अपने पूर्वाग्रहों की सीमा में विषय पर निष्पक्ष प्रयास करे। विश्लेषण और संश्लेषण, वर्गीकरण और उपवर्गीकरण करना उसके मस्तिष्क की सामान्य विशेषता थी। राजनीति शास्त्र का वह 'पूर्ण सर्वश्रेष्ठ' और 'यथासम्भव श्रेष्ठ' के अध्ययन में विभाजित करने के पश्चात 'सम्भावित श्रेष्ठ' के अध्ययन को पुनः दो वर्गों में विभाजित करता है, क्योंकि आदर्श राज्यों के अध्ययन एवं उनकी शाब्दिक रचना के प्रतिकूल (१) वास्तविक और व्यावहारिक स्तर पर एक श्रेष्ठ राज्य का ज्ञान करना है जिसके संविधान की रचना करते समय वहाँ के निवासियों तथा भौतिक एवं ऐतिहासिक परिस्थितियों पर ध्यान दिया जाता है और (२) चूंकि राजनीति शास्त्र की किसी भी रचना में यह सम्भव नहीं है कि सभी सम्भव

---

१ इस अध्याय के अंत में दी गयी टिप्पणी देखिए।

विविधताओं का ध्यान में रखा जा सके अत एव एसे संविधान की खोज करना आवश्यक हो जाता है जो सामान्यतया सन्तोषजनक एवं श्रेष्ठ हो तथा जिसे सुचारु रूप से सचालित किया जा सके। इस प्रकार के प्रश्नों का पिटा पिटाया उत्तर कि लोक तन्त्र अथवा कुलीन-तन्त्र में यह सम्भव हो सकता है असगत है। अरिस्टाटेल का कहना है कि कितने ही एसे संविधान हैं जो परस्पर भिन्न होते हुए भी लोक तन्त्र अथवा कुलीन-तन्त्र के नाम से विभूषित किये जा सकते हैं। ऐसी दशा में आवश्यक हो जाता है कि विषय की गहराई पर जाया जाय और उसका सविस्तार अध्ययन किया जाय। संविधान कई बातों पर निर्भर करता है जैसे—सार्वजनिक पद और उन पर नियुक्ति करने की विधि शक्ति[1] और इसका स्रोत राज्य का निर्माण करने वाले व्यक्तियों के समुदाय का प्रयोजन और ध्येय। इसके अतिरिक्त दो संविधान समान होते हुए भी पृथक विधि व्यवस्था का अनुसरण कर सकते हैं। यह एक ऐसा अन्तर है जिसकी ओर प्रारम्भिक लेखकों का ध्यान नहीं गया था। परिणामत नगर राज्य की विधि व्यवस्था और प्रथाओं का अधिकांश भाग संविधान का अंग माना जाने लगा था। अरिस्टाटल के मतानुसार संविधान के अन्तर्गत राज्य सत्ता, राज्य में पदों का वितरण तथा राज्य के सामान्य उद्देश्य आते हैं और विधि-व्यवस्था को इस संरचना के अन्तर्गत आने वाले कार्यात्मक नियमों की श्रेणी में समझना चाहिए। राजनीति की समस्याओं का अध्ययन करने वाले दार्शनिक को एसे प्रश्नों का भी उत्तर ढूँढना चाहिए जैसे—राजनीतिक समुदाय का जिसे हम नगर राज्य कहते हैं क्या स्वभाव है? इसकी सदस्यता की क्या शर्तें हैं? किस नैतिक आधार पर यह स्थित है अथवा स्थित होना चाहिए? इस प्रकार इन प्रश्नों द्वारा परमश्रेष्ठ राज्य और वस्तुस्थिति को ध्यान में रखते हुए सर्वश्रेष्ठ-व्यावहारिक राज्य—अथवा साधारण रूप से अच्छा राज्य दोनों की खोज करने तथा उनका अध्ययन करने का प्रयास किया जा सकता है। प्रथम प्रश्न के उत्तर में अरिस्टाटल एसे व्यक्तियों के विरुद्ध आपत्ति करता है जो प्लेटो की भाँति (Statesman में) स्वामी और दास तथा शासक और शासित के सम्बन्धों में कोई अन्तर ही नहीं देखते हैं और यह मान कर चलते हैं कि गृह विज्ञान और शासन विज्ञान में कोई अन्तर नहीं।[2] प्लेटो के इस मत से तो अरिस्टाटल सहमत है कि

---

१ To Kupιov (१२८९ a १७) जिसे कभी कभी 'सार्वभौम सत्ता (Sovranty) भी कहा जाता है किन्तु इसका वास्तविक अर्थ शक्ति का स्रोत, अथवा इसका अधिकार न होकर यह तथ्य है कि इसका प्रयोग किया जा रहा है।

२ Politicus २५८ e इस स्थल पर अरिस्टाटेल प्लेटो अथवा उसके संवाद का उल्लेख नहीं करता है किन्तु उसकी टिप्पणी (१२५२ a) प्लेटो के अनुच्छेद को ध्यान में रख कर ही लिखी गयी है ऐसा स्पष्ट प्रतीत होता है।

दास पर स्वामी का अधिकार स्वाभाविक और उचित है। किन्तु इस सम्बन्ध की उपमा शासित और शासक से देना वह अनुचित समझता है चाहे वह राज्य के सन्दर्भ में हो या न हो। स्वयं अरिस्टाटेल ने इस प्रश्न का जो उत्तर दिया है वह अपने जीव विज्ञान पर आधारित है और उसका व्यावहारिक ज्ञान पर। अरिस्टाटेल से इस प्रकार के उत्तर की आशा करना स्वाभाविक है। किन्तु दोनों उत्तरों के पारस्परिक सम्बन्ध को उसने स्पष्ट नहीं किया। सभ्यता का विकास प्रकृति का विकास प्रक्रिया का अंग है इसका विरोध नहीं। हम यह मानते हैं कि सभ्यता का विकास हुआ है और परिवार व ग्राम और नगर राज्य इस प्रक्रिया की क्रमिक अवस्थाएँ हैं। इसमें सन्देह नहीं कि विकास की यह प्रक्रिया, मनुष्य तथा पशुओं के शारीरिक विकास की प्रक्रिया के समान नहीं होती है क्योंकि राजनीति एक व्यावहारिक ज्ञान है निरीक्षण मात्र पर आधारित विज्ञान नहीं और मानवीय हस्तक्षेप से सभ्यता के विकास की गतिविधि बदली जा सकती है। फिर भी जिस प्रकार मनुष्य अथवा पशुओं का एक सामान्य-स्तर होता है उसी प्रकार राज्य का भी सामान्य-स्तर हो सकता है और इसकी खोज करना नितान्त आवश्यक है। राज्य का आकार असाधारण, विशाल अथवा लघु नहीं होना चाहिए और किसी प्रकार से तूफान का अतिक्रमण नहीं होना चाहिए। इसके अतिरिक्त राज्य के अन्तर्गत जीवन व्यतीत करना मानव-स्वभाव के अनुसार है। मनुष्य का यही स्वभाव उसे पशुओं से पृथक् करता है। पशुओं में परिश्रम करने अथवा समूह में रहने का कितना ही प्रवृत्ति क्यों न हो उन्हें 'राजनीतिक प्राणी' की संज्ञा नहीं दी जा सकती क्योंकि मनुष्य की भांति 'राज्य' का जीवन व्यतीत करने की प्रवृत्ति उनमें नहीं होती। इस कथन के साथ यदि यह भी जोड़ दिया जाय कि विकास की प्रक्रिया का अन्तिम चरण राज्य है और इसी अवस्था की प्राप्ति के लिए अन्य अवस्थाएँ आती हैं, तो हम इस निष्कर्ष पर पहुँचेंगे कि परिवार और ग्राम विकास के क्रम में 'राज्य' के पूर्वगामी अवश्य हैं किन्तु प्राथमिकता राज्य को ही देनी चाहिए।[१] इस प्रकार के समुदाय को स्वभावतः नैतिक भी होना चाहिए क्योंकि मनुष्य पशुओं से केवल इसलिए भिन्न नहीं है कि वह उपयोगी और हानिकारक वस्तुओं के अन्तर को देख सकता है अपितु इसलिए भी भिन्न है कि वह न्याय और अन्याय, अच्छे और बुरे, सम्यक् और असम्यक् के अन्तर को भी देख सकता है। मनुष्यों के प्रत्येक समुदाय को चाहे वह बड़ा हो, अथवा छोटा, परिवार

---

१ W L Newman (The Politics of Aristotle, Vol १, p ३१, १८८७) का कहना है कि अरिस्टाटेल ने इस सिद्धान्त का प्रयोग बाद में कहीं नहीं किया है। यहां इस सिद्धान्त पर जो जोर उसने दिया है उसका कारण मुख्यतया विरोधियों का खण्डन करना है।

रहा अथवा राज्य इस अन्तर के प्रति सजग रहना चाहिए। अरिस्टाटल के इन विचारों के अधिकांश भाग को स्वीकार करने में प्लेटो को कोई विशेष आपत्ति न होती। अरिस्टाटल का (Politics) का प्रारम्भिक भाग प्लेटो की 'Politicus के सिद्धान्तों की आलोचना प्रस्तुत करने की अपेक्षा नगर राज्य की परम्परागत संस्था का समर्थन करने की दृष्टि से लिखा गया है। यह तो प्राचीन काल के अनातिवादी विचारकों (देखिए अध्याय ५) और चौथी शताब्दी के उन विचारकों के मतों का खण्डन करता है जो नगर राज्य के जीवन को अनावश्यक बोझ स्वरूप तथा प्रकृति के कार्यों में अवाञ्छनीय हस्तक्षेप के रूप में देखते थे। (अध्याय १२)

इस प्रकार राज्य का मुख्य आधार न्याय अथवा नैतिकता होगी। वर्षों पूर्व साइमोनिडस ने इसी मत का प्रतिपादन किया था, किन्तु प्लेटो की भांति अरिस्टाटल के लिए भी न्याय की कल्पना केवल राज्य के अन्तर्गत ही सम्भव हो सकती है। क्योंकि न्याय अन्य व्यक्तियों के साथ हमारे व्यवहार को नियन्त्रित करता है। यह स्वभावतः राजनीतिक है। इसका सम्बन्ध दूसरों से है। राज्य की भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति अनेक दासों के श्रम द्वारा होगी। यद्यपि राज्य की उत्पत्ति का कारण ये भौतिक आवश्यकताएं नहीं हैं। किन्तु दासों को अरिस्टाटल अन्य व्यक्तियों की श्रेणी में नहीं रखता। उन्हें सम्पत्ति मात्र समझता है और इसलिए यद्यपि उनके साथ दया के व्यवहार की मांग करता है किन्तु साथ ही यह भी स्पष्ट कर देता है कि यह व्यवहार राजनीतिक न्याय के अन्तर्गत नहीं आता। अरिस्टाटल के अनुसार राजनीतिक न्याय तो केवल उन व्यक्तियों के बीच की वस्तु है जो स्वावलम्बन पर आधारित स्वतन्त्रता को लक्ष्य मान कर एक ही प्रकार का जीवन व्यतीत करते हैं जो स्वतन्त्र और समान हैं। (Eth v, ६ ४)। इसमें कोई नवीनता नहीं है। अब भी अरिस्टाटल यूनानी नगर राज्य की परम्परागत संस्थाओं का ही समर्थन कर रहा है। विश्लेषण और संश्लेषण का उसकी शैली तथा व्यक्तियों और समूहों के व्यवहार का निरीक्षण करने उनके व्यवहार के अन्तर को स्पष्ट करने तथा इस अन्तर के कारणों को निर्धारित करने का उसका ढंग उसका विवेचना को रोचकता प्रदान करते हैं। Ethics तथा Politics दोनों रचनाओं में वह प्रायः राजनीतिक दार्शनिक की अपेक्षा समाजशास्त्री की भांति लिखता है। किन्तु सर्वव्यापी न्याय की धारणा में उसका दृढ़ विश्वास है। यद्यपि प्लेटो की भांति वह न्याय को मनुष्य के परे नहीं मानता। न्याय को वह मानव स्वभाव का अंग मानता है। किन्तु साथ ही यह भी मानता है कि यदि मनुष्य पशु नहीं है तो वह देवता भी नहीं है। अतः राज्य में न्याय की स्थापना के लिए किसी मानव प्राणीमात्र को सर्वाधिकार सौंपने में बड़ा खतरा रहता है। इसलिए विधि का शासन अत्यावश्यक है। (Eth v ६, ५) इस प्रकार अरिस्टाटल भी उसी निष्कर्ष पर पहुंचता है जिस पर

Politicus में प्लेटो पहुँचा था। किन्तु इस निष्कर्ष पर पहुँचने में अरिस्टाटल को वह कठिनाई नहीं होती है जो प्लेटो को हुई थी।[1] प्लेटो की भाँति वह भी असाधारण प्रतिभा सम्पन्न व्यक्ति के पक्ष में इस सिद्धान्त में संशोधन करने को तैयार है। किन्तु यह समपता है कि व्यवहार में न्याय को न्यायसंगत विधि द्वारा ही प्रभावपूर्ण बनाया जा सकता है चाहे हम न्याय को पुरस्कार के रूप में दण्ड अथवा दण्ड के रूप में, पदों और अधिकारों के वितरण के रूप में, या आचरण अथवा तोल-नाप सम्बन्धी मानदण्डों को स्थापित करने के रूप में।

किन्तु सर्वव्यापक होते हुए भी न्याय राजनीतिक संगठन का एकमात्र नैतिक आधार नहीं है। मित्रता और सद्भावना का होना आवश्यक है। अरिस्टाटल के पूर्व के कई लेखकों ने यही बात कही थी किन्तु अरिस्टाटल ने इस पर इसलिए जोर दिया कि वह राजनीतिक स्थिरता के साथ नैतिक श्रेष्ठता को भी महत्त्वपूर्ण समझता था। उसके अनुसार राज्य और उसके सदस्यों के बीच एक ऐसे सम्बन्ध की भी कल्पना करना सम्भव था जो सर्वथा न्याय पर आधारित हो और न्यायपूर्ण ढंग से कार्यान्वित की जाय किन्तु सदस्यों के जीवन में किसी भी प्रकार की श्रेष्ठता न आ सके। इस प्रकार के समुदाय को अरिस्टाटल राज्य कहना उचित नहीं समझता। उसके अनुसार राज्य का उद्देश्य केवल यह नहीं है कि नागरिक येन केन प्रकारेण जीवन व्यतीत कर लें अपितु श्रेष्ठ जीवन है ऐसा जीवन जो वास्तव में रहने योग्य हो। आवश्यकताओं की पूर्ति कर देने और कार्यों के अनुकूल उचित वितरण कर देने मात्र से श्रेष्ठ जीवन की व्यवस्था नहीं की जा सकती। इसके लिए आवश्यक है कि सदस्यों में परस्पर एक दूसरे के लिए और सम्पूर्ण समुदाय के लिए मैत्री और प्रेम की भावना हो। मित्रता और प्रेम के अभाव में श्रेष्ठ जीवन सम्भव नहीं हो सकता। साथ ही राज्य में एकता स्थापित करने की दृष्टि से भी मैत्री और प्रेम आवश्यक है। अरिस्टाटेल का विचार था कि एकता के लिए प्लेटो की आकांक्षा सीमा के परे चली गयी थी और उसे प्राप्त करने के लिए उसने जो उपाय बताये थे वे व्यक्तियों के बीच पायी जाने वाली विविधता को समाप्त करने को जोर प्रवृत्त थे। इस विविधता को अरिस्टाटल अच्छे जीवन के लिए अत्यन्त आवश्यक समझता है। (II १२६१ A)।

---

१ F D Wormuth Aristotle on Law (Essays presented to George H Sabine १९४८) में विधि के सम्बन्ध में अरिस्टाटेल के विचारों की जो व्याख्या प्रस्तुत की है वह मुझे तर्कसंगत नहीं प्रतीत होती। उनकी दृष्टि में तो विधि के प्रति अरिस्टाटेल की श्रद्धा प्राय विलीन-सी हो जाती है।

यह एक साधारण और सवमान्य[1] बात थी कि राज्यो का निर्माण वास्तव मे मनुष्यो द्वारा होता है, जल्यानो या गृहो द्वारा नही, किन्तु राज्य क्या है? इस प्रश्न का उत्तर केवल यही कह कर नहीं दिया जा सकता। स्पष्टतया इस प्रश्न के उत्तर मे कुछ और कहना अपेक्षित है। यह तो निश्चित है कि राज्य अपने नागरिको से भिन्न नहीं हो सकता, नागरिक ही राज्य हैं। किन्तु नागरिक किसे कहेंगे? नागरिकता के क्या गुण हैं? राजनीतिक समुदाय की सदस्यता के सम्बन्ध मे यह प्रश्न एक व्यावहारिक संविधान निर्माता के लिए भी उतना ही महत्त्वपूर्ण है जितना आदर्श राज्य की कल्पना मे रत एक बौद्धिक सिद्धान्तवादी के लिए। जन्म, जन्म का स्थान, वश निवास, आयु आदि से सम्बन्धित विचार केवल व्यावहारिक नियमो के निर्धारण मे सहायता दे सकते हैं। इनके आधार पर परिभाषा नही दी जा सकती। प्लेटो ने कहा था कि (*'लाज* VI ७६६ D) सुनिर्धारित न्यायालयो की व्यवस्था किये बिना कोई राज्य राज्य की श्रेणी मे नहीं आ सकता। इस सम्बन्ध मे अरिस्टाटल भी स्पष्टतया लाज का अनुसरण करते हुए नागरिक की परिभाषा इस प्रकार देता है —

नागरिक उसे कहते हैं जो न्यायालयो के निर्णय मे भाग ले सकता है और जिसकी नियुक्ति सार्वजनिक पदो पर हो सकती है। इस परिभाषा को वह दोहरी परिभाषा नहीं मानता क्योकि न्यायालय मे न्यायाधीश अथवा जूरी के रूप मे कार्य करना भी सार्वजनिक पद पर नियुक्त होना है चाहे वह थोडे ही समय के लिए क्यो न हो। वास्तव मे यही इस परिभाषा की कमजोरी है क्योकि यह परिभाषा न होकर वर्णन मात्र रह जाती है। न्यायालयो और सार्वजनिक पदो की रचना के विभिन्न ढग हैं। एक ऐसे राज्य का जहाँ थोडे ही लोगो को नागरिकता प्राप्त है नागरिक होना उस राज्य के नागरिक होने से भिन्न है जहा कि अधिकाश लोगो को नागरिकता मिल जाती है। राज्य संविधान भी है और नागरिक भी। इसके अतिरिक्त इस प्रकार की परिभाषा उस स्थिति के सम्बन्ध मे कुछ प्रकाश नहीं डालती जो राजनीतिक व्यवस्था मे परिवर्तन के परिणाम स्वरूप उत्पन्न हो सकती है। क्या इस परिवर्तन के बाद भी नागरिकता कायम रहेगी? यह एक ऐसा प्रश्न है जिसका व्यावहारिक महत्त्व पहले भी था और आज भी है। एक नवस्थापित शासन को पहले के नागरिको से नागरिकता का अधिकार छीनने अथवा नागरिको की संख्या मे वृद्धि अथवा कमी करने का क्या अधिकार है? जैसा कि अरिस्टाटल ने अनुभव किया यह एक बडे प्रश्न का अग है—क्या पूर्वगामी शासन का संविदा पर आधारित उत्तरदायित्व उसके उत्तराधिकारी

---

१ उदाहरणार्थ Alcaeus, Fr ३५ D, Soph O T ५६–५७, Thuc VII ७७ fin

शासन के लिए भी मान्य होगा। एक मत तो यह हो सकता है कि यह संविदा राज्य की ओर से दी गयी थी और इसलिए नये शासन पर भी यह समान रूप से लागू होगी। दूसरा मत यह हो सकता है कि संविदा शासक अथवा शासन या लोकतन्त्र (या कुलीनतन्त्र) की ओर से हुई थी। इसलिए नया शासन अथवा कुलीनतन्त्र (या लोकतन्त्र) इसे स्वीकार करने के लिए बाध्य नहीं है। इसलिए इस प्रकार के प्रश्न कि किसी कार्य को किस दशा में 'पोलिस' (राज्य) का कार्य समझा जायगा और किस दशा में नहीं? किस दशा में हम यह कह सकते हैं कि एक राज्य बदल गया है और पहले वाला राज्य नहीं रहा है? समस्या के रूप में ही रह जाते हैं, और इनका उचित उत्तर नहीं मिल पाता। बस अरिस्टाटल का यह मत प्रतीत होता है कि संविधान में परिवर्तन हो जाने के फलस्वरूप राज्य के चरित्र में भी परिवर्तन हो जाता है, उसके स्वरूप में परिवर्तन हो जाता है और वह पहले का राज्य नहीं रह जाता, उसी प्रकार जैसे एक दुःख-प्रधान समूह गान सुखप्रधान समूह गान से भिन्न होता है यद्यपि गाने वाले व्यक्ति वही रहते हैं।

राजनीतिक समुदाय के सदस्यों के गुणों पर विचार करते समय अरिस्टाटल ने एक ऐसा प्रश्न उठाया है जिसका महत्त्व पहले की अपेक्षा आज भी इस बीसवीं शताब्दी में अधिक स्पष्ट हो गया है। जब हम यह प्रश्न करते हैं कि क्या एक अच्छे सदस्य (नागरिक) की श्रेष्ठता और एक अच्छे मनुष्य की श्रेष्ठता एक ही वस्तु है और इन दोनों श्रेष्ठताओं में कोई अन्तर नहीं है? तो हम एक ऐसे आधारभूत प्रश्न पर विचार करने लग जाते हैं जिसका सम्बन्ध नीति-शास्त्र और राजनीति के सम्बन्ध से है। अरिस्टाटल इससे भली भाँति अवगत था। इस प्रश्न के सम्बन्ध में अपनी शंका वह 'Ethics' में व्यक्त कर चुका था (V २ ११)। उसने लिखा था, कि "सम्भवतः एक अच्छा व्यक्ति होना और एक अच्छा नागरिक होना सदैव एक ही बात नहीं।" सर्वप्रथम तो यह देखना चाहिए कि नागरिकोचित श्रेष्ठता किसे कहेंगे? अच्छे नागरिक की अच्छाई किस बात पर निर्भर करेगी? नागरिक के रूप में एक व्यक्ति के वही गुण श्रेष्ठ माने जायँगे जो राज्य के लिए श्रेष्ठ हैं अर्थात् जो राज्य के हित का सम्वर्द्धन करते हैं। किन्तु राज्य के संविधान और स्वभाव के अनुसार ये गुण भी भिन्न होंगे। इसके विपरीत अच्छे व्यक्ति की श्रेष्ठता को इस प्रकार सापेक्ष नहीं बनाया जा सकता। यह श्रेष्ठता निरपेक्ष होती है और प्रत्येक व्यक्ति में समान रूप से वाञ्छनीय होती है। इसके अतिरिक्त एक नागरिक से यह आशा की जाती है कि राज्य की सेवा में अपना योग देने के लिए वह किसी विशिष्ट क्षेत्र में श्रेष्ठ होगा। सभी नागरिक सभी कार्य नहीं कर सकते। इस प्रकार सभी नागरिकों की श्रेष्ठता एक-सी न होगी, सभी में एक ही प्रकार के गुण नहीं होंगे। किन्तु जहाँ तक अच्छे व्यक्ति के गुणों या श्रेष्ठता का प्रश्न है, वह

सभी में समान रूप से होना चाहिए। इसका तात्पर्य यह नहीं कि नागरिक की श्रेष्ठता की हेय समझा जाय, उसकी उपेक्षा की जाय। अच्छे नागरिक के अभाव में अच्छा राज्य सम्भव नहीं हो सकता। इसी प्रकार अच्छे शासक की श्रेष्ठता और अच्छे व्यक्ति अथवा नागरिक की श्रेष्ठता के सम्बन्ध का प्रश्न है। यद्यपि राज्य की सदस्यता के विषय में इसका सम्बन्ध अप्रत्यक्ष ही है। एक अच्छा व्यक्ति ही अच्छा शासक हो सकता है किन्तु अच्छा शासक होने के लिए केवल इतना ही पर्याप्त नहीं है। अच्छा शासक होने के लिए शासन की कला में निपुण होना भी आवश्यक है। शासित होने की तुलना में शासन करने में अधिक बुद्धि की आवश्यकता पड़ती है। न्याय और संयम तो दोनों के लिए आवश्यक है किन्तु दोनों के प्रसंग में इनके अर्थ में अन्तर हो जाता है। इस प्रकार के अन्तर से अरिस्टाटल सन्तुष्ट नहीं है किन्तु इस प्रश्न पर उसकी जो टिप्पणी उपलब्ध है वह न तो पूर्ण है और न व्यवस्थित ही। फिर भी ऐसा प्रतीत होता है कि वह इस निष्कर्ष पर पहुँचा था कि यदि कुछ आवश्यक शर्तों की पूर्ति हो जाय तो अच्छे शासक, अच्छे व्यक्ति और अच्छे नागरिक की श्रेष्ठता में कोई अन्तर न होगा। ये शर्तें इस प्रकार हैं —

(१)—राज्य स्वयं अच्छा है और इसका शासन सर्वश्रेष्ठ व्यक्तियों के हाथ में है।

(२)—शासक को एकाधिकार नहीं प्राप्त है, वह नागरिकों पर शासन करता है और स्वयं अपने को उनमें से एक समझता है।

(३)—शासक ने आज्ञा देने तथा आज्ञा का पालन करने दोनों की शिक्षा ग्रहण की है।

(४)—सभी नागरिक अच्छे नागरिक हैं।

अरिस्टाटल यह नहीं कहता है कि सभी नागरिक अच्छे व्यक्ति भी होंगे। किन्तु इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि राजनीतिक शिक्षा का उद्देश्य अच्छा नागरिक तैयार करना होना चाहिए अच्छा शासक नहीं। राजवंश के युवकों की शिक्षा के सम्बन्ध में रूसो के इस कथन को अरिस्टाटल निश्चित रूप में पसन्द करता है—

Il ne paraît pas que cette education leur profite, on ferait mieux de commencer par leur enseigner d'obeir [१]

जैसा कि हम देख चुके हैं शासन करने के लिए उचित शिक्षा के सम्बन्ध में प्लेटो का दृष्टिकोण अस्थिर रहा है। अन्य विषयों की भाँति शिक्षा के प्रश्न पर भी अरिस्टाटल के विचार प्लेटो के 'लाज' के विचारों के निकट हैं। प्लेटो के इस मत से वह सहमत है कि अच्छे नागरिक की विशेषता यह है कि वह शासन करने तथा शासित होने, आज्ञा देने

---

१ Contract Social, ii ६

तथा आज्ञा का पालन करने की योग्यता रखता है।[1] इस प्रकार की शिक्षा की व्यावहारिक मान्यता का उदाहरण 'थिसेली' के 'जसन' (Thessalian Jason of Pherae) की कहानी में मिलता है। चौथी शताब्दी ई० पू० का यह राजकुमार स्पष्ट शब्दों में कहता है कि चूंकि वह केवल शासन करना ही जानता है, इसलिए यदि यह काम उससे छीन लिया गया तो वह भूखा मर जायगा।[2] शासक के गुणों और इसके साथ प्लेटो के विचारों का जो समीक्षा अरिस्टाटल प्रस्तुत करता है यह राजनीतिक समुदाय की सदस्यता के प्रश्न पर भी कुछ प्रकाश डालती है। यदि अच्छे नागरिक का यह लक्षण है कि वह शासन करने और शासित होने, आज्ञा देने और आज्ञा का पालन करने की योग्यता रखता है, तो यह निर्धारित करना कठिन नहीं है कि समुदाय की सदस्यता का क्या मापदण्ड होगा। अब यदि हम इन सभी विवेचनाओं पर समग्र रूप से विचार करें तो यह स्पष्ट हो जाता है कि अरिस्टाटेल के अनुसार शासक और शासित का सम्बन्ध स्वामी और दास का सम्बन्ध नहीं है। यह स्वतन्त्र व्यक्तियों का सम्बन्ध है, उन व्यक्तियों का सम्बन्ध है जो शासक के पद पर भी आसीन हो सकते हैं और राजसत्ता के आज्ञापालक भी हो सकते हैं, उन व्यक्तियों का सम्बन्ध है जो स्वतन्त्र और बुद्धिमान् हैं और, प्लेटो की भाषा में, आपस में मित्रता के भाव से युक्त हैं। किन्तु स्वतन्त्र होते हुए भी कुछ लोग जीविकोपार्जन में इतना व्यस्त होते हैं कि सार्वजनिक पदों पर कार्य करने के लिए न तो उनके पास समय है और न योग्यता ही। ऐसे लोग नागरिकता की परिभाषा के आधार पर ही (पृष्ठ २१०) नागरिकता से च्युत हो जाते हैं। किन्तु अरिस्टाटल नागरिकता की अपनी परिभाषा को जिसके अनुसार नागरिकता सार्वजनिक पदों पर कार्य करने पर निर्भर करती है, नहीं छोड़ता है। इस परिभाषा को उलट देना सुगम था क्योंकि साधारणतया नागरिकों को ही सार्वजनिक पदों पर नियुक्त किया जाता था। किन्तु ऐसा करने में तो वह नागरिकता की परिभाषा देने से वञ्चित रह जाता। उसका विश्वास है कि 'नागरिक' की परिभाषा देना सम्भव है और यह कहना मूर्खतापूर्ण है कि किसी भी व्यक्ति को नागरिक की संज्ञा देकर नागरिक बनाया जा सकता है।[3] यदि नागरिक की श्रेष्ठता अथवा नागरिक के गुण नाम की कोई वस्तु है तो केवल वही लोग नागरिक हो सकते हैं जिन्होंने इस गुण को अर्जित

१ Plato, Laws ६४३ E, ९४२ C, etc

२ *Politics* III १२७७ a २४

३ क्या कुछ निश्चित कर्त्तव्यों का पालन न करने पर नागरिकता से च्युत करने की प्रथा का (जिसका उल्लेख उसने किया है, Ath Pol LIII, ५) वह विरोध करता था? Andocides, de Myst ७३ ff से तुलना कीजिए।

किया है। केवल व्यापार और तुच्छ कार्यों में लगे हुए व्यक्तियों के लिए इसका अर्जन करना सम्भव नहीं है। ऐसे व्यक्ति जितना ही अधिक परिश्रम करते हैं उतना ही श्रेष्ठ नागरिक होने तथा शासक और शासित दोनों के कर्त्तव्यों का पालन करने में असमर्थ होते जाते हैं। इसमें सन्देह नहीं कि ये उपयोगी और लाभप्रद कार्य करते हैं और राज्य को ऐसे व्यक्तियों की भी आवश्यकता होती है। ये धनी भी हो सकते हैं और पर्याप्त धन[1] भी अर्जित कर सकते हैं। किन्तु ऐसे सभी व्यक्ति चाहे वे अमीर हों अथवा गरीब, चतुर हों अथवा मूर्ख, जो निरन्तर किसी वृत्ति का अनुसरण करने में लगे रहते हैं और उससे धन अर्जित करते हैं केवल परजीवी हो सकते हैं और इसलिए नागरिक नहीं हो सकते। अपने इस सिद्धान्त को त्याग करने के लिए अरिस्टाटल कदापि तैयार नहीं है। इसकी अपेक्षा वह एक ऐसी स्थिति स्वीकार करने के लिए तैयार है जिसमें राज्य के वयस्क पुरुषों में से अधिकांश लोग नागरिकता के अधिकारों से वञ्चित रह जाते हैं। वह इस बात को जानता है (१२७८ A ७-८०) कि नागरिकता को इस प्रकार से संकुचित करने के प्रस्ताव को सामान्य स्वीकृति नहीं मिल सकती। फिर भी नगर राज्यों के छोटे आकार के फलस्वरूप राज्य के सभी निवासियों को राज्य के जीवन में सक्रिय भाग लेने का जो अवसर उपलब्ध हो सकता था उससे कोई लाभ न उठाकर वह नागरिकता के लिए वैयक्तिक श्रेष्ठता के अपने उच्च स्तर पर ही दृढ़ रहता है। अपने इस सिद्धान्त के लिए, जिसका औचित्य सन्देह के परे नहीं है, अरिस्टाटल नगर राज्यों की मुख्य विशेषता अर्थात् छोटा आकार और सभी को राज्य के जीवन में सक्रिय भाग लेने के अवसर की तिलांजलि देने के लिए तैयार है। अरिस्टाटल के बहुत समय पहले ही एक, कुछ अथवा बहुत लोगों के हाथ में राज्य की सत्ता होने के आधार पर संविधान को तीन प्रकारों में विभक्त करने की प्रथा प्रचलित हो चुकी थी और प्रत्येक प्रकार के अन्तर्गत अच्छे और बुरे संविधान की कल्पना की जाने लगी थी। सम्भवतः संविधान के विभिन्न प्रकारों को अच्छे और बुरे की श्रेणी में रखने का आधार यह था कि शासन शासितों की सम्मति पर आधारित है अथवा नहीं। जिस संविधान के अन्तर्गत शासन शासितों की सम्मति पर आधारित होता है उसे अच्छा संविधान माना जाता था। इसके विपरीत जिस संविधान के अन्तर्गत शासन बल पर आधारित होता था वह बुरे संविधान की श्रेणी में आता था। अच्छे संविधान की एक दूसरी विशेषता यह भी मानी जाती थी कि इसमें शासन विधि पर आधारित होता था (अध्याय ९ देखिए)। अरिस्टाटल ने अच्छे संविधान की पहचान के लिए एक तीसरी कसौटी का प्रयोग किया

---

१ तात्पर्य यह है कि इस प्रकार धन अर्जित करके ऐसे व्यक्ति सम्पत्ति की योग्यता की शर्त को पूरा कर सकते हैं और नागरिकता के अधिकारी बन सकते हैं।

कुछ मात्रा में शामिल रहता है। राज तन्त्र का एक पांचवा प्रकार भी हो सकता है जो निर्वाचन विधि अथवा संविधान के बंधन से पूर्णतया मुक्त होता है। यह निरंकुश वैयक्तिक शासन होगा जिसका अवसर प्राप्त करने के लिए प्लेटो का उत्कट अभिलाषा था। यह ऐसा संभावित शासन है जिस पर विचार करना उचित होगा यद्यपि व्यवहार में हम यही देखते हैं कि सभी प्रकार के शासन को विधि पर ही आधारित होना पड़ता है। अतः अरिस्टटल विधि और राज्य के पारस्परिक सम्बन्धों पर विचार करने के पश्चात तथा विधि के शासन की निष्पक्षता और श्रेष्ठता सिद्ध करने के बाद पुनः एकाधिकारी शासक के विषय पर लौटता है और इस सम्भावना पर विचार करता है कि क्या वास्तव में कुछ लोगों के लिए एकाधिकारी शासन सर्वश्रेष्ठ हो सकता है? किन्तु ऐसे व्यक्ति जो अपने वैयक्तिक स्वार्थों को छोड़ कर सामान्य जनता के कल्याणार्थ शासन करेंगे मुश्किल से मिलते हैं। जैसा कि प्लेटो ने प्रायः कहा है[1] इस प्रकार के व्यक्ति मनुष्यों में देवता तुल्य होंगे और वे विधि के ऊपर होंगे। जिस प्रकार अच्छे कुल में उत्पन्न व्यक्ति को शिष्टता सिखाने की आवश्यकता नहीं होती उसी प्रकार इन व्यक्तियों के लिए विधि के बन्धन की आवश्यकता न होगी। वे विधि से परे हैं स्वयं विधि हैं।[2]

परन्तु नगर राज्य में संविधान के जो स्वरूप वास्तव में प्रचलित थे वे अल्पसंख्यकों अथवा बहुसंख्यकों द्वारा संचालित शासन अल्पतन्त्र और लोकतन्त्र। संख्या और अमीर गरीब के अंतर के अतिरिक्त भी इन दोनों का न्याय की धारणा और उचित और अनुचित के विचारों में भी अंतर था। अधिकारों, विशेषाधिकारों

---

१ Politicus ३०३ B, Laws ix ८७५ C Aristotle, Politics iii १२८४ a।

२ Ethics iv ८, १० इस जटिल प्रश्न पर कि क्या अरिस्टाटल वास्तव में यह समझता था कि राज तन्त्र की व्यावहारिक संभावना है V Ehrenberg Alexander and the Greeks (१९३८), pp ७१–८५ देखिए। यह स्पष्ट है कि आदि से अन्त तक अरिस्टाटल ने केवल संख्या के आधार पर संविधान का वर्गीकरण करने की प्रथा का विरोध किया है। उसकी दृष्टि में अल्पतन्त्र वास्तव में अल्पवर्ग का शासन न होकर सम्पत्तिशाली वर्ग का शासन है। इसी प्रकार वास्तविक राज-तन्त्र की मुख्य विशेषता यह नहीं है कि एक व्यक्ति द्वारा शासन संचालन होता है, अपितु यह है कि शासन का संचालन करने वाला एक व्यक्ति वास्तव में श्रेष्ठ है। इस प्रकार सिद्धान्ततः शासन का यह प्रकार कुलीनतन्त्र के ही समान है। इससे प्लेटो भी सहमत होता। तुलना कीजिए। Pol iii १२८४ और Plato Repub ५४० D तथा अध्याय ८ देखिए।

और सुविधाओं का विभाजन यूनानी के लिए महत्त्व का विषय था। लोकतन्त्र में आस्था रखने वालों का कहना था कि चूंकि सभी समान रूप से स्वतन्त्र हैं इसलिए सभी को समानाधिकार प्राप्त होने चाहिए। इसके विपरीत अल्पतन्त्र में आस्था रखने वालों के अनुसार सम्पत्ति का स्वामित्व विशेषाधिकार प्रदान करता था। एक तीसरे सिद्धान्त के अनुसार जो कुलीन-तन्त्र के शाब्दिक अर्थ का अनुसरण करता था केवल योग्यता के आधार पर ही विशेषाधिकार प्रदान किया जा सकता था। अरिस्टाटल इसी सिद्धान्त का अनुगामी था। परन्तु योग्यता कहते किसे हैं? इस प्रश्न के उत्तर में अरिस्टाटेल का यह कहना है कि अधिकारों और विशेषाधिकारों का वितरण सार्वजनिक कल्याण के लिए किये गये कार्यों अर्थात् अच्छा जीवन संभव बनाने की दिशा में किये गये प्रयत्नों के अनुपात में होना चाहिए। अच्छे जीवन को ही अरिस्टाटल राज्य का उद्देश्य मानता था। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए जो व्यक्ति अधिक-से अधिक योग देता है उसे अधिक-से अधिक अधिकार भी प्राप्त होना चाहिए। किन्तु यहाँ ध्यान रखना चाहिए कि राज्य न तो एक व्यावसायिक कम्पनी है और न ही सुरक्षा हेतु किया गया पारस्परिक समझौता। यह एक ऐसा समुदाय है जिसका नैतिक उद्देश्य भी है, इसलिए राज्य के प्रति व्यक्तियों की सेवा का मूल्यांकन सम्पत्ति अथवा शस्त्रों के आधार पर नहीं किया जा सकता है। व्यवसायियों की कम्पनियों में साझीदारों को लाभ का अंश मिलना आवश्यक होता है। और सुरक्षा के लिए किये गये समझौते के अनुसार सुरक्षा की व्यवस्था करनी ही पड़ती है। दोनों दशाओं में यह विचार करना आवश्यक नहीं समझा जाता कि जिन्हें लाभांश अथवा सुरक्षा प्रदान की जा रही है वे किस प्रकार के व्यक्ति हैं। हाँ, यह आवश्यक है कि समझौते की शर्तों का उल्लंघन वे न करें। किन्तु राज्य का नैतिक उद्देश्य समझौते की शर्तों का पालन कराने मात्र तक ही सीमित नहीं है और 'यदि हम वास्तव में अच्छा शासन स्थापित करना चाहते हैं तो हम राज्य की अच्छाइयों और दोषों की ओर भी ध्यान देना पड़ेगा (१२८० b ६)। अतएव ऐसे नागरिक जो अपनी नैतिक श्रेष्ठता और श्रेष्ठ योग्यता द्वारा अपने देश को अच्छा जीवन व्यतीत करने योग्य बनाने में सर्वाधिक योग देते हैं अन्य देशवासियों की अपेक्षा सार्वजनिक पद और सम्मान के विशेष पात्र हैं। लोकतन्त्रवादियों के निरपेक्ष समानता के सिद्धान्त से अरिस्टाटल की यह स्थापना भिन्न है।[1] किन्तु समानता का सिद्धान्त इसमें भी निहित है और यह

---

१ विविधता, सुख और अराजकता के साथ निरपेक्ष समानता का प्लेटो ने भी उग्र लोक तन्त्र के लक्षण के रूप में उल्लेख किया है (Republic viii ५५८ C)। Aristotle के अनुसार (Politics iii १२८०) के विपरीत यह है। इस प्रकार Laws vi ७५७ में प्लेटो का भी विचार है।

समानुपातिक समानता का सिद्धान्त है जिसके अनुसार आवश्यक पद और सम्मान का वितरण योग्यता के आधार पर किया जाता है। इसी प्रकार की समानता को अरिस्टाटल अच्छे जीवन के लिए आवश्यक और न्यायसंगत मानता है। यही नहीं उसका कथन है कि अपराधियों को दण्ड देने तथा पीड़ितों की क्षतिपूर्ति करने से भी न्याय प्रकट होना चाहिए। जिस प्रकार मैत्री के अभाव में जीवन असम्भव हो जाता है उसी प्रकार वध सविवाओं तथा शिकायतों के यथायोग्य निवारण के अभाव में अच्छा जीवन असम्भव हो जाता है।

चूंकि न्याय तथा अच्छे जीवन के लिए आवश्यक अन्य सुविधाओं की व्यवस्था संविधान पर ही निर्भर करती है जो एक प्रकार से राज्य का जीवन है इसलिए यह निर्णय करना अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हो जाता है कि सर्वोच्च सत्ता किसके हाथ में है अथवा किनके हाथ में होनी चाहिए क्योंकि जनसाधारण के जीवन को बनाने अथवा बिगाड़ने का अधिकार भी उन्हीं लोगों के हाथ में होगा जिनके हाथ में राज्य की सर्वोच्च सत्ता होगी। प्रचलित अर्थ में वर्ग का जो अर्थ किया जाता है उस प्रकार के एक अथवा कुछ वर्गों के हाथ में राज्य की सर्वोच्च सत्ता सौंप देने के विरुद्ध कई आपत्तियाँ हैं। यद्यपि यह पूर्णतया सत्य है कि विधि की सत्ता ही सर्वोच्च है तथापि केवल इतना कह देने से इन आपत्तियों का समाधान नहीं होता क्योंकि यह सम्भावना सदैव बनी रहती है कि लिखित विधि किसी एक वर्ग के हितों की ओर विशेष ध्यान दे और इस प्रकार राज्य की एकता और सम्मान्यता से वंचित रहे। अच्छे जीवन के लिए यह सम्भावना अनिवार्यतः आवश्यक है। सामान्य रूप से अरिस्टाटल यह सत्ता थोड़े व्यक्तियों के समुदाय की अपेक्षा बड़े समुदाय में सौंपने के पक्ष में है, क्योंकि यद्यपि व्यक्तिगत रूप से बहुसंख्यकों में से कोई भी व्यक्ति सम्भव है अच्छा न हो तथापि यह सम्भव हो सकता है कि एकत्रित होकर वे सामूहिक रूप से दूसरों से श्रेष्ठ हो सकें। सामूहिक बुद्धिमत्ता के इस दृष्टिकोण का प्लेटो ने तीव्र विरोध किया था। सम्भवतः जनमत का जो आदर अरिस्टाटल करता है वह प्लेटो की समझ में न आता कलात्मक अभिरुचि और साहित्यिक के क्षेत्र[1] में तो विशेष रूप से। किन्तु सामूहिक बुद्धिमत्ता दक्षता का स्थान नहीं ले सकती। यह तो व्यक्तिगत रूप से ही प्राप्त की जा सकती है। अतः अच्छाई में ऊँचे व्यक्ति ही समुदाय के लिए उन सेवाओं का प्रबन्ध कर सकते हैं जिनके आधार पर समाज में पुरस्कारों और विशेषाधिकारों का वितरण किया जाता है। पद और सम्मान भी इसके अन्तर्गत आ सकते हैं। क्योंकि ये भी उपयोगी हो सकते हैं और समाजों का

१ १२८१ b से Plato Laws ६७० B और ७०० E की तुलना कीजिए।

ध्यान में रखते हुए यह भी सम्भव है कि समाज-सेवा के विभिन्न कार्यों का मूल्यांकन भी किया जा सकता है। किन्तु जैसा कि यूनानी नगर राज्यों में भली भांति विदित था, जब एक या दो व्यक्ति सम्पत्ति, योग्यता और अन्य बातों में अपने सहनागरिकों से बहुत आगे बढ़ जाते हैं तो एक गम्भीर राजनीतिक समस्या उत्पन्न होने की सम्भावना उपस्थित हो जाती है। अधिकांश यूनानी नगर राज्यों में जहाँ शासन का रूप 'विकृत' होता था अथवा शासन का संचालन प्रत्येक वर्ग के हित में न होकर केवल शासक वर्ग के हित में होता था यह नियम सा बन गया था कि इस प्रकार की विशिष्ट प्रतिभा और योग्यता से युक्त व्यक्ति को भावी संकट का कारण मान कर उससे छुटकारा पाने का प्रयत्न किया जाय। इस प्रथा से हेराक्लाइटिस क्षुब्ध हो गया था यद्यपि प्लेटो ने इसका समर्थन किया (Fr १०)। इस प्रकार से राज्य को योग्य व्यक्तियों की सेवा से वञ्चित करने की यह प्रथा अरिस्टाटल को भी पसन्द न थी किन्तु इतिहास ने यह स्पष्ट कर दिया कि शासन के तीनों विकृत रूपों में अर्थात निरंकुशता, अल्पतन्त्र, और जनतन्त्र में यह प्रथा उपयोगी सिद्ध हुई। *किसी भी व्यक्ति को राजनीतिक जीवन से निष्कासित* करने की परम्परा किसी विशिष्ट प्रकार के संविधान के संदर्भ में ही उचित कही जा सकती है। एक अच्छे संविधान वाले राज्य में भी कभी-कभी समस्त समुदाय के हित में विशेष प्रतिभा सम्पन्न व्यक्तियों के साथ इस प्रकार का व्यवहार वांछनीय हो सकता है। किन्तु अच्छा तो यही होगा कि संविधान की रचना इस प्रकार की जाय कि उसमें अवसर उत्पन्न ही न हो। कुछ विशिष्ट परिस्थितियों में जहाँ असाधारण प्रभाव वाले व्यक्तियों की शक्ति का आधार सम्पत्ति अथवा शारीरिक बल न होकर नैतिक और बौद्धिक श्रेष्ठता होता है और जिस संविधान के अंतर्गत वे रहते हैं, वह इतने प्रकार का सबसे श्रेष्ठ संविधान है ऐसे व्यवहार का प्रश्न ही नहीं उठता। वास्तव में इस प्रकार की असाधारण प्रतिभा सम्पन्न व्यक्ति की श्रेष्ठता उसे शासन करने का अधिकार प्रदान करती है। किन्तु यह आशा करना व्यर्थ होगा कि शिक्षा-दीक्षा मात्र से ही इस प्रकार के व्यक्ति तैयार किये जा सकते हैं। 'राजमीमांसा' (देखिए अध्याय ९) की खोज करना मृगतृष्णा की भांति है।

यह स्पष्ट हो जाता है कि तीन अथवा छः प्रकारों में संविधानों का वर्गीकरण करना कोई व्यावहारिक उपयोगिता नहीं रखता। इस प्रकार का वर्गीकरण प्राचीन एवं अर्वाचीन संविधानों की कार्यविधि के निरीक्षण के आधार पर नहीं किया जाता और मुख्यतः संख्या के सिद्धान्त पर ही निर्भर करता है। उदाहरणार्थ—इन सभी राजनीतिक समुदायों को जनतन्त्र का नाम दे दिया जाता है जो राजनीतिक स्वतन्त्रता और बहु-संख्यकों के शासन पर आधारित होते हैं। मोटे तौर पर इसी आधार पर ही इस प्रकार के संविधानों को जनतन्त्र सर्वथा उपयुक्त समझा जाता है। किन्तु संविधान के और भी स्वरूप

पर खींची जा सकती है तथा जनता की शक्ति सम्पत्तिशाली व्यक्तियों एवं श्रेष्ठ व्यक्तियों की संयुक्त शक्ति से अधिक हो जाती है (१३१९ b १४) इस दशा में एक ओर लोक तन्त्र है तो दूसरी ओर अल्पतन्त्र। इस प्रकार नामकरण का महत्त्व नष्ट हो जाता है। किसी संविधान को अल्प तन्त्र अथवा लोक तन्त्र का नाम दिया जा सकता है किन्तु उसकी कार्य प्रणाली दूसरी दिशा में जा सकती है। लोक तन्त्रात्मक शासन का संचालन सम्पत्तिशाली वर्ग के हित में हो सकता है। एक ऐसा अल्पतन्त्र जिसमें सम्पत्ति की योग्यता का स्तर बहुत ऊँचा नहीं रखा जाता और जिसमें उन सभी व्यक्तियों को जो यह न्यूनतम सम्पत्ति अर्जित कर लेते हैं पूरा अधिकार प्राप्त हो जाता है नागरिकों के आर्थिक स्तर में समान वृद्धि होने से शीघ्र ही लोक तन्त्र में परिवर्तित हो सकता है। इसी प्रकार यदि राज्य के अधिकांश लोग श्रेष्ठ हैं और लोक तन्त्र में श्रेष्ठता — भावना विद्यमान है तो कुलीन कहलाने का अधिकार भी कुछ ही व्यक्तियों तक सीमित नहीं रहना चाहिए।

इस प्रकार संविधान के केवल तीन ही प्रकार न होकर अनेकानेक प्रकार हैं जो परस्पर एक दूसरे का रंग पकड़ते रहते हैं। किसी संविधान के न्याय व्यवस्था लोकतन्त्रात्मक हो सकती है किन्तु पदाधिकारियों की नियुक्ति की प्रणाली अल्प-तन्त्रात्मक हो सकती है क्योंकि इसमें लाटरी की अपेक्षा निर्वाचन की प्रथा को प्रश्रय दिया जाता है, दूसरे संविधान में निर्धन न्यायाधीशों को वेतन देने तथा धनवान न्यायाधीशों को न्यायालय में अनुपस्थिति के लिए आर्थिक दण्ड का प्राविधान किया जा सकता है। विशेष परिस्थिति में अपेक्षाकृत अधिक अल्प तन्त्रात्मक संविधान उपयुक्त हो सकता है। दूसरी परिस्थिति में लोक तन्त्रात्मक संविधान श्रेष्ठ हो सकता है। किन्तु अधिकांश राज्यों में सुसन्तुलित एवं सर्वश्रेष्ठ संविधान वह होगा जो अल्प तन्त्र और लोक तन्त्र दोनों के मध्य है क्योंकि जब जब ये दोनों रूप परस्पर समीप आते जाते हैं अपनी अपूर्णता भी छोड़ते जाते हैं। सामान्यतया उनका मध्यम रूप ही सबसे अच्छा होगा क्योंकि दोनों छोर के मध्य का बिन्दु ही सबसे अच्छा होता है।[1] इसी मध्यम मार्ग संविधान (Polity) होगा जिसे अरिस्टाटल वैधानिक संविधान कहता है। यह एक ऐसा अल्प तन्त्र होगा जिसमें सम्पत्ति की योग्यता न तो बहुत ऊँचा होगी और न तो बहुत नीचा। यह लोकतन्त्रात्मक होगा क्योंकि बहुसंख्यकों के निर्णय को मान्यता प्राप्त होगी। साथ ही

---

१ यहाँ अरिस्टाटल अपने उसी नैतिक सिद्धान्त का अनुसरण कर रहा है जिसके अनुसार उसने नैतिकता को मध्यम बताया था उदाहरणार्थ कापुरुषत्व और दुःसाहस का मध्यम साहस है। इस मान्यता के अन्तर्गत न्याय का स्थान देने में उसे कुछ कठिनाई हुई Eth ii ६ और Eth v ५, १७ की तुलना कीजिए।

यह कुलीनतन्त्रात्मक[1] भी होगा क्योंकि कुलीनतन्त्र का सार यह है कि 'राजकीय पदों का वितरण श्रेष्ठता के आधार पर हो (१२९४ a १०)। और इसी सिद्धांत को अरिस्टाटल बहुमतवाद के सिद्धान्त में समाविष्ट करना चाहता है। उचित वितरण 'यूनामिया' का अभिन्न भाग है और सभी अच्छे समुदायों का उत्तम निर्दिष्ट विधि व्यवस्था का अनुसरण करना 'यूनामिया'[2] नहीं है। कुलीनतन्त्र तथा बहुमतवाद के मिश्रण की प्रधानता के इस समाधान में समाज में श्रेष्ठ जीवन को प्रोत्साहन दिया जा सकता। 'क्योंकि यदि Ethics' में दिया गया हमारा यह कथन कि सुखी जीवन अवरोधहीनता से पूर्ण सद्गुण का जीवन है और सद्गुण स्वयं दो छोरों के मध्य स्थित है तो मध्यम वर्ग का अनुसरण करने वाला जीवन ही श्रेष्ठतम जीवन होगा, जीवन की इस पद्धति का अनुसरण राज्य के सभी वर्गों द्वारा किया जा सकता है। (१२९५ a ३६) मध्यम मार्ग का यह जीवन साधारणतया मध्यम वर्गीय जीवन से परिचित किया जाता है अर्थात् उन लोगों के जीवन से जो न तो बहुत अमीर हैं और न बहुत गरीब। अरिस्टाटल का कहना है कि अधिक सम्पत्ति वाले अशिष्ट और अव्यवस्थित हो जाते हैं। सम्पत्ति से सर्वथा वंचित लोगों के आचरण में कटुता आ जाती है और उनकी प्रवृत्ति अपराधों की ओर हो जाती है। किन्तु साधारण जीवन और सम्पत्ति वाले व्यक्ति न तो अपने सम्पत्तिशाली पड़ोसियों की सम्पत्ति हड़पने की आकांक्षा रखते हैं और न वे स्वयं निर्धनों की ईर्ष्या के भाजन होते हैं। सम्पत्तिशालियों और निर्धनों का सम्बन्ध सहज ही स्वामी और दास के सम्बन्ध में परिवर्तित हो जाता है और यह सिद्ध किया जा चुका है कि यह कोई वांछनीय सम्बन्ध नहीं है। ऐसी स्थिति में मैत्री की सम्भावना नहीं रहती और राजनीतिक समुदाय के लिए मैत्री आवश्यक है। केवल मध्यम वर्ग के लोग ही आदेश देना तथा एक स्वतन्त्र व्यक्ति की भाँति आदेशों का पालन करना जानते हैं। अतः अच्छे शासन की सबसे अधिक सम्भावना उन्हीं राज्यों में रहती है जहाँ मध्यम वर्गीय लोग पर्याप्त संख्या में हों। यदि सम्भव हो सके तो मध्यम वर्ग के सदस्यों की संख्या अन्य दोनों वर्गों (सम्पत्तिशाली और निर्धन) की सम्मिलित संख्या से अधिक होनी चाहिए और यदि यह सम्भव नहीं है तो इन दोनों वर्गों की पृथक् पृथक् संख्या से तो अधिक होनी ही चाहिए। मध्यम वर्ग की बहुलता राज्य को दृढ़ एवं स्थायी रखने में सहायक होती है और विरोधी पक्षों की उग्रता को नियन्त्रण में रखने में प्रभावकारी होती है (१२९५b)।

---

१ एरिस्टोक्रेटिया शब्द का प्रयोग करने में अरिस्टाटल विशेष सावधानी नहीं रखता है। श्रेष्ठता पर आधारित किसी भी संविधान को वह aristocracy (कुलीन-तन्त्र) मानने के लिए तैयार है।

२ अध्याय दो के अन्त में दी गयी टिप्पणी देखिए।

मध्यम भाग पर आधारित इन संविधान को अरिस्टाटल एक सच्चा राजतन्त्र मानता है क्योंकि इसके अन्तर्गत सभी श्रेष्ठ तत्वों का समावेश रहता है और श्रेष्ठता के लिए पर्याप्त अवसर उपलब्ध रहता है। यूनानी राजनीतिक विचारधारा में सामाजिक एवं राजनीतिक पक्षों के सम्मिश्रण का यह एक अच्छा उदाहरण है। अरिस्टाटल यह तो नहीं कहता और न उसका आशय ही है कि इस संतुलित राजनीतिक संविधान के सृजनमात्र से मध्यम वर्ग का उदय हो जायगा। यद्यपि सम्भावना तो इस बात की है कि प्रभावशाली मध्यम वर्ग के उदय के फलस्वरूप इस प्रकार के संतुलित संविधान की स्थापना सम्भव हो सकेगी। किन्तु अरिस्टाटल इन दोनों को पृथक नहीं देखता है। और न इन्हें एक दूसरे का पूर्वगामी ही मानता है। उसके अनुसार तो दोनों अभिन्न हैं और पृथक् नहीं किये जा सकते। तथापि अपने मत की पुष्टि के लिए वह मध्यम वर्ग के परम्परागत संयम और संरक्षणशीलता का उपयोग करता है। मध्यम वर्ग से सम्बन्धित इस परम्परा को पर्याप्त मान्यता मिल चुकी थी किन्तु यह मान्यता अधिकांशतया साहित्यिक क्षेत्र में ही थी। टलफी के आरकिल ने यह उपदेश दिया था कि किसी भी क्षेत्र में अतिशयता नहीं होनी चाहिए। किन्तु यूनानी राजनीतिज्ञों का सदैव यही नारा था कि किसी भी काम की अति मत करो। अरिस्टाटल फासिलाइडीज (Phocylides) का कथन उद्धृत करता है—'घटनाचक्र अधिकांशतया मध्यम वर्ग के हित में ही घूमता है इसलिए मैं भी यही आकांक्षा करता हूँ कि अपने राज्य में मैं भी इसी वर्ग में स्थान मिले।' यहाँ एक कवि ने अपने हित के सम्बन्ध में अपना दृष्टिकोण व्यक्त किया है। नाटक साहित्य में भी मध्यम वर्गीय दृष्टिकोण को अभिव्यक्ति मिल चुकी थी और यह दृष्टिकोण राजनीतिक था। एसकिलस (Aeschylus) तथा यूरीपाइडीज (Euripides) के नाटकों में यह दृष्टिकोण मिलता है। यूरीपाइडीज (Euripides) के Supplices[१] नामक नाटक में यह दृष्टिकोण जिन शब्दों द्वारा व्यक्त किया गया है वे अरिस्टाटल के विचारों की भविष्यवाणी-सा करते हुए प्रतीत होते हैं। नाटक के शब्द इस प्रकार हैं—'नागरिकों के तीन वर्ग होते हैं, सम्पत्तिशाली वर्ग दूसरों की सहायता नहीं करना चाहता और सदैव अपनी सम्पत्ति की वृद्धि करने में ही लगा रहता है। अपने भरण-पोषण में असमर्थ सर्वहारा वर्ग समाज के लिए संकट का कारण बना रहता है। ईर्ष्या तथा अवसरवादी नेताओं के प्रभाव में यह वर्ग सम्पत्तिशाली वर्ग के विरुद्ध तीर चलाने के लिए सदैव तत्पर रहता है। इन दोनों वर्गों के बीच मध्यम वर्ग है जो राज्यों

१ अध्याय ५ देखिए। Aeschylus (Eumen ५२६ f) और Euripides (Supplices २३८-२४५) का उल्लेख अरिस्टाटल ने नहीं किया है।

की रक्षा करता है और राज्य द्वारा स्थापित व्यवस्था का पालन करता है।"

विधि का पालन करने की इस मध्यम वर्गीय परम्परा से अरिस्टाटल को यह विश्वास हो जाता है कि जिस संविधान की रचना उसने की है उसे वह स्थायित्व प्राप्त हो सकेगा जो सदा वांछनीय होगा। उसे यह भय नहीं है कि बहुसंख्यक मध्यम वर्ग केवल अपने हित के उत्कर्ष के लिए कार्य करेगा अथवा इस वर्ग के लोग परस्पर हिंसात्मक संघर्ष करेंगे। अन्य दोनों वर्गों के साथ इन दोनों बातों की सम्भावना थी। अरिस्टाटल का कहना है कि मध्यम वर्ग पर आधारित जिस संविधान की रचना उसने की है वही एक ऐसा संविधान होगा जो अविभाज्य रह सकेगा, क्योंकि जिस समाज में मध्यम वर्ग की प्रधानता रहती है उसमें गुटबन्दी और वैधानिक[1] संघर्ष की सम्भावना नहीं रहती (१२९६ a ८)। अरिस्टाटल के अनुसार छोटे राज्यों की अपेक्षा बड़े राज्यों में तथा अल्प-तन्त्र की अपेक्षा लोक-तन्त्र में सबल मध्यम वर्ग के उदय होने की अधिक सम्भावना रहती है। किन्तु वह स्वीकार करता है कि वास्तव में सबल मध्यम वर्ग का प्रादुर्भाव कम ही हो पाता है। भूतकाल में नगर राज्यों में अल्प-तन्त्रात्मक अथवा लोक-तन्त्रात्मक व्यवस्था ही रही है और जो दल या गुट सत्ता हस्तगत कर लेता था वह अपने विरोधियों का बहिष्कार कर देता था। अरिस्टाटल कहता है कि केवल एक बार ऐसा हुआ है कि यूनान के एक प्रमुख नगर में इस प्रकार के मध्यम वर्ग पर आधारित संविधान की स्थापना हुई और वह उस दशा में हुआ जब कि विरोधी दलों ने सम्मिलित रूप से एक व्यक्ति को इस प्रकार का संविधान[2] प्रदान करने के लिए राजी किया था।

इस प्रकार अरिस्टाटल संयम, मध्यम मार्ग और मध्यक सम्बन्धी विचारों को व्यावहारिक राजनीति के सिद्धान्तों में परिवर्तित कर देता है और इनकी सहायता से इस प्रश्न का उत्तर प्राप्त करने का प्रयास करता है कि 'सामान्य, सर्वश्रेष्ठ राज्य किसे कहेंगे। उसका विचार है कि इस प्रश्न का उत्तर अब मिल गया और अच्छे तथा बुरे राज्यों के मूल्यांकन का मापदण्ड उसका मध्यक संविधान होगा। जो राज्य इस आदर्श

१ Reading पालिटिओन।

२ अरिस्टाटेल न तो नगर का नाम लेता है और न ही व्यक्ति का। किन्तु उसका अभिप्राय एथेन्स और सोलन के अतिरिक्त किसी अन्य राज्य या व्यक्ति से नहीं हो सकता। एथेन्स को संविधान प्रदान करने की स्थिति में केवल सोलन ही था और उसी को इस कार्य के लिए सम्मिलित रूप से चुना भी गया था। समाज में सम्पत्तिशाली और निर्धनों के अन्तर को दूर करने के लिए उसने अपनी शक्ति का प्रयोग किया।

के जितना ही समीप होगा वह उतना ही अच्छा कहा जा सकता है और जो राज्य इस आदर्श से जितना ही दूर होगा वह उतना ही बुरा होगा। किन्तु जैसा कि पहले कहा जा चुका है हो सकता है कि किसी विशेष परिस्थिति में इस प्रकार का मध्यक सर्वश्रेष्ठ राज्य व्यवहार में सर्वश्रेष्ठ न हो। विस्तार जनसंख्या तथा सामान्य परिस्थितियों के अन्तर के कारण मध्यक सर्वश्रेष्ठ संविधान भी सभी राज्यों के लिए समान रूप से उपयोगी नहीं होगा। ऐसी स्थिति में अरिस्टाटल के अनुसार सबसे अच्छा उपाय यह होगा कि संविधान को इस प्रकार व्यवस्थित किया जाय कि नागरिकों का वह वर्ग जो संविधान की रक्षा चाहता है, उस वर्ग की अपेक्षा अधिक शक्तिशाली हो जो संविधान को समाप्त करना चाहता है इसके साथ ही यह भी ध्यान में रखा जाय कि जितने ही अच्छे ढंग से संविधान में विभिन्न वर्गों का सम्मिश्रण किया जायगा उतने ही अधिक समय तक संविधान स्थायी रहेगा।' सम्मिश्रण की इस प्रक्रिया का वर्णन भी अरिस्टाटल ने किया। प्रलोभन और भय, आर्थिक दण्ड और क्षमा का प्रयोग किया जायगा। सम्पत्ति को सुदृढ़ रखने के लिए अरिस्टाटल जो उपाय बताता है वे लाज में वर्णित प्लेटो के उपायों (Laws VI-७५६) का स्मरण दिलाते हैं। किंतु अधिकांशतया ये वास्तविक परिस्थितियों पर आधारित हैं और अरिस्टाटल का अभिप्राय है कि इनकी उपेक्षा न किया जाए। प्रत्येक स्थिति में वास्तविक परिस्थितियों का ध्यान में रखने पर वह विशेष जोर देता है। विशेष परिस्थिति का ध्यान में रखते हुए विधायक संविधान के जिस किसी भी प्रकार को उचित समझता है, उसे यह अवश्य देखना चाहिए कि संविधान उन कर्तव्यों के पालन में सफल हो सकेगा जिनकी अपेक्षा इससे की जाती है। इन कर्तव्यों को अरिस्टाटल तीन प्रमुख भागों में विभाजित करता है —

१—सामान्य नीति के प्रश्नों पर विचार विनिमय करना

२—राज्य के विभिन्न पदों से सम्बन्धित कार्य-पदों का स्वरूप, अधिकार तथा पदाधिकारियों के निर्वाचन का ढंग आदि निर्धारित करना तथा

३—न्याय-व्यवस्था से सम्बन्धित कर्तव्य।

किसी भी संविधान की सफलता का मापदण्ड इन तीनों प्रकार के कर्तव्यों का सफल पालन करना होगा। स्पष्ट है कि अरिस्टाटल के इस विभाजन और राजनीतिक शक्ति के विभाजन के आधुनिक सिद्धान्त में जिसके आधार पर व्यवस्थापिका कार्यकारिणी और न्यायपालिका को पृथक् रखा जाता है कोई समानता नहीं है। आधुनिक न्यायकारिणी और अरिस्टाटल की न्याय व्यवस्था में भी अन्तर है क्योंकि यूनान की प्रचलित न्याय-व्यवस्था में न्यायाधीशों की एक विशिष्ट श्रेणी नहीं होती थी। वहाँ तो समस्त नागरिक बारी-बारी से न्यायाधीश का कार्य करते थे। इस सम्बन्ध में हम

यूनानी व्यवस्था पर ध्यान रखना चाहिए और जसा कि बहुत अच्छे ढंग स कहा गया है[१] "यूनानी व्यवस्था आधुनिक व्यवस्था स सवथा भिन्न थी और 'माण्टेस्क्यू (Montesque) के सिद्धान्त तथा अग्रेजी (या अमरीकी) शासन-पद्धति म शक्ति के विभाजन के जिस सिद्धान्त का अनुसरण किया जाता है उसकी ओर ध्यान नहीं देना चाहिए।'

सविधान की स्थिरता की खोज के लिए अस्थिरता के कारणो का अध्ययन भी आवश्यक हो जाता है। यह अध्ययन निरतर होन वाले तथा अनावश्यक परिवत्तनो का प्रतिरोध करन के उपायो की ओर सकत कर सकता है। ऐसी दशा म आश्चय की बात नहीं कि अरिस्टाटल की पालिटिक्स' (Politics) का एक सम्पूर्ण पुस्तक म इसी प्रसग पर विचार किया जाता है। किन्तु यह अवश्य आश्चय का विषय है कि इस प्रसग पर उसने जो विचार प्रस्तुत किये हैं उनका सम्बन्ध मूल विषय अथात सव श्रेष्ठ व्यावहारिक राज्य स दूर का ही है। जिस शासन को स्थायित्व प्रदान करन के लिए वह भाति भाति के उपाय बताता है उसके गुणो के प्रति वह प्राय उदासीन प्रतीत होता है। अपन मध्यम-वर्गीय सविधान की प्रशसा तो वह अवश्य करता है, किन्तु शासन के अन्य स्वरूपो की तुलना म इसे स्थापित करन के लिए कोई विशेष उपाय नहीं बताता। उसके बताये गये उपायो द्वारा सभी प्रकार के शासन अपनी सुरक्षा कर सकते हैं। जहाँ तक किसी शासन को स्थायी रखने का ही प्रश्न है निरकुश शासक भी अपनी सत्ता को अक्षुण्ण बनाये रख सकते है और इस हेतु मक्यावली (Macchiavelli) के उपायो से मिलते-जुलते उपाय कर सकते हैं। अरिस्टाटल से यह भी आशा की जा सकती थी कि वह यह भी बतायेगा कि एक अच्छा एव सयमित सविधान किस प्रकार प्राप्त किया जा सकता है, परिवर्तन की किस प्रक्रिया द्वारा एक अल्पतन्त्रात्मक अथवा लोकतन्त्रात्मक शासन को 'सवधानिक सविधान' का रूप दिया जा सकता है। किन्तु उसके विचारो स तो यह आभास मिलता है कि वह यह मान कर चलता है कि सविधान को परिवत्तन से बचाने का प्रयत्न करना चाहिए। जसा कि हम देख चुके हैं इसम सन्देह नहीं कि राजनीतिक और सामाजिक परिवत्तन की प्रक्रिया सहगामी रहीं और सवधानिक परिवत्तन के फलस्वरूप सामाजिक क्राति अपरिहाय हो जाती थी। अत जिस वग को इस प्रकार की क्राति के परिणाम-स्वरूप अपन 'बधनो (बेडियो) से छुटकारा (मुक्ति) तो मिल जाता था परन्तु हानि की अधिक सम्भावना थी उसके लिए किसी भी प्रकार के परिवत्तन मे आशक्ति रहना स्वाभाविक था। किन्तु यह सोचा जा सकता है कि यदि अरिस्टाटल वास्तव म अपन मध्यम-वर्गीय सविधान म आस्था रखता था तो राजनीतिक

१ Sir Ernest Barker, Trans p १९३

परिवर्तनों तथा इसके गतिनिपुण उपायों के विषय पर वह अधिक गम्भीरतापूर्वक विचार करता। उसकी समस्त विवेचना में सुधार के विषय पर कहीं भी विचार नहीं किया जाता है। राज्य के जीवन में होने वाले परिवर्तनों के छोटे और बड़े अनेक कारण बताये जाते हैं किन्तु राज्य की नीति के रूप में परिवर्तन को स्वीकार करने के विषय पर कदाचित् ही विचार किया जाता है। किन्तु इन प्रत्यक्ष दोषों और असंगतियों के बावजूद भी अरिस्टाटल की इस रचना की पाँचवीं पुस्तक में कुछ महत्त्वपूर्ण निष्कर्ष प्रस्तुत किये जाते हैं। साथ ही हम सनातन से चली आने वाली (अध्याय ३) संविधान की धारणा तथा संस्था की धारणा के पारस्परिक सम्बन्ध को भी नहीं भूलना चाहिए। लोगों के मन में यह आशंका बनी रहती थी कि संविधान में हेर-फेर और विशेषकर प्रत्यक्षतः महत्त्वहीन किन्तु निरन्तर हेर-फेर (१३०७ b ,१) से सुरक्षा की व्यवस्था भी ढीली पड़ सकती है। और चूँकि संविधान के अन्तर्गत राज्य की जीवन-पद्धति भी आती थी इसलिए यह मान लेना कि राजनीतिक स्थिरता के लिए सामाजिक अपरिवर्तनशीलता आवश्यक है, कोई असाधारण त्रुटि न थी। अरिस्टाटल के पर्याप्त समय पूर्व राजनीतिक परिवर्तन[1] का अध्ययन किया जा चुका था और पाँचवीं शताब्दी के एथेंस के भाषण कर्त्ताओं में इस विषय पर होने वाली परिचर्या का कुछ अंश हेराडोटस की रचनाओं में मिलता है। कोरसिरा (Corcyra) में हुए कुछ प्रचण्ड एवं हिंसात्मक राजनीतिक परिवर्तनों का उल्लेख थ्युसिडाइडीज़ ने भी किया है। प्लेटो ने इस विषय का अध्ययन मानव चरित्र के क्रमिक ह्रास के अंग के रूप में किया था। अरिस्टाटल इस सम्बन्ध में केवल प्लेटो के अध्ययन का उल्लेख करता है और उसकी आलोचना भी करता है। उसकी आलोचना का आधार यह है कि प्लेटो का विवरण वास्तविकता से दूर है और यह एक ऐसी आलोचना थी जो Ethics (viii–१०) में व्यक्त स्वयं अरिस्टाटल के विचारों पर भी समान रूप से लागू हो सकती थी। अरिस्टाटल ने इस विषय का जो अध्ययन प्रस्तुत किया है वह उसमें वास्तविकता का अध्ययन करने की थ्युसीडाइडीज़ की क्षमता तथा प्लेटो की कल्पनात्मक अन्तर्दृष्टि का परिचय मिलता है। राजनीतिक परिवर्तन के विषय पर प्रचुर मात्रा में ऐतिहासिक उदाहरण भी प्रस्तुत किये जाते हैं।

अरिस्टाटल के अनुसार राजनीतिक परिवर्तन सामान्यतया समकालीन स्थिति के प्रति असन्तोष के फलस्वरूप ही होते हैं। यह असन्तोष व्यापक हो सकता है अथवा किसी वर्ग या दल विशेष तक सीमित हो सकता है किन्तु इस असन्तोष का हिंसात्मक

1 H Ryffel की पुस्तक (Bern १९४९) का उल्लेख प्राक्कथन में किया जा चुका है।

अभिव्यक्ति की भावना दोनों दशाओं में रहती है और आकस्मिक घटना अथवा संकट इसके लिए प्रायः अवसर उत्पन्न कर देते हैं। असन्तोष के परिणाम स्वरूप उत्पन्न होने वाले विद्रोह दबाया भी जा सकता है और सफल भी हो सकता है। यदि विद्रोह सफल हो जाता है, तो तत्कालीन शासन के स्थान पर विरोधी शासन की स्थापना हो सकती है। कभी-कभी विद्रोह का परिणाम क्रांति न होकर तत्कालीन व्यवस्था में कुछ संशोधन अथवा सुधारमात्र ही होता है। व्यापक असन्तोष के अभाव में इस प्रकार का विद्रोह प्रायः कुछ व्यक्तियों की महत्त्वाकांक्षा और स्वार्थपरता के कारण होता है। कभी कभी कुछ व्यक्तियों की झूठा मान और आत्मगौरव की भावना को ठेस लग जाने के कारण भी विद्रोह की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। विद्रोह के कारण कितने ही नगण्य क्यों न हों, इनसे उत्पन्न होने वाला संकट सदैव गंभीर होता है। किन्तु प्रत्येक दशा में विद्रोह और क्रांति के कारणों को नागरिकों के मस्तिष्क में ही खोजने का प्रयास करना चाहिए चाहे नागरिकों की संख्या अधिक हो अथवा कम। चूंकि राज्य का नैतिक आधार न्याय और मैत्री है इसलिए असन्तोष और अस्थिरता के सबसे महत्त्वपूर्ण कारण अन्याय और द्वेष हैं। समानुपातिक समानता के अभाव में तथा नागरिकों को उचित न्याय न मिलने पर राज्य में सद्भावना और ऐक्य का अभाव हो जाता है और राज्य दलों और गुटों में विभक्त हो जाता है। समाज का एक वर्ग जब यह समझने लगता है कि इसे अपने उचित अधिकारों से वंचित किया जा रहा है तो राज्य में सद्भावना और सौहार्द नहीं रह सकते। न्याय और औचित्य के सम्बन्ध में नागरिकों का एकमत होना आवश्यक है। अल्पतन्त्र तथा लोकतन्त्र दोनों प्रकार के शासन के सम्बन्ध में यह समान रूप से लागू होता है। किन्तु यदि क्रांति के कुछ कारण लोक-तन्त्रात्मक शासन के सम्बन्ध में विशेष रूप से प्रभावकारी होते हैं तो कुछ कारण ऐसे हैं जो अल्पतन्त्र पर विशेष रूप से लागू होते हैं। इतिहास के उदाहरणों से इस कथन की पुष्टि की जा सकती है। अल्पतन्त्र की अपेक्षा लोकतन्त्र में अशान्तिपूर्ण परिवर्तनों की सम्भावना कम रहती है। किन्तु लोकतन्त्र के लिए सबसे बड़ा खतरा नेताओं के उग्रवाद से उत्पन्न होता है, क्योंकि उग्रवादी नेता अपने वाक्-कौशल तथा सम्पत्तिशाली वर्ग के धन का अपहरण करने की नीति से प्रतिष्ठित व्यक्तियों को चाहे वे राज्य में निवास कर रहे हों अथवा निष्कासित जीवन व्यतीत कर रहे हों षड्यन्त्र करने तथा अल्पतन्त्र की स्थापना करने के लिए बाध्य कर देते हैं। प्राचीन काल में भी प्रायः वाक्पटु और जनता को गुमराह करने वाले व्यक्ति निरंकुश शासक के रूप में अपनी सत्ता स्थापित कर लिया करते थे। कभी कभी क्रांति का परिणाम यही होता है कि एक निरंकुश शासक के स्थान पर दूसरा निरंकुश शासक सत्तारूढ़ हो जाता है। अल्पतन्त्रात्मक व्यवस्था वाले राज्यों में जनता का उत्पीड़न, असन्तोष और परिणामतः क्रांति का मुख्य कारण होता है। किन्तु सत्तारूढ़

अल्पवर्ग के सदस्यों में भी परस्पर संघर्ष हो सकता है और इस प्रकार के संघर्ष के परिणामस्वरूप एक गुट के स्थान पर दूसरा गुट शक्तिशाली हो सकता है। सुशासित राज्यों में जैसे कुलीनतन्त्र जिसका अल्पवर्ग वास्तव में सर्वश्रेष्ठ वर्ग होता है और ऐसे लोकतन्त्र में जहाँ संगठित एवं प्रभावशाली मध्यम वर्ग मौजूद है राजनीतिक एवं सामाजिक व्यवस्था निश्चित रूप से अधिक स्थायी होती है। किन्तु कुलीनतन्त्र में भी विद्रोह की सम्भावना रहती है और लोकतन्त्र का वह वर्ग जो अपेक्षाकृत कम सम्पन्न है यह सोच सकता है कि उनके साथ उचित न्याय नहीं किया जा रहा है। (१३०७ a २४) वास्तव में ऐसा हो भी सकता है कि इस प्रकार के अच्छे संविधान में भी लोकतन्त्रात्मक एवं अल्प तन्त्रात्मक तत्वों का उचित संतुलन न किया जा सके।

एक व्यक्ति के शासन के सम्बन्ध में भी यही सिद्धान्त लागू होते हैं। किन्तु राजतन्त्र के सभी प्रकारों में साधारण और आर्थिक असन्तोष भी राजनीतिक क्रान्ति का कारण बन सकता है। वैयक्तिक विद्वेष दरबार का षड्यन्त्र प्रेम व्यापार अनाचार और क्रोध प्रायः संकट का कारण बन जाते हैं और इस प्रकार के शासन में इनको रोकना भी कठिन होता है। वंशानुगत राजतन्त्रों का पतन अयोग्य उत्तराधिकारियों के कारण भी हो सकता है किन्तु राजा के अधिकारों को सीमित करके जैसा कि स्पार्टा में किया गया था और इस प्रकार एक व्यक्ति की महत्ता को कम करके यह सम्भावना कुछ मात्रा में कम की जा सकती है। इसमें सन्देह नहीं कि कोई भी निरंकुश शासक अपने पतन को जो प्रायः निश्चित सा रहता है रोकने के लिए सभी प्रकार के प्रयत्न करता है। *आतंक या उत्पीडन की अपेक्षा प्रवंचना और गोपनीयता अधिक प्रभावकारी होती हैं।* उसे सदैव यह प्रयास करना चाहिए कि वह उतना बुरा न प्रतीत हो जितना कि वह वास्तव में है। *निकृष्टतम शासन को भी अपना अस्तित्व कायम* रखने के लिए अच्छाई का कुछ प्रदर्शन करना पड़ता है। किन्तु राजाओं और निरंकुश शासकों को छोड़ कर *अन्य किसी भी प्रकार के शासन के लिए धोखा प्रवंचना* तथा जनता को भ्रम में डालने के अन्य उपायों का प्रयोग हानि से बचने के अच्छे उपाय नहीं हैं। शासन को वास्तव में श्रेष्ठ होना चाहिए। कोई भी शासन श्रेष्ठता का परित्याग करके शासन कहलाने का अधिकारी नहीं है। इस सिद्धांत का जिसे हम फासिस्टवाद का मूल सिद्धांत कह सकते हैं अरिस्टाटल विरोध करता है। यह सिद्धांत है—'यदि सत्ता आपके हाथ में है और जनता विरोध नहीं करती तो सद्‌गुण की क्या आवश्यकता?' (१३०९ b ९)। अरिस्टाटल के अनुसार एक अच्छे शासन के दो उद्देश्य होते हैं—निर्धनों को उत्पीड़न से बचाना तथा धनवानों की सम्पत्ति को हड़प जाने से बचाना। इसके लिए आवश्यक होगा कि सार्वजनिक पदों को लाभार्जन से मुक्त किया जाय। (अध्याय ८ से तुलना कीजिए), मध्यम वर्ग को प्रोत्साहन दिया जाय कुलीन वर्ग में

होने वाले पारिवारिक संघर्षों को रोका जाय, जनता के नेताओं को अत्यधिक प्रभावशाली न होने दिया जाय और राजनीतिक व्यवस्था में कोई असाधारण विषमता अथवा दोष न आने दिया जाय। इस प्रकार सम्भवत यह स्थिति उत्पन्न की जा सकती है कि अधिकांश नागरिक संविधान में किसी प्रकार के परिवर्तन को वाछनीय न समझें। संविधान को स्थायी बनाये रखने का सबसे श्रेष्ठ एवं प्रभावकारी ढग यही है। किन्तु यदि अधिकांश नागरिकों में इस दृष्टिकोण का विकास करना है तो उन्हें इसी प्रकार की शिक्षा दी जानी चाहिए अर्थात बाल्यकाल से ही उनका लालन-पालन और शिक्षा इस प्रकार की हो कि अपने राज्य के संविधान तथा जीवन-पद्धति के प्रति उनकी आस्था दृढ हो जाय। अरिस्टाटल का कहना है कि कितनी ही कल्याणकारी विधि व्यवस्था क्यों न हो और समस्त नागरिकों की सम्मति से यह क्यों न बनायी गयी हो, जब तक नागरिकों को संविधान की शिक्षा नहीं प्रदान की जाती, तथा इसके आवश्यक कार्यों का सम्पन्न करने के लिए उन्हें प्रशिक्षित नहीं किया जाता, वह व्यर्थ सिद्ध होगा (१३० a १४)। इसलिए यह कल्पना करना कि प्रत्येक व्यक्ति अपने इच्छानुसार जीवन व्यतीत कर सकता है और इसके साथ ही स्थायी राजनीतिक जीवन भी सम्भव हो सकता है, बहुत बड़ी भूल होगी। राज्य के प्रत्येक नागरिक को राज्य की जीवन पद्धति का अनुसरण करना चाहिए। इसे स्वतन्त्रता का समर्पण नहीं समझना चाहिए। यह तो सुरक्षा का साधन है।

राजनीति शास्त्र के दूसरे भाग अर्थात वास्तविक राज्यों के अध्ययन के स्थान पर देश-काल, मनुष्यों और साधनों की ओर ध्यान न देकर आदर्श राज्य एवं सर्वश्रेष्ठ संविधान पर विचार करते समय भी अरिस्टाटेल केवल इतनी स्वतन्त्रता लेता है कि वह एक ऐसे सर्वश्रेष्ठ राज्य की कल्पना कर सके जो सम्भावना की सीमा के परे नहीं है (१३२५ b ३९)। फिर भी यह सैद्धान्तिक एवं काल्पनिक दृष्टिकोण उसे विशेष रुचिकर नहीं प्रतीत होता है। इस प्रकार के कार्य में वह उतना पारंगत भी नहीं है और कभी-कभी तो प्राय धैर्य खो देता है (१३३१ b २०)। इस कार्य को उसने पूर्ण किया, निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता। यदि उसका यह कार्य पूरा हो भी गया हो तो भी वह हमें उपलब्ध नहीं हो सका। इस सम्बन्ध में अरिस्टाटेल के नाम से जो कुछ प्राप्त मिलता है, वह अंशत उसकी पहले की रचना[1] से प्राप्त किया गया है और अंशत प्लेटो पर आधारित है। अरिस्टाटेल यह तो नहीं कहता है कि उसके विचार प्लेटो के लॉज पर आधारित है, यद्यपि दोनों में पर्याप्त सादृश्य है, किन्तु इतना

---

१ W Jaeger Aristotle Eng Trans, pp २७५–२७८ का मत है कि Protrepticus ही यह रचना है।

वह अवश्य स्वीकार करता है (१३२३ a २३) कि श्रेष्ठ जीवन के विषय पर अपनी पूर्व प्रकाशित रचना से उसने सहायता ली है। चूंकि राज्य के अस्तित्व का आधार श्रेष्ठ जीवन है और इसका उत्कर्ष करने के लिए ही राज्य की स्थापना की जाती है, अतः आदर्श राज्य की विवेचना का प्रारम्भ श्रेष्ठ एवं सुखी जीवन के लिए आवश्यक दशाओं के विवेचन से होना चाहिए। तभी ऐसे राज्य का वर्णन प्रस्तुत किया जा सकता है जिसमें इस प्रकार का जीवन सम्भव हो सकेगा। इस प्रकार के जीवन के लिए बाह्य परिस्थितियाँ उतनी महत्त्वपूर्ण नहीं होगी जितनी कि आन्तरिक स्थिति। श्रेष्ठ जीवन तो मनुष्य की आन्तरिक अवस्था की ही देन है। प्लेटो के इस सिद्धान्त को कि श्रेष्ठता प्राप्त किये बिना आप सुखी नहीं हो सकते अरिस्टाटल स्वीकार करता है। उसका कहना है कि साहस, आत्मसंयम, न्यायप्रियता और बुद्धि से वंचित व्यक्ति कभी भी सुखी नहीं कहा जा सकता। इसी प्रकार असहाय और निर्धन व्यक्ति को भी सुखी नहीं कहा जा सकता यद्यपि प्रसंग की दृष्टि से यह विशेष महत्त्वपूर्ण नहीं है। किन्तु यद्यपि श्रेष्ठता की आवश्यकता सामान्य रूप से स्वीकार की जाती है परन्तु श्रेष्ठ जीवन-पद्धति के सम्बन्ध में मतभेद हो सकता है। जैसा कि हम देख चुके हैं अरिस्टाटल का विश्वास था कि निष्क्रिय व्यक्ति सुखी नहीं हो सकता है कार्य और विचार में रत मनुष्य ही सुखी हो सकता है। किन्तु इतने से ही समस्या का समाधान नहीं होता। कुछ लोग एक की अपेक्षा दूसरे की ओर अधिक प्रवृत्त होंगे, कार्य सम्पादन की अपेक्षा चिन्तन और मनन सुन्दर करेंगे, राजनीति की अपेक्षा दर्शन में रुचि लेंगे, और बहुत से लोग ऐसे होंगे जो कई शताब्दी बाद के फिलो' (Philo) की भाँति इन दोनों के बीच द्वन्द्व का अनुभव करते रहेंगे। ऐसी स्थिति में अरिस्टाटल का यह उत्तर है कि राज्य में दोनों प्रकार के जीवन के लिए अवसर उपलब्ध होना चाहिए। किन्तु स्वयं राज्य का भी अपनी जीवन-पद्धति होना है जो इसके संविधान द्वारा निर्धारित होती है। इसलिए राज्य में भी उपरिलिखित चारों गुणों अर्थात् साहस, आत्मसंयम, न्याय तथा बुद्धि का होना आवश्यक है। तभी राज्य का जीवन श्रेष्ठ हो सकेगा। कुछ लोगों के इस विचार का कि राज्य के लिए केवल साहस ही पर्याप्त गुण है अरिस्टाटल खण्डन करता है। उसके अनुसार राज्य में चारों गुण विद्यमान होने चाहिए केवल साहस मात्र नहीं। सामरिक जीवन पद्धति को वह श्रेष्ठ पद्धति नहीं मानता है। उसका कहना है कि युद्ध किसी उद्देश्य की प्राप्ति का साधन मात्र है। स्वयं अपने में यह साध्य नहीं हो सकता इसमें सन्देह नहीं कि प्रत्येक राज्य को अपनी स्वतन्त्रता की रक्षा करनी चाहिए, किन्तु किसी अन्य राज्य पर शासन करना राज्य के गुणों के अन्तर्गत नहीं आता है उसी प्रकार जैसे किसी दूसरे व्यक्ति को अपने अधिकार में रखना मनुष्य के गुणों के अन्तर्गत नहीं आता है। कुछ लोग ऐसे भी मिलेंगे जो इसी मत का समर्थन

करते हैं और यह कह सकते हैं कि दूसरे मनुष्यों को अपने अधिकार में रखना मनुष्य का गुण है, विशेषकर महान् पुरुषों का। इसी प्रकार पर्याप्त लोग इस विचारधारा का भी समर्थन करते कि अन्य राज्यों पर आधिपत्य स्थापित करना राज्य के गुणों में आता है। किन्तु दूसरे राज्यों पर आधिपत्य स्थापित करने वाले राज्य तथा दूसरे व्यक्तियों पर अधिकार स्थापित करने वाले मनुष्य को अरिस्टाटल पृथक नहीं करता है, दोनों को एक ही श्रेणी में रखता है और दोनों को समान रूप से गलत मानता है। इसी प्रकार परितुष्ट व्यक्ति और परितुष्ट राज्य को भी वह पृथक् नहीं करता क्योंकि दोनों सही हैं और दोनों के हित में अनन्यता है।

इस प्रकार श्रेष्ठ जीवन एवं सुखी जीवन की विशेषताओं को सम्मुख रखते हुए, अथवा यह कहना अधिक उचित होगा कि स्वनिर्मित अम्नों से लैस होकर, अरिस्टाटल ऐसे आदर्श संविधान का वर्णन प्रारम्भ करता है जिसके अन्तर्गत श्रेष्ठ जीवन सुनिश्चित-सा हो जाय। इसी स्थल पर वह प्लेटो की 'लाज' का स्पष्ट अनुकरण करते हुए प्रतीत होता है। राज्य की जनसंख्या न तो बहुत अधिक होना चाहिए और न बहुत कम, जनसंख्या मान के आधार पर कोई राज्य महान् नहीं हो जाता। इसके विपरीत अधिक जनसंख्या से अनेकानेक संकट उत्पन्न होते हैं। साथ ही यह भी आवश्यक है कि राज्य के नागरिक एक दूसरे से भली भाँति परिचित हों। इसी प्रकार राज्य का क्षेत्र भी अधिक विस्तृत नहीं होना चाहिए क्योंकि इनसे प्रतिरक्षा कठिन हो जाती है। किन्तु राज्य के पास इतनी भूमि अवश्य होनी चाहिए कि नागरिकों के भरण-पोषण के लिए पर्याप्त खाद्यान्न उत्पन्न हो सके। राज्य की भौगोलिक स्थिति ऐसी होना चाहिए कि नागरिक स्वस्थ जीवन व्यतीत कर सकें, पीने के लिए पर्याप्त मात्रा में शुद्ध जल उपलब्ध हो सके, और राज्य की प्रतिरक्षा का प्रबन्ध आसानी से किया जा सके। प्लेटो ने 'लॉज़' में निश्चित रूप से इस मत का समर्थन किया था कि राज्य समुद्र-तट के निकट नहीं स्थित होना चाहिए। अरिस्टाटल इस प्रश्न पर दो दृष्टिकोणों से विचार करता है। विदेशी आक्रमण की सम्भावना से उत्पन्न होने वाले संकट को वह विदेशी व्यापार से प्राप्त होने वाले लाभ से तुलना करता है और नौपरिवहन तथा सेना के संगठन को उतना बुरा नहीं मानता है जितना कि प्लेटो मानता था। नागरिकों की जाति एवं संख्या के बारे में भी अरिस्टाटल सावधानी की अपेक्षा करता है। इस विषय पर वह औषधि एवं मानव-शास्त्र सम्बन्धित अपने ज्ञान का प्रयोग करता है जो उसने हिपाक्रेटीज़ के मतावलम्बियों से ग्रहण किया था। इनके सिद्धांत का संयोजन वह अपने मध्यक के सिद्धांत से करता है और आदर्श राज्य के लिए यूनानी जाति को सर्वश्रेष्ठ बताता है क्योंकि उत्तर के ठण्डे देशों की स्वतन्त्रप्रिय, किन्तु बुद्धिहीन जातियों तथा पूर्व की चतुर किन्तु निकृष्ट और हतोत्साह जातियों के बीच यूनानी जाति मध्यक के रूप में आती है। 'मसीडोनिया' के

प्रकार यहा भी मूल समस्या अनिवार्यत शिक्षा की ही समस्या है और अरिस्टाटल को जिस प्रश्न का उत्तर ढूंढना पडता है वह वही प्रश्न है जो प्लेटो के सम्मुख भी उपस्थित हुआ था और जिसके सम्बन्ध म प्लेटो किसी निर्णयात्मक उत्तर पर नही पहुच सका था। प्रश्न है क्या नागरिकता के कर्तव्यों का उचित पालन करने के लिए तथा शासन करने के लिए पृथक शिक्षा की व्यवस्था होनी चाहिए? पालिटिक्स की तीसरी पुस्तक म अरिस्टाटल इस निष्कर्ष पर पहुचा था कि अच्छे शासक की अच्छाई और अच्छे नागरिक की अच्छाई अनिवार्यत एक ही नही होती, किन्तु कुछ विशेष परिस्थितियों म दोनों म पर्याप्त समानता हो सकती है। जिस आदर्श राज्य की रचना अरिस्टाटल कर रहा है उसम इसी प्रकार की परिस्थिति उत्पन्न होगी यह आशा की जा सकती है और इससे यह निष्कर्ष भी निकलता है कि इस आदर्श राज्य म जो शिक्षा अच्छे शासक के लिए उपयुक्त होगी वही अच्छे नागरिक के लिए भी उपयुक्त होगी। अरिस्टाटल का भी प्रत्यक्षत यही दृष्टिकोण था, किन्तु वह प्लेटो के दृष्टिकोण की सर्वथा उपेक्षा भी नही करना चाहता है। प्लेटो का दृष्टिकोण था कि यदि अच्छे शासक की अच्छाई और अच्छे शासित की अच्छाई म अन्तर है तो इन दोनों को प्रदान की जाने वाली शिक्षा एक नही हो सकती है। किन्तु अरिस्टाटल के आदर्श राज्य म तो शासक और शासित (नागरिक) म कोई अन्तर नही है। उसी के शब्दों म— हम इस निष्कर्ष पर पहुचते हैं कि एक अर्थ म तो शासन करने वाले तथा शासित होने वाले व्यक्ति एक ही होते हैं और दूसरे अर्थ म भिन्न। अत उनकी शिक्षा भी एक अर्थ म तो समान होनी चाहिए और दूसरे अर्थ म भिन्न। क्योंकि एक अच्छे शासक का पहला आवश्यक गुण यह है कि वह अच्छा शासित रह चुका है। इन प्रतिबन्धों के साथ हम यह सकते हैं कि हमारे आदर्श राज्य में नागरिक शासक और अच्छे मनुष्य की अच्छाई एक ही-सी होती है। और एक ही व्यक्ति को पहले शासित होना पड़ता है और बाद म शासक (१३३३ a १२)।

'पॉलिटिक्स (Politics) शिक्षा की एक अपूर्ण रूप रेखा के साथ समाप्त होता है। शिक्षा की इस रूप रेखा को प्रस्तुत करने म अरिस्टाटल का उद्देश्य नागरिक शासक तैयार करना है जो शासन करने तथा शासित होने की योग्यता रखता है। लाज की मध्यवर्ती पुस्तकों म प्लेटो ने भी इसी उद्देश्य का प्रतिपादन किया है। अतएव विवाह पारिवारिक जीवन शिशुओं का पालन-पोषण तथा बच्चों के अनुशासन को राज्य के नियन्त्रण म रखने का परामर्श देते हुए अरिस्टाटल संकोच नही करता। शिक्षा की दूसरी अवस्था म वह संगीत और साहित्य की उपासना पर जोर देता है किन्तु इसलिए नही कि अन्य विषयों की भांति व उपयोगी और आवश्यक हैं अपितु इसलिए कि चूंकि वे अन्य विषयों की भांति उपयोगी और आवश्यक नहीं हैं इसलिए एसे व्यक्तियों

के लिए जिन्हें किसी वृत्ति विशेष का अनुसरण नहीं करना है वे विशेष रूप से उपयोगी हैं। 'प्रत्येक अवसर पर सभी कार्यों की उपयोगिता पर ही ध्यान देना (अथवा सदैव यही प्रश्न करना कि इसकी क्या उपयोगिता है।) स्वतन्त्र एवं पूर्णविकसित मस्तिष्क वाले व्यक्तियों को शोभा नहीं देता है। इसमें सन्देह नहीं कि संगीत और साहित्य के अध्ययन से जिस मात्रा में चारित्रिक विकास सम्भव हो सकता है वह पाकशास्त्र की शिक्षा से सम्भव नहीं है और इसलिए भावी नागरिकों के चरित्र निर्माण में इस प्रकार की शिक्षा का योगदान महत्त्वपूर्ण होगा। इसके अतिरिक्त मनोरंजन का साधन होने के नाते संगीत और साहित्य की कुछ निश्चित उपयोगिता भी है। किन्तु इस सम्बन्ध में कुछ ऐसे प्रश्न उठ खड़े होते हैं जिनका उत्तर देना कठिन हो जाता है, कम से कम अरिस्टाटल ने तो यही अनुभव किया। उदाहरणार्थ—संगीत का सर्वश्रेष्ठ कार्यक्रम निपुण संगीतज्ञों द्वारा ही प्रस्तुत किया जा सकता है जो वृत्ति से संगीतज्ञ होते हैं और नागरिकों की श्रेणी में नहीं आते। ऐसी दशा में नागरिकों को संगीत की शिक्षा से लाभान्वित करने की क्या विधि होगी कि वे वृत्ति की कालिमा, सार्वजनिक कार्यक्रमों की अशोभनीयता और प्रतियोगिता के दुष्परिणामों से बच सकें। 'स्पार्टा' वालों की भाँति केवल इतनी शिक्षा देना कि नागरिक संगीत के कार्यक्रमों को देख और सुन सकें, पर्याप्त नहीं है। इस प्रकार की शिक्षा से नागरिकों में समीक्षा और मूल्यांकन की क्षमता का प्रादुर्भाव नहीं हो सकेगा। ऐसी दशा में अरिस्टाटल का यह निर्णय है कि बाल्यकाल में नागरिकों को वादन और गायन की शिक्षा दी जाय किन्तु इस आयु में उन्हें निपुण बनाने का प्रयत्न न किया जाय। वयस्क नागरिक यदि वादन और गायन में भाग लेना चाहता है तो वह केवल एकान्त में अथवा उत्सव आदि के अवसर पर ही ऐसा करेगा। (१३३९-६)।

राज्य के निर्माण में शिक्षा को यह महत्त्व प्रदान करना कोई नयी बात नहीं, 'प्रोटेगोरस' के समय से ही यह परम्परा चली आ रही है। अरिस्टाटल ने जब यह लिखा कि विधायक नागरिकों को अच्छे कार्यों का अभ्यास करा के अच्छा बनाते हैं और नागरिकों को अच्छा बनाना प्रत्येक विधायक का उद्देश्य है, अच्छे और बुरे संविधान में यही अन्तर होता है (Ethics II १५) तो वह अच्छी आदतों की उपयोगिता पर ही जोर दे रहा है, संविधान के सम्बन्ध में कोई नयी बात नहीं कह रहा है। सामान्य रूप से अरिस्टाटल की शिक्षा-व्यवस्था का उद्देश्य सर्वश्रेष्ठ अच्छा मनुष्य तैयार करना है, ऐसा मनुष्य जो योग्य भी है और नम्र भी, मर्यादापूर्ण भी है और शिष्ट भी, उदार भी है और साहसी भी, न्यायप्रिय भी है और आत्मसंयत भी। उसका विश्वास था कि प्रशिक्षण और अभ्यास द्वारा इस प्रकार का मनुष्य तैयार किया जा सकता था और राजनीति की दृष्टि से यह कार्य महत्त्वपूर्ण था। अच्छे नागरिक के सम्बन्ध में

प्लेटो के विचार भिन्न थे और 'लाज' में वह शिक्षा व्यवस्था की क्षमता में इतनी दृढ़ आस्था भी नहीं रखता है। जैसा कि हमने अध्याय १० में देखा, उसने प्रतिबन्ध नियन्त्रण और संसर या पन्नाल की व्यवस्था की थी। इस व्यवस्था में सर्वोपरि स्थान सवनाना, और चिरजागरूक रात्रि समिति के सदस्यों को दिया गया था और सम्पूर्ण व्यवस्था का उद्देश्य यह था कि अच्छे नागरिक सदैव अच्छे बने रहें और अच्छाई के पथ से विचलित न हों। अरिस्टॉटल की 'पालिटिक्स' (Politics) की आठवीं पुस्तक के लुप्त भाग में यदि इस प्रकार का कोई सुझाव न रहा हो तो यह निश्चित है कि वह राज्य के नागरिकों पर इस प्रकार के प्रतिबन्ध और नियन्त्रण आवश्यक नहीं समझता। अपने अच्छे नागरिकों में वह मुख्यतया अपनी प्रतिच्छाया देखता था अथवा यह कहा जाय कि अपने जिस रूप को वह दूसरों के सम्मुख प्रस्तुत करना चाहता था वही रूप वह अपने आदर्श राज्य के नागरिकों में भी देखता है—मर्यादापूर्ण, बुद्धिमान्, संयमी, नम्र और अच्छी भावनाओं से युक्त तथा सद्गुणी। यद्यपि इसमें सन्देह है कि प्लेटो कभी भी 'लाज' के राज्य के सदस्य के रूप में अपनी कल्पना करता तथापि यदि वह ऐसा कर सकता, तो अपने को रात्रि समिति के सदस्य के रूप में देखता। किन्तु वह तो दूसरे लोगों के लिए साधारण लोगों के लिए राज्य की रचना कर रहा था, अपने लिए नहीं। इसके विपरीत अरिस्टॉटल एक ऐसे राज्य की योजना बना रहा था जिसमें वह स्वयं तथा उसके मित्र सुख में रह सकते। उसने एक ऐसे आदर्श राज्य की कल्पना की जिसमें उसके सदृश व्यक्ति उत्पन्न हो सकते और उन्हें सही जीवन पद्धति का अनुसरण करने का अवसर उपलब्ध हो सकता। प्लेटो किसी भी ऐसे मनुष्य को नहीं जानता था जो उसके सदृश था और यदि उसे इस प्रकार के व्यक्ति मिल भी जाते तो उनके बीच में वह सुखी न होता। जीवन में जो कुछ सुख उसे प्राप्त हुआ (Epistle vii ३२१ B) वह अपनी अकादमी के निर्देशक के रूप में ही मिला क्योंकि यहाँ उसे जो सत्ता प्राप्त थी वह उसे किसी भी राज्य में नहीं मिल सकी। अकादमी में उसके साथ रहने वाले लोगों और उसमें केवल यही समानता थी कि वे सभी दर्शन और राजनीति के उपासक थे। साथ ही अकादमी के अन्य सदस्य प्रायः उसके व्यक्तित्व के प्रति असीम आस्था और आकर्षण रखते थे। इसमें सन्देह नहीं कि वह चाहता था कि उसके शिष्य तथा लाज के राज्य के अच्छे नागरिक बुद्धिमान् और सद्गुणी हों। अरिस्टॉटल के आदर्श राज्य के नागरिकों की भाँति। किन्तु इन दोनों में गुणात्मक अन्तर है जो सम्भवतः श्रेष्ठजन्म या श्रेष्ठ लालन पालन और श्रेष्ठ शिक्षा के अन्तर की उपमा में व्यक्त किया जा सकता है अथवा कुछ अस्पष्ट ढंग से कहा जा सकता है कि यह वही अन्तर है जो विक्टोरिया-युग और फ्रांस की राज्यक्रान्ति के पूर्व की सामाजिक एवं राजनीतिक अवस्था (Ancien Regime) या भूमिधारी कुलीन वर्ग (Landed Gentry) और मध्यम

वर्ग (La bonne bourgeoisie) में था। १९वीं शताब्दी का उदार एवं सार्वजनिक भावनाओं से युक्त नागरिक जो विज्ञान और साहित्य में समान रूप से रुचि रखता था और जिसे एक ऐसी शिक्षा-व्यवस्था में शिक्षा प्राप्त करने का अवसर मिला था जो जन्म की श्रेष्ठता की अपेक्षा सम्पत्ति की श्रेष्ठता पर अधिक आधारित था, 'पालिटिक्स' तथा 'एथिक्स' के रचयिता के आदर का पात्र होता। किन्तु एक ऐसे विश्व में जहाँ सम्पत्ति और जन्म दोनों का महत्त्व प्राय समाप्त सा हो गया है और जिसमें सामुदायिक प्रधान का तात्पर्य मर्यादा और संयम तक ही सीमित नहीं रह गया है, अरिस्टाटल का आध्यात्मिक पुरुष कुछ अवास्तविक और सुदूर का व्यक्ति प्रतीत होता है।

अतिरिक्त टिप्पणियाँ और प्रसंग निर्देश

अध्याय—११

अरिस्टाटल का Politics की विभिन्न पुस्तकों का परम्परागत क्रम, अब सामान्यत पुन स्थापित हो गया है। IV, V, VI अथवा IV, VI, V को अब अन्तिम पुस्तकों के रूप में प्रस्तुत नहीं किया जाता। किन्तु इन पुस्तकों को अध्यायों और खण्डों में विभाजित करने की दो पृथक पद्धतियाँ प्रचलित हैं अत इनकी ओर ध्यान न देकर Politics के प्रसंग में हमने पुस्तक तथा शीर्षक का उल्लेख किये बिना केवल Bekker के पृष्ठों का ही प्रयोग किया है। Ethics का तात्पर्य Ethica ad Nicomachum से है। जिन स्थलों पर इसकी ओर संकेत किया गया है इसके बड़े अध्यायों और खण्डों की ओर भी संकेत किया गया है। Ethics के उपसंहार में संविधानों के जिस संकलन की ओर संकेत किया गया है वह अवश्य ही उन १५८ संविधानों के सम्बन्ध में है जिसे अरिस्टाटेल तथा उसके शिष्यों ने संगृहीत किया था। इन समस्त संविधानों में केवल एक ही ऐसा है जो पूर्ण रूप में सुरक्षित रह सका और यह एथेन्स का संविधान (Constitution of Athens) है। अरिस्टाटेल की योजना के अनुसार इन ऐतिहासिक सर्वेक्षणों का प्रयोग Politics की iv, v तथा vi पुस्तकों की रचना में सम्भवत किया गया। दूसरी पुस्तक में वास्तविक एवं काल्पनिक दोनों प्रकार के संविधानों की ओर संकेत मिलता है। सातवीं तथा आठवीं पुस्तक, (यह अपूर्ण है।) का पूर्वाभास Ehics x के अन्तिम वाक्य में मिलता है। किन्तु जब अरिस्टाटल Ethics को समाप्त कर रहा था, तो Politics की प्रथम पुस्तक के सम्बन्ध में उसने नहीं सोचा था, क्योंकि इन दोनों रचनाओं के बीच यह किसी प्रकार का सम्बन्ध नहीं स्थापित करता। इसी प्रकार यद्यपि तीसरी पुस्तक

पर्याप्त महत्त्व की है फिर भी यह नहीं कहा जा सकता कि इनकी रचना किसी पूर्व योजना के अनुसार हुई। कुछ लोगों का मत है कि अरिस्टाटल ने Politics पर दो कृतियों की रचना करने की योजना बनायी थी और इन दोनों कृतियों की सामग्री हम Politics की इन विभिन्न पुस्तकों में मिलती है। निश्चित रूप से यह नहीं कहा जा सकता है कि इन पुस्तकों की रचना का क्या क्रम था अथवा अरिस्टाटल के जीवन के किस काल में इनकी रचना हुई। [W D Ross, Aristotle[3], ch viii and p १९ n, W Jaeger, Aristotle E T[2] ch x, E Barker in Class Rev XLV (१९३१) and btter in the Introduction (ii ४) *to his translation of the Politics* (१९४६)] । इस सम्बन्ध में जे० एल० स्टाक्स (J L Stocks) [Class Quart xxi १९२७ p १७७) का कथन उचित प्रतीत होता है—'पुस्तक शब्द का प्रयोग प्राचीन युग के पुस्तक विक्रेताओं का रखा हुआ नाम है, प्रबन्ध की इकाई का नहीं।' यह दृष्टिकोण भी निराधार प्रतीत होता है कि अरिस्टाटल की रचना का वह अंश जिसका विषय वस्तु प्लेटो के विचारों से अधिक मिलती-जुलती है अनिवार्यतः अन्य अंशों से पहले का है। यह भी सम्भव हो सकता है कि प्लेटो के जीवन के अन्तिम चरणों में जब वह अपनी रहस्यवादी धार्मिकता में उलझा था (अध्याय x) अरिस्टाटल उसके प्रति किंचिमात्र भी सहानुभूति न रखता हो और जब वह स्वयं वृद्धावस्था को प्राप्त हुआ तो अपने प्राचीन आचार्य के विचारों की स्वतन्त्र समीक्षा करते हुए भी उसने उसके विचारों की ओर विशेष ध्यान दिया।

संविधान का क्षेत्र	Ethics I esp chs २ ७ and ८
दो उद्देश्य और दो प्रणालियाँ	Ethics x १८ २३, politics iv init
राजनीतिक समुदाय का स्वभाव	pol I १२५२ a १२५३ a
समुदाय के आधार	pol iii passim
विधि और न्याय	i १२५३ a, Eth v ६ ७
विधि और नियम	iv १२८९ a १५
मैत्री आदि	Eth ix ६ pol ii १२६१ a iii १२७८ b १२८०
नागरिकता और योग्यता नरत्व	pol iii १२७५ a १२७८ b
वर्गीकरण प्राचीन पद्धति	pol iii १२७९, Eth viii १०

अरिस्टाटेल द्वारा सविस्तार विश्लेषण	
राजतन्त्र	iii १२८४ १२८८ (Tyranny iv १२९५ a)
लोकतन्त्र तथा अल्पतन्त्र	iii १२८१ १२८४, Eth v ३ ४
उपविभाजन और इसके अंश	iv १२९० १२९३ a, vi १३१७ a-१३२१ a
संविधान और कुलीन तन्त्र	iv १२९३ b १२९४ b
मध्यम मार्ग और मध्यम वर्ग	iv १२९५ a १२९६ a
विभिन्न परिस्थितियाँ, सुरक्षा के विभिन्न उपाय	iv १२९६ b १२९७ b
शासन के तीन मुख्य कर्तव्य	iv १२८९ b-१२९९ a, १३०० b
राजनीतिक एव वैधानिक परिवर्तन, कारण तथा दूर करने के उपाय	pol v passim
आदर्श राज्य	
आदर्श राज्य में अच्छा जीवन	vii १३२३ a १३२५ b, १३३२ a १३३३ b १३३४ a
बाह्य परिस्थितियाँ	vii १३२६ a १३२८ a, १३३० b-१३३१, cpc the Hippocratic Airs, waters and Places, २३ २६
सामाजिक तथा राजनीतिक व्यवस्था	vii १३२८ a १३३० a
आदर्श-नागरिक	१३३१ b-१३३४ a
उसकी शिक्षा की योजना	१३३४ b १३४२ b

अध्याय १२

सिकन्दर के बाद

महान् सिकन्दर की मृत्यु ३२३ ई० पू० में हुई और दूसरे वर्ष अरिस्टाटल की। इसके पश्चात की यूनानी राजनीतिक विचारधारा का क्रम निर्धारित करना कठिन कार्य है। जो सामग्री उपलब्ध है उस पर निर्भर नहीं किया जा सकता। यह अधिकांश तथा भ्रमोत्पादक है। सुविख्यात राजनीतिक दार्शनिकों का भी इस युग में अभाव है। उस समय की कोई महान राजनीतिक कृति भी नहीं प्राप्त होती। परिणामतः जिस सरिता का मार्ग निर्धारित करना इसके पहले सम्भव था वह अब मरुस्थल में पहुँच कर अपना प्रवाह खो देती है अथवा इसका जल पृथ्वी के नीचे प्रवाहित होने लगता है। कोई आश्चर्य की बात नहीं कि कुछ लोगों को ऐसा प्रतीत होने लगा कि इस विषय का अध्ययन समाप्त हो चुका है और राजनीतिक चिंतन के लिए अब कोई क्षेत्र नहीं रह गया था। सिकन्दर की विजयों ने विश्व का मानचित्र बदल दिया और यूनानी नगर राज्य प्राचीन युग की संस्था मात्र होकर रह गये थे। विस्तार और शक्ति में मैसिडोनिया की सेना की तुलना में ये नगण्य थे। नैतिक एवं सामाजिक आदर्शों के निर्णायक के रूप में भी इनका परम्परागत महत्त्व प्रायः समाप्त हो चला था। इसके विपरीत मत का समर्थन करने वाले विचारक निश्चय ही वास्तविकता से दूर कल्पना जगत में विचरण कर रहे थे। राजनीतिज्ञ यथार्थ से दूर भागने का प्रयास कर रहे थे। यूनानी स्वतन्त्रता का अन्त तो उसी समय हो गया जब ३३८ ई० पू० में चरोनिया (Chaeronea) के युद्ध में 'मसिडोन' का 'फिलिप' विजयी हुआ। किन्तु यह समीक्षा एक ऐसे इतिहासकार की है जो बाद की घटनाओं से भी परिचित है। ३३८ ई० पू० में 'फिलिप' ने यूनान की राजनीतिक समस्याओं की सामान्य व्यवस्था करने का जो प्रयास किया वह कुछ लोगों की दृष्टि में नगर राज्यों के अस्तित्व के लिए घातक नहीं था। ५० वर्ष पूर्व भी इसी प्रकार की व्यवस्था की गयी थी। सिकन्दर की विजयों का परिणाम भी प्रारम्भ में नहीं देखा जा सका। हाँ उसकी विजयों से लोग अचम्भित अवश्य हुए। वक्ता एस्किनीस (Aeschines) की भाँति सामान्य व्यक्ति उन परिवर्तनों की कल्पना नहीं कर सकता था जो अगले आने वाले ५० वर्षों में हुए। थीब्ज (Thebes) का पतन, एथेन्स पर 'मसिडान' (Macedon) का आधिपत्य तथा फारस (Persian) के विशाल साम्राज्य का नाटकीय ढंग से

यकायक समाप्त होना, कुछ ऐसी घटनाएँ थीं जिनसे उस समय के लोग भली भांति परिचित थे। ये ऐसी घटनाएँ थीं जो एस्कीनीस (Aeschines) तथा तत्कालीन लोगों के लिए आश्चर्य¹ का कारण थीं। किन्तु नागरिकों की जीवन पद्धति में किसी प्रकार का परिवर्तन अथवा नगर राज्य की महत्ता में किसी प्रकार की कमी का कोई लक्षण नहीं दृष्टिगोचर होता था। इसके अतिरिक्त यद्यपि मेसिडान' की सेनाओं ने यूनान के मुख्य भू भाग का अतिक्रमण कर दिया था और वहां के निवासियों के स्वाभिमान पर आघात पहुँचाया था तथापि एशिया माइनर के कई यूनानी राज्यों ने मिल कर सिकन्दर का स्वागत किया और उसे अपने प्राचीन शत्रुओं के बन्धन से मुक्ति-दाता के रूप में देखा। प्रारम्भ में तो वास्तव में ऐसा प्रतीत होता था कि यूनानी सिकन्दर ने विदेशी सम्राट डेरियस (Darius) की सेनाओं को परास्त करके वही कार्य किया है जो विगत युग में यूनान वालों ने 'डेरियस की सेनाओं को मैराथन (Marathon) के युद्ध में परास्त करके किया था और इस प्रकार यूनानी जीवन-पद्धति को युद्ध के मैदान में पुनः विजय-श्री प्रदान की थी। किन्तु इस विजय का कारण यूनानी सेनाएं नहीं थीं, वह तो मेसिडोनिया' की विजय थी। यूनानी नगर राज्यों ने इस युद्ध में प्रत्यक्ष रूप से भाग भी नहीं लिया था और कुछ ही वर्षों में यह स्पष्ट हो गया कि जहां तक यूनानियों का सम्बन्ध है यह विजय नाममात्र के लिए ही था। सिकन्दर की मृत्यु के पश्चात उसके सेनापतियों में परस्पर युद्ध हुआ और इस युद्ध में सहायता एवं सहानुभूति प्राप्त करने के लिए 'नगर राज्यों की स्वतन्त्रता' का नारा लगाया गया। सिकन्दर की सेनाओं के साथ मुख्य भू भाग से जो यूनानी आये थे वे अपनी खोई हुई स्वतन्त्रता प्राप्त करने की अपेक्षा नये अवसर से लाभ उठाने के लिए अधिक लालायित थे। सम्पत्ति तथा प्रतिष्ठा की खोज में वे सभी सफल नहीं हुए और वहां की बर्बर जातियों के सम्पर्क में वे आये अन्तर्जातीय विवाह से भी नहीं बच सके। किन्तु परिवर्तन की गति धीमी रही और अन्तर्जातीय विवाहों से उत्पन्न शिशु, यूनानी भाषा ही बोलते थे और जातियों का यह सम्मिश्रण दो तीन पीढ़ी बाद ही स्पष्ट हो सका। इसके अतिरिक्त यूनानी संस्कृति और जीवन पद्धति का समर्थन सिकन्दर ने भी किया तथा नगर राज्यों की स्थापना करने की जो नीति उसने अपनायी थी उसका अनुकरण उसके उत्तराधिकारियों ने भी किया। साथ ही यूनानी भाषा के क्षेत्र में भी विस्तार हुआ। इन सबसे यह आभास होता था कि संविधान-सम्बन्धित यूनानी धारणाओं का इतिहास जितना गौरवमय था उनका भविष्य भी उतना ही उज्ज्वल है।

किन्तु क्या सिकन्दर महान को राजनीतिक विचारकों की श्रेणी में स्थान दिया

---

१ Aeschines, Against Ctesiphon १३२-१३४, Circa ३३० B C

जा सकता है ? इस प्रश्न का उत्तर 'हां' में देना सम्भव है, किन्तु इसे न्यायसंगत सिद्ध करना प्रायः असम्भव ही है। उसके समकालीन व्यक्तियों को उसके विचारों का किंचितमात्र आभास नहीं हो पाया। बाद के इतिहासकारों ने अपनी कल्पना का प्रयोग किया और सिकन्दर के नाम से कुछ विचार भावी पीढ़ी के सम्मुख रखने का प्रयास किया। किन्तु सिकन्दर के मुख से निकले हुए शब्दों को हमारे सम्मुख प्रस्तुत करने में वे असमर्थ हैं। ऐसी दशा में सिकन्दर के विचारों की रूपरेखा प्रस्तुत करने के प्रयास में गम्भीर त्रुटियों की सम्भावना है। किसी व्यक्ति के राजनीतिक कार्यों के आधार पर उसके राजनीतिक विचारों के सम्बन्ध में किसी प्रकार का निर्णय नहीं दिया जा सकता क्योंकि कभी-कभी राजनीतिक घटनाएँ उन विचारों के सर्वथा विपरीत घटित होती हैं जिन्होंने इन घटनाओं को प्रेरित किया और इन घटनाओं के लिए प्रयास करने वाले व्यक्तियों के विचारों और घटनाओं में तालमेल नहीं रहता। सिकन्दर की योजनाओं के सम्बन्ध में कुछ कहना कठिन है। यह भी नहीं कहा जा सकता कि भविष्य में वह क्या करना चाहता था। अल्पायु में ही उसकी मृत्यु हो गयी। मृत्यु के समय उसने विश्वविजय प्राप्त कर ली थी किन्तु इसका प्रयोग करना उसने नहीं प्रारम्भ किया था। युद्ध-कौशल संगठन-शक्ति तथा विजय की अप्रतिम क्षमता उसने अवश्य दिखलायी किन्तु इन कार्यों के प्रयोजन के सम्बन्ध में अपने विचार वह व्यक्त नहीं कर सका। अनेक नगर राज्यों की स्थापना उसने अवश्य की किन्तु राज्य के सम्बन्ध में—आकार संविधान एवं सदस्यता आदि विषयों पर—उसके क्या विचार थे इसका आभास नहीं मिलता। यदि वह किसी भी प्रकार के राजनीतिक संगठन की स्थापना करने की अभिलाषा रखता था तो इन विषयों की उपेक्षा वह नहीं कर सकता था। जहाँ तक शासन के प्रकार का प्रश्न है वह स्वभाव से राजतन्त्रवादी था जन्म तथा लालन पालन से वह राजा (बसिल्यूज) था निरंकुश (टिरनाज) नहीं। उसने एकिलीज (Achilles) और अगमेमनन (Agamemnon) से प्रेरणा प्राप्त की, पोलीक्रेटीज (Polycrates) अथवा पिसिस्ट्रेटस (Pisistratus) से नहीं। पेला (Pella) के नगर राज्य की जो भी विगत स्थिति रही हो वह एक साम्राज्य का अंग मात्र था और सिकन्दर की जीवन पद्धति और राजनीति तथा संविधान कभी भी छोटे और स्वतन्त्र नगर राज्यों की पद्धति का अनुकरण करते हुए नहीं दिखाई देते। यूनान में जो महान् बौद्धिक एवं संवैधानिक प्रगति हुई उसमें उसके अपने देश ने कोई महत्त्वपूर्ण भाग नहीं लिया था। 'सोलन (Solan) और लाइकरगस' (Lycurgus) उसके लिए कुछ भी महत्त्व न रखते थे। स्वतन्त्रता तथा लोकतन्त्र की यूनानी धारणाएँ तो उसके लिए और भी महत्त्वहीन थीं। अरिस्टोटल[1]

---

१ पेला में जब वह युवावस्था में ही था। अधिक जानकारी के लिए 'अरिस्टाटेल और

से उसने यह सार रखा था कि सभ्य मनुष्यों के लिए उचित जीवन-पद्धति नगर-राज्यों में ही सम्भव हो सकती है। ऐसा प्रतीत होता है कि अपने शिष्य की इस शिक्षा को उसने स्वीकार किया, किन्तु नगर राज्यों की इस उपयोगिता को उसने दूसरे लोगों के लिए ही उपयुक्त समझा। स्वयं अपने सम्बन्ध में उनके दूसरे ही विचार थे। अरिस्टाटल की पालिटिक्स में यदि उसने अपना कोई स्वरूप देखा तो वह था एक सर्वाधिकारी एवं असाधारण प्रतिभा सम्पन्न सम्राट का स्वरूप जो स्वयं 'विधि' है और वह भी एक ऐसा सम्राट जो अरिस्टाटल के अपेक्षाकृत लघुकाय साम्राज्य पर शासन नहीं करता अपितु एक विशाल साम्राज्य अथवा समस्त विश्व पर शासन करता है। यदि वह अधिक दिनों तक जीवित रहता और अरिस्टाटल की पुस्तकों का अध्ययन करता तो निश्चय ही वह इस निष्कर्ष पर पहुँचता कि जीवन की समस्याओं का समाधान युद्ध और विजय में नहीं किया जा सकता और वह भी शासन से सम्बन्धित उन प्रश्नों का उत्तर प्राप्त करने के लिए बाध्य होता जिन पर अरिस्टाटल ने विचार किया था। आइसो क्रटीज से वह इसलिए नहीं प्रभावित हुआ कि उसने एथेन्स की परम्पराओं का समर्थन किया था अपितु इसलिए कि उसने अखिल यूनानी संगठन का विचार प्रस्तुत किया था और 'एवगोरस (Evagoras) तथा अच्छे राजतन्त्र की प्रशस्ति में रचनाएँ की थीं। सिकन्दर के कार्यों से यह आभास मिलता है कि प्रजाजन के प्रति राजा के कर्तव्यों में वह कुछ विश्वास रखता था और राजा का यह कर्तव्य मानता था कि वह जनता के कल्याण हेतु कुछ कार्य करे और इस प्रकार प्रजाजन में परस्पर सद्भावना तथा अपने प्रति सदिच्छा एवं भक्ति उत्पन्न करे। किन्तु स्वयं अपने बारे में उसने राजा के इस रूप को कदाचित् ही स्वीकार किया और जब उसने फारस वालों तथा अन्य बर्बर जातियों की सदिच्छा प्राप्त करने हेतु उनको भी अपने कल्याणकारी कार्यों से लाभान्वित करना प्रारम्भ किया तो वह 'आइसाक्रटीज', 'अरिस्टाटल' तथा सामान्य यूनानियों से विलग हो गया। जेनोफान' (Xenophon) की 'साइरोपीडिया' के यूनानी और पौरस्त्य आदर्शों के सम्मिश्रण से सम्भवतः वह अपेक्षाकृत अधिक प्रभावित हुआ होगा। यह सम्भव नहीं प्रतीत होता कि उसने 'एण्टीफोन' (Antiphon) तथा अन्य विचारकों के विश्व बन्धुत्व सम्बन्धी रचनाओं का अध्ययन किया। (अध्याय ५)। सरकार के साधन के रूप में शासन की धारणा (Democritus fr २४८) 'प्रोटेगोरस' और 'सोक्रटीज' के समान युग की ही देन थी इसे भी सम्भवतः वह नहीं समझ सकता था। किन्तु उसके युग में इन विचारों को पर्याप्त मान्यता प्राप्त हो चुकी थी और उसे यह श्रेय अवश्य

सिकन्दर के साम्राज्य पर Ehrenberg का प्रबन्ध देखिए (Alexander and the Greeks, ch iii)

प्रशंसा करनी चाहिए कि उसने इन विचारों को व्यवहार रूप में परिणत करने तथा यूनानी (या मैसिडोनियन) और बर्बर[1] जातियों के मध्य के अन्तर को दूर करने का प्रयास किया। यूनानी तथा पौरस्त्य जातियों में अच्छा सम्बन्ध स्थापित करने के परिणामस्वरूप वह किस प्रकार की राजनीतिक एकता की अपेक्षा करता था इसके बारे में तो कहना कठिन है किन्तु सांस्कृतिक एकता में प्रधानता यूनानी संस्कृति को ही मिली इतना तो प्रायः निश्चित ही है। सम्भव है कि नये नगर राज्यों की स्थापना करने में वह यूनान की संस्कृति का विस्तार करने की अपेक्षा सैनिक सुरक्षा के विचार से अधिक प्रभावित हुआ हो। किन्तु जैसा कि हम अभी ऊपर देख चुके हैं इसके परिणामस्वरूप यूनानी संस्कृति तथा यूनानी भाषा[2] का विस्तार हुआ।

सिकन्दर के उद्देश्य जो भी रहे हों अपने कार्यों से उसने पूर्वी भूमध्यसागरीय प्रदेश की राजनीतिक व्यवस्था में ऐसे परिवर्तनों को जन्म दिया जिनका क्रम चलता ही रहा। चौथी शताब्दी के समाप्त होने के पूर्व ही यह प्रतीत होने लगा था कि सिकन्दर के सेनापतियों में जो परस्पर युद्ध चल रहा है उसका निर्णय किसी एक के पक्ष में नहीं हो सकेगा और इनमें से कोई भी एक सिकन्दर तथा उसके साम्राज्य का उत्तराधिकारी नहीं हो सकेगा। मिस्र में टाल्मी (Tolemies) वंश को शासनाधिकार प्राप्त हुआ। सीरिया में सैल्यूसिड (Seleucids) साम्राज्य की स्थापना हुई और एशिया

---

१ यह श्रेय किस मात्रा में दिया जा सकता है निर्धारित करना कठिन है। W W Tarn (proc Brit Acad xix १९३३, १२३-१६६) ने सिकन्दर को अत्यधिक श्रेय दे रखा है। दर्शन के इतिहास की पुस्तकों में विश्व राज्य की कल्पना का श्रेय मुख्यतया 'सिनिक' और 'स्टोइक' विचारकों को दिया गया है।

२ टाल्मी वंश के शासन काल में मिस्र में जहाँ यूनानी भाषा का प्रचार नये नगरों के कारण उतना नहीं हुआ जितना यूनानी भाषा भाषी लोगों के प्रसार के कारण। मिस्र में तो केवल दो ही प्रमुख नगर थे—टोलेमाइस और अलेक्जेंड्रिया—किन्तु मिस्र की भाषा का प्रयोग केवल मजदूर ग्रामीण ही करते थे। सीरिया में हेलेनी (यूनानी) करण की नीति का अनुसरण किया गया जिसका यहूदियों ने तीव्र विरोध किया। किन्तु सीरिया के नगरों में इस नीति को पर्याप्त सफलता प्राप्त हुई और वहाँ प्राचीन सांस्कृतिक आधार पर नये यूनानी मैसिडोनियन नगरों का निर्माण हुआ। किन्तु यह नीति मिस्र और सीरिया दोनों देशों में असफल हो रही। देहाती क्षेत्र यूनानी प्रभाव से अछूते ही रह गये और नगरों में प्रवासी यूनानी पौरस्त्य की संस्कृति के प्रभाव में आये बिना नहीं रह पाये।

माइनर में कई छोटे-छोटे राज्यों का उदय हुआ। 'मेसिडोनिया' के साम्राज्य के लिए उत्तराधिकार का संघर्ष पर्याप्त समय तक चलता रहा। किन्तु यूनान के मुख्य भू-भाग को विघटित होने से बचाने के लिए मेसिडोनिया के शासक सामान्यतः तत्पर रहे। यूनानी मुख्य भू-भाग में सामान्यतया वैधानिक शासन व्यवस्था चलती रही, किन्तु कुछ राज्यों में विशेष कर एथेन्स में मेसिडोनियन सत्ता तथा इसके समर्थकों के हित में संविधान में क्रान्तिकारी परिवर्तन किये गये। शताब्दी (३०० ई० पू०) के समाप्त होने के उपरान्त संघों की महत्ता एवं शक्ति में महत्वपूर्ण वृद्धि हुई।[1] २८१ ई० पू० में 'एकियन' (Achaean) संघ की पुनः स्थापना हुई। यह सबल शक्तिशाली संघ था। छोटे तथा पिछड़े हुए राज्यों और जातियों ने भी सहयोग में काम किया और यह अनुभव किया कि विगत शताब्दी के स्पार्टन आधिपत्य की अपेक्षा इस समय मैत्री एवं संघ की स्थापना सुगम है। संघीय विचारों की ओर इस युग के दार्शनिकों ने और एक शताब्दी पूर्व दार्शनिकों की भाँति ही (अध्याय ८) विशेष ध्यान नहीं दिया। राजनीतिक विचारकों की दृष्टि में नगर राज्यों का संघ एक नये प्रकार का राज्य न था। वे इस प्रकार के संघ को अब भी कई राज्यों के समूह के रूप में ही देखते थे। इस प्रकार का समूह मनुष्यों के जीवन को वह श्रेष्ठता प्रदान करने में असमर्थ था जिसकी आशा पोलिस राज्य से करता था। तथापि यदि नगर राज्यों के लिए अब भी 'पोलिस' शब्द का ही प्रयोग होता था तो 'सार्वजनिक हित' की धारणा भी जब एक बड़े समुदाय के सम्बन्ध में व्यवहृत होने लगी थी और पाँचवीं शताब्दी ई० पू० से ही 'लोक' अथवा शासनतन्त्र के लिए 'कोइनान' शब्द का प्रयोग पर्याप्त प्रचलित हो चला था। तीसरी शताब्दी ई० पू० में एण्टीगोनस डोसन (Antigonus Doson) ने मेसिडोनिया को भी एक 'कोइनान' (संघ) में परिवर्तित कर दिया। सिकन्दर तथा उसके उत्तराधिकारियों द्वारा स्थापित यूनानेतर जगत के नगर राज्य तथा नव स्वतन्त्र प्राचीन द्वीप और नगर राज्य यूनानी संस्कृति के मुख्य केन्द्र बन गये। स्थानीय सम्राट् से इन नगर राज्यों का सम्बन्ध देश और काल के अनुसार भिन्न भिन्न रहा। कुछ नगर-राज्य ऐसे थे जो सम्राट के राज्य के अन्तर्गत न आकर बाहर रहते थे। कुछ नगर राज्य सम्राट से संधि करके स्वतन्त्र होने का दिखावा करते थे, यद्यपि यह स्वतन्त्रता नाममात्र के लिए ही थी। कुछ नगर राज्यों में लिखित संविधान थे, किन्तु ये संविधान नागरिकों की स्वतन्त्र सम्मति से न प्राप्त हो कर बाह्य

---

1 ३३८ ई० पू० में फिलिप द्वारा स्थापित सामान्य यूनानी संघ को ३०२ ई० पू० में पुनः नवजीवन प्रदान किया गया। किन्तु यूनानी राज्यों को एकता के सूत्र में बाँधने में यह समर्थ न हो सका। डेमेट्रियस द्वारा स्थापित संघ के बारे में इस अध्याय के अन्त में दी गयी अतिरिक्त टिप्पणी देखिए।

द्वारा से सन्धि के फलस्वरूप प्राप्त हुए थे और किसी भी विदेशी सत्ता से सन्धि करने के परिणामस्वरूप प्राप्त संविधान स्वतन्त्रता का लक्षण न होकर परतन्त्रता का ही द्योतक है।[1] मागिया और एशिया के नगर राज्य अपनी सभाओं, व्यायामशालाओं (Gymnasia) उत्सवों और बाजारों के माध्यम से यूनानी संस्कृति की भरसक रक्षा कर रहे थे परन्तु अपनी राजनीतिक दुर्बलता को छिपाने में वे असमर्थ थे। इन राज्यों में से कुछ के पास अपनी निजी सेना भी थी, किन्तु इस सेना का प्रयोग वे सम्राट की सहायता के लिए ही कर सकते थे। अपनी पूर्ण स्वतन्त्रता तथा युद्ध और सुलह करने का अधिकार वे खो चुके थे।

नगर राज्यों की स्वतन्त्रता के अपहरणस्वरूप नागरिकों के दृष्टिकोण में क्या परिवर्तन आया इसके सम्बन्ध में तो कुछ कहना कठिन है किन्तु इसके परिणामस्वरूप नगर राज्यों के धार्मिक जीवन का ह्रास अवश्य हुआ। प्राचीन देवताओं के नाम से चलने वाले सम्प्रदाय अब भी जीवित थे, कुछ मात्रा में उनका विस्तार भी हुआ और अपने मंदिरों और धार्मिक उत्सवों पर लोग अब भी गर्व करते थे। किन्तु अधिकांश नगर राज्यों में राज्य तथा इसके देवता का पारस्परिक सम्बन्ध शिथिल हो गया था। पर्याप्त संख्या में ऐसे लोग थे जिन्हें अब वह सामाजिक एवं भावनात्मक संतोष नहीं प्राप्त होता था जो पहले के नागरिक धर्म से मिलता था। एशिया-माइनर, सीरिया, मिस्र और मुख्य यूनानी भू-भाग के यूनानियों में भी ज्योतिष, अन्धविश्वास, रहस्यवादी धर्मों तथा पौरस्त्य के देवताओं से सम्बन्धित सम्प्रदायों का प्रचलन प्रारम्भ हो गया था तथा बढ़ता ही जा रहा था। नव स्थापित नगर राज्यों में तो राज्य के प्रति धार्मिक निष्ठा विशेष रूप से कमजोर था। जिन राज्यों के निवासी पूर्णतया यूनानी थे और जहाँ विदेशी रहते थे सम्मिश्रण नहीं भी हुआ था वहाँ के निवासियों में भी वह एकता नहीं थी जो प्राचीन नगर राज्यों की विशेषता थी। व्यापार में पर्याप्त वृद्धि हुई थी और पाँचवीं शताब्दी ई० पू० की अपेक्षा अब भूमध्य सागरीय प्रदेशों की यात्रा करना अधिक सुगम हो गया था। व्यापार में वृद्धि के फलस्वरूप केवल व्यवसायियों के आवागमन में ही वृद्धि नहीं हुई कुछ ऐसे व्यक्तियों का भी इन नगरों में आगमन हुआ जो नये अवसरों की खोज में अथवा भाग्य सम्पत्तिशाली बनने की अभिलाषा लेकर आते थे और इन नगरों में बस जाते थे। इन प्रवासी व्यक्तियों और नगर राज्य का सम्बन्ध घनिष्ठ नहीं हो सकता था। नगरों में वे रहते अवश्य थे किन्तु इन्हें अपना निवास-स्थान नहीं मानते थे।

---

1 उदाहरणार्थ टालेमी सोटर तथा साइरीन निवासियों की सम्मति द्वारा स्थापित साइरीन का संविधान। इसके सम्बन्ध में इस अध्याय के अन्त में दी गयी अतिरिक्त टिप्पणी देखिए।

इनका कोई भी निवास-स्थान नहीं था, क्योंकि निवासस्थान की यूनानी विचार-धारा मकान की अपेक्षा नगर और जन्म भूमि की धारणा पर आधारित थी। यह यूनानी प्रवासी नगर राज्यों में निवास अवश्य करते थे किन्तु प्राचीन परिभाषा के अनुसार नागरिक कहलाने के अधिकारी नहीं थे। क्योंकि स्वतन्त्र नगरराज्य के धर्म एवं विधि पर अवलम्बित शिक्षा उन्हें नहीं मिल सकी थी। इनके अपने नगर राज्य में कितने ही मन्दिर क्यों न हों, उत्सवों का बाहुल्य क्यों न हो और वह राज्य कितना ही सम्पन्न क्यों न रहा हो, आचरण और शिक्षा के मानों की खोज इन्हें अन्यत्र ही करनी पड़ती थी।

सिकन्दर के पश्चात के नये युग की राजनीतिक विचारधारा का अध्ययन हम इसी पृष्ठभूमि में करना है। दर्शन का जो लोकप्रियता इस युग में प्राप्त हुई वह पहले कभी भी नहीं मिली थी और ऐसा प्रतीत होता था कि दर्शन का यह प्रेम उस क्षति की पूर्ति कर सकेगा जो यूनानी जीवन के दूसरे क्षेत्रों में हुई थी। किन्तु 'ज़ेनो' (Zeno) तथा एपिक्यूरस (Epicurus) द्वारा प्रतिपादित दर्शन के नये सिद्धान्त केवल उच्च शिक्षा प्राप्त व्यक्तियों को ही आकृष्ट कर सके। सामान्य जनता इस उच्च स्तरीय दर्शन को नहीं समझ सकती थी। उसके लिए सामान्य ज्ञान एवं विचारों की आवश्यकता थी जो उसे लोकप्रिय यायावर दार्शनिकों से मिले। ये दार्शनिक भाषण न देकर उपदेश दिया करते थे। किन्तु दर्शन (फिलासाफिया) को लोग अब भी सामान्य शिक्षा से ही सम्बन्धित विषय समझते थे (अध्याय ७) और ऐसे बहुत-से लोग थे जो व्यायाम, खेलकूद अथवा व्यावसायिक कार्यों से सन्तुष्ट न हो पाते थे। ऐसे लोग इन यायावर दार्शनिकों की शिक्षा से अपनी बौद्धिक पिपासा शान्त करते थे तथा आचरण सम्बन्धी निर्देश प्राप्त करते थे। यूनान के जीवन में इस प्रकार के लोकप्रिय दार्शनिक इसी युग में नहीं उत्पन्न हुए। वहाँ के लोगों के लिए यह नयी बात न थी। इस सम्प्रदाय के प्रवर्त्तक तथा सर्वविख्यात समर्थक सिनाप के डायोजनिस (Diogenes of Sinope) के बारे में जो किंवदन्तियाँ प्रचलित थीं और जिनके आधार पर यह कहा जाता है कि सिकन्दर उनसे मिला था, उनमें डायोजेनिस का जो चित्र प्रस्तुत किया जाता है वह एक वृद्ध पुरुष का चित्र है। यह विचारधारा प्रधानतया राजनीतिक न थी इसके विपरीत यह नगर राज्य (पोलिस) की उपयोगिता को भी नहीं स्वीकार करती थी। तथापि डायोजनिस के बारे में यह कहा जाता है[1] कि उसने मनविज्ञान पर एक पुस्तक लिखी। इसका यह अर्थ नहीं कि इस विषय के अन्य यूनानी लेखकों की भाँति उसने

---

१ यह सही है, किन्तु इस पुस्तक की विषय-वस्तु के सम्बन्ध में हमें एक सम्प्रदाय के विरोधियों के आक्षेपों के माध्यम से ही जानकारी प्राप्त होती है (अध्याय १३ के अन्त में दी गयी टिप्पणी देखिए)।

भी किसी आदर्श राज्य की रूपरेखा प्रस्तुत की। इससे तो केवल यह आभास होता है कि इस सम्प्रदाय के लोगों की, जिन्हें सनकी (Cynic) के नाम से सम्बोधित किया जाता है अपनी पृथक जीवन पद्धति थी और अपनी अपनी नैतिक मान्यताएँ। किन्तु इनकी जीवन पद्धति तथा नैतिक मान्यताओं का आधार नगर राज्य न था। यही कारण है कि इनके विरोधियों को इनकी शिक्षा में अराजकता दृष्टिगोचर हुई और उन्होंने इस सम्प्रदाय के अनुयायियों की आदतों की उपमा कुत्ते की आदतों से दी और स्वयं डायोजनिस को कुत्ता डायोजनिस (क्यूआन) की उपाधि दी। ऐसा प्रतीत होता है कि यह नाम सामान्य रूप से स्वीकार कर लिया गया क्योंकि यूनानी भाषा में सनकी (क्यनिकोस) की व्युत्पत्ति श्वान (क्यूआन) से होती है। सिनिक डायोजनिस (Diogenes the Cynic) ने जान-बूझ कर एथेंस की मध्यम वर्गीय नैतिकता का उन्मूलन करने का कार्य आरम्भ किया और उपयोगी एवं अनुपयोगी अथवा मूल्यवान एवं मूल्यहीन की मान्यताओं के सम्बन्ध में लोगों के विचारों को बदलने का प्रयास किया। जब वह अपने को कूट या छली (Forger) कहता है और अपना यह संकल्प घोषित करता है कि वह प्रचलित मुद्रा[1] का स्वरूप बदल देगा तो सम्भवत उसका यही तात्पर्य है कि वह प्रचलित मान्यताओं और मूल्यों को बदलना चाहता है। मान्यताओं का यह नया विपर्यय है, कल्लिक्लीज और महामानव (अध्याय ५) के सिद्धान्त से यह सर्वथा भिन्न है। तथापि नगर-राज्य की सत्ता के लिए यह भी उतना ही घातक है जितना कि कल्लिक्लीज का सिद्धान्त। डायोजनिस समाज का उन्मूलन इस लिए करना चाहता था कि यह पथ है इसलिए नहीं कि यह निर्बल है। वह विश्ववादी था किन्तु उसका विश्ववाद समष्टिवादी न होकर व्यष्टिवादी था और समस्त मानव जाति की एकता की कल्पना नहीं करता था।

डायोजनिस ने अपनी अनुपलब्ध पुस्तक में जो कुछ भी लिखा हो, उसे तथा उसके उत्तराधिकारियों को जो सनकी के नाम से विख्यात हुए पर्याप्त मात्रा में एसे श्रोता मिल जाते थे जो नगर राज्य के दर्प तथा इसकी कृत्रिम विधि व्यवस्था पर दिये जाने वाले उनके उपदेशों को ध्यानपूर्वक सुनते थे। धनोपार्जन उस समय विधि-सम्मत ही नहीं माना जाता था बल्कि सामान्य पद्धति का रूप ग्रहण कर चुका था। इस परम्परा को बदलने तथा सम्पत्ति से वंचित लोगों को यह समझाने का प्रयास कि सम्पत्ति वास्तव में एक अनुपयोगी भार है कुछ मात्रा में समाज के लिए उपयोगी एवं लाभप्रद सिद्ध

---

[1] यूनानी भाषा में मुद्रा तथा विधि व्यवस्था की उत्पत्ति एक ही धातु से हुई है (मुद्रा के लिए नोमिस तथा विधि व्यवस्था के लिए नोमिस्मा)। मुद्रा भी एक प्रकार की परम्परा ही है।

हुआ। किन्तु सम्पत्ति का जो मखौल ये लोग उड़ाते थे उससे सम्पत्तिशाली वर्ग इनसे क्षुब्ध और कुपित हो गया। इस सम्प्रदाय के प्रारम्भ के अनुयायियों का जो विरोध हुआ वह अधिकांशतया समसामयिक लोगों[1] के मध्यम वर्गीय पूर्वाग्रह के कारण था और कुछ मात्रा में इस कारण से कि ये स्वयं मध्यम वर्गीय लोगों के लिए सदा तत्पर रहते थे। ('epater les bourgeois') देशभक्ति का जो मखौल ये उड़ाते थे उससे भी लोगों को अत्यन्त क्षोभ होता था। देशभक्ति नगर राज्यों में विशिष्ट गुण समझा जाता था यद्यपि तत्कालीन यूनानी जगत में इस भावना का ह्रास प्रारम्भ हो चुका था। तथापि एथेन्स में यह परिवर्तन इतनी शीघ्रता से नहीं हुआ और वहाँ अब भी देशभक्ति और मातृभूमि के प्रति प्रेम आवश्यक गुण माने जाते थे। प्राचीन परिपाटी के समर्थक थीब्ज के सनकी क्रेटस (Crates of Thebes) अवश्य ही असन्तुष्ट रहे होंगे, क्योंकि उसने होमर की उन कविताओं का उपहास किया है जिसमें होमर आडिसियस का स्वदेश वापस लौटने की उत्कट आकांक्षा का वर्णन करता है और उससे अपनी मातृभूमि इथाका की प्रशंसा करवाता है। क्रेटस तो घर को भी कारावास समझता है और अपनी पैरोडी में इथाका की जन्मभूमि का स्थान यायावर की झोली को देता है जो एक प्रकार से इन सनकी दार्शनिकों का प्रतीक बन गयी थी। क्रेटस की इस पैरोडी में नगर राज्य के प्रति इस सम्प्रदाय के दृष्टिकोण का भी आभास मिलता है। पैरोडी इस प्रकार है

> The Wallet is a city set in a sea of humbug,
> Rich and rare, all girt about and empty
> Thither sails no fawning fool on fornicator,
> Here are thyme and scalli on, figs and bread

---

१ इस विरोध की उग्रता उत्तरोत्तर बढ़ती गयी और इस सम्प्रदाय के विरुद्ध मानव मांस के भक्षण तथा अगम्यागमन का आरोप भी लगाया गया। इस प्रकार के आरोप निराधार ही थे। ईसाई मत के प्रारम्भिक अनुयायियों के विरुद्ध भी इसी प्रकार के आरोप लगाये गये, क्योंकि उनकी शिक्षा से भी लोग प्रारम्भ में क्षुब्ध ही हुए (उदाहरणार्थ Minucius Felix, Octavius ch २८) ई० पू० की प्रथम शताब्दी में एपिक्यूरियन तथा 'स्टोइक' दोनों मतों के अनुयायियों ने 'सिनिक' विचारकों का विरोध किया। देखिए D R Dudley, History of Cynicism (१९३७), pp १०२-१०३, and W Cronert, Kolotes and Menedemos (१९०६), pp ५८-६५ (C Wessely s Studien Zur palaeographie und Papyrus-kunde vi)

Wherefore they fight not with each other
nor carry arms
They fight not over these things nor for
handful of small coin nor for fame
(Fr २ m)

सम्पत्ति को युद्ध का कारण मानना, दुर्गुण और विलास से घृणा करना, इस सम्प्रदाय की कुछ ऐसी विशेषताएं थीं जो प्लेटो की रिपब्लिक का स्मरण कराती हैं। क्रेटस भी प्लेटो की ही भांति सात्विक जीवन का समर्थक था और अपरिग्रह की जो विशेषता इस सम्प्रदाय में पायी जाती थी वह सॉक्रेटीज के गुणों से मिलती-जुलती है। किन्तु इस सम्प्रदाय की यह धारणा कि नगर राज्यों का अस्तित्व अनावश्यक है पांचवीं शताब्दी ई० पू० में कल्पनातीत था। चौथी शताब्दी के अन्त में जब नगर राज्यों के जन-कल्याण के कार्यों में कमी आ गयी थी और इनकी शक्ति और क्षमता क्षीण हो चली थी इस प्रकार की कल्पना करना कठिन न था। ३१५ ई० पू० में जब क्रेटस के नगर का पुनर्निर्माण हुआ तो उसने वहाँ जाने से इनकार कर दिया। यह नगर उसके लिए कोई महत्त्व नहीं रखता था। मेरा एक नगर नहीं है　समस्त संसार मेरा निवास स्थान है। (Fr १७ m) पांचवीं शताब्दी के डेमॉक्राइटिस के लिए (Fr २४७ अध्याय ४) जो विरोधाभास के रूप में प्रतीत होता था वही अब सामान्य हो गया है सिद्धान्तमात्र न होकर वास्तविकता में परिणत हो गया है। किन्तु यह कहना कि प्रत्येक स्थान को मैं अपना घर समझता हूँ[1] का तात्पर्य यही है कि प्रत्येक स्थान पर मैं विदेशी हूँ। यह तथ्य ध्यान देने योग्य है कि क्रेटस तथा वह लड़की जिसने अपनी सारी सम्पत्ति का त्याग करके उससे विवाह किया यद्यपि अपना निजी घर नहीं रखते थे, फिर भी उनके लिए एक आधार अवश्य था जहाँ वे अपनी यात्राओं के पश्चात लौट सकते थे। यह आधार एथेन्स था। वास्तव में क्रेटस सभ्य जीवन पसन्द करता था। उसने नाटकों की रचना की। उसकी व्यंग्यात्मक कविताएं (parodies) भी किसी गम्भीर उद्देश्य से लिखी गयी थीं। उसकी गद्य शैली प्लेटो की शैली पर आधारित थी। साहित्य एवं रंगमंच के क्षेत्र में एथेन्स अब भी संसार का प्रमुख केन्द्र माना जाता था। सुखान्त नाट्य रंगमंच पर मेनण्डर (Menander) और डिफिलस (Diphilus) का बोलबाला था। ई० पू० तीसरी शताब्दी में साहित्य और विज्ञान के क्षेत्र में एथेन्स की प्राथमिकता समाप्त होकर अलेक्जेण्ड्रिया के हाथ चली गयी। किन्तु दर्शन के क्षेत्र

1　होमर के 'परिरुटोस' के स्थान पर Stephanus तथा अन्य लेखकों ने परिरुपोस (जिसका अर्थ होता है 'सभी गन्दे') का प्रयोग किया है यह परिवर्तन उचित नहीं था।

म एथेन्स की प्रधानता अगले ९०० वर्षों तक कायम रही । अत अब हम एथेन्स की दार्शनिक विचार धाराओ पर विचार करेंगे ।

प्लेटो की अकादमी म अब भी गणित का अध्ययन किया जाता था। किन्तु प्लेटो के राजनीतिक प्रशिक्षण की पद्धति का अनुसरण किस मात्रा म किया जाता था इस सम्बन्ध म कुछ भी नहीं कहा जा सकता । इसम सन्देह नहीं कि इसका प्रभाव कम हो गया है और २६० ई० पू० म जब आरसिलाउस (Arcesilaus) की अध्यक्षता म इसम नय प्राण का सचार हुआ तो इसका रूप बदल चुका था और वह राजनीतिक प्रशिक्षण का सस्थान नही रह गयी थी। तीसरी शताब्दी ई० पू० के दो पुरातन छात्रो के विषय म हम अवश्य सुनते है, य सिसियोन (Sicyon) के तथाकथित मुक्ति दाता एकडीलस (Ecdelus) और डेमोफ़ेनस[1] (Demophanes) किन्तु यह नहीं कहा जा सकता कि अकादमी म उन्होने किस प्रकार की शिक्षा प्राप्त की थी। सोक्रटाज की प्रश्नोत्तर-पद्धति पर लिखे गये कुछ लघु सवाद अवश्य मिलते है जो अन्य बौद्धिक स्तर के न होते हुए भी प्लेटो के आदर्शवादी (platonic) दृष्टिकोण का प्रतिपादन करते है। राजनीतिक विचार धारा की दृष्टि से इनम सबसे महत्त्व पूर्ण रचना 'माइनोस' (Minos) है इसके उपशीर्षक विधि के सम्बन्ध म स इसकी विषय-वस्तु का सकेत मिलता है। सोक्रटीज और दूसरे पात्र म यह समझौता हो जाता है कि विधि अथवा 'नोमस' (Nomos) प्रथा और परम्परागत आचरण से तथा नगर राज्य के आदेशो और निर्णयो म पृथक् कुछ और भी महत्त्व रखती है। इसका यह उद्देश्य होना चाहिए कि यह यथार्थ का खोज करे। विभिन्न विधियो के अन्तर का कारण यह है कि इस प्रकार का खोज म सफलता नही प्राप्त हुई। यह नहीं कि विधि अवास्तविक है। किन्तु कौन इस वास्तविकता अथवा यथार्थ की खोज करेगा और हम यह बतायेगा कि कौन-सी विधि सम्यक है जिस प्रकार एक चिकित्सक ही हम यह बता सकता है कि कौन-सी औषधि उपयुक्त है (और इसी प्रकार अन्य क्षेत्रो म भी विशेषज्ञ एव श्रेष्ठ व्यक्ति ही सही राय दे सकते है) उसी प्रकार सम्राट् और अच्छे व्यक्ति ही विधि के सम्बन्ध म सुझाव दन की सामर्थ्य रखते हैं, क्योकि व ही विधि के विशेषज्ञ होते हैं। समस्या यह नहीं है कि वैयक्तिक शासन होगा अथवा अन्य किसी प्रकार का। समस्या तो सर्वश्रेष्ठ विधायक की सेवा उपलब्ध करने की है। इस धारणा के आधार पर कि सबसे पुराना और सबसे स्थायी सविधान ही सर्वश्रेष्ठ होता है प्रधानता लाइकरगस को न देकर क्रीट के माइनोस (Minos) को दी जाती है। इस पुस्तक के अनुसार

---

१ देखिए M Cary, A History of the Greek World ३२३—१४६ B C (१९३२), pp १३८–१४१

माइनोस ने स्वयं जियूस (Zeus)[1] से शिक्षा ग्रहण की थी और उनका बनाया हुई विधि-व्यवस्था पर्याप्त समय तक दृढ़ और शक्ति शाली बना रहा और स्पार्टा के लाइकर गस ने इसको आदर्श स्वरूप स्वीकार किया। विधायक के रूप में माइनास का एक गुण यह भी था कि वह अपनी बनायी गयी विधि का अनुसरण स्वयं भी करता था। इस काल की दूसरी और स्पष्टत अविश्वसनीय रचना प्लेटानिका (platonica) के सम्बन्ध में कुछ कहने की आवश्यकता नहीं प्रतीत होती। इसमें राजनीतिक विचारों का अध्ययन कहीं कहीं तो परम्परागत ढंग में किया गया है और परन्तु कहीं कहीं आव श्यक गम्भीरता का अभाव दिखाई देता है यद्यपि जान बूझ कर ऐसा नहीं किया गया। उदाहरण के लिए कहा जाता है कि यदि आपको ज्ञात है कि राज्य के लिए किस बात की आवश्यकता है तो वाद विवाद अथवा विचार विमर्श अनावश्यक है, यदि आप राज्य की आवश्यकताओं को नहीं जानते हैं तो इस प्रकार के विचार विमर्श से कोई लाभ नहीं। (Demodocus) सिसिफस (Sisyphus) में इसी नाम का एक व्यक्ति केवल इसलिए उपहास का पात्र बन जाता है कि वह नागरिकता के अपने कर्त्तव्यों के प्रति सजग रहता है। इस संवाद का अन्त भी उसी प्रसंग से होता है जिससे इसका प्रारम्भ हुआ था। सही परामर्श प्राप्त करने का कार्य जहां का तहां रह जाता है। (निःसन्देह पौराणिक सिसिफस के आधार पर ही इस संवाद की रचना की गयी है)।

अरिस्टाटल द्वारा चलाये गये विद्यालय (Lyecum) का उत्तराधिकारी थियोफ्रस्टस (Theophrastus) था। अपने आचार्य की भांति वह भी बहुमुखी प्रतिभा सम्पन्न व्यक्ति था। अरिस्टाटल की भांति वह भी प्राकृतिक विज्ञान के अध्ययन में विशेष रुचि रखता था। वनस्पति और पशुओं के सम्बन्ध में उसकी कई रचनाएं थीं। किन्तु उसकी सबसे लोकप्रिय और प्रभावशाली कररक्टस Chara cters है जो नीति विषयक है। किन्तु थियोफ्रस्टस की नीति राजनीति से पृथक है और मनुष्यों के आचरण का अध्ययन उनके व्यक्तिगत स्वभाव और गुणों के सन्दर्भ में करती है राज्य के सन्दर्भ में नहीं। तथापि थियोफ्रस्टस का एक पात्र कुलीन तन्त्रीय मनुष्य है जो शासन करना चाहता है सर्वसाधारण के नियंत्रण को असह्य पाता है और सब निम्न वर्ग के लोगों की शिकायत करता रहता है। सार्वजनिक पदों और राज्य की सत्ता को इन व्यक्तियों के हाथ में देने तथा अधिक करके विरुद्ध भी वह आपत्ति करता है। थियोफ्रस्टस ने लोकतन्त्रात्मक मनुष्य का वर्णन नहीं किया किन्तु इसका यह कारण नहीं है कि इस प्रकार के मनुष्य के स्वभाव से सम्बद्ध वर्ग विचारों का सर्वथा लोप हो चुका था। अपितु इसलिए कि वह केवल अवाञ्छनीय प्रकार के मनुष्यों का चरित्र चित्रण प्रस्तुत

---

[1] तुलना कीजिए Dio Chrys, I ३८ ff

कर रहा था। इसके विपरीत थियोफ्रेस्टस के कुछ समय पूर्व यह प्रमाण मिलता है कि लोक-सत्तात्मक व्यक्ति की धारणा अब भी जीवित थी और उस पर बहुधा विचार विमर्श हुआ करता था। जिन 'सामान्य व्यक्ति' स्थान वक्ता एस्कीस का उल्लेख पहले किया जा चुका है उन्होंने लोकतन्त्रात्मक स्वभाव वाले व्यक्ति का वर्णन किया है, किन्तु जिस शब्दावली का वह प्रयोग करता है वह प्लेटो की भाषा से सर्वथा भिन्न है। उसने नीति तथा राजनीति दोनों प्रकार की शब्दावलियों का प्रयोग किया है और कुलीनतन्त्रात्मक मनुष्य की तुलना में लोकतन्त्रात्मक स्वभाव वाले व्यक्ति का जो चित्र प्रस्तुत किया है वह आत्मसंयम और तत्पूर्ण साहसी बुद्धिमान व्यक्ति का चित्र है जो न तो अपव्ययी है और न अत्यल्पलुप यह एक ऐसे व्यक्ति का चित्र है जो सदा जनता का हितैषी है।[1] थियोफ्रेस्टस ने अनेक शाखाओं पर रचनाएँ की[2] किन्तु राजनीतिक दर्शन पर उसकी निम्नलिखित रचनाएँ ही उपलब्ध हो सकी हैं —'On Laws' On Kingship', The Best Constitution, political Measurs for Appropriate Ocassions' अन्तिम दोनों शीर्षकों से यह आभास होता है कि अरिस्टाटल की भाँति थियोफ्रेस्टस भी राजनीतिशास्त्र को दो खण्डों में विभाजित करता था—एक सैद्धान्तिक और कल्पनात्मक, और दूसरा, व्यावहारिक तथा सामयिक (समस्याओं से सम्बन्धित)। अरिस्टाटल की पॉलिटिक्स के उपलब्ध भाग की तुलना में थियोफ्रेस्टस का अध्ययन कहीं अधिक सुव्यवस्थित और क्रम-बद्ध है (उसकी अन्तिम पुस्तक (political Measurs for Appropriate Ocassions) का एक उद्धरण यह सिद्ध कर देता है कि इस पुस्तक की विषय-वस्तु इसके शीर्षक की उपयुक्तता को चरितार्थ करती है। राज्य-सत्ता धारियों को यह परामर्श दिया जाता है कि अपने अधिकारियों के पदों का नामकरण इस प्रकार करें कि जनता को वे बुरे न प्रतीत हों। उदाहरण के तौर पर बताया जाता है कि स्पार्टा में प्रयुक्त होने वाला पदनाम एनामास्टीज, एथेन्स में प्रयुक्त होने वाले अभिधान एपिस्कोमोज अथवा रक्षक (फाइलक्स) की अपेक्षा कहीं अधिक उपयुक्त है। 'आन लॉज' (On Laws) की तुलना प्लेटो की (Laws) लॉज से न करके अरिस्टाटेल के 'संविधानों के संग्रह' से करना चाहिए क्योंकि इसमें विभिन्न देशों की विधि-व्यवस्था का वर्णन किया गया है। प्लेटो की 'रिपब्लिक (Republic) का सारांश प्रस्तुत करने के लिए भी उसे पर्याप्त ख्याति मिल चुकी थी।

यह भी ध्यान देने योग्य है कि थियोफ्रेस्टस ने राजतन्त्र (Kingship)

---

१ Aeschines, Ctesiph १६८–१७०।

२ Diogenes Laertius ने लगभग २०० शीर्षकों की सूची प्रस्तुत की है।

का भी अध्ययन प्रस्तुत किया और इस विषय पर प्रस्तुत की जाने वाली पुस्तकों की लम्बी सूची में उसकी पुस्तक का स्थान सर्वप्रथम है। इसमें सन्देह नहीं कि यह कोई नया विषय नहीं था किन्तु सिकन्दर की विजयों के परिणामस्वरूप राजतन्त्र के अध्ययन का व्यावहारिक महत्त्व बढ़ गया था। जहाँ दार्शनिक ने मध्यम विचारों की उपेक्षा की वहीं उन्होंने राजतन्त्र से सम्बन्धित विचारों की ओर विशेष ध्यान दिया। इस शताब्दी के प्रारम्भ के विचारों में भी यही विशेषता पायी जाती है किन्तु कारण पृथक है। उस समय मध्यम विचारों की उपेक्षा इसलिए की गयी थी कि नगर राज्य के सन्दर्भ में वे असंगत समझे जाते थे और राजतन्त्रीय विचारधारा का अध्ययन इसलिए होता था कि शासन की यह पद्धति नगर राज्य की धारणा के अनुरूप समझी जाती थी। किन्तु इस युग में राजतन्त्र का अध्ययन करने का कारण यह था कि इसके द्वारा दार्शनिक सम्राटों का नैकट्य प्राप्त कर सकते थे और इस प्रकार राजनीतिक प्रभाव का प्रयोग करने का अधिकार प्राप्त कर सकते थे। राजतन्त्र का जो अध्ययन इस युग में हुआ वह अनुपलब्ध है और उसके कारण ३०० ई० पू० के समीप की यूनानी राजनीतिक विचारधारा की विश्वसनीय सामग्री से हम वञ्चित रह जाते हैं। यूनानी राजतन्त्र की क्या विशेषता थी, विभिन्न राजतन्त्रों में क्या व्यावहारिक अन्तर था, इसके सम्बन्ध में तो लेखों, पपाइरस पत्रों तथा अन्य माध्यमों से कुछ सूचना एकत्रित की जा सकती है किन्तु इन राजतन्त्रों के पीछे कौन से राजनीतिक विचार थे तथा किस मात्रा में ये विचार आइसोक्रेटीज तथा प्लेटो और उनके बाद के विचारकों की रचनाओं में आविर्भूत हुए थे, इसके सम्बन्ध में कुछ कहना कठिन है। जहाँ इतनी बहुमूल्य सामग्री की क्षति हो गयी वहीं यह सन्तोष का विषय है कि थियोफ्रैस्टस की रचना का कम-से-कम एक विश्वसनीय सन्दर्भ आक्सीरिंकस[1] (Oxyrhynchus) की खोज में उपलब्ध हो सका। अज्ञात लेखक राजतन्त्र पर थियोफ्रैस्टस की दूसरी पुस्तक से उद्धरण देता है "और यह (राजा) वास्तव में राजदण्ड द्वारा शासन करता है केनियस की भाँति बरछे भाले द्वारा नहीं। इसकी व्याख्या करते हुए वह लिखता है कि लपिथे (Lapithae) के राजा केनियस ने अपने बरछे को दण्ड के रूप में स्थापित कर रखा था और वह स्वयं युद्ध में अजेय था। उसका शासन बल पर आधारित शासन के उदाहरण स्वरूप विख्यात हुआ और उसके इस शासन का प्रतीक उसका बरछा था। लेखक कह सकते हैं कि इस अजेय केनियस को भी सेंटार्स (Centaurs) ने पराजित किया। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि राजतन्त्र का आधार बल नहीं अपितु राजदण्ड है जिसे होमर के युग में ही (अध्याय १ देखिए) वैधानिक शासन का प्रतीक माना जाता रहा है। बाद के

---

१ p Oxy ११६१, ३८—९७ vol xiii (१९१९)

विचारकों ने वशानिनता की उपेक्षा करना प्रारम्भ किया और राजा के वयक्तिक गुणों पर ही विशेष जोर देने लगे। (देखिए अध्याय १४)।

यद्यपि वस्तु स्थिति का सूक्ष्म निरीक्षण करने तथा उस पर प्रकाश डालने की थियोफ्रस्टस की शक्ति अद्वितीय थी, तथापि मौलिक चिन्तन करने वालों की प्रथम पंक्ति में वह नहीं आता है। उसकी राजनीतिक कृतियों की क्षति खेद का विषय है। तथापि यह क्षति उतनी गम्भीर नहीं है जो डायकॉरकस (Dicaearchus) की रचनाओं के नष्ट हो जाने के परिणामस्वरूप हुई। मेसीन का डायकॉरकस (Dicaearchus of Messene) प्रतिभा सम्पन्न व्यक्ति था और उसने अनेक विषयों पर रचनाएँ कीं। सिसरो ने उसे 'महान एवं बहुप्रज परीपटेटिक'[1] (Great and prolific peripatetic) की उपाधि दी। दार्शनिकों के जीवन वृत्तान्त, इतिहास, भूगोल, साहित्य एवं संगीत सभी प्रकार के विषयों पर उसने पुस्तकें लिखीं। अपनी 'लाइफ आव ग्रीस (Life of Greeces) में वह यूनान के इतिहास का वर्णन क्रोनस (Kronos) के स्वर्ण युग से प्रारम्भ करता है जब बिना किसी परिश्रम के पदार्थ में फल प्राप्त हो जाते थे। इस स्वर्णयुग के पश्चात पशुपालन और उसके बाद कृषि युग पर आधारित जीवन का विकास हुआ। नगर राज्य के पूर्व के समुदायों, जाति, प्रजाति, बिरादरी, आदि का अध्ययन भी इस इतिहास में किया गया है। किन्तु पर्याप्त विवरण के अभाव में यह सम्भव नहीं कि प्रागैतिहासिक युग के उसके वर्णन की तुलना प्रोटेगोरस तथा प्लेटो के वर्णनों से की जा सके। यह भी ज्ञात नहीं हो सकता कि क्या इतिहास के इस अध्ययन द्वारा वह शासन के स्वरूप की खोज कर रहा था और यदि वह वास्तव में शासन के उचित स्वरूप की खोज करने के उद्देश्य से ही इस ऐतिहासिक अध्ययन की ओर प्रेरित हुआ तो वह किस निष्कर्ष पर पहुँचा। अधिक से अधिक इतना कहा जा सकता है कि मानव विकास के सम्बन्ध में वह प्रगति के सिद्धान्त की अपेक्षा ह्रास के सिद्धान्त की ओर अधिक झुका हुआ है।[2] और इतिहास की अधिकांश असन्तोषप्रद घटनाओं का कारण मानव की मूर्खता बताता है। मनुष्य के उत्तरदायित्व के प्रति वह विशेष रूप से जागरूक है और उसका कहना है कि मनुष्य अपने कार्यों द्वारा अपने लिए जो आपत्ति एवं संकट उत्पन्न करता है वह ईश्वर के तथाकथित क्रोध की तुलना में कहीं अधिक कष्टप्रद है (Fr २४ w)। ऐसा प्रतीत होता है कि अरिस्टॉटेल और थियोफ्रस्टस[3] का अनुकरण करते हुए डायकारकस ने भी विभिन्न

---

१ Cicero, De Off II १६

२ अध्याय १० पृष्ठ २४९ की टिप्पणी देखिए।

३ तथा पहले के कुछ अन्य विचारकों का भी। अकादमी के Heraclides par-

राज्यों तथा उनके संविधानों का वर्णन किया—विशेषत एथेन्स और कॉरिन्थ के संविधानों का। इनमें से अधिकांश वर्णन सिसरो के पुस्तकालय में मौजूद थे। सिसरो ने अपने पुस्तकालय के लिए डायकारकस का त्रिपॉलिटिक्स (Tripoliticus) की भी तलाश की होगी और सम्भवत उसे यह पुस्तक मिल भी गया था। आज हम भी इस पुस्तक की उतनी ही आवश्यकता है जितनी कि सिसरो को थी। किन्तु इस पुस्तक का एकमात्र विश्वसनीय खण्ड ही मिल सका है और वह भी एथिनियस (Athenaeus) द्वारा दिये गये एक उद्धरण के रूप में। इस उद्धरण में स्पार्टा की सम्भाव्य प्रणाली का वर्णन है। इस पुस्तक के शीर्षक[1] में प्रयुक्त शब्द से यह निष्कर्ष निकलता है कि त्रिपॉलिटिक्स में डायकारकस ने उस राजनीतिक सिद्धान्त का प्रतिपादन किया था जिसे बाद के लेखकों ने डायकारकसवाद (genus Dicaerchi) का नाम दिया। वायरनडायन विल्स फाटिक्स (Fr ७१ w) के अनुसार यह नाना प्रकार के संविधानों का खिचड़ा है और इसलिए प्लेटो का रिपब्लिक और इसमें आधारभूत अंतर है क्योंकि इसमें नाना प्रकार के संविधानों की अच्छाइयों का सम्मिश्रण किया गया है। सिसरो का De Re publica का निम्नलिखित अवतरण इसी प्रकार के संविधान का समर्थन करता है यद्यपि यह[2] सिद्ध नहीं किया जा

---

ticus के नाम से इन विचारकों की एक शृंखलाहीन तथा निकृष्ट रचना सुरक्षित है (Muller F H G ii १९७ ff) किन्तु यह वास्तव में Heraclides की रचना नहीं है। तथापि इससे यह ज्ञात होता है कि इस युग में इस प्रकार की अध्ययन सामग्री की माँग थी।

१ इस शब्द का प्रयोग अन्य किसी लेखक ने नहीं किया था। इससे यह प्रतीत होता है कि डायकार्कस ने ही इस शब्द का निर्माण किया यदि Tripolitikos का सामान्य प्रयोग होता भी रहा होगा तो इसका अर्थ अज्ञात है। इसका प्रयोग तीन नगरों के लिए भी उसी प्रकार से किया जा सकता था जैसा कि तीन संविधानों के लिए।

२ किन्तु यह प्राय निश्चित-सा है। डायकार्कस से सिसरो ने अत्यधिक प्रभाव ग्रहण किया था, और उसका उल्लेख वह बहुत करता था। लिखते समय उसके आस पास डायकार्कस की पुस्तकों का ढेर लगा रहता था (Att ii २) और De Re pub i संकलन करते समय उसने डायकार्कस की और प्लेटो की कृतियों का अवश्य अध्ययन किया होगा। किन्तु जहाँ वह प्लेटो की रिपब्लिक से लम्बे अवतरण प्रस्तुत किया करता है वहाँ यह नहीं स्पष्ट करता है कि डायकार्कस का उद्धरण उसने किन स्थलों पर दिया है। उपरि लिखित अनुच्छेद (१६९) Wehrli में नहीं दिया गया है।

सकता कि सिसरो वास्तव म डायकॉरकस की इसी रचना से उद्धरण दे रहा है। सिसरो की उपर्युक्त रचना म सिपिया (Scipio) कहता है, 'शासन के तीना प्रकार म मैं राजतन्त्र का सर्वश्रेष्ठ मानता हूँ, किन्तु सविधान के तीना अच्छे प्रकारा का सन्तुलित एव सयोजित रूप इससे भी अच्छा होगा, क्योकि सामान्य रूप से स्वीकार किया जाता है कि किसी भी राज्य म एक तत्त्व तो राजा और अधिकारियो का होना चाहिए, दूसरा प्रभावशाली व्यक्तियो का और तीसरा सामान्य जनता का। (अत शासन का कुछ काय राजा और उसके अधिकारियो द्वारा सम्पन्न होना चाहिए, कुछ प्रभावशाली व्यक्तियो द्वारा, तथा कुछ क्षत्र ऐसा भी होना चाहिए जिस पर जनता अपने इच्छानुसार निणय ले सके। इस प्रकार के सविधान म सवप्रथम तो प्रयाप्त मात्रा म समानता व्याप्त रहेगी और इसके बिना कोई भी स्वतन्त्र राज्य अधिक समय तक जीवित नहीं रह सकता। इसका दूसरा गुण दृढता और स्थायित्व है। इसके विपरीत सविधान के दाना विशुद्ध रूप (कुलीन-तन्त्र और लोक-तन्त्र) अपनी अच्छाई शीघ्र ही खो बठते हैं और अपने विकृत एव भ्रष्ट रूप ग्रहण कर लेते हैं।

स्पार्टा की सामाजिक-व्यवस्था तथा मिश्रित सविधान का समथन करने के कारण डायकारकस को स्पाटा के सविधान तथा राजतन्त्र, कुलीनतन्त्र और लोकतन्त्र (Sparta की पद्धति) के सम्मिश्रित रूप का सवश्रेष्ठ समथक होने की ख्याति प्राप्त हो गयी थी। किन्तु यह ध्यान देने योग्य है कि प्लेटो का 'लाज' म एक एथेन्सवासी ने ही स्पार्टा निवासियो की प्रशसा इसलिए की थी कि वे 'एक मिश्रित एव सयमित' सविधान की स्थापना करने म सफल रहे हैं। स्पार्टा के सविधान की अपेक्षाकृत अपरिवर्तनशीलता एव स्थायित्व का श्रेय सामान्य रूप से वहा के सविधान की एक विशेषता को ही दिया जाता था। तो फिर 'त्रिपालिटिक्स' म कौनसी नयी बात कही गयी है? और क्या कारण है कि मिश्रित सविधान की धारणा के साथ डायकारकस का ही नाम लिया जाता है? सम्भवत इसका उत्तर यह है कि डायकॉरकस ने प्लेटो की 'लाज' के कुछ विचारो को जो अरिस्टॉटल की पालिटिक्स के विचारो के नीचे दब गये थे पुनर्जीवन प्रदान किया। अरिस्टाटल ने स्पार्टा की सामाजिक व्यवस्था की श्रेष्ठता को स्वीकार नहीं किया था और सविधान का जो मध्यवर्गीय एव सयमित रूप उसने प्रस्तुत किया वह स्पार्टा अथवा किसी अन्य नगर-राज्य के सविधान पर आधारित नहीं है। यद्यपि अपने सविधान का वणन करने के लिए उसने यदा कदा मिश्रित और 'सयमित' शब्दो का प्रयोग किया, तथापि उसने वास्तव म तीनो प्रकार के सविधानो के तत्त्वो का मिश्रण नहीं किया। वह तो केवल यह प्रयास कर रहा था कि तीनो प्रकार के सविधानो के आधारभूत एव पथक् सिद्धान्तो को न्यायसगत ढग से प्रस्तुत किया जा सके। डायकारकस ने तीनो प्रकार के सविधानो की विशिष्टताओ का सयोजन

करके—a quartum genus moderatum et permixtum tribus[1] एक चौथे प्रकार के संविधान की रूपरेखा प्रस्तुत करने का प्रयास किया। अरिस्टाटल के मध्यमवर्गीय संविधान से यह सर्वथा भिन्न था और संविधान को अच्छी तरह से मिश्रित करने[2] के सोलन के विचार से बहुत दूर था। यद्यपि स्पार्टा की व्यवस्था की जो प्रशंसा प्लेटो ने की थी उसमें यह बड़ी अधिक आ जाता है तथापि डायकारकस के संविधान की जड़ अरिस्टाटल के विचारों की अपेक्षा प्लेटो के विचारों में ही दृष्टिगोचर होती हैं। रोम के संविधान के सम्बन्ध में इस सिद्धान्त को किस ढंग से व्यवहृत किया गया अगले अध्याय में विचार किया जायगा।

संगीतज्ञ अरिस्टोक्सेनस (Aristoxenus) भी शिक्षा-दीक्षा से पेरीपेटेटिक था। संविधान और विधि सम्बन्धी विषयों पर उसने कम से कम आठ पुस्तकें लिखीं (Fr ४५ w) किन्तु इनकी विषय वस्तु के सम्बन्ध में कुछ भी ज्ञात नहीं है। राजनीतिक विषयों पर उसके विचार डायकारकस के विचारों से मिलते जुलते हैं (Cic Att xiii ३२) किन्तु उसकी विशेष रुचि संगीत के सिद्धान्तों, नैतिक प्रश्नों और दर्शन के इतिहास में थी। पाइथागोरसवाद ने उसे विशेष रूप से आकृष्ट किया। टेरेन्टम (Tarentum) के निवासी तथा संगीतज्ञ के लिए यह स्वाभाविक ही था। प्लेटो के प्रति उसकी अश्रद्धा का उल्लेख अध्याय ७ में किया जा चुका है। अरिस्टाटल का लायसियम का एक दूसरा पुरातन छात्र फलेरम (phalerum) का डिमेट्रियस (Demetrius of phalerum) था। राजनीतिक विचारधारा के इतिहास की दृष्टि से उसकी रचनाएं अधिक महत्त्वपूर्ण हैं किन्तु इनका उपलब्ध अंश भी प्रायः नहीं के बराबर है। अरिस्टाटल और थियाफ्रेस्टस के भाषणों को वह सुन चुका था। और मेनेन्डर (Menander) तथा वक्ता डाइनारकस से परिचित था। लगभग ३२४ ई० पू० में उसने राजनीतिक जीवन में पदार्पण किया तथा ३१७ ई० पू० में मसिडोन के केसेण्डर (Cassander) ने उसे एथेन्स का शासक नियुक्त किया। १० वर्षों तक उसने यह कार्य किया। ३०७ ई० पू० में विजेता डिमेट्रियस (Dematrius) ने उसे भगा दिया और उसने टॉलमी (Ptolemy) के दरबार में शरण ली। जीवन का शेष भाग उसने विभिन्न विषयों पर लघु पुस्तकों की रचना करने में बिताया (Cic de Fin v ५४)। यद्यपि वह स्वयं बहुमूल्य और भड़कीले वस्त्रों को पसन्द करता था फिर भी अपने शासन काल में विलासिता और अपव्यय को रोकने के लिए कड़े नियम बनाये। वास्तव

१ Cicero de Re pub I ४५।

२ Aristotle politics ii १२७३ b

मे परम्परा और विदर्तिया म विलासिता के विरुद्ध बनाये गये उसके नियमा के अतिरिक्त उसकी अन्य विधियों के विषय म कुछ भी नही मिलता है। सवधानिक शासन म वह विश्वास रखता था और निरकुश शासक की भांति शासन करने का उसका विचार नही था। यह भी सम्भव हो सकता है कि उसने एक नयी विधि-संहिता का निर्माण किया और इन वाछित करने के लिए विधि सरक्षको की भी नियुक्ति की। किन्तु इस प्रकार की सवधानिक व्यवस्था जनता के विधि निर्माण करने के अधिकार पर नियत्रण के रूप म देखी जाती थी।[1] नतिक आचरण से विचलन रोकने के लिए भी उसने पर्याप्त सख्या म अधिकारी नियुक्त किये, जिन्हे पुलिस के अधिकार भी प्राप्त थे। एटिका (Attica) के निवासियों की जन-गणना भी उसने करवायी, किन्तु इस समस्त विधि-व्यवस्था द्वारा डिमेट्रियस किस प्रकार के सविधान की स्थापना करना चाहता था? लाइसियम (Lyceum) का छात्र होने के कारण उससे यह आशा की जा सकती थी कि वह अरिस्टाटल का अनुसरण करता। कहा जाता है कि उसने नागरिकता के लिए सम्पत्ति की योग्यता एक हजार ड्रैकमा (यूनानी मुद्रा) रखा था और इस प्रकार वह नागरिकता के क्षेत्र को विस्तृत करने की अरिस्टाटल की नीति का अनुसरण कर रहा था। किन्तु इसके विपरीत शासक के रूप म उसकी अपनी स्थिति[2] थी जो लोकतन्त्रात्मक शासन के प्रतिवादस्वरूप थी। (क्योंकि एक विदेशी शासक के आदेश के आधार पर वह एथेन्स का शासक बना था।) इसके अतिरिक्त अधिकारियों के कार्यों के निरीक्षण की व्यवस्था तथा लोगो के आचरण को नतिकता की सीमा म रखने के लिए लगाये गये प्रतिबन्धों से आभास होता है कि यह एक दूसरा पेरीपेटेटिक (peripatetic) था। (डाइकॉरकस के सम्बन्ध म हम अभी देख चुके) जो अरिस्टाटेल का पालिटिक्स की अपेक्षा प्लेटो की 'लाज' से अधिक प्रभावित हुआ था।[3]

यह भाग्य की विडम्बना है कि कुछ महान् पेरीपेटेटिक विचारकों की रचनाओं का अध्ययन करने के अवसर से हम सवथा वचित रह गये हैं। किन्तु इस स्कूल के कुछ कम महत्त्वपूर्ण विचारकों की रचनाएँ आज भी सुरक्षित है। अरिस्टाटल के सिद्धान्तों का बिना किसी समीक्षा के स्वीकार करने की प्रवृत्ति का प्रभाव अच्छा नहीं पड़ा, साथ ही उसके प्रारम्भिक अनुयायियों ने उसकी लिखित रचनाओं की सत्यता को यथावत् स्वीकार करने के स्थान पर उसकी मृत्यु के पश्चात उनमे वृद्धि करना प्रारम्भ कर दिया।

---

१ Aristotle polics iv १२९८ b fin

२ देखिए Fergusson Hellenistic Athens p ४०, n ३

३ इस अध्याय के अन्त मे दी गयी टिप्पणी देखिए।

परिणामस्वरूप अरिस्टाटल के नाम से अनेक रचनाएँ प्रचलित हो गयी। और आज तक चली आ रही है। इनमें अरिस्टाटेल के मूल ग्रंथों का या तो अनुकरण किया गया है अथवा उसके विचारों का सारांश रूप में प्रस्तुत किया गया है। उस समय की प्रचलित पद्धति के अनुसार इस प्रकार की रचनाएँ भी अरिस्टाटल की रचनाओं के रूप में ही स्वीकार की गयी। अतः लाइसियम (Lyceum) के किसी अन्य सदस्य की मौलिक एवं स्वतन्त्र कृतियाँ इन रचनाओं की अपेक्षा कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण होतीं, यदि वे उपलब्ध हो सकतीं। फिर भी अरिस्टाटल की 'पालिटिक्स' के आधार पर यह कहा जा सकता है कि उसके नाम से प्रचलित इन क्षेपक रचनाओं में अरिस्टाटल के विचारों का सच्चा अनुकरण नहीं किया गया है।[1] और जैसा कि अभी अभी संकेत किया जा चुका है इन विचारकों की रचनाओं में प्लेटो के राजनीतिक दर्शन की ओर जाने की प्रवृत्ति दिखाई देती है। उदाहरणार्थ Magna Moralia अथवा Great Ethics में एक अध्याय (1 ३३) न्याय पर है जो मूलतः अरिस्टाटल की Ethics की चतुर्थ पुस्तक का सारांश मात्र है। किन्तु लेखक ने अरिस्टाटल के समानुपातिक समानता के सिद्धान्त की व्याख्या करते समय इसकी तुलना प्लेटो की रिपब्लिक की द्वितीय पुस्तक से की है और कृषकों तथा शिल्पियों द्वारा निर्मित वस्तुओं के विनिमय का उदाहरण प्रस्तुत किया है। इसी प्रकार थियोफ्रेस्टस की पद्धति पर रचित एक दूसरे नैतिक ग्रन्थ Virtues and Vices' का लेखक भी एक अच्छे राज्य और मस्तिष्क अथवा आत्मा की स्वस्थ दशा की उपमा (१२५१ b ३०) का प्रयोग करता है। प्लेटो का नाम तो वह नहीं लेता है परन्तु उसका सर्वेन प्लेटोवादी सिद्धान्त की ओर ही है।

परीपैटेटिक स्कूल के अन्य ग्रन्थों में 'एकोनोमिका' (Oeconomica) शीर्षक के अन्तर्गत प्रस्तुत तीन पुस्तकें भी हैं। इनमें से प्रथम पुस्तक की रचना का श्रेय प्राचीन काल में थियोफ्रेस्टस[2] को दिया जाता था। यह मुख्यतया जेनोफन (Xeno

---

१ यहाँ यह उल्लेख कर देना अत्यन्त आवश्यक है कि Magna Moralia तथा आचरण सम्बन्धी अरिस्टाटेल की अन्य रचनाओं का सम्बन्ध विवाद का विषय है। हो सकता है कि स्वयं अरिस्टाटेल भी प्लेटो के विचारों की ओर प्रवृत्त हुआ हो। यदि अध्याय ११ के अन्त में दी गयी टिप्पणी में व्यक्त विचार सही हैं तो यह भी कहा जा सकता है कि स्वयं अरिस्टाटल ने ही इस प्रवृत्ति (प्लेटो के विचारों की ओर पुनः जाने की) का सूत्रपात किया और अपने उत्तराधिकारियों को यह परामर्श दिया कि वे प्लेटो की रचनाओं का पुनः अवलोकन करें।

२ प्रथम शताब्दी ई० पू० फिलोडेमस द्वारा। अध्याय १३ के अन्त में दी गयी टिप्पणी देखिए।

phon) और अरिस्टाटेल की रचनाओं पर आधारित है और इसका मुख्य विषय स्त्रियाँ और दासों का प्रबन्ध है।[1] तीसरी पुस्तक जो १३वीं शताब्दी के एक लैटिन अनुवाद के रूप में सुरक्षित है का विषय पति-पत्नी का सम्बन्ध है। किन्तु दूसरी पुस्तक जो स्पष्टतया पृथक् रचना है हमारे विषय से सम्बन्ध रखती है। प्रारम्भ में लेखक ने छोटे घर के प्रबन्ध ... को अर्थशास्त्र के अंश के रूप में देखता है, अथवा यह कहना अधिक उपयुक्त होगा कि अर्थशास्त्र के तीन अंगों के रूप में देखता है। क्योंकि शासन के तीन अंग होते हैं—एक, राजा द्वारा शासन, दो क्षत्रप अथवा राज्यपाल द्वारा शासन, तथा तीसरा एक स्वतन्त्र नगर का शासन तथा व्यक्ति द्वारा अपनी निजी सम्पत्ति पर प्रयुक्त होने वाला अधिकार। अरिस्टाटल की मृत्यु के उपरान्त राजनीतिक सिद्धान्तों का प्रतिपादन करने वालों के दृष्टिकोण में हुआ परिवर्तन यहाँ स्पष्ट दिखाई देता है। शासन के विभिन्न प्रकारों के अन्तर को अब अमीर और गरीब अल्पसंख्यक और बहु-संख्यक अथवा मध्यमवर्ग और शिल्पी के अन्तर के रूप में नहीं देखा जाता है। इस पुस्तक के लेखक की दृष्टि में उसी प्रकार के शासन के सम्मुख केवल एक समस्या रहती है। और वह है राजस्व की समस्या। शासन के तीनों प्रकारों का अन्तर केवल इस बात पर निर्भर करता है कि वे धन किस प्रकार एकत्र करते हैं। इस सम्बन्ध में यह पुस्तक जनाफन (Xenophon) के Ways and Means का स्मरण दिलाता है और राजनीतिक दर्शन का पुस्तक नहीं प्रतीत होता। किन्तु इसकी वाणी पर ध्यान देने से यह पुस्तक स्पष्टतया तीसरी शताब्दी ई० पू० की रचना प्रतीत होती है चौथी शताब्दी की नहीं। इसलिए जब हम यह देखते हैं कि लेखक ने शासन के सम्बन्ध में केवल पहले अध्याय में ही थोड़ा सा कहने के बाद समस्त पुस्तक में केवल धन एकत्रित करने के विभिन्न ढंगों का उदाहरण मात्र प्रस्तुत किया है और शासन के विषय पर यूनानी दृष्टिकोण की चर्चा नहीं करता है तो हम और भी निराशा होती है।

---

१ इस पुस्तक में राज्य और राजनीति की जो परिभाषा दी गयी है उससे यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि शासन करने तथा नये राज्य की स्थापना करने की कल्पना को राजनीति का अभिन्न अंग बनाने की प्राचीन विचारधारा (जो Politics की Book 11 के विपरीत है) को स्वीकार किया गया है। इन दोनों कलाओं को पृथक् करना उसी प्रकार असम्भव बताया जाता है जैसे वाद्ययन्त्र की रचना करने की कला से वाद्ययन्त्र के मधुर ध्वनि एवं संगीत उत्पन्न करने की कला को (1 1343 a)। लेखक परिवार को राज्य का पूर्वगामी मानता है और उसे प्राथमिकता देता है। राज्य को प्राथमिकता प्रदान करने के अरिस्टाटेल के सिद्धान्त का मीमांसा वह नहीं करता है।

अरिस्टाटेल के नाम से अलंकार शास्त्र पर भी एक ग्रन्थ प्रचलित है। इस ग्रन्थ के प्रारम्भ में प्राक्कथन के रूप में चार पृष्ठों का एक पत्र भी संलग्न है जो सिकन्दर महान् को सम्बोधित किया गया है। इस पत्र से यह आभास दिया जाता है कि इस ग्रन्थ की रचना सिकन्दर के कहने पर ही की गयी थी। इसलिए इसका नाम 'Rhetorica and Alexandrum' पड़ा। यद्यपि यह रचना अरिस्टाटल के नाम से विख्यात है परन्तु यह उसकी कृति नहीं, अरिस्टाटल के किसी अनुयायी (Paripatetic) की भी कृति यह नहीं है। यह तो आइसोक्राइटीज (Isocrateas) की विचार पद्धति का अनुसरण करती है और सम्भवतः चौथी शताब्दी ई० पू० के अलंकार शास्त्री लम्पसकस के अनक्सीमीनीस (Anaximenes of Lampsacus) की रचना है। अलंकार शास्त्रियों के दृष्टिकोण का यह अच्छा उदाहरण प्रस्तुत करता है (देखिए अध्याय ७) जो राजनीतिक समस्याओं पर सर्व उपयुक्त बात कहने की शिक्षा प्रदान करने का दावा करते थे। पुस्तक में एक घबराये हुए सम्पत्तिशाली व्यक्ति की मनोदशा झलकती है। विधि-व्यवस्था का उद्देश्य सार रूप में इस प्रकार प्रस्तुत किया जाता है लोकतन्त्रात्मक राज्यों में विधि का उद्देश्य यह होना चाहिए कि बहुसंख्यक दल को सम्पत्तिशाली व्यक्तियों की सम्पत्ति को हड़पने से रोका जाय और अल्पतन्त्रात्मक राज्यों में विधि-व्यवस्था का उद्देश्य शासन करने वालों को अपने पद का दुरुपयोग करने से रोकना होना चाहिए जिससे वे निर्बलों का अहित न कर सकें और नागरिकों पर झूठे अभियोग न लगा सकें (२३)। ये सब तो सामान्य एवं घिसी पिटी बात है। अलंकार शास्त्र पर लिखी जाने वाली तत्कालीन पुस्तकों से इससे अधिक आशा भी नहीं की जा सकती थी। हाँ हमारे विषय की दृष्टि से इस पुस्तक के प्राक्कथन के रूप में दिया गया पत्र महत्वपूर्ण है यद्यपि यह भी परिपेटेटिक परम्परा के बाहर का है। सम्भवतः यह किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा लिखा गया है जिसने इस पुस्तक का अध्ययन सावधानी से किया था और इसकी कुछ विषय वस्तु को अपने युग के अनुकूल बनाने का प्रयत्न किया। इस पत्र में सम्राट से अनुग्रह किया गया है कि वह गद्य के दर्शन को अंगीकार करें (११)। किन्तु प्राक्कथन के लेखक का दृष्टिकोण अलंकार-शास्त्रियों का दृष्टिकोण नहीं है। सामान्य भाषणों में उसकी कोई रुचि नहीं है वह तो एकमेव भाषण (The Speech the Logos) की ओर ही ध्यान देता है। अलंकार शास्त्र के सूत्रों का उद्धरण वह भी दे सकता है। उदाहरणार्थ वह कहता है कि शिक्षा से संयुक्त भाषण जीवन का मार्ग दर्शक है (११) किन्तु उसका ध्यान सदैव एक ही भाषण पर रहता है और वह है सम्राट का भाषण। उसका कहना है कि लोकतन्त्रात्मक व्यवस्था के अन्तर्गत जीवन व्यतीत करने वालों के लिए जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में केवल एक ही मानदण्ड है और वह है विधि का मानदण्ड किन्तु जो लोग सम्राट के शासन के

अन्तर्गत रहते हैं उनके लिए सम्राट् का वाक्य ही मानदण्ड है (८९)।' इसी के साथ वह यह भी कहता है कि 'सिकन्दर के मुख से निकले हुए शब्द उसकी प्रजा के लिए वही महत्त्व रखते हैं जो स्वायत्त शासन वाले नगर राज्यों में सार्वजनिक अथवा सामान्य विधि को प्राप्त होता है, क्योंकि विधि की भी उपयोगिता है, किन्तु लोगों को यह मार्गदर्शन प्रदान करती है किन्तु अन्य लोगों को तुम्हारे जीवन और तुम्हारे शब्दों की अपेक्षा रहती है जिसका अनुसरण करके वे अपना जीवन व्यतीत कर सकते हैं (१)। इस पत्र का लेखक एक ऐसे समय और संसार का व्यक्ति है जिसमें स्वतन्त्र नगर राज्य तथा उनकी अपनी विधि-व्यवस्थाएँ[1] हैं, किन्तु जहाँ पूर्ण विकसित राजतन्त्रात्मक शासन की प्रधानता है। यद्यपि पत्र के रूप में उसका यह पत्र क्षेपक ही है, तथापि राजतन्त्र से सम्बन्धित नये विचारों की ओर इसमें संकेत मिलता है (देखिए अध्याय १४)।

प्रारम्भिक परीस्टटिक दार्शनिकों ने सामान्यतया नगर-राज्य की परम्परागत धारणा का ही समर्थन किया। किन्तु सब लोगों को यह सन्देह करने के लिए पर्याप्त कारण दिखाई देने लगे थे कि क्या वास्तव में नगर राज्य मानव-जीवन का केन्द्र एवं लक्ष्य दोनों ही है और शिक्षा एवं नैतिकता के प्रश्नों पर निर्णायक उत्तर इसीसे प्राप्त किया जा सकता है। थियोफ्रेस्टस ने भी कहा था कि अच्छे व्यक्तियों को केवल थोड़ी-सी विधियों की आवश्यकता रहती है उनके कार्य विधि से निर्धारित नहीं होते हैं सच तो यह है कि वे स्वयं विधि निर्धारित करते हैं[2] जैसा कि हम देख चुके हैं 'सिनिक (Cynic) दार्शनिकों ने यह सिद्ध कर दिया था कि नगर राज्य भी उन अनेक वस्तुओं में से है जिनके बिना भी मनुष्य का कार्य चल सकता है। बहुत-से लोगों ने इनके इस निष्कर्ष को तथा इसके समर्थन में प्रस्तुत किये जाने वाले तर्कों को स्वीकार भी कर लिया था। किन्तु अब तो लोगों को बाध्य होकर नगर राज्य के बिना ही जीवन व्यतीत करना पड़ता था और वह भी संसार के उस भाग में जहाँ इसके बिना जीवन व्यतीत करना कठिन था, जहाँ नगर-राज्य लोगों की जीवन पद्धति एवं प्रयोजन का काम करता था। ऐसी दशा में लोगों को अपनी बुद्धि का ही सहारा लेना पड़ा और उनके लिए इस प्राचीन प्रश्न का उत्तर देना

---

१ 'लोकतन्त्रात्मक व्यवस्था' से उसका यही तात्पर्य है, एक ऐसा, शासन जिसमें केवल 'राजा के आदेशों का पालन ही नहीं करना पड़ता।' 'लोकतन्त्र' का यह प्रयोग दूसरी शताब्दी ई० पू० की स्थिति की ओर संकेत करता है।

२ जैसा कि स्टोबियस ने उद्धृत किया है (Flor ३ xxxvii २०=Fr c vi Wimmer) किन्तु यह अरिस्टाटेल की (Eth N ११२८ a, तुलना कीजिए Pol १२८४ a) की प्रतिध्वनि मात्र हो सकती है जो शिक्षित वर्ग के वार्तालाप का अंग बन गया, St paul, To the Romans ii १४।

कठिन हो गया कि मनुष्य को किस प्रकार का जीवन व्यतीत करना चाहिए ?' तत्कालीन परिस्थिति में प्लेटो और अरिस्टाटल द्वारा दिये गये उत्तर वस्तुस्थिति से बहुत दूर थे। नया धर्म, ज्योतिष और चमत्कार भी प्रत्येक व्यक्ति को सन्तुष्ट नहीं कर सकते थे। ऐसी स्थिति में जब हम प्लेटो की 'अकादमी' तथा अरिस्टाटल के 'लाइसियम (Lyceum) से अपना ध्यान ३०० ई० पू० के लगभग स्थापित एथेन्स की दो नयी शिक्षा संस्थाओं की ओर ले जाते हैं तो हमें एक नया दृष्टिकोण दिखाई पड़ता है। ये दोनों संस्थाएं अथवा सम्प्रदाय थे—एक सीटियम के जानो (Zeno of Citium) का स्टोआ अथवा पोर्च (Stoa or porch) और दूसरा एपिक्यूरस का उद्यान (Garden of Epicurus)।

स्टोइसिज्म अथवा स्टोइकवाद (Stoicism) प्रारम्भ से ही समाहारक वादी सम्प्रदाय था। इसकी व्यवस्था तात्कालिक आवश्यकता की पूर्ति के लिए की गयी थी।[1] अतः यह स्वाभाविक ही था कि सभी प्राचीन एवं प्रचलित विचारधाराओं की श्रेष्ठताओं के सम्मिश्रण से एक नयी विचारधारा प्रवाहित की जाय। इसका संस्थापक जानो (Zeno) सुविख्यात सिनिक (Cynic) क्रेटीस का अनुयायी था और इस सम्प्रदाय के नाम की व्युत्पत्ति के आधार पर यह कहा जाता था कि सविधान पर लिखी गयी जानो की पुस्तक कुत्ते की दुम का अनुसरण करती है (holding on to the tail of a dog)। इसमें सन्देह नहीं कि स्टोइकवाद में सिनिक (Cynic) सम्प्रदाय की अनेक विशेषताएँ पायी जाती हैं और इसकी अधिकांश स्थापनाएं सिनिक सम्प्रदाय पर ही आधारित हैं। किन्तु इसके साथ ही यह भी सच है कि इसकी बहुत सी विशेषताएँ एण्टीसथनीस (Antisthenes) तथा सात्रेटीज (Socrates) के विचारों पर आधारित हैं। किन्तु प्राचीन स्टोआ (Stoa) के अधिकांश सिद्धान्त स्टोइक प्रकृति विज्ञान पर आधारित न होकर स्टोइक धर्म शास्त्र पर आधारित हैं, क्योंकि इस विचारधारा में प्रकृति जगत के अन्तर्गत देवता और मनुष्य दोनों ही आते हैं। इसमें ईश्वरीय विवेक की प्रधानता रहती है और इस विवेक-पूर्ण जगत में रहने के लिए मनुष्य को इस ईश्वरीय विवेक अर्थात् प्रकृति के अनुकूल आचरण करना चाहिए।[2] इसका नाम भी जब हो इतना तो निश्चित ही है कि इसके अनुसार सभी मनुष्यों के लिए एक ही प्रकार की जीवन-पद्धति होनी चाहिए। नगर राज्यों की जीवन-पद्धतियों के आधार पर मनुष्यों की जीवन-पद्धतियों में अन्तर के लिए इस विचारधारा में कोई स्थान नहीं है। इस प्रकार यदि नगर राज्य और मनुष्य की जीवन पद्धति के साम्य को कायम रखता है

---

१ F R Bevan Stoic and Sceptic (१९१३), p ३२।

२ Cum natura congruenter vivere
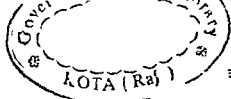
था समस्त विश्व के लिए केवल एक राज्य होना चाहिए।[1] प्लूटार्क (plutarch)[2] के शब्दों में स्टोइक सम्प्रदाय के संस्थापक जीनो (Zeno) के बहुप्रशंसित संविधान का सामान्य उद्देश्य यह है कि मानव का विभिन्न धाराओं, पृथक् राज्यों, तथा जातियों के अन्तर को समाप्त करके सभी मनुष्यों को एक राज्य का सदस्य माना जाय, समस्त मानव जाति को एक समझा जाय, सम्पूर्ण मानव जाति के लिए एक जीवन-पद्धति हो और एक व्यवस्था हो। यह उसी प्रकार हो जैसे भेड़ों का एक समूह एक ही चरागाह में साथ-साथ चर रहा हो और इस प्रकार उनका पालन-पोषण हो रहा हो।

विश्व राज्य के स्टोइक सिद्धान्त को तीसरी शताब्दी ई० पू० में क्रिसिप्पस (Chrysippus) ने और भी विकसित किया। वास्तव में क्रिसिप्पस (Chrysippus) इस सम्प्रदाय का दूसरा संस्थापक है। उसका कहना है कि जिस प्रकार नगर राज्य शब्द का प्रयोग दो अर्थों में होता है—निवास-स्थान के रूप में तथा राज्य और नागरिकों के पारस्परिक सम्बन्ध के रूप में। उसी प्रकार यह विश्व भी एक नगर राज्य की ही भाँति है जिसमें देवता और मनुष्य दोनों ही निवास करते हैं, देवता शासन करते हैं और मनुष्य उनके आदेशों का पालन करता है। चूंकि मनुष्य तथा देवता दोनों ही विवेक और तर्क से युक्त हैं इसलिए दोनों का पारस्परिक सम्बन्ध सम्भव हो सकता है। यही प्रकृति प्रदत्त विधि है और इसी के पालन हेतु संसार की समस्त वस्तुएँ निर्मित हुई हैं।[3] प्रकृति और विधि को इस प्रकार संयुक्त करके क्रिसिप्पस (Chrysippus) ने एक दिशाना-

---

१ विश्व के लिए कोसमास (Cosmos) अर्थात ब्रह्माण्ड शब्द का प्रयोग किया गया है और इससे मनुष्य द्वारा उत्पन्न अव्यवस्थित दशा के प्रतिकूल सुव्यवस्थित दशा का बोध होता था। किन्तु इस शब्द (Cosmos) का यह प्रयोग नया न था। प्लेटो के समय में भी इस शब्द का प्रयोग इस अर्थ में किया गया था। प्लेटो के अनुसार (Georg ५०८ A) इसका पोदसोफोद के कारण हुआ और इससे उसका तात्पर्य पाइथा गोरसवादियों से था। किन्तु स्टोइक विचारकों के अनुसार ब्रह्माण्ड की इस व्यवस्था से ईश्वरीय शासन का भी बोध होता था S V F ii ५२६-५२९ Chrysippus इस अध्याय के अन्त में Older Stoa के सम्बन्ध में दी गयी टिप्पणी देखिए।

२ =Fr i २६२ Zeno

३ Fr ii ५२८ Chrysippus, तुलना कीजिए Cicero N D ii १५४ (Fr ii ११३१) Est enim mundus quasi communis deorum atqne hominum domus aut urbs utrorum que Soli enim ratione utentes iure ac lege vivunt

मामले नहीं उत्पन्न किया है बल्कि वह राजनीतिक दर्शन के क्षेत्र में प्रचलित एक प्राचीन विवाद की ओर भी जान बूझ कर संकेत कर रहा है इस विषय के साहित्य से वह भली भाँति परिचित था।[1] किन्तु प्रकृति शब्द का प्रयोग वह प्राकृतिक विकास अथवा सम्वर्द्धन प्रक्रिया के अर्थ में नहीं कर रहा है। जिस अर्थ में इस शब्द का प्रयोग उसने किया है वह स्टोइक दृष्टिकोण के अनुसार ईश्वरीय विवेक एवं तर्क से युक्त समस्त (सम्पूर्ण) जगत का बोध कराता है। इस अर्थ में विधि का प्रकृति पर आधारित करने के प्रयास का परिणाम पाँचवी शताब्दी के कुछ सोफिस्ट[2] विचारकों के प्रकृति के सिद्धान्त से सर्वथा भिन्न हुआ। सोफोक्लीज (Sophocles) के अमर अमर विधि की भाँति क्रिसिप्पस का विधि भी ईश्वरीय और सार्वत्रिक हो जाता है। सोफोक्लीज की इस धारणा में क्रिसिप्पस ने यह सवर्द्धन किया है कि वह विधि का विवेक और बुद्धि पर आधारित करता है जो स्वयं अपने में ईश्वरीय माने गये हैं। किन्तु प्लेटो के लाज में निहित ईश्वरीय विधि से यह मूलत भिन्न नहीं है। इसके साथ ही क्रिसिप्पस की यह धारणा व्यापक तथा प्राकृतिक विधि (Universal and Natural Law) के सिद्धान्तों के लिए आधार शिला भी प्रस्तुत करती है। राजनीतिक विचारधारा के क्रमिक विकास के प्रति भी क्रिसिप्पस जागरूक था। इसका आभास हम उस समय स्थल पर भी मिलता है जहाँ वह विधि (Nomos) के सम्बन्ध में पिंडार के सुविख्यात सिद्धान्त तथा अरिस्टाटल द्वारा दी गयी मनुष्य की परिभाषा (मनुष्य एक राजनीतिक प्राणी है) की ओर संकेत करता है और कहता है कि नामस (विधि) सभी का सम्राट है सभी वस्तुएँ चाहे वे ईश्वरीय हों अथवा मानवीय इसी के अधीन हैं, सभी वस्तुओं पर इसका अधिकार होना चाहिए चाहे वे श्रेष्ठ हों अथवा निकृष्ट। शासक और नेता का स्थान इसी को मिलना चाहिए ऐसी दशा में सद्गुण और दुर्गुण नेक और बुरा नेकी और बुराई का मानदण्ड भी विधि ही होना चाहिए। जहाँ तक उन मनुष्यों का सम्बन्ध है जो स्वभाव से ही राजनीतिक होते हैं विधि ही उन्हें यह बतायेगा कि वे क्या करें और क्या न करें।

इस प्रकार के राजनीतिक दर्शन में दूसरा कदम यह होना चाहिए था कि ईश्वरीय

---

१ इन पृष्ठों मे दिये गये प्रसग के अतिरिक्त Cicero, Tusc Disp १ १०८ भी देखिए। सिसरो ने Chrysippus को in omni historia curiosus कहा है और विधि की अनेकता की ओर संकेत किया है देखिए इसी पुस्तक का अध्याय तीन विधि, प्रथाओं तथा आचरण सम्बन्धी मान्यताओं की विविधता के सम्बन्ध में जिसका कारण एलिस का पिर्हो (Pyrrho of Elis) बताया जाता है Diog L ix ८३ ८४।

२ अध्याय ४ और ५ का सामान्य अध्ययन कीजिए।

विधि पर आधारित विश्व राज्य की स्थापना करने के लिए आवश्यक उपायों का उल्लेख किया जाता। किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि इस प्रकार का कार्य क्रूसिप्पस की योजना के अंतर्गत नहीं आता। इसका प्रयोजन मुख्यतया व्यक्ति से था और वह केवल उस प्रक्रिया की खोज करना चाहता था जिसके द्वारा मनुष्य ईश्वरीय तर्क और विवेक के अनुकूल आचरण कर सके। फिर भी उसने इतना विस्तृत अध्ययन कर रखा था कि वह अवश्य ही जानता होगा कि प्लेटो की 'लाज' के पीछे ईश्वरीय विधि को मानवीय जीवन से सम्बन्धित करने की ही समस्या थी। प्लेटो की लाज से मिलते-जुलते किसी ग्रंथ की रचना क्रूसिप्पस ने नहीं की। हाँ, दो शताब्दी पश्चात् सिसरो ने 'रिपब्लिक' की रचना करने के बाद प्लेटो की भाँति विधि सम्बन्धी ग्रन्थ की रचना करने और उसे अधिकांश क्रूसिप्पस के विचारों पर ही आधारित करने का निर्णय किया। किन्तु खेद का विषय है कि उसने विधि के विषय पर स्टोइक आचार्यों के विचारों को ही भाषान्तर और व्याख्या के साथ प्रस्तुत किया। जहाँ तक सिसरो का 'De Legibus' (विधि विषयक ग्रंथ) के उपलब्ध अंशों का सम्बन्ध है[1] उनसे क्रूसिप्पस की कल्पना के राज्य का कोई विवरण नहीं मिलता है।

स्टोइक विचारधारा में विश्व वाद और सार्वभौमिकता पर पर्याप्त बल दिया गया है और विश्व राज्य की इसकी कल्पना में दासों का भी स्थान दिया गया है। परन्तु सामाजिक विषमता को दूर करने तथा समानता की स्थापना करने की दिशा में इस विचारधारा ने कोई योग नहीं दिया। स्टोइक विचारधारा के नैतिक सिद्धान्तों का परिणाम इन विचारधारा के प्राकृतिक सिद्धान्तों के विपरीत हुआ, और यदि इस असंगति को इस विचारधारा का प्रतिपादन करने वालों ने नहीं देखा तो इससे यही सिद्ध होता है कि व्यावहारिक राजनीति के निर्णायक के रूप में राजनीतिक सिद्धान्तों का महत्व घटता जा रहा था। इसके अतिरिक्त पुराने ढंग का बुद्धिमान्, सद्गुणी तथा योग्य व्यक्ति का जो आदर्श इन लोगों ने प्रस्तुत किया वह राजतंत्र, वैयक्तिक शासन तथा समाज में उच्च वर्ग को कायम रखने में ही सहायक हो सका। यह दूसरी बात है कि स्टोइक विचारकों ने मनुष्य को प्रधानतया राजनीतिक प्राणी के रूप में नहीं देखा। यह कोई आश्चर्य की बात नहीं कि स्टोइक विचारकों का सम्पर्क यूनानी जगत के राजाओं से था और उनके दरबारों में वे बहुधा उपस्थित रहते थे। अपने प्रभाव में वृद्धि करने का यही सबसे अच्छा ढंग था और यद्यपि स्टोइक विचारकों के लिए यह एक निरन्तर विवाद का विषय बना रहा कि बुद्धिमान् व्यक्ति को राजनीतिक कार्यों में किस सीमा तक भाग लेना चाहिए, फिर भी कितने ही ऐसे स्टोइक विचारक थे जो इस विषय पर किसी संदेहावस्था

---

१ अध्याय १३ के अन्त में दी गयी टिप्पणी देखिए।

में नहीं थे। इसके अतिरिक्त दार्शनिक मनोवैज्ञानिकों की रचनाओं तथा उनके निष्कर्षों का प्रयोग अब भी किया जा सकता था।[1] किंतु इन स्टोइक विचारकों ने केवल ऐसे ही राजतन्त्र का समर्थन किया है जहां सत्ता किसी स्टोइक महात्मा के हाथ में रहती है। इस प्रकार का राजा किसी भी राज्य में नहीं मिल सकता था। ऐसी दशा में उन्होंने यह कहा कि शासक और राजा ऐसे शब्द हैं जिनका उचित प्रयोग उस व्यक्ति के संदर्भ में नहीं होता जो केवल दूसरों के ऊपर अधिकार रखता है। इनका उचित प्रयोग तो उस व्यक्ति के लिए हो सकता है जो शासन विज्ञान से भली भाँति अवगत है। इस प्रकार केवल बुद्धिमान् व्यक्ति ही विधायक अथवा शिक्षक के कार्यों या राजनीतिक कौशल[2] के अन्तर्गत आने वाले किसी भी अन्य कार्य को सम्पन्न कर सकता है। इस प्रकार स्टोइक महात्मा को ही राजा का स्थान प्रदान करने की धारणा विरोधाभास के रूप में न प्रतीत होकर एक उच्च स्तरीय शासन की स्थापना की माँग करती हुई प्रतीत होती है और यह एक ऐसी माँग थी जिसका समर्थन प्लेटो ने भी किया था और जिसके औचित्य को सामान्य नागरिक भी समझ सकता था।

परन्तु स्टोइक राजनीतिक विचारधारा का अधिकांश भाग वास्तविकता से परे होने और 'ख्याली पुलाव' के सिद्धान्तों का प्रतिपादन करने का आभास देता है। 'स्टोइक महात्मा' तथा 'भाईचारा' कल्पना जगत की वस्तुएं थीं। इनकी तुलना में एपिक्यूरियन (Epicureans) विचारक अधिक व्यावहारिक और यथार्थ के निकट थे। उनके आचार्य एपिक्यूरस का सामान्य उद्देश्य भी प्रायः वही था जो स्टोइक सम्प्रदाय

---

१ उदाहरणार्थ लगभग २७७ ई० पू० में एन्टीगोनस द्वितीय ने अपने दरबार में एक प्रशिक्षित दार्शनिक की आवश्यकता अनुभव की और परसियस (Persaeus) वहां भेजा गया। यदि इस स्टोइक दार्शनिक ने, जो मसीडन की सक्रिय सेवा में रहा (यद्यपि वह इसमें असफल ही रहा) वास्तव में राजतन्त्र, स्पार्टा के संविधान तथा प्लेटो की 'लाज' के विरुद्ध सात पुस्तकों की रचना की ओर तो हमें इस बार ध्यान देना पड़ेगा कि स्टोइक राजनीतिक दर्शन के बारे में हमारा ज्ञान अत्यधिक सीमित है।

२ Frr III ६११, ६१७, ६१८ Chrysippus, तुलना कीजिए अध्याय ९ (प्लेटो और जनोफन) और अध्याय १४ से। इसमें सन्देह नहीं कि 'राजनीतिक कौशल' की धारणा मुख्यतया इस बात पर निर्भर करती थी कि 'शासन के ज्ञान से क्या तात्पर्य समझा जाता था और इससे किस प्रकार के ज्ञान का बोध होता था। जेनोफन की अपेक्षा प्लेटो तथा स्टोइक दार्शनिक इस बात पर विशेष महत्त्व देते थे।

के संस्थापक जीनो का—मानव-जीवन को अधिक सुखमय बनाने के उपायों की खोज करना। स्टोइसिज्म की ही भांति एपिक्यूरियनिज्म की ओर भी उच्च वर्ग ही आकृष्ट हुआ। किन्तु प्रचलित सामाजिक एवं राजनीतिक अस्वस्थता का जो निदान एपिक्यूरस ने किया वह जीनो के निदान से भिन्न था। इसके लिए उसने जो उपचार बताया वह वस्तुतः प्रकृति के सिद्धान्त पर आधारित था और अपने डिमॉक्राइटस (अध्याय ८) की भांति शास्त्र पर और जीनो द्वारा बताये गये उपचार से सर्वथा भिन्न था। एपिक्यूरस का विश्वास था कि मनुष्य का सबसे बड़ा शत्रु भय है—मृत्यु का भय और मृत्यु के भय से जीवित रहने का भय, मृत्यु के उपरान्त के जीवन का भय, और ठीक उस समय जब परिस्थिति अनुकूल प्रतीत होती है तो किसी अचानक होने वाले अदृश्य हस्तक्षेप का भय। प्राचीन नगर राज्य तथा इससे सम्बन्धित देवता इस प्रकार के भय को कुछ मात्रा में कम करने में सफल हो सके थे और डिमॉक्रायटस के अनुसार मानव-जीवन का सुख नगर-राज्य पर निर्भर करता था। एपिक्यूरस के समय में भी नगर राज्य नागरिकों के जीवन को अदृश्य और अचानक होने वाले हस्तक्षेपों से बचा सकता था और इस प्रकार लोगों को चिन्ता से मुक्त होने में सहायता दे सकता था। इसके अतिरिक्त मित्रों की संख्या में वृद्धि करने में भी राज्य सहायक होता था और एपिक्यूरस मित्रता को मानव-जीवन का सबसे बड़ा वरदान मानता था।[1] इन सीमित उद्देश्यों की पूर्ति भी तभी हो सकती थी जब राज्य में इतनी सामर्थ्य हो कि आंतरिक सुरक्षा कायम रख सके, नागरिक विधि का पालन करें और इस बात में एकमत हों कि वे किसी को क्षति नहीं पहुँचायेंगे और गलत काम नहीं करेंगे। प्राकृतिक न्याय को एपिक्यूरस उस बुद्धिमत्ता का प्रतीक मानता है जो क्षति पहुँचाने तथा क्षति से बचने में सहायक होती है।[2] इसलिए न्याय को वह

---

१ प्रेम के विषय पर एपिक्यूरस के विचारों के लिए A J Festugiere की Epicure et ses Dieux, १९४६ अध्याय ३ देखिए। ल्युक्रेशस के हाथों मे इस विचारधारा ने क्या रूप ग्रहण किया इसके लिए अगला अध्याय देखिए।

२ K =३१=Diog L x १५० इस बोझिल कथन का जो भी तात्पर्य हो इसमे संदेह नहीं कि जब सेनेका (Seneca, Epist ९७ १५) ने यह कहा कि एपिक्यूरस dicit nihil iustum esse natura तो उसका तात्पर्य ओयुक ईन टि काय इऐंनटो डिकाइओस्यूनो K ३३ से ही था, R philippson, द्वारा उद्धृत (इस अध्याय के अन्त मे दी गयी टिप्पणी देखिए)। एपिक्यूरस का तात्पर्य यह था कि न्याय का स्वभाव (K ३७) मनुष्य के स्वभाव के अनुकूल होता है यद्यपि यह प्रकृति का अंग नहीं है। मनुष्य के लिए न्याय प्रिय होना स्वाभाविक है क्योंकि सुखी होने की आकांक्षा रखना भी उसके लिए स्वाभाविक है।

प्रकृति के अनुकूल मानता है यद्यपि स्थान स्थान पर उसकी धारणा भिन्न होती है। उसका कहना है कि बुद्धिमत्ता के सम्बन्ध में भी तो मनुष्य विभिन्न धारणाएँ रखते हैं। न्यायप्रिय एवं नेक होना उसके अनुसार बुद्धिमानी का लक्षण है क्योंकि न्यायपूर्ण जीवन सम्भव नहीं हो सकता। उसके अनुसार न्याय की सबसे बड़ी देन यही है कि यह मनुष्य को चिन्ता से मुक्त कराता है।[1] साथ ही वह न्याय को स्वयं अपने में महत्त्वपूर्ण नहीं समझता वह इसकी श्रेष्ठता को निरपेक्ष नहीं मानता है सापेक्ष मानता है। न्याय केवल इसलिए श्रेष्ठ है कि उससे सभ्य एवं सुखी जीवन सम्भव हो पाता है। अन्याय से हमारे सुख में वृद्धि नहीं होती दुराचारी अथवा अन्यायी सदैव दुखी रहता है किन्तु अन्याय की निकृष्टता को भी वह सापेक्ष ही मानता है। उसका कहना है कि अन्याय स्वयं अपने में बुरा नहीं होता (K ३४)। न्याय की स्वाभाविकता (अथवा प्रकृति के अनुकूल समझने की धारणा) और क्षति न पहुँचाने तथा क्षति न प्राप्त करने के हेतु किये गये समझौते की धारणा में उसे कोई असंगति नहीं प्रतीत होती।[2]

हेराक्लाइटस (Heraclitus) डेमोक्राइटस (Democritus) और प्रोटेगोरस (Protagoras) से एपिक्यूरस (Epicurus) इस बात में सहमत है कि वास्तविक बौद्धिक श्रेष्ठता से युक्त लोगों को सामान्य मनुष्यों से पृथक् समझना चाहिए। किन्तु उसकी रचनाओं में कोई ऐसा अंश नहीं मिलता जिससे यह आभास मिले कि इस प्रकार की सामाजिक व्यवस्था किस प्रकार से स्थापित की जा सकती है तथा किस ढंग से उसे सुरक्षित रखा जा सकता है। वह जानता था कि प्राचीन काल में बुद्धिमान् राजाओं और शासकों ने अपने नैतिक सद्योग से सभ्यता के विकास में पर्याप्त सहायता दी थी[3] किन्तु यदि हम दूषित एवं अविश्वसनीय सूचना के आधार पर उसके विचारों का मिथ्या अर्थ करने का प्रयत्न न करें तो हमें मानना पड़ेगा कि उसका विश्वास था कि राजाओं और शासकों के इस कार्य की इतिश्री हो गयी थी उन्होंने जो कुछ करना

---

१ Diogenes of Oenoanda (Second Cent A D), Frr Lix ५ (William) C Diano (Epicuri, Ethica १९४६ p ६० Fr १२१) द्वारा उद्धृत। तुलना कीजिए K १७ से।

२ इस धारणा को भी लुक्रेशस ने विकसित किया है। अगला अध्याय देखिए।

३ एक सच्चे रोमन की भाँति लुक्रेशस ने राजाओं को श्रेय न देकर केवल magistratus और leges (De Rerum Natura v ११३६-११५०) को ही श्रेय देता है। इस तथ्य की ओर A Momigliano ने (Journ Rom, Stud xxxi १९४१ p १५७) बड़ी सूक्ष्म दृष्टि से अवलोकन किया है। हेराक्लीज जैसे नायकों को तो और भी कम श्रेय देता है (v २२ ff)।

या व कर चुके थे। इस स्टोइक प्रश्न का कि बुद्धिमान मनुष्य को राजनीति म भाग लेना चाहिए अथवा नहीं, वह निश्चित रूप स यही उत्तर देता कि बुद्धिमान् पुरुष राजनीतिक जीवन म कोई भाग न लेगा, क्योंकि मनु की उस अवस्था को प्राप्त करने म जिसमे अन्य लोगो के लिए चिन्ता करने स आप मुक्त रह राजनीति स अधिक और कोई बाध बाधा नहीं पहुँचा सकता। उसके अनुसार बुद्धिमान् मनुष्य शात और अशात जीवन व्यतीत करना ही पसद करेगा और सावजनिक जीवन तथा राजनीतिक कार्यों का क्षेत्र उन लोगो के लिए छोड देगा जिन्ह वास्तव म इस प्रकार के कार्यों म सुख प्राप्त होता है—वसे यह सन्दिग्ध ही है कि इस प्रकार के व्यक्ति मिल सकेंगे जो वास्तव म सावजनिक कार्यों से सुख प्राप्त करते हैं। 'मनुष्यों म देवता' (अध्याय ११) के सिद्धान्त से वह परिचित था, किन्तु उसके अनुसार इन शब्दो का सद्गुण अथवा राजनीतिक सत्ता से कोई सम्बन्ध नहीं था इससे केवल उस व्यक्ति का बोध होता था जो सभी प्रकार की चिन्ता और भय स मुक्ति प्राप्त कर चुका था।[1]

तीसरी शताब्दी ई० पू० के राजनीतिक विचारो पर दृष्टिपात करते हुए हम विवश हो कर यह कहना पडता है कि यह युग राजनीतिक चिंतन के क्षेत्र म अनुवरता का युग है और इस युग म इस क्षेत्र म महत्त्वपूर्ण काय नहीं हुए। इसका एक कारण तो यह है कि नगर राज्यो के महत्त्व म कमी आ गयी थी, और दूसरा कारण यह है कि इस विषय पर लिखी गयी रचनाओं की क्षति हो गया है। किन्तु इन दो कारणो क अतिरिक्त एक तीसरा भी कारण है और वह यह कि इस समय के विचारको ने राजनीतिक चिंतन को तत्कालीन परिस्थितियो से सम्बन्धित करने से इनकार किया। एपिक्यूरस तथा क्रिसिपस ने प्रसन्नता के साथ जीवन का सामना करने म लोगो को सहायता देने का भरसक प्रयत्न किया, किन्तु जिन व्यक्तियो न इनकी सहायता से लाभ उठाया वे अल्पसंख्या म ही थे, क्योंकि इनकी शिक्षा से केवल एस ही लोग लाभ उठा सकते थे जो उनके उपदेशो को समझने के लिए आवश्यक शिक्षा प्राप्त कर चुके थे तथा जिनके पास इतना अवकाश था कि दाशनिक शिक्षा ग्रहण कर सकते। एसे लोगो ने कई सामाजिक कुरीतियो की ओर या तो ध्यान नहीं दिया अथवा समाज म अपनी स्थिति को सुदृढ रखने के लिए उन्ह आवश्यक समझा। इस प्रकार की कुरीतियो और सामाजिक दोषो की संख्या निश्चित रूप से कम नहीं हुई थी (अध्याय ७) सम्भवत सिकन्दर की विजयो के परिणामस्वरूप यत्र-तत्र कुछ लोगो को निर्धनता से क्षणिक मुक्ति मिल गयी, किन्तु जिन लोगो को अपनी

---

१ (Epist iii, Diog L x १३५ अपने अनुयायियों को दृष्टि मे तो एपिक्यूरस ही पृथ्वी पर ईश्वर था। Cicero, Tusc १ ४८ और लुक्रेशस भी।

आर्थिक दशा सुधारने का अवसर मिला उनकी संख्या अपेक्षाकृत कम ही थी। अधिकांश लोग दरिद्रता की चक्की में पिस रहे थे और दासता के जीवन से मुक्ति पाने की उन्हें कोई आशा नहीं था। राज्य की सम्पत्ति में जो भी वृद्धि होती थी वह कुछ इने गिने लोगों के पास चली जाती थी और बहुसंख्यक वर्ग इस समृद्धि से वंचित रहता था। जैसे-जैसे ई० पू० की तीसरी शताब्दी अपने अन्तिम चरण पर पहुँचा और साहित्य एवं विज्ञान के क्षेत्र में हुई प्रगति से लोगों का ध्यान हटा, वैसे वैसे सम्पत्तिशाली वर्ग और सर्वहारा वर्ग तथा तथाकथित योग्य और अयोग्य वर्ग का अन्तर अधिक स्पष्ट हो गया। सामाजिक और मानसिक अस्वस्थता के लक्षण प्रत्यक्ष दिखाई देने लगे। निरंतर संघर्ष शिशु हत्या और निर्जनीकरण पौष्टिक भोजन का अभाव, मुद्रा के मूल्य तथा मजदूरी की दर में कमी शारीरिक श्रम की अवहेलना साधन का अभाव तथा उत्पादन-वृद्धि के साधनों का अभाव इस अस्वस्थता के कुछ विशिष्ट लक्षण थे। सिकन्दर के पूर्व के युग की तुलना में इस युग में यातायात एवं परिवहन की सुविधा में कुछ वृद्धि अवश्य हुई थी किन्तु एक स्थान से दूसरे स्थान की यात्रा अब भी व्यय और कष्ट साध्य थी तथा परिवहन की व्यवस्था इतनी अच्छी नहीं हो पायी थी कि अकाल के समय में एक प्रदेश के अभाव की पूर्ति दूसरे प्रदेश के अतिरिक्त उत्पादन से की जा सकती। यदि कुछ मात्रा में यह सम्भव भी था तो इसका उपयोग मुनाफाखोरों के लिए ही किया जाता था। कुछ लोग इससे अत्यधिक लाभ उठाते और कुछ लोगों को ऊँची दर पर मूल्य चुकाना पड़ता। परिवहन एवं संचार की सुविधा के अभाव में पीड़ित वर्गों द्वारा विद्रोह भी अधिक न हो पाते थे और यदि कभी हुए भी तो अधिक भयानक रूप न धारण कर सके। इतना शीघ्र दमन कर दिया जाता था और विभिन्न राज्यों की सरकारों में यह समझौता सा था कि वे एक दूसरे को क्रान्तिकारी आन्दोलनों को दबाने में सहायता पहुँचायेंगे।

यूनान के प्रत्येक भाग की आर्थिक स्थिति एक-सी तो न थी किन्तु असन्तोष एवं विद्रोह की चिनगारी सर्वत्र सुलग रही थी। तथापि ऐसा प्रतीत होता है कि शिक्षित वर्ग के राजनीतिक चिन्तन पर इस स्थिति का कोई भी प्रभाव नहीं पड़ा। हाँ व्यक्तिगत उदारता तथा सहायता के कुछ उदाहरण अवश्य मिलते हैं। राजनीतिक विचारक अब भी जनक्रान्ति से ही भयभीत थे और इसके दमन का उपाय खोजने के अतिरिक्त और कुछ नहीं सोच सकते थे। सदा से स्वतन्त्र और दास में विभक्त जनसाधारण किसी भी प्रकार की बौद्धिक सामग्री से वंचित रहा। इस व्यापक असन्तोष को लेकर कुछ साहित्य का सृजन अवश्य हुआ, किन्तु पुस्तकालयों एवं संकलनों में इसे स्थान नहीं मिल सका और उस युग में साहित्य को सुरक्षित रखने के यही साधन थे। हाँ सिनिक कवि सरसिडास (Cercidas) का पपाइरस पर लिखा
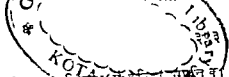
गयी रचनाओं के कुछ खण्ड अवश्य उपलब्ध हैं। टार्न (Tarn) का विचार है कि विषमता तथा रचनाओं की सत्ता के विरुद्ध आवाज उठायी गई। उनमें परिवर्तन करने की शक्ति है किन्तु उत्थान ऐसा नहीं किया। देवताओं में इस विषमता का अन्त करने की शक्ति है किन्तु उत्थान ऐसा नहीं किया। अवसाद तथा निराशता से मुक्ति पाने की आशा यूहिमरस (Euhemerus) तथा आयेम्बुलस (Iambules) की यूटोपिया में भी दिखाई देती है। यूहिमरस ने अपनी यूटोपिया में विश्वीय समाज की कल्पना की है जिसमें पुरोहित वर्ग सर्वशक्तिमान है। आयम्बुलस की 'यूटोपिया' में विषमता इस प्रकार से दूर की जाती कि सभी मनुष्य योग्यता में भी समान हो जाते हैं और उभी के उत्पादन का बराबर भाग मिलता है भूमि की उर्वरा शक्ति इतनी है कि किसी को भी अधिक श्रम करने की आवश्यकता नहीं पड़ती। परन्तु उस समय के राजनीतिक दर्शन में जनता की आवश्यकताओं और आकांक्षाओं का प्रतिबिम्ब नहीं दिखाई देता। राजनीतिक वस्तुस्थिति से पृथक् राजनीतिक चिन्तन अपने पुराने मार्ग पर ही चलता रहता है। सोलन के युग में यह कल्पनातीत था। चौथी शताब्दी ई० पू० में आयसाक्रेटीज और प्लेटो के विचार भी कुछ मात्रा में तत्कालीन परिस्थितियों से सम्बन्ध रखते थे, किन्तु जब हम तीसरी शताब्दी ई० पू० से दूसरी शताब्दी ई० पू० में पदार्पण करते हैं, तो उस समय की सामाजिक स्थिति का समर्थन करने का हमारा प्रयास निरर्थक सिद्ध होता है। प्राचीन स्टोइक विचारकों और पनेशस (Paneaetius) के दृष्टिकोण का अन्तर तथा प्लेटो की 'अकादमी' में सन्देहवादी विचारकों का प्रभुत्व तत्कालीन सामाजिक स्थिति का समर्थन में किसी भी प्रकार की सहायता नहीं देता। एपिक्यूरस के मतावलम्बियों ने अन्धविश्वास से उत्पन्न होने वाले भय से लोगों को मुक्त करने में अवश्य सहायता दी किन्तु क्षुधा के भय से मुक्ति दिलाने का कोई उपाय नहीं प्रस्तुत किया। इसके विपरीत कुछ लोग ऐसे थे जिन्होंने पीड़ित एवं शापित वर्ग के प्रति कोई विशेष सहानुभूति न रखते हुए भी तथा किसी राजनीतिक पद्धति का अनुसरण न करते हुए भी राजनीतिक शक्ति प्राप्त कर ली और उसका प्रयोग तत्कालीन स्थिति को सुधारने के लिए किया। स्पार्टा[1] में एगिस (Agis) चतुर्थ (२४३ ई० पू०) ने भूमि का पुनर्वितरण करने तथा दासों को नागरिकता के अधिकार प्रदान करने का असफल प्रयत्न किया। क्लियोमानिस तृतीय ने भी इसी प्रकार का सुधार करने का प्रयत्न किया और उसे पर्याप्त सफलता भी मिली। स्पार्टा के इन दोनों शासकों के प्रयत्न उस योजना के अन्तर्गत आते थे जिसके अनुसार लाइकरगस

---

१ इन सुधारों के सम्बन्ध में K M T Chrimes, Ancient Sparta (१९४९), अध्याय १ देखिए।

के आदर्शों का अनुकरण करके स्पार्टा की सामरिक शक्ति को पुन स्थापित करने का प्रयास किया गया। किन्तु भूमि के पुनर्वितरण का कार्य भी प्रस्ताव सर्वत्र जमींदारों म असन्तोष उत्पन्न करता यह निश्चित ही था। इस शताब्दी के अन्त में स्पार्टा का एक अन्य राजा नबिस (Nabis) ने भी यही प्रयास किया और उसका परिणाम यह हुआ कि उसने जो सुख्याति पहले अर्जित की थी उस पर कालिमा लग गया और उस निकृष्टतम निरकुश शासक[1] के रूप म चित्रित किया जाने लगा। तथापि आने वाली शताब्दी म एकियन (Aehaean) सघ और रोमन सत्ता म जो सघर्ष हुआ उसमे आक्रमणकारियो का अन्त तक मुकाबला करने वाला जमीदार और सम्पत्तिशाली वर्ग नहीं था। कोरिथ तथा अन्य यूनानी राज्यो की सामान्य जनता ने ही रोमन आक्रमणकारियो का डट कर मुकाबला किया जिसके परिणामस्वरूप १४६ ई० पू० म जाकर रोम को अन्तिम एव निर्णायक विजय प्राप्त हो सकी। यूनान की राजनीतिक विचार धारा पर रोम का प्रभाव हमारे अगले अध्याय का विषय है।

अतिरिक्त टिप्पणियां और प्रसग निर्देश

अध्याय १२

उपरि लिखित अध्याय के प्रारम्भ म तथा अन्त म इस युग की बदली हुई तथा बदलती हुई पृष्ठभूमि की सक्षिप्ततम रूपरेखा मात्र प्रस्तुत की जा सकी है। इतिहास की सामान्य पुस्तकों के अतिरिक्त J H S LXIV (१९४४) म F W Walbank का प्रबन्ध और W W Tarn का Hellenistic Civilisation (१९२७ 2nd ed १९३०) तथा W S Ferguson की Hellenistic Athens एव Greek Imperialism देखिए। सिकन्दर पर प्रचुर मात्रा म उपलब्ध सामग्री म सर्वश्रेष्ठ रचना Tarn की Alexander the Great (२ Vols १९४८) है। इस पुस्तक के परिशिष्ट २४ और २५ हमारे विषय से विशेष रूप से सम्बद्ध है। विभिन्न नगर राज्यो की वैधानिक स्थिति का प्रश्न एक जटिल समस्या है। बस यह भी नहीं कहा जा सकता कि इन राज्यो की कोई वैधानिक स्थिति भी था। इस विषय पर उपरिलिखित ग्रन्थो के अतिरिक्त A H M Jones की The Greek City From Alexander to Justinian

१ दोहरे राजतन्त्र का अन्त क्लियोमीस तृतीय (२१९ ई० पू०) की मृत्यु के साथ हो हो गया।
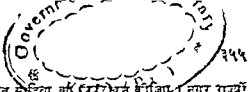
(१९४०) तथा इस पुस्तक में उद्धृत लेखों को देखिए। नगर राज्यों की स्थिति की भाँति ही राज्य-सभा की स्थिति भी जटिल एवं असमान थी। उदाहरण के लिए टिप्पणी और प्रसंगों में आगे दिये गये दोनों अभिलेखों का अध्ययन कीजिए। इस विषय पर प्रस्तुत दो रचनाओं का उल्लेख करना भी आवश्यक प्रतीत होता है, यद्यपि दोनों एक दूसरे से भिन्न हैं। पहली रचना The Helle nistic Age (Cambridge १९२३) है जिसमें चार अभिभाषण संगृहीत हैं और दूसरी रचना The Greek Political Experience (Studies in honor of W K Prentice, Princeton, १९४१) है। इसमें संगृहीत प्रबन्धों में Nos vii तथा xii विशेषरूप से उपयोगी है।

THE CYNICS एंटीस्थनीज तथा सोक्रेटीज के बाद की नैतिकता के विकास के सम्बन्ध में डायोजनीज तथा 'सिनिक' दार्शनिकों का स्थान निर्धारित करना एक कठिन कार्य है। इन विचारकों की लिखित रचनाओं का सर्वथा अभाव है। इनसे सम्बन्धित कुछ किंवदन्तियाँ तथा इनके कुछ कथन के अतिरिक्त इनके विषय में हमारी जानकारी के लिए अन्य विश्वसनीय सामग्री नहीं मिलती है। यहाँ हमने इस मत का अनुसरण किया है कि वास्तव में आदि 'सिनिक' डायोजनीज था न कि एंटीस्थनीज (Schwartv, Charakterkopfe ii (१९००), ch I, D R Dudley, History of Cynicism (१९३७)। इसका परिणाम यह हुआ कि गल्प अथवा सत्य (१) पतनोन्मुख तथा परिश्रमी राजा की धारणा एवं राजा जो एक प्रजाजन का सेवक है, दूसरे शब्दों में नव हेराक्लीज की धारणा का श्रेय डायोजनीज अथवा क्रेटस को नहीं बरन प्राचीन आर्य एंटीस्थनीज को दिया गया है। और (२) सिनिक राजतन्त्र के विचार का अवमूल्यन किया गया है। R Hoistad, Cynic Hero and Cynic King (Uppsala १९४८) का मत इसके सर्वथा विपरीत है। इस ग्रन्थ में Hoistad ने डायोजनीज़पूर्व एंटीस्थनीज को डायोजनीज के पक्ष में प्रस्तुत किया है। डायोजनीज तथा क्रेटस के कथनों के कुछ खण्ड Mullach, Frag Philosoph Gr ii pp २९५–३६१ (M) में मिलते हैं।

PLATONICA इस नाम के अन्तर्गत उल्लिखित रचनाएँ प्लेटो के पाँचवें संस्करण में मिलती है (O C T)। बर्नेट महोदय (Burnet) 'माइनास' (The Minos) को प्लेटो की ही रचना मानते हैं। यह उपर्युक्त ग्रन्थ के पूर्वार्ध में दिया गया है।

The Rhetorica ad Alexandrum या 'अनक्सिमानेस' की टकनी प्राक्कथन सहित स्पेंगल (Spengel) के Rhetores Graeci के प्रथम खण्ड में मिलती है। इस अध्याय में इसी के पृष्ठों की ओर संकेत किया गया है।

P Wendland Die Schriftstellerei des Anaximenes (Hermes xxxix (१९०४) pp ४१९–४४३ तथा ४९९–५४२) के अनुसार एनक्सीमीस की कई अन्य रचनाएँ भी हैं। उनका तो यह भी अनुमान है कि Rhetorica ad Alexandrum के प्रणयन का श्रेय भी एनक्सीमीस को ही था, जिस बाद के किसी लेखक ने सम्पादित एवं परिवर्धित करके समाचीन बनाया।

THEOPHRASTUS इसकी लुप्त रचनाओं के सम्बन्ध में हमारे ज्ञान का आधार अप्रत्यक्ष सामग्री ही है। सिसरो (de Finibus v 11) लिखता है
Omnium fere civitatum non Graeciae solum sed etiam barbariae ab Aristotale mores, instituta, disciplinas a Theophrasto leges etiam cognovimus Cumque uterque eorum docuisset, qualem in re publica principem esse conveniret, pluribus praeterea conscripsisset qui optimus esset rei publicae status, hoc amplius Theophrastus quae essent in re pulblica rerum inclinationes et momenta temporum, quibus esset moderandum utcunque res postularet

सिसरो के उपर्युक्त कथन के अन्तिम भाग स्पष्ट रूप से अवसर के उपयुक्त राजनीतिक कार्यों और व्यावहारिक उपयोगिता वाले कार्यों की ओर संकेत करते हैं। किन्तु व्यावहारिक ज्ञान की दृष्टि डायकियारकस की प्राप्ति या थियाफ्रेस्टस की नहीं (Cic ad Att ii १६ ३)।

DICAEARCHUS [illegible] F Wehrli, Die Schule des Aristoteles i (१९४४) [illegible] इस क्रम में थियोफ्रेस्टस की रचनाएँ सम्मिलित नहीं हैं। इस ग्रन्थ में सिसरो की रचनाओं तथा अन्य ग्रन्थों में प्राप्त होने वाले डायकियारकस के अनुच्छेदों का संकलन किया गया है और उनकी व्याख्या भी दी गया है। डायकियारकस की रचनाओं के खण्ड मुलर (Mullar) की Frag Hist Gr ii [illegible] में भी मिलते हैं।

DEMETRIUS OF PHALERUM फर्ग्युसन (Ferguson) के Hellenistic Athens पृष्ठ ८–९५ में डिमेट्रियस के विचारों का अच्छा विवरण मिलता है। Pauly Wissoawa (R E iv – nr ८ Col २८१७) के प्रबन्ध के लेखक ने Ferguson का ही अनुसरण किया है और इसी के प्रभाव की उपेक्षा करके आरम्भ के प्रभाव को ही महत्त्व दिया है। डिमेट्रियस की रचनाओं के शीर्षकों की सूची के लिए Diog L v ८०–८१ देखिए। Muller ii, ३६२

Jacoby F Gr Hist 11 nr २२८ p ०५६, और F Wehrli, Die Schule des Aristoteles iv (१९४९) का संग्रह।

The Older Stoa Fragments of Zeno and Cleantheas का A C Pearson ने टिप्पणी सहित सम्पादित किया। किन्तु इस अध्याय में दिया गया मत प्रधानत Zeno और Chrysippus की रचनाओं की ओर है और H Von Arnim Stoicorum Veteram Fragmenta (३ Volumes १९०३–१९०५, with Vol iv Index by M Ablen, १९२४), के आधार पर है। इन खण्डों की संख्या अपरिमित है। इनमें प्राय पुनरावृत्ति और भाषा-परिवर्तन भी अधिक है और वास्तविक वचन थोड़े ही मिलते हैं। प्लूटार्क की स्टोइक विरोधी रचनाओं में (M Pohlenz, Hermes LXXIU १९३९ और F H Sandbach Class, Quart XXXIV, १९४०) में महत्वपूर्ण सामग्री मिलती है। स्टोइक पोर्च (Porch, Stoic) की कठोरता तथा Garden (Epiqurian) के सुखवाद दोनों का समान रूप से विरोधी था।

EPICURUS एपिक्यूरस के तीन पत्र ४० सूक्तियां उसकी वसीयत-नामा और उससे सम्बन्धित अनेक परम्पराएं Diogenes Laertius की १०वीं पुस्तक में सुरक्षित हैं Cyril Bailey, Epicurus The Extant Remains (१९२६) में Epicurus की इन कृतियों तथा अन्य साहित्य की समालोचना के साथ प्रस्तुत किया गया है। C Bailey ने Greek Atomists and Epicurus (१९२८) (pp १५०–५१५) में न्याय के सम्बन्ध में Epicurus का जो दृष्टिकोण प्रस्तुत किया है वह उचित नहीं है। Bailey की इस रचना से यह आभास मिलता है कि Epicurus न्याय को अनिवार्यतया एक बुरी वस्तु समझता था और जब तक कि इसमें किसी प्रकार का लाभ प्राप्त करने की आशा न हो न्याय में बचना ही श्रेयस्कर समझता था। Bailey की इस रचना की अपेक्षा Die Rechts philosophie der Epikureer शीर्षक R Philippsons का लेख Archiv fur Geschichte der philosophie N F XXXiii, १९१० pp २८८–३३७ also pp ४३३–८४५) कहीं अधिक सन्तोषजनक है यद्यपि इसमें Epicurus के दृष्टिकोण को आवश्यकता से अधिक उचित सिद्ध करने का प्रयास किया गया है।

CERCIDAS Powell and Barber, New chapters in Greek Literatur (१९२१) pp ५७ तथा A D Knox (Loebd Library Herodes and Edmond का Theophrastus, Characters १९२९) के साथ देखिए।

EUHEMERUS Diod Sic v ४१ ४६ (Jacoby, F Gr Hist I p ३०२)

IAMBULES Diod sic ii ५५-६० लेखक ने दुनिया पपटका की कहानियो तथा दार्शनिक विचारो का विस्तृत अध्ययन किया था। उसके सूर्य के द्वीप (Islands of the Sun) के निवासी दो जिह्वा वाले है और एक साथ दो वार्तालाप कर सकते है वे कपास और चावल (?) का प्रयोग करते हैं और लिखने के लिए भारतीय नागरी के अन्य लिपि का प्रयोग करते है। किन्तु बच्चो का लालन पालन वे भी सामुदायिक रूप से करते थे, प्राय उसी पद्धति पर, जिसका समर्थन प्लेटो ने रिपब्लिक में संरक्षकों के लिए किया था।

अध्याय १२ पर कुछ और टिप्पणी

जैसा कि हम पहले कह चुके है यूनानी राजनीतिक दार्शनिको ने राष्ट्रसंघ अथवा विभिन्न राज्यो के पारस्परिक सम्बन्ध की ओर ध्यान नही दिया। ऐसी दशा में यह अनुपयुक्त न होगा यदि उदाहरण के तौर पर राष्ट्रसंघ तथा शासन करने वाले राजा और राज्य व संविधान के सम्बन्ध का कुछ विवरण यहाँ प्रस्तुत किया जाय। दोनों उदाहरण शताब्दी ई० पू० के अंतिम चरण के है, जब सिकन्दर के उत्तराधिकारियो के राज्य अपना स्वरूप ग्रहण कर रहे थे। दोनो उदाहरण प्रामाणिक है और हमारे प्रयोजन की दृष्टि से यह महत्त्वपूर्ण नहीं हैं कि इन दोनो व्यवस्थाओ का अस्तित्व अल्पकालीन ही रहा। इनसे हम केवल यह ज्ञात होता है कि इन समस्याओ पर व्यापक विचार विमर्श के अभाव में भी अपनी विशिष्ट परिस्थितियो के अनुसार डिमिट्रियस पोल्योरसीटीज और टॉल्मी सोटर (Demetrius Poliorcetes and Ptolemy Soter ने इन समस्याओ का किस प्रकार सामना किया।

डिमेट्रियस का अखिल यूनानी संघ (३०३ ३०२ ई० पू०)

(स्रोतों द्वारा एपिडारस (Epidaurus) के एक अभिलेख का पक्तियो की समस्या की ओर संकेत किया गया है Suppl Epigr Gr १९२५ १७५, J H S XLii १९२३, pp १९८ २०६, w w Tarn का निबन्ध M cary in C Q Xvii, १९२३, pp १३७ १४८, और J A O Larsen in Class Fphilol, XX, १९२५, p ३१५ ff and XXI, १९२६, p ५२ ff)

डिमेट्रियस का यह एक ऐसा प्रयत्न था जिसमे उसने आइसोक्रेटीज फिलिप

और सिकन्दर के अखिल यूनानी संघ के विचारों का अनुसरण करके यूनान के अधिकांश नगर राज्यों और यूनानी जातियों को एक समुदाय (काइनोन) में संगठित करना चाहा था। इस समुदाय की सर्वोच्च सत्ता सदस्य राज्यों के प्रतिनिधियों की समिति को सौंपी गया थी। इस समिति के सदस्यों को वही सुरक्षा और विशेषाधिकार प्रदान किया गया था जो राजदूतों को (६–११) प्राप्त होती है। सामान्य स्थिति में इस ४ वर्ष की अवधि में कम-से-कम एक बार इस समिति की बैठकों में उपस्थित होना आवश्यक था। समिति की बैठकों की व्यवस्था इस प्रकार की जाती थी कि ये बैठक, जहां तक सम्भव हो सके महान् राष्ट्रीय त्योहारों के अवसर पर ही हों। युद्ध काल में (इस समय डिमाट्रियस और कसेंडर में मेसेडोनिया के राज्य के लिए युद्ध चल रहा था।) समिति का अध्यक्ष और राजा अथवा राजाओं द्वारा नियुक्त प्रतिनिधि मिल कर यदि यह निश्चित करते कि समिति की बैठक करना वांछनीय है तो असाधारण बैठक बुलायी जा सकती थी। (राजाओं से डिमिट्रियस तथा उसके पिता एंटीगोनस का बोध होता है—(Larsen p ३१५)। समिति का बैठक बुलाने का समान ही महत्त्वपूर्ण अधिकार बैठक का स्थान निश्चित करने का था। फिलिप्स के संघ की समिति की बैठक कोरिंथ में हुई थी। यहां यह विचार प्रस्तुत किया गया कि समिति की बैठक राष्ट्रीय क्रीडा के समय एवं स्थान पर ही हो और इस विचार ने समिति की साधारण बैठकों का समय और स्थान दोनों निश्चित कर दिये (१४–१८)। इस संघ के संविधान की सबसे महत्त्वपूर्ण विशेषता यह है कि समिति के निर्णय सभी सदस्य राज्यों पर समान रूप से लागू होते हैं और इन राज्यों को अपने प्रतिनिधियों के कार्यों पर नियंत्रण एवं रोक-थाम रखने का कोई अधिकार नहीं है। इतना ही नहीं, अपने प्रतिनिधियों के कार्यों को निरस्त करने का अधिकार भी सदस्य राज्यों को नहीं दिया गया है। (इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि आज से बहुत पहले यह खोज की जा चुकी थी कि राष्ट्रीय स्वतंत्रता का कुछ मात्रा में समर्पण किये बिना अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग नहीं स्थापित किया जा सकता।) (१८–२१)। इस समिति के अध्यक्ष का पद निश्चित रूप से प्रभाव और शक्ति का पद था। अध्यक्ष की प्रक्रिया सम्बन्धी नियमों का भी अनुसरण करना पड़ता था। लाटरी द्वारा एक साथ पांच अध्यक्ष चुने जाते थे और विशेष अवसरों पर ये पांचों अध्यक्ष और राजा प्रवर-समिति का काम करते थे। किसी एक दल का अध्यक्ष भी इन्हीं पांचों अध्यक्षों में से सम्भवतः लाटरी की विधि द्वारा ही चुना जाता था। किसी एक राज्य अथवा जाति[1] से दो अध्यक्ष तक चुने जा सकते थे (२१–२३)।

---

१ इससे यह प्रतीत होता है कि (१) कभी कुछ सदस्य राज्यों के एक से अधिक प्रतिनिधि होते थे और (२) केवल नगर राज्यों तक ही सदस्यता नहीं सीमित थी,

अभ्यर्थ के कर्तव्यों और उत्तरदायित्वों का वर्णन भी किया गया है और समिति की बैठक के लिए कम से कम ... सदस्यों की उपस्थिति आवश्यक बतायी गयी है। किसी भी बैठक के कार्यक्रम में किसी विषय को सम्मिलित करने के सम्बन्ध में डिमोटियस का यह मंच पर्याप्त उदारता दिखाता है। इसके लिए किसी एक सदस्य द्वारा लिखित प्रस्ताव ही पर्याप्त माना जाता है (२९–३२)। सम्भवतः राजा द्वारा दिए जाने वाले कर अथवा चन्दे की व्यवस्था के सम्बन्ध में विशेष जानकारी नहीं प्राप्त होती। इसी प्रकार समिति के सम्बन्ध में राजा के अधिकारों तथा अन्य विषयों के बारे में भी निश्चित व्यवस्था का पता नहीं चलता।

सायरीन का संविधान

जिस अभिलेख का प्रयोग यहाँ किया गया है वह टाका संग्रह J H S XLVII (१९२८ pp २२२–२३८) में M Cary द्वारा प्रस्तुत किया गया है। F Taeger ने Hermes LXIV (१९२९ pp ४३२–४५७) में इस अभिलेख के मूल की आलोचना सविस्तार प्रस्तुत किया है। जो M Cary के मूल से कहीं भिन्न है। व्याख्या से सम्बन्ध रखने वाले कई प्रश्नों के बारे में अभी तक निश्चित उत्तर नहीं दिया जा सका है विशेषकर यह निश्चित नहीं हो पाया है कि इस संविधान को सायरीन निवासियों ने पहले स्वयं निर्मित कर के टाल्मी के सम्मुख स्वीकृति के लिए प्रस्तुत किया अथवा यह संविधान सर्वप्रथम टाल्मी द्वारा प्रस्तुत किया गया या फिर टाल्मी और सायरीन निवासियों के विचार विनिमय के परिणामस्वरूप इस संविधान की उत्पत्ति हुई। इस संविधान में टाल्मी सोटर अपने को राजा के नाम से नहीं विभूषित करता है। इससे ज्ञात होता है कि यह संविधान ३०६ ई० पू० के पहले का है क्योंकि इसी वर्ष टाल्मी ने राजा की उपाधि ग्रहण की था। Cary के अनुसार यह संविधान ३२२–३२१ ई० पू० का है। इसमें सन्देह नहीं कि इस समय तक उत्तराधिकार सम्बन्धी युद्ध समाप्त नहीं हुए थे क्योंकि डिमटियस के मंच की ही भांति इस संविधान में भी युद्ध काल के लिए विशेष प्राविधान की व्यवस्था की गयी थी।

इस प्रपत्र के अनुसार सायरीन तथा उसके समस्त उपनिवेशों के निवासियों को नाग

अपितु नगरों अथवा ग्रामों को भी सामूहिक रूप से इस संघ की सदस्यता प्राप्त हो सकती थी। अरिस्टाटिल (Politics iii, १२८५ b ३२ ने जातियों तथा ग्रामों एवं नगरों के समूह को राजा के अधीन एक राजनीतिक इकाई के रूप में स्वीकार किया था।

रित्ता प्रदान की गयी। इसके परिणामस्वरूप इन राज्य के सदस्यों की संख्या अपरिमित-सी हो जाती है। इसके अतिरिक्त टाल्मी को नागरिकों की संख्या में वृद्धि करने का भी अधिकार दिया जाता है। (३–५)। किन्तु सक्रिय नागरिकता केवल दस हजार व्यक्तियों तक ही सीमित रखा जाता है और यही दस हजार व्यक्ति नागरिकों की सभा के सदस्य होते हैं।

नागरिकों की इस सभा का सदस्य होने के लिए यह आवश्यक था कि नागरिक की आयु ३० वर्ष के ऊपर हो और उसके पास एक निर्धारित मात्रा में वास्तविक सम्पत्ति हो। स्त्री की सम्पत्ति की गणना भी उसके लिए की जा सकती थी। सम्पत्ति की इस योग्यता की न्यूनतम निर्धारित मात्रा अलैक्जैंड्रिया की २० माना (२००० ड्रैक्मा) थी। अरिस्टोटल के सर्वमिश्रित संविधान की भाँति इस संविधान में भी सम्पत्ति सम्बन्धी योग्यता का स्तर नीचा ही रखा गया किन्तु इस संविधान का सम्पत्ति-तान्त्रिक स्वरूप स्पष्ट है। नागरिकों की सूची तैयार करने के लिए निर्वाचकों की नियुक्ति, एल्डर्स (Elders) द्वारा की जाती थी और Elders की नियुक्ति टाल्मी द्वारा की जाती है (जिस किसी राज्य में नागरिकता की आय और सम्पत्ति मानी जाती है वहाँ विधायकों को असीमित अधिकार मिल जाता है। तुलना कीजिए अरिस्टोटल Pol v १३० A ३५ ff) यह उल्लेखनीय है कि कुछ लोगों को उनके व्यवसाय के स्वभाव के आधार पर भी नागरिक सभा की सदस्यता से वंचित रखा जाता है। राज्य नियुक्त चिकित्सक सलकूर्द के प्रशिक्षक, अखाड़ों और अस्त्र-शस्त्र का प्रयोग करने की शिक्षा देने वाले इसी श्रेणी में आते थे। Taeger के कथनानुसार (पृष्ठ ४४०) भृत्यों और व्यवसायियों के लिए भी इस प्रकार के प्रतिबन्ध स्वाभाविक ही प्रतीत होते हैं। इस संविधान में जिस परिषद की व्यवस्था की गयी है वह एथेन्स की परिषद से केवल नाम और संख्या (इसके भी ५०० सदस्य थे) में ही मिलती जुलती है। इसके सदस्यों के लिए ५० वर्ष के ऊपर की आयु (किसी भी दशा में ४० वर्ष से कम नहीं) आवश्यक मानी गयी है। उनकी अवधि दो वर्ष है और उनका निर्वाचन लाटरी द्वारा ही होना है, किन्तु परिषद के कुछ ही सदस्य एक साथ पदमुक्त किये जा सकते हैं (१७–२०)। १०,००० सदस्यों की सभा से बड़ी किसी दूसरी सभा की व्यवस्था नहीं की गयी है और टॉल्मी द्वारा जीवन भर के लिए नियुक्त १०१ Elders की संख्या (Gerousia) को जो अधिकार दिये गये हैं उनकी तुलना में परिषद के अधिकार कुछ भी नहीं हैं। यद्यपि इन्हें कुछ प्रकार के प्रशासकीय कार्यों से मुक्त रखा गया था, तथापि जिन न्याय सम्बन्धी और धार्मिक कर्तव्यों का पालन इन्हें सौंपा गया था वे महत्त्वपूर्ण थे। इसके अतिरिक्त जीवन भर के लिए Gerousia का सदस्य होने के कारण ये लोग एक प्रकार से परिषद की स्थायी समिति के रूप में थे और जब तक वे टाल्मी के

विरुद्ध न जाने, पर्याप्त अधिकार और प्रभाव रख सकते थे। सबसे प्रभावशाली राजनीतिक पद Strategia का पद लगता है। यह पद निर्वाचन द्वारा से केवल सचिव पद नहीं था। ९ विधि-संरक्षकों और ५ Ephors के विषय में कुछ भी नहीं कहा गया है। इस प्रपत्र का मुख्य भाग मिलता नहीं, किन्तु पदाधिकारियों की सूची में जो अंश अवस्था में मिली है उसके अंत में विनायकों का भी उल्लेख है। सम्भवतः विधि निर्माण सम्बन्धी उनके अधिकार केवल उन्हीं विषयों तक सीमित थे जिनके बारे में टाल्मी के संविधान (२७-३४) में कोई व्यवस्था नहीं की गयी थी। इस प्रपत्र की एक पंक्ति (३६) से यह ज्ञात होता है कि १० ००० नागरिकों की सभा के इस नये संविधान ने किसी प्राचीन एवं अधिक अल्पतांत्रिक संविधान का स्थान लिया था जिसमें नागरिकों की सभा के सदस्यों की संख्या १००० ही होती थी। Cary ने इस योजना (३९) की विशिष्टताओं का सारांश प्रस्तुत करते हुए इसे अल्पतंत्र और लोकतंत्र का उचित समन्वय बताया है और उनका विचार है कि यह संविधान उन विरोधी पक्षों के उतार चढ़ाव का सच्चा चित्र प्रस्तुत करता है जिनसे इसका उदय हुआ था। कदाचित् हम इस संविधान में इस बात का प्रमाण मिलता है कि यदि अरिस्टाटल का मध्यम मार्गीय राजनीति और संविधान प्रत्यक्षतया प्रभावकारी नहीं भी रहा हो तो कम से कम इतना तो सही है कि उसकी मृत्यु के समय उसका पालिटिक्स किसी भी अर्थ में निष्प्राणित रचनाओं की श्रेणी में नहीं आ गया था यद्यपि बहुधा यही कहा जाता है। यूनानी नगर राज्यों के लिए अब भी राज्य का संविधान पर्याप्त महत्त्व का विषय था यद्यपि राजा के अधिकारों में अब तक पर्याप्त वृद्धि हो चुकी थी।

अध्याय १३

रोम मे यूनानी राजनीतिक विचारधारा

पोलीबियस (Polybius) का जन्म २०० ई० पू० के लगभग आर्केडिया (Arcadia) के मेगालोपोलिस (Megalopolis) नामक नगर मे हुआ था। एकियन सघ (Achaean League) मे इस नगर राज्य का प्रमुख स्थान था। लगभग ८० वर्ष की अवस्था मे पोलीबियस की मृत्यु हुई। इस प्रकार उसके जीवन काल मे ही रोमवासियो ने हैनिबल (Hannibal) को पराजित किया और यूनान, मसिडोनिया और एशिया माइनर पर रोमन आधिपत्य स्थापित किया। प्लेटो की भाति पोलीबियस का जन्म भी एक सुसम्पन्न परिवार मे हुआ था और इसके परिवार के लोगो का भी राजनीति से घनिष्ठ सम्बन्ध था। किन्तु भावी शासक के लिए वह दर्शन की अपेक्षा इतिहास को ही अध्ययन का उचित विषय मानता था। एकियन सघ के क्रियाकलापो मे उसके पिता ने महत्त्वपूर्ण भाग लिया था। पोलीबियस ने भी अपने पिता का अनुसरण किया और सक्रिय राजनीति मे महत्त्वपूर्ण भाग लिया। जिस इतिहास की रचना उसने की है उसके निर्माण मे वह भी एक पात्र की हैसियत से भागीदार था। इस तथ्य के प्रति अपनी रचना मे वह जागरूक प्रतीत होता है और अपने कार्यो पर गर्व भी करता है। १६८ ई० पू० की विजयो के पश्चात् रोमवासियो ने १००० यूनानियो को रोम भेज दिया और लगभग १७ वर्षों तक उन्हे वही रहना पडा। इन १००० यूनानियो मे पोलीबियस भी था, किन्तु अपने अन्य देशवासियो की तुलना मे उसे रोम मे विशेष कष्ट नही उठाना पड़ा। सिपियो एमिलियानस (Scipio Aemilianus) जो उस समय बालक ही था पोलीबियस का मित्र हो गया और इस उदीयमान रोमन मे पोलीबियस को एक आदर्श रोमन के गुण दिखाई दिये। प्रमुख रोमन नेताओ के सतत सम्पर्क से उसने रोम की शासन-पद्धति और विचारधारा से भी परिचय प्राप्त किया। जिस इतिहास की रचना की योजना उसने बनायी उसके लिए वह नाना प्रकार से योग्य था, क्योकि यूनानी और रोमन दोनो देशो के प्रमुख व्यक्तियो और जीवन पद्धति से वह भली भाति परिचित था।

पोलीबियस प्रधानतया राजनीतिक विचारक नही था। वह एक व्यावहारिक राजनीतिज्ञ था और इतिहास की रचना करने का निश्चय उसने इस अभिप्राय से किया था कि इसके अध्ययन से भावी राजनीतिज्ञ लाभान्वित हो सके। इसके अतिरिक्त

जिस काल में उसका जीवन व्यतीत हुआ था उसमें इतिहास की रचना के लिए विशिष्ट विषय सामग्री तथा विशिष्ट अवसर उपलब्ध थे। इसी काल में सर्वप्रथम विश्व इतिहास की रचना की जा सकती थी। जैसा कि उसने स्वयं लिखा है "कौन ऐसा निकम्मा अथवा अकर्मण्य व्यक्ति होगा जो यह न जानना चाहेगा कि किस प्रकार से तथा किस संविधान के प्रभाव में ५३ वर्षों से कुछ कम ही समय में समस्त संसार रोम के आधिपत्य में आ गया?" [२१९-१६७ B.C.] (I1 (५))। तथापि जिस इतिहास की रचना पोलीबियस ने की उसमें सफलता अथवा असफलता के आधार पर कार्यों एवं घटनाओं का मूल्यांकन करने का प्रयास नहीं किया गया है। इतिहास के प्रति उसका जो दृष्टिकोण था उसमें इस प्रकार के मूल्यांकन के लिए कोई स्थान नहीं था। वह यह कहने के लिए तैयार नहीं था कि चूँकि रोम की प्रसारवादी नीति सफल रही है इसलिए यह न्यायोचित भी है। उसका कहना है कि "किसी संघर्ष या घटनाओं के आधार पर प्राप्त निष्कर्ष ही विजेता अथवा विजित पक्ष के सम्बन्ध में अन्तिम निर्णय नहीं होते हैं" (III ४)। इसमें सन्देह नहीं कि पोलीबियस पर यह आरोप नहीं किया जा सकता कि तत्कालीन परिस्थिति और अपने विचारों में किसी प्रकार का सामञ्जस्य स्थापित करने में वह असफल नहीं हो सका है। किन्तु इतना अवश्य कहा जा सकता है कि अपने युग की उसने युद्ध राजनीति और महान् पुरुषों के सन्दर्भ में ही देखा। सामाजिक व्यवस्था पर जो तनाव पड़ रहा था इस ओर उसका ध्यान नहीं गया।[1] वह जो कुछ देख सका अथवा जो उसने स्पष्ट रूप से देखा वह केवल यह था कि रोमन राज्य ने विजय और पराक्रम का अद्भुत उदाहरण प्रस्तुत किया था और एक सच्चे यूनानी की भाँति उसे यह सोचने के लिए बाध्य होना पड़ा कि इस प्रकार की विजय प्राप्त करने वाले तथा इस पराक्रम का प्रदर्शन करने वाले राज्य का संविधान निश्चित रूप से श्रेष्ठ होगा। अतः उसने यह आवश्यक समझा कि इस संविधान का अध्ययन इन प्रश्नों के—जैसे इसका संचालन किस प्रकार होता है? क्या यह स्थायी हो सकता है? अन्य संविधानों की तुलना में यह कैसा है?—आधार पर किया जाय।

अन्य संविधानों का जो विवेचन पोलीबियस ने प्रस्तुत की है उसमें वह एथेन्स और थीब्स के संविधानों को कोई स्थान नहीं देता है। इस विवेचना के द्वारा वह यह जानने का प्रयास कर रहा था कि संविधानों को स्थायित्व प्रदान करने वाले तत्त्व क्या होते हैं और यद्यपि एथेन्स और थीब्स दोनों राज्यों ने समय समय पर असाधारण गौरव प्राप्त किया था किन्तु उनके संविधान स्थायी नहीं रह सके। इसी आधार पर

---

१ यद्यपि यह इस तथ्य से भली भाँति अवगत प्रतीत होता है कि जनसंख्या में कमी हो रही थी (XXXVI १७) (५)।

करना पड़ेगा कि इस प्रकार के राज्य के लिए स्पार्टा का संविधान अनुपयुक्त एवं हेय सिद्ध होगा। ऐसे राज्य के लिए तो रोम का संविधान ही अधिक उपयुक्त है। रोम की पद्धति की सफलता एवं शक्ति को सिद्ध करने के लिए इतिहास की घटनाएं ही पर्याप्त प्रमाण प्रस्तुत करता है (VI ५०)।

द्वितीय प्यूनिक युद्ध के समय के रोमन संविधान, विशेषकर इसके सैन्य-संगठन का पोलीबियस ने सविस्तार वर्णन किया है। रोम की प्रसारवादी नीति की सफलता अधिकांश मात्रा में इसी सैन्य-संगठन पर निर्भर करती थी। रोमन संविधान एवं जीवन पद्धति का यह अभिन्न अंग समझा जाता था। इसी प्रकार वहां का धर्म भी था। जिस प्रवीणता के साथ वहां के सत्ताधारी धार्मिक अंधविश्वासों का प्रयोग जनता को भयभीत करने के लिए तथा धार्मिक उत्सवों का प्रयोग उन्हें प्रभावित करने के लिए करते थे उसका उल्लेख भी पोलीबियस करता है और उनके इस आचरण का समर्थन भी करता है (VI ५६)। रोम के इस संविधान का वर्णन करने की आवश्यकता यहाँ नहीं प्रतीत होती है यद्यपि इस संविधान का अध्ययन करने के लिए पोलीबियस का यह इतिहास ही प्रधान साधन है। यहां तो हम केवल इस बात पर ध्यान देते हैं कि पोलीबियस ने इस संविधान को जिस ढंग से प्रस्तुत किया है उससे यह प्रतीत होता है कि वह मिश्रित संविधान के औचित्य को सिद्ध करने का प्रयत्न कर रहा है। वह कहता है कि जैसा कि मैं पहले बता चुका हूं, इस (रोमन) संविधान के तीन मुख्य अंग थे और रोमन विधायकों ने इन तीनों अंगों को जिस कुशलता के साथ संयोजित किया था तथा वहां के प्रशासकों ने इसे जिस प्रवीणता से कार्यान्वित किया उससे किसी भी व्यक्ति के लिए यहाँ तक कि इस संविधान के अन्तर्गत रहने वालों में से भी किसी के लिए निश्चित रूप से यह कहना संभव नहीं था कि सम्पूर्ण व्यवस्था कुलीनतन्त्रात्मक थी अथवा लोकतन्त्रात्मक या राजतन्त्रात्मक। यह भ्रम स्वाभाविक ही था क्योंकि जब हम कान्सलों (Cousuls) के अधिकारों पर दृष्टि डालते हैं तब यह संविधान पूर्णरूपेण राजतन्त्रात्मक प्रतीत होता है जब हम सेनेट (Senate) के अधिकारों पर ध्यान देते हैं तो वही संविधान कुलीनतन्त्रात्मक लगता है और जब हम बहुसंख्यक वर्ग के अधिकारों को देखते हैं तो यह संविधान निश्चित रूप से लोकतन्त्रात्मक प्रतीत होता है।[1]

यदि पोलीबियस केवल इतना कह कर ही चुप रह जाता तो राजनीतिक विचारधारा के इतिहास में उसकी गणना डायकारकस के सुदूरवर्ती अनुयायियों तथा

---

१ VI 11 (११-१२) अन्तिम वाक्य प्लेटो की 'लाज' के ७१२ D से पर्याप्त मिलता जुलता है। जैसा कि अध्याय १२ में संकेत किया जा चुका है, इस अनुच्छेद को डायकारकस ने प्लेटो से ग्रहण किया था।

रोम के सविधान के प्रगमक मही हानी। इसमे अधिक महत्व उसे न मिलता। और न मौलिकता तथा समस्याओ की गहराई तक जाने का उमका क्षमता का आभास ही हो पाता। किन्तु वह एक दूसर सिद्धात का भी प्रतिपादन करता है[१] और इसी सिद्धात मे रोम के सविधान का ढालने का प्रयास करता है। इस सिद्धात की जडें व्यावहारिक राजनीति की अपेक्षा पुस्तका म मिलती हैं । पोलीबियस बहुत बडा विद्वान् ता न था किन्तु पर्याप्त शिक्षा प्राप्त कर चुका था। अपन देश के महान राजनीतिक साहित्य के कुछ अशो से वह परिचित था और उसन अरिस्टाटल का अथवा प्लेटो की रचनाओ का अधिक अध्ययन किया था । पाच तथा उद्यान (स्टोइक और एपिक्यूरियन) की शब्दावली उसकी (तथा उस समय के अन्य व्यक्तियो की) भाषा म प्रवेश पा चुकी थी। किन्तु स्टोइक सिद्धान्तो का वास्तविक ज्ञान उसे नही था। किसी दार्शनिक विचारधारा से उस सम्बन्धित करना[२] अथवा उसकी रचनाओ म दर्शन की अपेक्षा करना भूल होगी, तथापि सवधानिक चक्र का उसका सिद्धात यूनानी राजनीतिक विचारधारा का अग बन चुका है और इसका विश्लेषण करना आवश्यक प्रतीत होता है। अत अब हम उसके इसी सिद्धात की ओर ध्यान देते हैं।

---

१ ऐसा करने मे उसका क्या अभिप्राय था इसके सम्बन्ध मे कुछ कहना कठिन है। १६८ ई० पू० के बाद की घटनाओ ने उसे रोमन साम्राज्य के बारे म अपनी धारणा को बदलने के लिए बाध्य किया और उसकी दृष्टि मे अब रोमन साम्राज्य का भविष्य पहले की भाति सुनिश्चित नहीं प्रतीत रह गया। किन्तु इस निष्कर्ष पर पहुँचने के लिए कि कोई भी वस्तु सदा स्थायी नहीं रह सकता, ऐतिहासिक चक्र अथवा अन्य किसी सिद्धात की आवश्यकता नहीं थी (vi १५७)। पोलीबियस के विचारो तथा साहित्य के इतिहास से सम्बन्धित विषयो पर F W Walbank, Class Quart xxxvii, १९४३, pp ७३ ८९ देखिए।

२ H J Edwards (Introd to Paton s (Loeb) edition, Vol I, p xiii इसे स्टोइक कहता है तथा F W Walbank ने अन्य विद्वानो के मतो का अनुसरण करते हुए (जिनका उल्लेख उन्होने किया है) 'सवधानिक चक्र' के इस सिद्धान्त को स्टोइक सिद्धात बताया है। Wilamowitz (Der Glaube der Hellenen II १९३१, १९३२) और E Schwartz (Chara Kterkopfe I ७५) भी इसी मत से सहमत हैं। E Kornemann, 'Zum Staatsrecht de Polybius' (Philologus L xxxvi, १९३१) ने पोलीबियस और पनेशस के परिचय के आधार पर ही इस सिद्धात का प्रतिपादन किया है कि पनेशस के प्रभाव मे आकर पोलीबियस ने अपनी छठी पुस्तक का सशोधन किया ।

उसकी धारणा है कि इतिहास का विकास एक निश्चित क्रम के अनुसार होता आया है और यदि हम विगत इतिहास से भलीभाँति परिचित हैं तो भविष्य की घटनाओं का अनुमान लगा सकते हैं। (६१-३) । यूनानी राज्यों के सम्बन्ध में इस धारणा को बिना किसी संकोच के प्रयोग किया जा सकता है, किन्तु रोमन साम्राज्य के सम्बन्ध में इसका प्रयोग उतना आसान नहीं है। कारण यह है कि रोम के इतिहास का विकास क्रम न तो इतना व्यवस्थित है और न उसके बारे में हमारा ज्ञान ही स्पष्ट है। विगद्ध अर्थात अमिश्रित संविधान साधारणतया तीन श्रेणियों में विभाजित किये जा सकते हैं और इन तीनों में अच्छे और बुरे संविधान होते। इस प्रकार पालीबियस संविधानों को छः प्रकारों में विभक्त करने की प्राचीन परम्परा को पुनर्जीवित करता है और उसी के आधार पर राजतन्त्र को निरंकुश शासन से, कुलीनतन्त्र को अल्पतन्त्र से तथा लोकतन्त्र को विकृत लोकतन्त्र अर्थात भीड़तन्त्र (अधर्मतंत्रिया) से पृथक करता है। उसके अनुसार अच्छे लोकतन्त्र के ये लक्षण हैं—देवताओं, माता पिता तथा विधि का सम्मान, बहुसंख्या के सिद्धान्त की मान्यता। लोकतन्त्र के विकृत रूप अर्थात भीड़तन्त्र (ochlocracy) में ये विशेषताएँ नहीं रह जातीं। लोकतन्त्र के सम्बन्ध में पालीबियस की यह धारणा परम्परागत यूनानी धारणा का ही अनुसरण करती है और द्वितीय शताब्दी ई० पू० के यूनान में प्रचलित लोकतन्त्र की धारणा अर्थात आधुनिक धारणा की अपेक्षा आइसोक्रेटीज की धारणा के अनुरूप है। अपने इतिहास में पालीबियस लोकतन्त्र को (१) राजतन्त्र अर्थात उस समय के[1] मसीडोनिया अथवा अन्य राजतन्त्रों के विरोधी तथा (२) संघीय सिद्धान्त जिसके आधार पर उन दिनों एक से अधिक राज्य संघ एक में सम्मिलित हो जाया करते थे[2] के समर्थक के रूप में

---

१ F W Walbank Philip V of Macedon (१९४०) p २२५, n ?

२ xxxi २ (१२) में उसने इस सम्बन्ध में डिमोक्रटिकी कह सनेड्रिआकी पालिटिआ का प्रयोग किया गया है और इस प्रसंग में टिमोक्रटिकी (democ ratic—लोकतन्त्रात्मक) शब्द का अर्थ है राजा के अधीन नहीं और सूनड्रिआकी से समवेत प्रतिनिधि का बोध होता है। J A O Larsen 'Representation and Democracy in Hellenistic Federalism (Classical Philology XL १९४५ pp ? ?) का यही विचार है। किन्तु जैसा कि Professor Walbank ने मोनारकोस (monarchos) के विषय पर लिखते हुए कहा है, पारिभाषिक शब्दों के प्रयोग के सम्बन्ध में पोलीबियस की रचनाओं में संगति की अपेक्षा करना निराशाजनक ही होगा।' Class Quart xxxvii १९४८ p ६९

प्रस्तुत करता है। किन्तु इसी अवसर पर वह तत्कालीन राजनीतिक परिस्थिति को भूल कर संवैधानिक परिवर्तन की प्रक्रिया का एक चक्र बनाने में लग जाता है। उसका यह चक्र इस प्रकार है—सर्वप्रथम राजा का शासन आता है, क्योंकि इसकी उत्पत्ति 'प्राकृतिक' है, 'कृत्रिम' नहीं, किन्तु निर्माण और सुधार की प्रक्रिया द्वारा ही राजा के इस प्राकृतिक शासन में राजतन्त्र का विकास हो सकता है, राजतन्त्र भ्रष्ट और विकृत होकर निरंकुश शासन[1] का रूप ग्रहण करता है जिसके उन्मूलन के उपरान्त कुलीनतन्त्र की स्थापना होती है। कालान्तर में कुलीनतन्त्र भी विकृत एवं भ्रष्ट अवस्था को प्राप्त होता है और अल्पतन्त्र में परिवर्तित हो जाता है। अल्प वर्ग के कुशासन और न्याय विरुद्ध कार्यों से क्षुब्ध होकर जनता लोकतन्त्र की स्थापना करती है। किन्तु लोकतन्त्र का भी ह्रास होता है और अराजकता की अवस्था उत्पन्न हो जाती है और लोकतन्त्र भीड़तन्त्र (Mob-rule) का रूप ग्रहण कर लेता है।

पालीबियस को भली भांति ज्ञात था[2] कि संविधान के परिवर्तन की प्रक्रिया का जो चक्र उसने प्रस्तुत किया है उसका बाह्य स्वरूप प्लेटो की 'रिपब्लिक' की आठवीं पुस्तक में वर्णित परिवर्तनों की प्रक्रिया से भिन्न नहीं है। किन्तु वह प्लेटो के सिद्धान्त को 'आधुनिक' (अपने समय के) पाठकों के लिए बोधगम्य बनाना चाहता था, मानव जाति के वास्तविक इतिहास से सम्बन्धित करना चाहता था और इसे वास्तव में इतिहास के चक्र के रूप में प्रस्तुत करना चाहता था जिसमें यह प्रक्रिया पुनः प्रारम्भ हो सके और रोम के संविधान के सम्बन्ध में भी लागू की जा सके। इसलिए प्रोटेगोरस, प्लेटो, एपिक्यूरस तथा अन्य विचारकों की भांति वह भी राजनीतिक जीवन की उत्पत्ति और विकास का वर्णन करता है। यह इस प्रकार है—राजनीतिक जीवन का श्रीगणेश शक्तिशाली व्यक्ति के शासन से होता है। शक्तिशाली शासक अपनी शारीरिक शक्ति के आधार पर ही एकाधिकारी शासक बना। धीरे धीरे उसके इस शासन ने वास्तविक राजतन्त्र का रूप ग्रहण कर लिया है, न्याय और सद्गुण की धारणाएँ जिनके बिना

---

१ एक व्यक्ति के शासन के तीन प्रकार हैं, केवल दो ही नहीं। संवैधानिक चक्र का यह सिद्धान्त तथा संविधानों को छः प्रकारों में वर्गीकृत करने के सिद्धान्त मेल नहीं खाते हैं।

२ वह 'प्लेटो तथा अन्य विचारकों का उल्लेख करता है (IV ५(१))। किन्तु बाढ़ और भुखमरी तथा मानव जाति के अनवरत प्रयत्नों की जो चर्चा वह करता है वह प्लेटो की 'लाज' की तीसरी पुस्तक पर नहीं आधारित है। स्यात् उसने इसका अध्ययन नहीं किया था। अपने इन वर्णनों में उसने अधिकांशतया तथ्यों पर आधारित ऐतिहासिक परम्पराओं का सहारा लिया है।

सामुदायिक जीवन सम्भव नहीं हो सकता जो पकड़ने लगता है। अन्य पशुओं से मनुष्य भिन्न है क्योंकि वह तर्क[1] एवं विवेक की क्षमता रखता है और यह समझ सकता है कि अपने साथियों एवं परिवार के प्रति उसके कुछ सामान्य कर्त्तव्य हैं। इसलिए सद्गुण एवं न्याय का अनुसरण करना उस सुविधाजनक प्रतीत होता है। पोलीबियस का कहना है कि समाज बल और तीव्र इच्छा पर आधारित न होकर तर्क एवं विवेक पर आधारित है। अतः जब कोई शासक (राजा) अपने को देशवासियों से बहुत ऊपर समझने लग जाता है और अपनी इच्छा को विधि का स्थान देना प्रारम्भ कर देता है तो श्रेष्ठ जन विद्रोह करते हैं और उस शासक को पद से हटा देते हैं। इस प्रकार कुलीनतन्त्र की स्थापना होती है। प्रारम्भ में तो इस कुलीन वर्ग के शासक जनता के साथ पितृवत व्यवहार करते हैं और बुद्धि एवं विवेक से शासन करते हैं किन्तु शक्ति और प्रभुता का मद उन्हें भी हो जाता है। निरंकुश शासक की भाँति उनका भी अन्त होता है और जनता स्वयं अपने हाथ में शासन सूत्र ग्रहण करती है। लोकतन्त्र की स्थापना होती है और समानता तथा स्वतन्त्रता के सिद्धान्तों को मान्यता प्राप्त होती है। जब तक ऐसे व्यक्ति जीवित रहते हैं जिन्होंने उस क्रान्ति में भाग लिया था जिसके फलस्वरूप समानता और स्वतन्त्रता की स्थापना हुई तब तक तो इस लोकतन्त्र का संचालन सुचारू रूप से होता है। किन्तु एक या दो पीढ़ी बाद सम्पत्तिशाली वर्ग समानता के स्थान पर विशेषाधिकार चाहने लगता है। सत्ता हस्तगत करने के लिए यह वर्ग घूस देना प्रारम्भ कर देता है और इस प्रकार सर्वसाधारण के चरित्र को भी भ्रष्ट कर देता है। लोकतन्त्र में जब इस प्रकार राष्ट्रीय चरित्र भ्रष्ट हो जाता है तो हिंसा के शासन का सूत्रपात होता है।[2] सम्पत्तिशाली वर्ग या तो मौत के घाट उतार दिया जाता है अथवा देश से निष्कासित कर दिया जाता है,

---

१ (लोगिस्मोस) एपिक्यूरस तथा स्टोइक दोनों विचार परम्पराओं का बुद्धिमान मनुष्य तर्क का अनुसरण करने का प्रयास करता था। K १६ (D l x १४४) और D L x १७७ 'कर्त्तव्य (टाकाथीकोनटा) और बल या तीव्र इच्छा (थ्यूमोस) मुख्यतया स्टोइक विचार परम्परा के शब्द हैं और हितकार। एपिक्यूरियन परम्परा का।

२ इस स्थल पर क्रोरोक्राटिया का प्रयोग किया जाता है ओक्लोक्रेटिया का नहीं, किन्तु यहाँ अनमाद का प्रयोग करके सम्पूर्ण के अर्थ की आशा की गयी है। इस प्रकार के अव्यवस्थित शासन अथवा भीड़-तन्त्र में दंगे और हिंसा का होना अनिवार्य है। यहाँ भी, पोलीबियस 'पुस्तकीय' भाषा का प्रयोग कर रहा है और Hesiod (Works and Days २६२) डोरोफागोइ और [१६९] क्रिरोडिकाइ द्वारा प्रयुक्त शब्दों का भी प्रयोग करता है।

उनका भूमि वितरित कर दी जाती है।[1] यह सब किसी साहसी तथा कुशल व्यक्ति के नेतृत्व में होता है। दशा बिगड़ती जाती है और समुदाय भीड़ का रूप धारण कर लेता है। समाज पुन असभ्यता की अवस्था में पहुँच जाता है। जब इस समाज को पुन कोई शक्तिशाली स्वामी अथवा शासक मिल जाता है तो संविधान के परिवर्तन का दूसरा चक्र प्रारम्भ होता है।

पालीबियस बार-बार इस बात पर जोर देता है कि संवैधानिक विकास का यह चक्र प्राकृतिक व्यवस्था का ही अंग है। इसको स्वीकार करने पर हम दो निष्कर्षों को भी स्वीकार करना पड़ेगा जो इसी से निकलते हैं। प्रथम विकास के इस क्रम को अवरुद्ध करने अथवा बदलने की दिशा में हम कुछ भी नहीं कर सकते, फलत मिश्रित संविधान सम्भावना के परे है, द्वितीय चूंकि रोम के संविधान का इतिहास प्रकृति के अनुकूल रहा है (और इसलिए इस चक्र का अनुसरण करता रहा है) अत भविष्य में भी यह इस चक्र के अनुसार ही विकसित होगा। पालीबियस यह नहीं बताता है कि तत्कालीन रोमन राज्य इस चक्र की किस निश्चित अवस्था में था और न वह इस सम्बन्ध में ही कुछ कहता है कि इस प्रकार का सुसंगठित एवं मिश्रित संविधान किस प्रकार सम्भव हो सका। इसमें तो सन्देह नहीं कि उस समय तक रोमन संविधान लोकतन्त्र की विकृत अवस्था अर्थात भीड़ के शासन की अवस्था को नहीं प्राप्त हुआ था। और राजतन्त्र की अवस्था से बहुत पहिले गुजर चुका था। किसी पूर्व निश्चित सिद्धान्त के अनुसार ऐतिहासिक घटनाओं को प्रस्तुत करने के लिए जिस प्रकार की तीक्ष्ण बुद्धि तथा सत्य की अवहेलना करने के जिस सामर्थ्य की आवश्यकता होती है वह पालीबियस में नहीं थी। राजनीतिक दर्शन के क्षेत्र में अपना यह प्रयास जो अत्यधिक सन्तोषप्रद नहीं रहा, वह निम्नलिखित शब्दों के साथ करता है—"यह सिद्ध करने की आवश्यकता नहीं कि प्रत्येक वस्तु को परिवर्तन और ह्रास की प्रक्रिया से होकर गुजरना पड़ता है, प्रकृति की अनिवार्य प्रक्रियाएँ ही इसे सिद्ध करने के लिए पर्याप्त हैं। जहा तक संविधानों का सम्बन्ध है दो कारण ऐसे हैं जो सभी प्रकार के संविधानों को विनाश की अवस्था तक पहुँचा देते हैं। एक कारण वाह्य और दूसरा आन्तरिक जो संविधान के अन्दर में ही उत्पन्न होता है। वाह्य कारण का पता लगाने का तो कोई निश्चित उपाय नहीं है किन्तु आन्तरिक कारण का अध्ययन किया जा सकता है। (यह अध्ययन एनाकुक्लोसिस की पद्धति का प्रयास

---

[1] गोज एनाडास्मोइ तुलना कीजिए, Plato, Republic viii ५६६ क्रीओन टी एपाकोपास काइ गीज एनाडास्मोन—सम्पत्ति शाली वर्ग को सदैव भय रहता है और सम्पत्ति हीन वर्ग आशा मे जीवन व्यतीत करते हैं, Plutarch, Dion ३७।

करके किया जा सकता है।) 'इसके अनुसार जब कोई राज्य कई भयानक संकटों से अपनी रक्षा करके ख्याति प्राप्त कर लेता है और अन्य राज्य उसका आधिपत्य स्वीकार करने लगते हैं तो यह राज्य धन मान सम्पत्ति को अधिक महत्त्व देने लग जाता है। इसके निवासी शान शौकत का जीवन व्यतीत करने लग जाते हैं और परस्पर पदों एवं विशेषाधिकारों के लिए अवांछनीय ईर्ष्या करने लगते हैं। किन्तु सम्पत्तिशाली वर्ग की धन और पद के लिए इस लोलुपता मात्र से राज्य शक्ति नष्ट होना इसका उत्तरदायित्व तो जनता के ऊपर है क्योंकि वह अपने से अधिक शक्ति और सम्पत्ति वालों के विरुद्ध विद्वेषपूर्ण भावना रखने लगता है और अन्य महत्त्वाकांक्षी तथा अवसरवादी व्यक्तियों की चाटुकारिता के प्रभाव में आकर यह सोचने लग जाता है कि वास्तविक शक्ति जनता के हाथ में ही है। जब यह अवस्था आ जायेगी तो रोम की जनता अपने से श्रेष्ठ व्यक्तियों की आज्ञा का पालन करने अथवा उनके समकक्ष स्थान प्राप्त कर लेने से ही सन्तुष्ट न होगी वह तो सम्पूर्ण शक्ति अपने हाथ में लेना चाहेगा। ऐसा होने पर उनका संविधान स्वातन्त्र्य और लोकतन्त्र के नाम से विभूषित होगा किन्तु वास्तव में यह भीड़ के शासन (Mob rule) का निकृष्टतम रूप होगा।

स्टोइक दार्शनिक या उद्धर्मी[1] पनेशस (Panaetius) पोलीबियस से अवस्था में लगभग १५ या २० वर्ष छोटा था। वह भी रोम से सम्बन्धित था क्योंकि उसकी जन्मभूमि रोड्स (Rhodes) भी रोमन साम्राज्य के आधिपत्य में आ गयी थी। कुछ समय तक वह भी सिपियोएमिलियस[2] (Fr ११९) की मित्रमंडली में रहा। यद्यपि इसकी अवधि नहीं ज्ञात हो सकी, बाद में उसने कुछ समय एथेन्स में व्यतीत किया और वहाँ स्टोइक सम्प्रदाय के आदि निशालय 'स्टोआ' का अध्यक्ष हुआ। उसकी मृत्यु किस वर्ष में हुई इसके सम्बन्ध में निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता, किन्तु इतना तो निश्चित ही है कि १०९ ई० पू० में यदि उसकी मृत्यु नहीं हुई तो उसने स्टोआ की अध्यक्षता से अवकाश ग्रहण कर लिया था। अपने नेतृत्व काल में उसने स्टोइक सम्प्रदाय की कठोरता को कुछ मात्रा में कम किया। प्लेटो अथवा परिपेटेटिक दार्शनिकों के ऐसे सिद्धान्तों को जो उसे उचित प्रतीत हुए उसने निःसंकोच स्वीकार किया। इसलिए उसे एक नये अथवा मध्यम मार्गीय स्टोइक सम्प्रदाय के

---

१ Wilamowitz, Der Glaube der Hellenen II ३९८, का यही मत है किन्तु M Pohlemz, Die Stoa (१९४८) I २३९ ने इसका किया है।

२ की क्रम-संख्या के सम्बन्ध में इस अध्याय के अन्त में दी गयी टिप्पणी

( )

संस्थापक की उपाधि मिली। भाग्यवाद की उपेक्षा तथा सुख के लिए केवल सद्गुण को ही पर्याप्त न समझने के लिए उस समय भी रूढ़ि एव पुरातन पथी स्टोइक विचारको की जो भी प्रतिक्रिया रही हो इसमे कोई सदेह नहीं कि अपने विवेकपूर्ण सुधारो से उसने स्टोइक सम्प्रदाय को कारनेडीज (Carneades) तथा अन्य बौद्धिक सदेह-वादियो के आक्रमण को सहन कर सकने की शक्ति प्रदान का और शिक्षित रोमवासियो के लिए इस सम्प्रदाय को ग्रहण करने योग्य बनाया। मानवत्व कर स्टोइक सम्प्रदाय को रोमवासियो के उपयुक्त बनाने का प्रयास उसने नहीं किया वह तो इसे पूर्णतया यूनानी[1] बनाने का प्रयास कर रहा था और पाचवीं शताब्दी ई० पू० के दार्शनिक दृष्टिकोण को पुनर्जीवन प्रदान करने का प्रयत्न कर रहा था। प्राचीन स्टोइक सम्प्रदाय म बुद्धिमान् व्यक्ति से यह आशा नहीं की जा सकती थी कि वह राजनीति म सक्रिय भाग लेगा और इसके लिए उसे प्रोत्साहन भी नहीं दिया जाता था। विधि विषयक अपनी पुस्तक Delegibus म जब सिसरो स्टोइक कृति Demagistratibus का उल्लेख करता है तो दूसरा पात्र (सिसरो की यह पुस्तक सवाद की शैली म है।) आश्चर्यान्वित होकर कहता है कि क्या आपका तात्पर्य यह है कि स्टोइक मतावलम्बी इन विषयो पर भी विचार करते थे ? सिसरो का उत्तर है—'जी एेसा तो नहीं है, किन्तु जिन स्टोइक का जिक्र मैंने अभी-अभी किया है और उनके बाद के एक महान् एव परम विद्वान स्टोइक पनेशस ने अवश्य इन विषयो पर भी विचार किया है। क्योंकि यद्यपि स्टोइक विचारक राज्य और सविधान के सम्बन्ध म सैद्धान्तिक स्तर पर तो बडी निपुणता स उपदेश देते थे, किन्तु नागरिकों एव निवासियो की आवश्यकताओं की ओर वे कोई ध्यान नहीं देते थे (४८)।" इसके विपरीत पनेशस का दृष्टिकोण व्यावहारिक एव उपयोगितावादी था और सामाजिक कल्याण के सम्बन्ध म वह स्पष्ट धारणा रखता था।

उसकी राजनीतिक विचारधारा के दो एतिहासिक आधार थे। एक ओर तो वह इस परम्परा मे विश्वास करता था कि मानव सभ्यता का शिलान्यास महान् एव

---

१ Pohlenz, Seine Weltan Schauung ist nichts anderes als die Hellenisierung der Stoa किन्तु जसा कि Pohlenz का यह कथन कि यह प्रक्रिया जीनो के तथाकथित सेमिटिक दृष्टिकोण से मुक्त होने की इच्छा से अनुप्राणित थी, अतिरंजित प्रतीत होता है (A nti Les Fuhrertum (१९३४) p १२८)। जैसा कि ऊपर सकेत किया गया है, यह प्राचीन विचार-परम्परा को पुनर्जीवित करने की प्रक्रिया थी।

श्रेष्ठ व्यक्तियों द्वारा किया गया है और दूसरी ओर उसका यह विश्वास था कि यद्यपि सभ्यता के विकास की इस प्रक्रिया में नगर राज्यों का योग गौण ही रहा है फिर भी यह योग नगण्य नहीं कहा जा सकता—सुदूर अतीत में न्याय तथा तदनन्तर विधि की आधार शिला सद्गुण एवं सच्चरित्र शासकों Bene Morati Reges द्वारा ही रखी गयी जिन्होंने शासित एवं शासित वर्गों के हितों का समर्थन किया (१२०)। अन्य महान पुरुषों ने जैसे थेमिस्टोक्लीज़ (Themistocles) परिक्लीज़ (Pericles) और सिकन्दर ने जनता की भक्ति के कारण ही सफलता प्राप्त की (११७), इसलिए समस्त जनता के कल्याण की ओर ध्यान देना तथा उनका सहयोग प्राप्त करना अत्यन्त आवश्यक है। सभी मनुष्य समान हैं तथा उन्हें समानाधिकार प्राप्त होना चाहिए इस सिद्धान्त में पनेशियस का आस्था नहीं थी। सम्पत्तिशाली वर्ग से आने वाले अन्य विचारकों की भांति वह भी श्रेष्ठ वर्ग की नैतिक श्रेष्ठता में विश्वास करता था। पोलीबियस की भांति पनेशस को भी प्राचीन रोमन संविधान के प्रशासकों की श्रेणी में रख कर सिसरो ने इसके साथ अन्याय नहीं किया किन्तु पनेशस के बुद्धिमान् व्यक्ति की श्रेष्ठता और ज़ेनो (Zeno) तथा क्रिसिपस के स्टोइक महात्मा की नैतिक श्रेष्ठता में अन्तर है। अन्य मनुष्यों की भांति पनेशस के बुद्धिमान् मनुष्य में प्रेम और भक्ति सहयोग एवं जिज्ञासा की स्वाभाविक भावनाएं तो हैं ही वह महत्त्वाकांक्षा से भी ऊपर नहीं है वह नेतृत्व करने की आकांक्षा भी रख सकता है (१८) और यदि यह भावना नैतिक श्रेष्ठता उचित अनुचित के प्रति ध्यान और सौन्दर्य के अनुराग के साथ है तो इसे बुरा भी नहीं समझना चाहिए। यह पनेशस के नवीन स्टोइक महात्मा का चित्र है जो अगत पोलीबियस के आश्रय रोमन सिपियो एमिलियस के चरित्र पर आधारित है। किन्तु सिपियो स्टोइक नहीं था और जिस मानववादिता के लिए वह विख्यात है वह प्रधानतया उसके प्रशंसकों की कल्पना की कृति है। रोम की सिनेटोरियल पार्टी को एक ऐसे नायक की आवश्यकता थी जिसे वे टाइबेरियस और कायस ग्रैकस (Cais Gracchus) की स्मृति के समकक्ष खड़ा कर सकते। सिपियो एमिलियस के चरित्र को ऊँचा उठा कर तथा आदर्श बना कर उन्होंने अपने इसी उद्देश्य की पूर्ति की।

प्राचीन स्टोइक विचारकों ने नगर राज्य के महत्त्व को स्वीकार नहीं किया। पनेशस ने इसे पुनः महत्त्वपूर्ण स्थान दिया किन्तु उसने भी नगर राज्य को मुख्य स्थान न देकर गौण स्थान ही दिया। नगर राज्य की महत्ता को इस प्रकार पुनर्जीवित करने के लिए कुछ प्रत्यक्ष कारण थे स्टोइक विचारकों की विश्व राज्य की कल्पना अव्यावहारिक एवं असम्भव प्रतीत हुई और यह भी अनुभव किया जाने लगा कि मानवों की एकता की धारणा (Communis Totius Generis Hominum

Conclitio)[1] के साथ पथक राज्यो का अस्तित्व अनिवायत असगत नहीं है। नगर राज्यो का एतिहासिक आधार भी साधक था, सामूहिक जीवन व्यतीत करने की मानवीय आवश्यकता की पूर्ति करने मे यह सफल हुआ था और कालान्तर म सम्पत्ति की रक्षा करने का भार भी अपने ऊपर ले लिया था (११८)। पेनेशस का मत था कि इन कर्तव्यो का पालन अब भी किया जा सकता था। अत नगर राज्य को अनावश्यक बाह्य अथवा अप्राकृतिक सस्था के रूप म समझना उचित नहीं था। किन्तु पेनेशस न नगर राज्य के सम्यक तथा असम्यक के सम्बन्ध म अन्तिम निणायक का स्थान नही दिया। प्राचीन स्टोइक विचारको की भाति वह भी न्याय के मान दण्डो को तक और प्रकृति पर आधारित करना चाहता था। किन्तु उसने इन शब्दो की व्याख्या एक नय ढग से की। उन्हे एक नया अथ प्रदान किया और तक और प्रकृति का आकाश से पथ्वी पर उतार दिया और कत्तव्य का प्राचीन धारणा को इस प्रकार प्रस्तुत किया कि यह व्यापक और अमूत न हो कर यूनानियो तथा रोमवासियो के लिए समान रूप से बोधगम्य हो गयी। उसके लिए प्रकृति के अनुसार जीवन व्यतीत करने का अथ केवल यह था कि उन साधनो के अनुसार जीवन व्यतीत किया जाय जो प्रकृति न हमारे लिए उपलब्ध कर रखा है (१७)। इस दृष्टिकोण द्वारा वह इस प्राचीन प्रश्न का कि मनुष्य को किस प्रकार का जीवन व्यतीत करना चाहिए स्वतन्त्र एव अपेक्षाकृत व्यापक उत्तर दे सका और स्वास्थ्य, शक्ति, तथा प्रकृति एव कलात्मक कृतियो की सौन्दर्यानुभूति को भी अच्छे जीवन की विशेषताओ के रूप म प्रस्तुत कर सका। इस प्रकार यदि हम इस विकल्प पर ध्यान न दे कि पनेशियस ने इस प्रश्न पर अधिक विचार नही किया कि नगर राज्य के अन्तगत ही जीवन व्यतीत किया जायगा अथवा नही, तो हम इस निष्कष पर पहुँचेंगे कि अच्छे जीवन अथवा अच्छे मनुष्य के सम्बध म पनेशस के विचार क्रिसिपस की अपेक्षा अरिस्टाटल के विचारो स अधिक मिलते-जुलते हैं।

पनेशस के समकालीन विचारको म कारनीड्स (Carneades) सबसे अधिक विख्यात है। प्लेटो की अकादमी का वह अध्यक्ष था, किन्तु अब यह अकादमी प्लेटो के समय की अकादमी नही रह गयी थी। इसम महत्त्वपूर्ण परिवर्तन आ गया था

---

१ Cicero, de off १ १४९ Straaten ने इसे अपने सकलन मे नहीं सम्मिलित किया है। यह ध्यान देने योग्य है कि यहाँ विश्व की एकता मानव जाति की समस्या के रूप मे देखी जाती है, ईश्वर के ब्रह्माण्ड की समस्या के रूप मे नहीं। E Elorduy, Die SozialPhilosophie der Stoa (१९३६) p २१७ (Philologus, Supptbd xxviii ३)।

और इसका सामान्य दृष्टिकोण सन्देहवादी हो गया था। उसकी रचनाओं का कोई भी अंश लिखित रूप में नहीं मिलता है। इसके अतिरिक्त उसका अधिकांश कार्य राजनीति के क्षेत्र के बाहर था। रोम की सार्वजनिक सभा में न्याय के विषय पर उसने एक ऐसा भाषण दिया जिसमें भाषण के पूर्वार्द्ध में दिये गये अपने सभी तर्कों का खण्डन भाषण के अन्त में उसने स्वयं कर दिया जिससे रोमन श्रोताओं को अत्यधिक क्षोभ हुआ। (९)[1] निष्कर्षों के अपने इस प्रदर्शन से उसने यह सिद्ध कर दिया कि स्टोइक विचारकों का ius Naturale का सिद्धान्त निराधार था और न्याय की उत्पत्ति ईश्वर अथवा प्राकृतिक प्रकृति में नहीं खोजी जा सकती थी। कृसिपस ने न्याय के सम्बन्ध में इसी धारणा का प्रतिपादन किया था किन्तु कारनीदस ने आत्महित की आचरण का एकमात्र प्राकृतिक आधार बताया। इसी आधार पर वह कहता है कि 'इसलिए या तो न्याय का कुछ भी महत्त्व नहीं है या यदि है भी तो वह बहुत बड़ी मूर्खता है क्योंकि इससे दूसरों के हित का समर्थन होता है और इस प्रकार अपने हित की क्षति हो पहुँचती है' (२१)। इस प्रकार की बात पहले भी कहा जा चुका थी। उदाहरणार्थ, थ्रासीमेकस ने भी इसी प्रकार का दृष्टिकोण प्रस्तुत किया था और प्रकृति के अध्ययन के आधार पर निर्बलों के ऊपर सबलों के शासन को न्यायोचित सिद्ध किया था। राज्य को समझौते पर आधारित करने के सिद्धान्त का प्रतिपादन भी पहले किया जा चुका था। और कारनीदस ने इससे यह निष्कर्ष निकाला कि न्याय की उत्पत्ति न तो प्रकृति से हुई है और न न्याय की आकांक्षा से, अपितु उसकी उत्पत्ति निर्बलता से हुई है (२५)। इस प्रकार यहाँ भी Macht Politik का सिद्धान्त न्याय की दो विभिन्न धारणायें प्रस्तुत करता है और यह निश्चित नहीं हो पाता है कि न्याय की उत्पत्ति का कारण सबल व्यक्ति की शक्ति की आकांक्षा है अथवा निर्बल व्यक्तियों की सुरक्षा की आकांक्षा है। न्याय के प्रचलित अर्थ का उल्लंघन का प्रयास कारनीडिस नहीं करता। वह यह नहीं कहता है कि सबल का अधिकार ही न्याय है, किन्तु इतना अवश्य कहता है कि राज्यों के अन्तर्गत अधिकार का प्रयोग और विजय कर दो राज्यों के पारस्परिक सम्बन्ध में न्यूनाधिक मात्रा में न्याय के विपरीत ही व्यवहार होता है। अपने इस कथन की पुष्टि में वह रोम का उदाहरण देता है और कहता है कि यदि रोमवासी न्यायसंगत आचरण करना चाहते तो उन्हें उस समस्त सम्पत्ति को जो उन्होंने विजय द्वारा प्राप्त की थी विजित लोगों को पुनः वापस करना पड़ता और स्वयं झोपड़ों में कष्ट और अभावपूर्ण जीवन व्यतीत करना पड़ता (२१)। किन्तु वे न्याय की अवहेलना करके अपने साम्राज्य का निर्माण करते हैं तो वे बुद्धिमत्ता का परिचय देते हैं (२८)। किसी भी राज्य के लिए यह हितकर ही

---

[1] संख्याओं से Cicero de Re Pub iii के खण्डों की ओर संकेत है।

है कि वह नय देशा पर विजय करके अपनी सीमा का विस्तार करे अपने कोष को समद्ध बनाय तथा इन कार्यों के लिए प्रशसनीय समझा जाय (२२)। व्यक्तिगत सम्बन्ध म यदि हम बेईमानी से लाभ उठाना चाहे, तो हम छिप कर काय करना पडता है, किन्तु साम्राज्य का विस्तार करन वाला के लिए प्रत्यक्ष रूप से स्मारका का निमाण किया जाता है यद्यपि हम भली भाँति जानत हैं कि स्वतन्त्रता और भूमि का अपहरण करके ही साम्राज्य का विस्तार किया गया होगा (२४)। इसलिए जब तक समस्त ससार म शाति और समता की स्थापना नहा हाती, जब तक पृथक् राज्या का अस्तित्व कायम रहता है, तब तक एक राष्ट्र का हानि स दूसरे राष्ट्र का लाभ सम्भव हो सकेगा। साम्राज्यवाद के आधार की इस प्रकार की विशद व्याख्या मलाम म एकत्रित एथेन्स वासिया (अध्याय ६) की व्याख्या के बाद अभी तक नहीं की गयी थी। कारनीड्स रोमन साम्राज्य का भत्सना नहीं कर रहा था। वह ता केवल यह दिखाना चाहता था कि इसका कोई नतिक आधार नहीं है और इस प्रकार उसन कई लोगा को रोमन साम्राज्य के लिए किसी नतिक आधार की खोज करन क लिए प्रेरित किया।

कुछ लोगा को इस काय म सफलता भी मिली। सम्भवत यह कहना अधिक उपयुक्त होगा कि पासिडोनियस[1] (Posidonius) ने रोमन साम्राज्य के लिए प्लेटो के विचारा म नतिक आधार ढूढा। यह स्टोइक दार्शनिक, इतिहासकार और जातिशास्त्री रोमन चरित्र का प्रशसक था और रोमन आधिपत्य का समथन करता था। थ्रेसीमेकस ने जब 'सबल के अधिकार' का उत्पादन किया था तो उसका तात्पय यह नहीं था कि सबल व्यक्ति की शक्ति का आधार उसकी श्रेष्ठ बुद्धि, मानसिक शक्ति एव न्यायप्रियता है। किन्तु प्लेटो ने निरतर इन्हीं पर जोर दिया और पासिडोनियस ने प्लेटो का ही अनुसरण किया।[2] सबल के अधिकार के सम्बन्ध म प्लेटो की यह व्याख्या स्टोइक महात्मा के सम्बन्ध म भी प्रयोग की जा सकती थी और इस प्रकार के महात्मा का चित्र अब कारनीड्स के NovaEt Nimis Callida Sapientia[3]

---

१ W Nestle, Griechische Weltan Schauung (१९४६) p १५६ Palitik und Moral in Altertum विषय पर लिखित तथा iv Jbb Kl Alt (१९४८, p २२५) ff मे प्रकाशित लेख मे।

२ Seneca, Epist ९०,५।

३ यदि Livy (xLii ४७,९) के मत को स्वीकार किया जाय, तो १७० ई० पू० मे, यूनानी दार्शनिको के आगमन के पूर्व भी रोम की सीनेट दो दलो मे विभक्त हो चुकी थी। F W Walbank, Journal of Roman Studis xxi १९४१, pp ८२-९३।

स भी अधिक भडकीले और आकर्षक परिधान म प्रस्तुत किया जाता है। रोमन साम्राज्य के विस्तार के माग म बाधा उपस्थित करने वाला को अपने कौशल से हतप्रभ कर देने की क्षमता मात्र के आधार पर कोई व्यक्ति पोलिउानियस के बुद्धिमान् मनुष्य की श्रेणी म नहीं आ सकता। इसके लिए तो नतिक एव बौद्धिक श्रेष्ठता आवश्यक है और जसा कि पनेशस ने पहले कहा था सिपियोएमिलियम के गुणो वाला व्यक्ति ही इस श्रेणी म आ सकता है। बुद्धिमान मनुष्य के उदाहरण के रूप म पोसिडोनियस एम० मारसल्स (M Marcellus) को सिपियो से भी श्रेष्ठ मानता है। मारसल्स ने इसलिए आसू बहाया था कि उसने आकमडीज की हत्या करायी थी और वह पहला रोमन था जिसने यूनानियो के समक्ष सर्वप्रथम यह प्रमाणित कर दिया कि रोम वाले भी न्याय की भावना रखते है (Frr ४५ ८६ M) किन्तु उच्च स्तर के चरित्र और योग्यता वाले रोमन सेनापतियो के उदाहरण स कारनीडस की इस स्थापना का खडन नहीं किया जा सकता था कि रोमन साम्राज्य का निर्माण लोलुपता और स्वार्थ पर हुआ है। १४६ ई० पू० म हुई कोरिन्थ की लूट पाट और कारथज के विध्वस को ध्यान म रखते हुए यह कहना और भी कठिन हो गया है कि रोमन आधिपत्य शासित लोगो के हित म सचालित होता था और इसलिए न्याय विरुद्ध नही था यद्यपि कुछ लोगो ने इस मत का प्रतिपादन करने का प्रयास किया।[1] तथापि इतना तो निश्चित रूप से प्रतीत होता है कि रोम की नीति को उदार एव मानवतावादी बनाने का जो प्रयास पनेशस और पोसीडोनियस न किया उसम उन्हे किञ्चितमात्र भी सफलता नहीं प्राप्त हुई।[2]

इतिहास तथा दशन पर पोसिडोनियस के भाषणो को सुनने वालो म एम० यूल्यिस सिसरो (M Tullius Cicero) सबसे अधिक विख्यात है। क्या मनुष्य को राजनीति म भाग लेना चाहिए? इस स्टोइक प्रश्न का रोमन कासल एव वक्ता सिसरो के पास केवल एक उत्तर हो सकता था और अपने उत्तर के समर्थन म वह प्राचीन युग के सात बुद्धिमान व्यक्तियो की जो स्वय बहुधा व्यावहारिक राजनीति में परामर्श दाता रह चुके थे सहायता ले सकता था। सिसरो का दृष्टिकोण अन्तत राजनीतिज्ञ का दृष्टिकोण था और अन्तत वकील का। दार्शनिक दृष्टिकोण का प्रभाव

---

१ Cicero, de Re Pub III ३६।

२ किन्तु Harvard Studies in Classics Philology Lxviii १९४८ p १५० no ८८ मे प्रकाशित Mason Hammond का निबन्ध Ancient Imperialisme देखिए जिसमे उन लोगों का उल्लेख किया गया है जो यह समझते हैं कि पनेशस और पोसीडोनियस अपने प्रयास मे सफल हुए।

उस पर न्यून मात्रा म ही पन्ना था और यहाँ भी वह अतिभौतिक दार्शनिकों की अपेक्षा राजनीतिक दार्शनिकों से अधिक प्रभावित हुआ था और उन्ही की रचनाओं से अधिक परिचित था। उसकी दोनो रचनाओं (De Re Publica and De Legibus) का विषय क्रमश रोम तथा राम का विधि व्यवस्था था और अन्त यूनानी दर्शन का इतिहास। यूनानी दर्शन के इतिहास के रूप म वे मूल सामग्री प्रस्तुत करते हैं, किन्तु सिसरो ने इनकी रचना इस उद्देश्य से नहीं की थी। राजनीतिक विचारधारा का एतिहासिक विवरण प्रस्तुत करने के उद्देश्य से उसने इन पुस्तकों की रचना नहीं की। उसका उद्देश्य वही था जो पोलिबियस का उसकी छठी पुस्तक की रचना म था किन्तु दोनो के उद्देश्यों म इतना अन्तर था कि जहाँ पोलिबियस रोमन सविधान की यूनानी राजनीतिक विचारधारा के अनुरूप प्रस्तुत करना चाहता था वहाँ सिसरो यूनानी राजनीतिक विचारधारा और रोम के इतिहास तथा सविधान को एक ही साचे म ढालने का प्रयत्न कर रहा था। अपने इस कार्य म उसे पोलिबियस से अधिक सफलता नहीं मिली। क्योंकि यद्यपि पोलिबियस की तुलना म वह अधिक पढा लिखा और प्रतिभा-सम्पन्न था फिर भी वह यह नही देख सका कि डायकारकस के मिश्रित सविधान (Mixtum Genus) और रोमन सविधान के मजिस्ट्रेट, सिनेट और जनता म केवल बाह्य सादृश्य था। रोमन सविधान एव राज्य को अन्दर से देखने का अवसर उसे मिला था और उसे यह ज्ञात भी हो गया होगा कि रोमन राज्य प्रजातियों एव परिवारों की जटिल सामाजिक व्यवस्था के साथ एक विशाल सनिक एव न्यायिक सगठन था। इसका सचालन यूनानी धारणा की विधि (Nomoi) पर न निर्भर करके Imperium, Consilium, Auctoritas की धारणाओं पर निर्भर करता था। यूनानी विचारधारा के लिए ये धारणाएँ सर्वथा नया तो न थीं, किन्तु सविधान के किसी भी प्रकार मे इनका दूर का भी सम्बन्ध हो सकता है, यह अनुमान नही किया जा सकता था।[1] व्यक्तिगत शासन, व्यक्तिगत प्रभाव साधारण मनुष्यों की महान पुरुषों पर

---

१ यदि अरिस्टाटेल जीवित होता और यह प्रश्न करता कि रोम के सविधान में सर्वोच्च सत्ता (TOKUPIOV) किसके हाथ मे है तो सभवत उसे यह उत्तर दिया जाता कि रोम की सर्वोच्च सत्ता वहा की जनता (populus Romanus) के हाथ मे है। किन्तु यह उत्तर गलत था। जसा कि अध्याय ११ मे सकेत किया जा चुका है टोक्यूरीओन से सिद्धान्त सर्वोच्च सत्ता का बोध नहीं होता है इससे तो व्यवहार मे इस सत्ता के प्रयोग का बोध होता है और रोम के सविधान मे यह अधिकार Consuls और Senate को ही प्राप्त था। एथेंस की जनता (डिमोज) Imperium का प्रयोग कर सकती थी किन्तु रोम की जनता (populus) को यह अधिकार नहीं प्राप्त था।

व्यक्तिगत निभरता हा रोम के राजनातिक जीवन म महत्त्वपूण समय जात थे। इसलिए राम की राजनीतिक विचारधारा का इन्ही गब्दा द्वारा अभिव्यक्ति मिली। सिसरो एक श्रेष्ठ एव चतुर नेता के गासन का ही पसद करता था और उसकी यह पसद पूणरूपेण रामन था जिस व्यक्त करन के लिए उसन Moderator Rai Publicae शब्द का प्रयोग किया है। इस वाक्याश का गठन के लिए सिसरो को न ता ग्रनगम की रचनाओं का अध्ययन करन की आवश्यकता थी और न प्रिंसिपट (Principate) से मिलता जुलता राजनीतिक व्यवस्था पर ही ध्यान देने की आवश्यकता थी। इसी प्रकार श्रेष्ठ व्यक्तियो द्वारा गासन तथा Concordia Ordinom की उपयोगिता विशेष कर सम्पत्तिशाली वग के लिए इसकी उपयोगिता, का जानन के लिए यूनाना राजनातिक विचारधारा का अध्ययन करने का कोई आवश्यकता नहा था। किन्तु यूनानी राजनातिक विचारधारा म उसे कितनी ही एसी बात मिली जा रोम का राजनाति के सम्बन्ध म उसके अपन दष्टिकाण से मिलता जुलता थी। इससे यह आभास हुआ कि जिस काय का सम्पादन करन का निणय सिसरा न किया था वह सुगम हो सकेगा। किन्तु वास्तव म ऐसा न था। जहा पालिबियस न यूनाना दगन के अनुसार राम का राजनातिक व्यवस्था का व्याख्या करन का प्रयत्न किया था वहा सिसरो न यूनाना दगन का रामन सविधान के अनुसार प्रस्तुत करन का प्रयास किया और यह सिद्ध करना चाहा कि रामन पब्लिक का केवल इतिहास ही गौरवमय नहीं रहा है अपितु राजनातिक सिद्धान्तो की दष्टि से भी इसका इतिहास सम्मान और आदर का अधिकारी है। रोम क इतिहास का जो चित्र सिसरो न प्रस्तुत किया था वह काल्पनिक हा है किन्तु इसके लिए सिसरो न अपन पुस्तकालय म उपलब्ध प्लेटो, अरिस्टाटल, थियोफ्रस्टस डायकारकस पनशस आदि लेखको की रचनाओं का अध्ययन किया और अपना रचनाओ म प्रारम्भिक रोमन विधि के पर्याप्त उद्धरणा के साथ इन पुस्तको म स भी अनेक सदभ प्रस्तुत किय हैं। अत सिसरो जब सिपियो से राजतन्त्र का प्रशसा करवाता है ता उसका ध्यान राम के राजतन्त्र अथवा किसी अन्य प्रकार के सविधान पर नहीं है। उसका ध्यान ता चरित्रवान एव प्रभावशालीव्यक्ति के व्यक्तिगत गासन पर है। वह यूनाना Arete और रामन Auctxoritos के सयोजन के सम्बन्ध मअधिक साच रहा है।

जहाँ सिसरो न मध्यम माग का अनुसरण करन वाले स्टोइक सिद्धान्ता को रामन विचार-पद्धति म ढालन का प्रयत्न किया वहाँ कुछ अन्य विचारक स्टाइक सम्प्रदाय की प्रतिद्वन्द्वी विचारधारा अर्थात एपिक्यूरस की शिक्षाओ की ओर आकृष्ट हैं। किन्तु इस विचारधारा म काई आधारभूत परिवत्तन नहीं हुआ था। इसके अनुयायी इस बात पर गव करते थे कि उन्होने अपने सम्प्रदाय के सस्थापक के सिद्धान्ता का मूल

में फिलोडेमिस ने यह स्पष्ट रूप में व्यक्त किया है कि परम्परागत नैतिकता का आदर करना, वह एपिक्यूरियन परम्परा के अंग के रूप में मानता था। वह लिखता है (२५४)[1] कि हमारे दर्शन से सहमत होने वाले व्यक्ति उन्हीं वस्तुओं को श्रेष्ठ, न्यायसंगत और सम्यक् मानते हैं जिन्हें सामान्य जन इस प्रकार की मान्यता प्रदान करते हैं, अन्तर केवल इतना है कि जहाँ अन्य लोग भावना से प्रेरित होकर श्रेष्ठ न्याय सगत एवं सम्यक् के सम्बन्ध में निर्णय पर पहुँचते हैं वहाँ हम लोग तार्किक प्रक्रिया का प्रयोग करते हैं और पर्याप्त सोच विचार के बाद अपने निष्कर्ष पर पहुंचते हैं। इसका परिणाम है कि हम लोग अन्य लोगों की अपेक्षा इन निष्कर्षों को विस्मृत नहीं करते। अपने एक पम्फ्लेट में जिसका शीर्षक है 'आन द गुड किंग एकार्डिंग टू होमर (On the Good King according to Homar)—होमर के अनुसार एक अच्छे राजा की विशेषताएं। उसने होमर की रचनाओं के उद्धरणों की सहायता से अच्छे और बुरे राजाओं के गुणों को स्पष्ट करने का प्रयास किया और साथ ही साथ अपनी टिप्पणी भी दी है जो मुख्यतः आइसोक्रेटीज के यूनानी राजतन्त्र के सिद्धान्तों पर आधारित है (देखिए अध्याय ७ तथा १८)। एक दूसरे स्थल पर वह राजनीतिक दर्शन को सम्मान का विषय मानता है और स्वयं अपने में महत्त्वपूर्ण बताता है (१३६–१३६)। किन्तु राजनीतिक महत्त्वाकांक्षा को वह मानसिक शान्ति के लिए बाधा के रूप में देखता है। यद्यपि वह इस बात को स्वीकार करता है कि कुछ लोग व्यावहारिक राजनीति में भाग लेने में आनन्द अनुभव करते हैं (२३६–२३७)। उसका कहना है कि लोकतन्त्र में राजनीतिक कार्यों के लिए पर्याप्त अवसर मिलता है। किन्तु शासन के अन्य प्रकारों की तुलना में वह लोकतन्त्र को सबसे अधिक मन्द बुद्धि वाला शासन मानता है (३७१)[2]। सम्यक् तथा असम्यक् उचित तथा अनुचित, के सम्बन्ध में उसकी धारणा है कि यह स्थान-स्थान पर भिन्न होता है। वह प्रश्न करता है कि —राजनीतिज्ञ वास्तव में अपनी मान्यताओं को स्थापित करने का प्रयास करने के अतिरिक्त क्या करते हैं (२५६)? उसका कहना है कि हमारे लिए यही श्रेयस्कर होगा कि जिस राज्य में हम रहते हैं उसके मानदण्डों को स्वीकार करें और यदि हम

---

१ इस अध्याय के अन्त में दी गयी टिप्पणी देखिए।

२ इस अनुच्छेद के आधार पर फिलोडेमस तथा कल्पुर्नियस पिसो के राजनीतिक सम्बन्ध के बारे में R Plhilippson (Hermes, Lus, १९१८, p २८१ ff) जो निष्कर्ष निकाला है वह आधारहीन प्रतीत होता है। एसीनाटोस (asenatos) विगत ४०० वर्षों से लोकतन्त्र के लिए परम्परागत अपशब्द के रूप में प्रयुक्त होता रहा था। देखिए Herod 111 ८१।

उन्हें पसन्द नहीं करते, तो किसी अन्य राज्य में चले जायें[1]। (२५९)। उसका विचार है कि सभी राज्यों के लिए एक ही प्रकार के मानदण्ड आवश्यक नहीं हैं जिस प्रकार एक औषधि एक व्यक्ति के लिए आवश्यक होते हुए भी दूसरे के लिए आवश्यक नहीं होती उसी प्रकार एक राज्य द्वारा स्वीकृत मानदण्ड दूसरे राज्य के लिए आवश्यक नहीं होता। इस सम्बन्ध में वह लिखता है कि 'चूंकि मैं उस औषधि का सेवन नहीं करता हूँ जिससे आपको स्वास्थ्य लाभ होता है इसलिए क्या मैं आपसे कम स्वस्थ हूँ (२५८)? दूसरे राज्यों की विधि-व्यवस्था को उपयोगी समझने की प्रथा का भी वह विरोध करता है। उसका कहना है कि 'दूसरे देशों की मुद्रा नामिस्माटा को हम शुद्ध नहीं मानते हैं तो फिर वहां की विधि-व्यवस्था को क्यों हम मानना चाहें।'

कविता, अलंकार-शास्त्र तथा दर्शन सभी में फिलोडिमस की रुचि थी किन्तु लुक्रेशस (Lucretius) केवल मानव-जाति की दशा से चिन्तित था। दार्शनिक फिलोडिमस की भाँति उसने एपिक्यूरस का ही अनुसरण किया। किन्तु मौलिक प्रतिभा एवं काव्यशक्ति में वह फिलोडिमस से कहीं अधिक श्रेष्ठ था। उसकी De Rerum Natura विश्व के महान काव्यों में से है और Aeneid की भाँति इसमें भी पीड़ित मानवता के प्रति सहानुभूति व्याप्त है। उसके अनुसार मानव-जीवन वैसे ही कष्टों से भरा रहता है और समस्त नर-नारियों के लिए शासकों के उत्पीड़न तथा अन्धविश्वासों से उत्पन्न भय के कारण यह जीवन और भी कष्टप्रद हो जाता है। स्वयं लुक्रेशस अपने प्रारम्भिक जीवन में अन्धविश्वासजन्य भय से आक्रान्त था। एपिक्यूरस को वह इस प्रकार के भय से मुक्ति प्रदान करने वाले के रूप में देखता है और इस सूचना को दूसरों तक पहुँचाने के लिए व्याकुल प्रतीत होता है। इन मिथ्या विश्वासों को कि प्रकृति-जगत की सृष्टि देवताओं ने की है तथा वे अब भी इस पर नियन्त्रण रखते हैं और घनगर्जन तथा भूचाल आदि अन्य असाधारण घटनाओं द्वारा वे अपना क्रोध व्यक्त करते हैं (एपिक्यूरस के अनुसार देवतागण क्रोध का अनुभव ही नहीं कर सकते थे।) समाप्त करने के लिए भी वह उत्सुक प्रतीत होता है। सम्भवतः रोम का शिक्षित वर्ग इस प्रकार के अन्धविश्वासों से मुक्त रहा होगा किन्तु राजकीय धर्म के उत्सव और कर्मकाण्ड अब भी रोम की राजनीतिक व्यवस्था के अभिन्न अंग थे और जिस ढंग से उनका प्रसार किया जाता था वैसा एपिक्यूरस के समय के एथेन्स में नहीं होता था। इसलिए एपिक्यूरस की अपेक्षा लुक्रेशस के लिए अन्धविश्वासों एवं कर्मकाण्डों का विरोध करने के लिए अधिक कारण थे। यदि वह उनके आचार के दर्शन का निष्ठापूर्वक अनुसरण न करे राजनीति में

---

१ यह Plato, Crito ५३ के विचारों की विचित्र प्रतिध्वनि है।

रुचि लेता तो उससे यह आशा की जा सकती थी कि वह अनपढ़ जनता को नियन्त्रण में रहने के लिए धर्म के प्रयोग का प्रत्यक्ष विरोध करता। यद्यपि पालिबियस ने धर्म के इस राजनीतिक प्रयोग का समर्थन किया था, किन्तु राजनीति में विशेष रुचि न रखने के कारण लुक्रेसस के De Rerum Natura का विषय प्राकृतिक घटनाएँ और मनुष्य है राज्य और नागरिक नहीं।

किन्तु सम्भवतः अपनी मानववादी अनुभूति की व्यापकता एवं गहराई के कारण ही लुक्रेसस एपिक्यूरियन राजनीतिक विचारधारा के विकास में योगदान कर सका। राज्य के निवासियों की एकता के सूत्र में बांधने के लिए डेमोक्राइटस ने मैत्री भाव की वृद्धि करने का प्रयत्न किया था। एपिक्यूरस ने मित्रता को स्वयं अपने में महत्त्वपूर्ण बताया। वह मित्रता को सुखी जीवन के अभिन्न अंग के रूप में देखता था और इसे एक ऐसा सूत्र समझता था जो उसे तथा उसके अनुयायियों को एकता के बन्धन में बांधता था। प्लेटो के समय में भी अकादमी के सदस्य भी इसी प्रकार के सूत्र द्वारा एक दूसरे से बँधे हुए थे। मैत्री एवं प्रेम की इन धारणाओं से लुक्रेसस कहीं अधिक आगे जाता है और धर्म को सभ्य मनुष्य का एक ऐसा गुण बताता है जो उसे पशुओं तथा असभ्य मनुष्यों से पृथक करता है। उसका कहना है कि यदि मानव एवं असभ्य वन्य जातियों में इस गुण का अभाव था इस तो मनुष्य ने सभ्यता के विकास के दौरान में अर्जित किया और विकास के क्रम में मानव के इस गुण का प्रादुर्भाव भाषण शक्ति के पूर्व हुआ। इससे यह अर्थ निकलता है कि मनुष्य एक दूसरे को हानि पहुँचाने की इच्छा नहीं रखता। कैलिक्लीज (Callicles) के सिद्धान्त का विरोध लुक्रेसस प्रकृति के ही आधार पर करता है, और कहता है कि दूसरों को हानि पहुंचाना या कष्ट देना मनुष्य के लिए उतना ही अस्वाभाविक है जितना कि स्वयं हानि एवं कष्ट सहन करने की इच्छा रखना। उसका कहना है कि क्षति न पहुँचाने तथा क्षति से बचने के लिए समझौते का उल्लेख प्रायः किया जाता है वह निर्बल एवं सबल के एक साथ आने पर नहीं निर्भर करता (लाइकोफोन ने इस समझौते का यही आधार बनाया था।) इस समझौते को वह इतिहास की घटना के रूप में ही नहीं देखता है उसके अनुसार यह मानव प्रकृति अथवा मनुष्य के आचरण का सामान्य लक्षण है। वह स्वीकार करता है कि बहुत से लोग ऐसे मिलेंगे जो सामान्य आचरण के मानदण्डों का अनुसरण नहीं करते हैं। वह यह भी मानता है कि अभी तक सौहार्द एवं एकता की व्यापक धारणा नहीं निर्धारित हो पायी है। किन्तु उसका कहना है कि विगत युगों में ऐसे लोग पर्याप्त संख्या में होते रहे हैं जो ईमानदार थे और अपने वचन का पालन करते थे और उसके अनुसार इन्हीं व्यक्तियों के कारण मानव-जाति जीवित रह सकी है (v १०२७)। इस

प्रकार लुक्रेशस प्रोटेगोरस के उस विवरण को स्वीकार नहीं करता है जिसके अनुसार आदि मानव को विनाश से बचाने तथा मनुष्यो को शिल्पकला और न्याय प्रदान करने का श्रेय देवताओ को दिया जाता है। लुक्रेशस के अनुसार मानव प्रेम एव सहानुभूति के कारण ही मनुष्य परिवारो और राज्यो मे जीवन व्यतीत करने लगा। इस रोमन कवि ने स्पष्ट रूप से अनुभव किया कि राज्यों की स्थापना के लिए यूनानी सोफिस्टों द्वारा प्रतिपादित सर्वश्रेष्ठ गुण ही पर्याप्त नहीं है। प्रोटेगोरस के इस मत को सम्भवत वह स्वीकार करता है कि मानव इतिहास इस बात का साक्षी है कि मनुष्य ने बर्बरता से सभ्यता की ओर उत्तरोत्तर प्रगति की है। किन्तु इसके साथ ही वह इस सिद्धान्त से भी प्रभावित था कि मनुष्य का स्वर्णयुग से क्रमिक पतन हुआ है। जो भी हो आधुनिक सभ्यता के दास—जन-युद्ध रोग और विनाश, गलत लाभ के हाथ मे सम्पत्ति और सत्ता का केन्द्रीकरण आखेट द्वारा जीवन व्यतीत करने वाले आदि मानव के स्वस्थ जीवन की तुलना मे क्षुद्र प्रमाणहीन थे। इसमे सन्देह नहीं कि आदि मानव क्षुधा हिंस्र वन्य पशु तथा विषाक्त खाद्य पदार्थों के भय से त्रस्त जीवन व्यतीत करता था। किन्तु सम्पत्ति हस्तगत करने के लिए वह दूसरे को विष नहीं देता था। फिर भी लुक्रेशस सामान्यतया प्रगति के दृष्टिकोण का ही समर्थन करता है। उसका विचार है कि भोजन, वस्त्र और आवास सम्बन्धी भौतिक साधनो की उपलब्धि मानव की प्रगति के द्योतक हैं और यद्यपि इन सुविधाओ ने मनुष्य की शारीरिक सहनशक्ति को क्षीण कर दिया है फिर भी पारिवारिक स्नेह शालीनता, स्त्रियो और शिशुओ के प्रति सहानुभूति तथा मानव प्रेम के उन सभी तत्वो को विकसित करने मे सहायता प्रदान की है जो वास्तव मे सभ्य जीवन के आधार हैं।

अतिरिक्त टिप्पणिया और प्रसग निर्देश

अध्याय १३

POLYBLUS—इनकी ४० पुस्तको मे से पहली पाँच पूर्णतया सुरक्षित हैं, छठी पुस्तक का अधिकाश भाग भी उपलब्ध है और राजनीतिक दर्शन की दृष्टि से यह महत्वपूर्ण है। इस पुस्तक का जो भाग सुरक्षित नहीं रह सका उसमे रोमन *शासन-व्यवस्था के विषय मे विस्तृत विवरण दिया रहा होगा*, यह प्राय निश्चित प्रतीत होता है। बाइजेंटाईन सकलन कर्ताओ ने अनुपलब्ध पुस्तको का पर्याप्त अश सुरक्षित रखा है। इसके अतिरिक्त 'लिवि' (Livy) ने पोलिबियस की रचनाओ का जो प्रयोग किया उसमें भी उनके सम्बन्ध मे महत्वपूर्ण निष्कर्ष प्राप्त होते हैं। यहा पुस्तक तथा अध्याय (कभी-कभी खड भी) का जो सकेत दिया गया है, वह डब्लू०

आर० पटन (W R Paton) के सस्करण के अग्रेजी अनुवाद (Loeb Library, six VoLumes १९२०-२७) का और है।

उसकी विशिष्ट परिस्थिति १४ iii १, (किन्तु पोलिबियस स्वय अपने कार्यों के बारे म ही बात करने लग जाता है।) उसके कार्य xii २५ h (५) सिपियो का चरित्र xxxi २३-३०। सविधानो का मूल्याकन लाइकरगस का सविधान vi १० और ४८-५०, अन्य सविधान vi ४३-४७ रोम का नागरिक एव सामरिक व्यवस्था अपने चर्मोत्कर्ष पर vi ११-४२ इसका भविष्य ६-५७ (क्या वह Gracchi के विषय म सोच रहा था अथवा केवल प्लेटो की बात के सम्बध म।) सविधान सम्बन्धी सिद्धान्त, विकास का चक्र स्प्यू क्श्न vi ३-४, राजनीतिक संस्थाओ की उत्पत्ति के सम्बन्ध म इस सिद्धान्त का विस्तृत विवरण vi ५-९ (११), रोम के सम्बन्ध म इसका प्रयोग vi ९ (११-१४) FW Walbank Classical quarterly xxxvii १९४३) तथा इस अध्याय की पाद टिप्पणी म उल्लिखित अन्य मान्यि का अवलोकन कीजिए।

PANAETIUS—पैनेगस की रचनाओ के खडो की सख्या की ओर इस अध्याय म जो सकेत दिए गए है वे M van Straaten द्वारा निबन्धो तथा टिप्पणियो सहित सम्पादित पुस्तक Panetius (Amsterdam १९४६) से है किन्तु चूकि पनेगस के खडो के सम्बन्ध म विद्वानो म मतक्य का अभाव है इसलिए एम० वान स्टराटन तथा अन्य सकलन कर्त्ताओ की पुस्तको म पाए जाने वाले अतर के सम्बन्ध म नीचे एक सूची प्रस्तुत की जा रही है। वान स्टाराटन का सकलन लघुकाय और सयमित है। सिसरो (Cicero) की De Republica और de Legibus म दिये गये अनुच्छेदो म से उसने केवल उन्ही अनुच्छेदो का चयन किया है जो स्पष्ट तथा पनेगस के नाम से हैं। इसके विपरीत Max pohlenz ने पनगस की रचनाओ का सकलन करने म अधिक स्वतन्त्रता का प्रयोग किया है और सिसरो की De Republica की प्रथम पुस्तक पर अत्यधिक निर्भर करता है। मेरे विचार से उसने पनगस के नाम म जितना कुछ प्रस्तुत किया है उसम का अधिकाश भाग डायदारकस की रचनाओ म से है और पर्याप्त भाग पोलिबियस पनगस और सिसरो सभी के विचारो पर आधारित है। यही कारण है कि pohlenz को Van Straaten की अपेक्षा पनगस की रचनाओ म राजनीति का अधिक अश मिलता है (देखिए Gnomon xxi १९४९ तथा Die Stoa, २ Vols (Narrative and Notes) १९४८ pp १९१-२०७ २५७-२६३, और Eleuterio Elorduy, Die Sozialphilosophie der Stoa, १९३७ esp pp १३१-१५१ और २०७-२२०) सिसरो की de off १ म स्पष्टतया पनगस की

रचनाओ पर आधारित नतिक नतृत्व के सम्बन्ध मे पंनेनाम के आदर्श (Videte cum grano salis vel potius cum gutta aceti) के बारे म M pohlenz का Antikes Fuhrertum (१९३४), ४०-५५ देखिए।

Frag Van s	(Reff to Cicero are to sections, not,Chapters)
८८	Cicero de Legibus iii १४
५५	, de Finibus iv १७
७३	Diog L vii १८९, किन्तु इसका प्राय उल्लेख किया जाता है।
९६	Clem Alex Stromata ii १२९ (ch xxi)
९८	Cicero de Offcus १ ii १४
११७	" " " ii १६
११८	" " " ii ७३, किन्तु देखिए pp २७०, n ४
११९	" de Re Pub १ ३८
१२०	" de Off ii ४१-४२

CARNEADES इस अध्याय म दिय गय सकेत सिसरो की de Re Publica की तीसरा पुस्तक के खडा पर आधारित हैं।

POSIDONIUS Fragments २, ३, १२-१६-४५-४६ in Muller, Frag Hist Gr iii (M और Seneca) Epits xc

CICERO de Re Publica की ६ पुस्तका के कुछ अश ही सुरक्षित रह पाये हैं और खद का विषय ता यह है कि इसका प्रारम्भिक भाग उपलब्ध नहीं है। इस पुस्तक म एक अच्छे सम्राट् द्वारा वयक्तिक शासन की अत्यधिक प्रशसा की गयी है और इसी के आधार पर कुछ एस मता का प्रतिपादन किया गया है जिनके आधार पर यह कहा जाता है कि सिसरो न प्रिंसिपट (Principate) की योजना बनायी थी। दूसरी पुस्तक प्रधानतया रोम के प्रारम्भिक इतिहास से सम्बन्ध रखती है और इसम यह दर्शान का प्रयास किया गया है कि राजतन्त्र और मिश्रित सविधान अनिवार्यतया असगत नहीं होते। तीसरी पुस्तक के उपलब्ध खडा से यह प्रतीत होता है कि इसम प्लेटो की रिपब्लिक की प्रथम एव द्वितीय पुस्तक का अनुकरण किया गया है और साथ ही स्टोइक सम्प्रदाय के Divina Lex के सिद्धान्त का वणन करने का प्रयास किया गया है। अन्य तीनो पुस्तका का जो महत्त्वपूर्ण भाग सुरक्षित रह सका है वह सिपियो के स्वप्न

से सम्बन्धित है और इसे सुरक्षित रखने का श्रेय Maersbius का है। de Legibus से यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि सिसरो का ध्यान रोम के Ius scivile पर था; प्लेटो की विधियों पर नहीं। de Re Publica की ही भांति इसमें भी प्रारम्भिक रोमन विधियों तथा यूनानी लेखकों का उल्लेख मिलता है। Lactantius, Saint Augustine तथा बाद के अन्य लेखकों द्वारा दिये गये उद्धरणों एवं सदर्भों के आधार पर सिसरो के इन दोनों ग्रंथों की आंशिक पुनरचना की गयी और जैसा कि हम पहले देख चुके हैं इन दोनों ग्रन्थों ने कितने ही यूनानी लेखकों की रचनाओं की क्षति की पूर्ति की है। किन्तु वास्तव में सिसरो के इन ग्रन्थों ने इस क्षति की पूर्ति किस मात्रा में की है उसका आभास तो हमें तब लगेगा जब हम यह विचार करें कि यदि हम केवल सिसरो के इन ग्रन्थों पर निर्भर करते होते, तो प्लेटो की Republic के सम्बन्ध में कितना ज्ञात हो पाता। सिसरो की रचनाओं के सम्बन्ध में जो सकेत दिये गये हैं वे खंडों के विषय में हैं अध्यायों के विषय में नहीं।

PHILODEMUS OF GADARA जिसके जीवन का अधिकांश भाग इटली में L Calpurnius Piso के यहाँ व्यतीत हुआ, लगभग ४० ई० पू० सम्भवत हरक्यूलेनियम (Herculaneum) में उसकी मृत्यु हुई। वहाँ के ध्वंसावशेषों की खुदाई में पपाइरस पर लिखी हुई उसकी रचनाओं का पर्याप्त अंश प्राप्त हुआ। इस अध्याय में उसके राजनीतिक सिद्धान्तों के सम्बन्ध में जो उल्लेख किया गया है वह A Olivieri, (Teubner, १९०९) द्वारा सम्पादित और S Sadhaus (Tubner १८९२) द्वारा सम्पादित Rhetorica I (जिसकी पृष्ठ संख्या की ओर इस अध्याय में सकेत किया गया है।) और R Philippson की Pauly Wissowa में दिये गये विवरण पर आधारित है। शीर्षक से विख्यात फिलोडिमस की रचना में सिनिक दृष्टिकोण के विपरीत सम्पत्ति के सम्बन्ध में एपिक्यूरियन दृष्टिकोण (Metrodorus) प्रस्तुत किया गया है। वस्तुत यह रचना जिनोफन की Oeconomicus अथवा थियोफ्रेस्टस द्वारा लिखित किन्तु अरिस्टॉटल की रचना के रूप में प्रस्तुत की जाने वाली रचना का अवयमान प्रतीत होती है। W Cronert, Kolotes und Menedemus (C Wessely's Studien zur Palaeographie und Papyruskunde vi, १९०६) में फिलोडिमस की रचनाओं के कुछ एसे खण्ड हैं जो सिनिक तथा 'स्टोइक' विचारकों की नतिकता का खण्डन करते हैं। इन खंडों में यह भी ज्ञात होता है कि संविधान पर न्यायाज्ञनाज द्वारा लिखित ग्रन्थ से फिलोडिमस परिचित था यद्यपि इसकी विषय वस्तु के सम्बन्ध में कुछ नहीं कहता।

LUCRETIUS—सामान्य रोमन पर De Rerum Natura का क्या प्रभाव पड़ा होगा, इस सम्बन्ध में जानने के लिए कोई साधन नहीं है। जो लोग इसे समझ सकते थे उन्हें अन्धविश्वासों से मुक्ति प्राप्त करने की आवश्यकता नहीं थी। Science and Politics in the Ancient World (१९३९) में B Farrington ने जो अनुमान किये हैं उनके लिए कोई सुदृढ़ आधार नहीं दिखाई देता। ल्यूक्रीशस कवि था, वैज्ञानिक अथवा राजनीतिज्ञ नहीं और लगता है कि प्रारम्भिक एपिक्यूरियनवाद में रिपब्लिकन रोम की मनोवृत्ति का प्रक्षेपण करने में फैरिंगटन ने भूल की।

अध्याय १४

पुन यूनानी राजतन्त्र

पौरस्त्य जगत की ओर पुन ध्यान देने पर हम एक बार फिर यूनानी राजनीतिक दर्शन दृष्टिगोचर होता है और इस दर्शन म अब मुख्यतया राजा के स्वभाव, अधिकार और कर्त्तव्यों पर ही विचार किया जाता है। जेनोफन की 'साइरोपाडिया (Cyropaedia)' म यद्यपि चिन्तन एव विचारो का अभाव है तथा अनेक स्थलो पर असगति दिखाई देती है तथापि भविष्य के सम्बन्ध म इसके विचार कुछ आश्चर्य जनक ढग से वास्तविक सिद्ध हुए हैं। सिकन्दर के उपरान्त लगभग ३०० वर्षों तक पूर्वीय भूमध्यसागरीय प्रदेशो म अर्द्ध-यूनानी एव अर्द्ध-पौरस्त्य का ही बोलबाला रहा। जैसा कि अध्याय १२ म हमने देखा इस युग के राजनीतिक विचारक प्रभावोत्पादन के लिए या तो किसी शक्तिशाली सम्राट के दरबार म आश्रय लेते थे या अतीत के सुविख्यात सम्राटो जैसे फिलिप अथवा सिकन्दर को सम्बोधित करके काल्पनिक पत्र लिखते और आशा करते कि उनके समय के शासक इन पत्रो को पढ कर लाभान्वित होंगे। अध्याय १२ म इस प्रकार के एक पत्र का उल्लेख किया जा चुका है। जो अनैक्सामीनीस (Anaximens) की Rhetorica ad Alexandrum के प्राक्कथन के रूप म सलग्न है। इस पत्र म लेखक ने राजा के वचन के महत्त्व पर जोर दिया था और सम्पत्ति एव वधता के प्रश्नो पर राजा के वचन को ही निर्णायक बनाया था। चूकि मनुष्यो को सबन राजाओ द्वारा निर्धारित विधि का ही पालन करना पडता था इसलिए यह जानना सर्वाधिक महत्त्व का विषय हो गया था कि वास्तविक राजा म कौन से गुण होने चाहिए। यदि विधि की उत्पत्ति राजा से ही होती है और वही विधि का स्रोत है तो उसम असाधारण गुण एव योग्यता होना चाहिए। किसी साधारण व्यक्ति के लिए यह सम्भव नहीं होना चाहिए कि वह राजा के पद पर नियुक्त हो सके। किन्तु व्यवहार म एसे उदाहरण मिलते थ। अरिस्टाटल के सम्मुख भी इसी प्रकार की समस्या उपस्थित हुई थी। उसका विचार था कि राज्य (Polis) प्रकृति पर आधारित है इसलिए नागरिको का वर्गीकरण भी जीव विज्ञान की प्रणाली पर होना चाहिए। प्रश्न यह था कि राजा किसे कहेंगे, राजा की क्या परिभाषा है उसका वर्गीकरण किस प्रकार से किया जा सकता है। स्टोइक दार्शनिको के अनुसार केवल वही व्यक्ति राजा कहलाने का अधिकारी हो सकता था जो राजाओ का सद्गुण उनकी श्रेष्ठता और योग्यता रखता

हो। इस प्रकार हम देखते हैं कि आदर्श राजकुमार (अध्याय ९), 'प्रबुद्ध राजा' की खोज का क्रम अनवरत चलता रहता है। इस युग में राजतंत्र पर अनेक भाष्य लिखे गये जिनमें से केवल थोड़े ही सुरक्षित रह सके।

इसमें सन्देह नहीं कि सामान्य व्यक्ति अब भी राजा के प्रति वही भावना रखता था जो जिनाफन की कृति में साक्रेटीज[1] द्वारा व्यक्त की जाती थी। वास्तविक राजा वही है जो अपने कर्तव्य को भलीभांति सम्पन्न कर सकता है। उदाहरणार्थ—'जो सेना का नेतृत्व तथा राज्य के कार्यों को बुद्धिमानी के साथ सम्पन्न कर सके।'[2] यह योग्यता दुर्लभ था और सामान्य व्यक्तियों में नहीं मिलती थी। ऐसी दशा में यदि इस योग्यता से युक्त कोई व्यक्ति उत्पन्न होता और अपनी योग्यता का प्रयोग इस ढंग से करता कि जनता के धन और सुरक्षा में वृद्धि होती तो जिनाफन का साक्रेटीज ऐसे व्यक्ति को 'राजा' ही नहीं अपितु देवता की उपाधि से विभूषित करने के लिए भी तैयार था। उसका कहना है कि प्राचीन युग में देवतागण इसी प्रकार से जनता का कल्याण किया करते थे और प्रत्युत्तर में जनता देवताओं की उपासना एवं सम्मान का पात्र मान कर उनकी पूजा करती थी। उसका विचार था कि सफल राजा भी इसी सम्मान के पात्र थे उसका यह विश्वास तो चलता है कि राजा स्वयं अपने में अनश्वर होता है किन्तु इतना अवश्य मानता है कि राजा देवताओं के कार्यों को सम्पन्न करने की क्षमता रखता है। प्राचीन काल में महाकाव्यों के रचयिताओं ने देवताओं की प्रशस्ति में लिखा था कि वे किस सुगमता से मनुष्यों को उन्नति के शिखर पर उठा देते हैं अथवा अवनति के गर्त में धकेल देते और कठिन कार्यों को आसानी से सम्पन्न कर देते हैं। अब यदि शक्ति और साधन से युक्त राजा भी इसी प्रकार के कार्य कर सकता है तो उन्हें भी देवता की उपाधि से विभूषित करना सर्वथा उचित होगा। इसके अतिरिक्त, राजा को अपनी प्रजा के कल्याण हेतु कार्य करने के लिए प्रोत्साहित करने का सबसे अच्छा ढंग यही था कि उसे देवता तुल्य स्थान दिया जाय। राजा को कल्याण-कर्ता, पालक, प्रकट देवता आदि सम्बोधनों से सम्बोधित करके लोग अपने उसके प्रति अपना आभार व्यक्त करते थे और उसकी अनुकम्पा प्राप्त करने के लिए प्रार्थना करते थे। इस प्रकार का राज धर्म राजा की दृष्टि से भी अत्यधिक सुविधाजनक था। इसमें सन्देह नहीं कि युरगटीज (Euergetes) और साटर (Soter) की उपाधि बिना प्रयास के नहीं अर्जित

---

[1] Xenophon, Mem III ९,१० अध्याय ९ के प्रारम्भ में इस अनुच्छेद का अनुवाद दिया गया है।

[2] Suidas, s V बसिलेइया में यह उद्धरण मिलता है, किन्तु इसकी उत्पत्ति अज्ञात है।

की जा सकती थी, किन्तु यह एक एसा प्रयास था जो सभी प्रकार स करने योग्य था। बस परम्परा के अनुसार तो इस प्रकार क प्रयास राजाओ के कत्तव्यो के अन्तगत आ जात थ।[1] और इन कत्तव्यो क पालन स प्राप्त होन वाल उपहार केवल औपचारिक उपहार नहीं होत थ । राज्य को मुख्य प्रदान करने का सबस अच्छा ढग यही था। यद्यपि राजा को सर्वोपरि मानने के सिद्धान्त क प्रतिपादन का यो भी उद्देश्य रहा हो यह स्पष्ट था कि विभिन्न जातियो वाली जनसख्या तथा अनिर्धारित सीमा वाल राज्य के निवासियो की निष्ठा एव भक्ति को दृढ करने के लिए शासक धर्म स बढ कर कोई दूसरा अच्छा उपाय नही था। इसक अतिरिक्त शासक को देवत्व प्रदान करके राजा क पद को वधानिकता प्रदान की जा सकती थी और इस प्रकार नगर राज्यो म रहने वाल यूनानियो क लिए राजतन्त्र को अधिक ग्राह्य बनाया जा सकता है तथा प्राचीन निरकुश शासको स इस पृथक किया जा सकता है । इस सिद्धान्त ने विभिन्न स्थानो पर विभिन्न रूप ग्रहण किय और राजा को विभिन्न अशो म देवत्व प्रदान किया गया । कोई राजा केवल देवता तुल्य होने का ही दावा न करके एपोलो अथवा डायोनिसस या अन्य किसी निश्चित देवता क तुल्य होन का दावा कर सकता था या यह दावा कर सकता था कि वह किसी महान देवता का पुत्र अथवा वशज है । दूसरा राजा अपने को देवता का सहयोगी बना कर उसक मदिर[2] म स्थान प्राप्त करने का अधिकारी बन सकता था। यह भी सम्भव था कि किसी प्राचीन देवता अथवा एक नय[3] डायोनिसस या किसी अन्य देवता स एकरूपता मान कर उस जनता क सम्मुख प्रस्तुत किया जाय। बाद राजा प्राचीन यूनान क देवताओ की उपेक्षा करके नये अथवा पौरस्त्य देवताओ स अपनी अनन्यता भी स्थापित कर सकता था और जनता के सम्मुख नय और अयूनानी देवताओ क रूप म प्रकट हो सकता था। धार्मिक भावना स्वय अपने म महत्त्वपूर्ण नहीं थी महत्त्व का विषय तो यह विश्वास था कि सर्वसाधारण स भिन्न राजाओ की अपनी पृथक जाति होती है और उन्ह देवताओ की ही भांति शक्ति और सत्ता प्राप्त है और विधि न्याय, एव अन्य राजनीतिक गुण जो पहल नगर राज्य स उत्पन्न मान जाते थे व राजाओ म ही उत्पन्न होते हैं। इस प्रकार का विश्वास पर्याप्त प्रचलित था तथा इसे प्रामाणिक करने के लिए भी प्रयास किय गय । एक राजनीतिक युक्ति क रूप म इस पर्याप्त सफलता भी

---

१ अध्यवसायी एव परिश्रमी राजा की परम्परा। अध्याय ७ का अतिम भाग तथा अध्याय १२ के अत मे दी गयी 'सिनिक' विचारको पर टिप्पणी।

२ QUVVOS A D Nock in harvard studies in Classical Philology XLI १९३०

३ A D Nock in Journ Hell Stud XLVIII, १९२८।

मिला जिसमें यह आभास मिलता है कि यह उस समय की मनोदशा के अनुकूल था तथा तात्कालिक आवश्यकताओं की पूर्ति करता था।[1]

उत्तरकालीन हेलिनी युग की राजनीति विषयक रचनाओं का अधिकांश भाग नष्ट हो गया जो कुछ सुरक्षित भी रह गया है उसके रचनाकाल की निश्चित तिथि निर्धारित करना सम्भव नहीं है। अरिस्टियाज (Aristeas) का तथाकथित पत्र (Letter of Aristeas) सम्भवत दूसरी शताब्दी का है और इसलिए सिकन्दर का सम्बोधित पत्र (Rehtorica ad Alexendrun) के प्रासंगिक) से बहुत बाद का नहीं है। इसमें उन ७२ अनुवादकों की कहानी प्रस्तुत की गयी है जिन्होंने Hebrew Pentateuch को यूनानी भाषा में अनूदित किया। जब ये ७२ बुद्धिमान् यहूदी टॉल्मी द्वितीय फिलाडेल्फस (Ptolemy II Philadelphus) के शासन काल में (२८५–२४६ B C) अलेक्जेंड्रिया आये तो उन्होंने शासन-कला सम्बन्धी ७२ प्रश्नों का उत्तर कैसे दिया यह उसमें बताया गया है। इसके लेखक स्वयं यहूदी हैं और पत्र का यह अंश (१८७–२९४)[2] यूनानी साहित्य की प्रथम कृति है जिस पर यहूदी विचारधारा का प्रभाव स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। इसलिए यह स्वाभाविक है कि इस पत्र में कई स्थलों पर अलेक्जेंड्रिया के फिलो (Philo of Alexandria) के विचारों का पूर्वाभास मिलता है। किन्तु इस पत्र के लेखक का फिलो की अपेक्षा अधिक यूनानीकरण हो चुका था और Septuagint (सप्टुआजिन्ट के अनुवादक टॉल्मी के प्रश्नों का जो उत्तर देते हैं वे पूर्णत एकेश्वरवादी होने के बावजूद भी यहूदी विचारों की अपेक्षा यूनानी विचारधारा से अधिक प्रभावित प्रतीत होते हैं। निसंदेह पत्र का अधिकांश भाग यहूदी धर्म और नैतिकता की श्रेष्ठता सिद्ध करने के हेतु ही लिखा गया है और जब यहूदी अनुवादक यह कहते हैं (१२७) कि उनकी शिक्षा इस सिद्धान्त पर आधारित है कि श्रेष्ठ जीवन विधि एवं नियमों के पालन पर निर्भर है तो निश्चित रूप से उनका ध्यान हजरत मूसा द्वारा निर्धारित (Law of Moses) पर है न कि विधि सम्बन्धी यूनानी धारणाओं पर। परन्तु टॉल्मी के प्रश्नों का उत्तर वे Pentateuch के आधार पर न देकर यूनानी राजनीतिक विचारधारा के ज्ञान तथा अपने धर्म के आधार पर देते हैं। यहूदी मतावलम्बियों के साथ जिस प्रकार की उग्रता एवं गहराई प्राय सम्बद्ध की जाती है वह अरिस्टियाज के इस पत्र में नहीं दिखाई देती। बाद के यूनानी युग की राजनीतिक विचारधारा का इससे श्रेष्ठ उदाहरण अन्यत्र नहीं मिलता।

---

१ ३२२ ई० पू० में वक्ता हाइपराइडीज (Hypereides) के जोशीले खण्डन से तुलना कीजिए। (Orat vi, २१)।

२ इस अध्याय के अन्त में दी गयी प्रथम टिप्पणी देखिए।

इन यहूदी विद्वानों के अनुसार सर्वशक्तिशाली साम्राज्य की सर्वश्रेष्ठ सत्ता स्वयं अपने ऊपर शासन करने की क्षमता है। राजकुमारों एवं राजाओं के ऊपर जो पाप सदैव छाया रहता है वह साधारण जन की खान पान की लोलुपता न होकर राज्य विस्तार एवं वैभव की लालुपता है और ये ऐसी आकांक्षाएँ हैं जिन पर उन्हें अवश्य ही नियंत्रण रखना चाहिए। इस सन्दर्भ में यहूदी विद्वानों का परामर्श है कि 'ईश्वर जो कुछ देता है उसे लो और रखो दुर्लभ वस्तुओं के पीछे मत दौड़ो। (२२३) यह परामर्श पिंडार के विचारों के ही सदृश है। किसी भी राजा के लिए यह कठिन हो जाता है कि वह अपनी सम्पत्ति एवं सत्ता के कारण दूसरों की ईर्ष्या का पात्र न बन सके वह केवल यही सिद्ध कर सकता है कि वह ईश्वर द्वारा प्रदान किये गये इन उपहारों के योग्य है। अरिस्टियाज के इस पत्र में बताया गया है कि राजा की लोकप्रियता उसके सद्गुणों उसकी श्रेष्ठता शालीनता और उदारता पर निर्भर करती है और ये गुण भी उस ईश्वर द्वारा ही प्रदान किये जाते हैं (२२८ F)। टाल्मी के इस प्रश्न का (२१७) कि हम उन कार्यों में किस प्रकार बच सकते हैं जो हमें शोभा नहीं देते। यहूदी यह उत्तर देते हैं कि अपनी ख्याति और गौरवपूर्ण पद पर सदैव ध्यान रखिए और यह प्रयास कीजिए कि आपके कार्य एवं वचन इनके अनुकूल हैं। साथ ही सदैव स्मरण रखिए कि जिन लोगों के ऊपर आप शासन कर रहे हैं वे भी आपके विषय में सोचते हैं और आपस में आपके विषय में चर्चा करते हैं। यहूदी आगन्तुक निरन्तर इस बात पर जोर देते हैं कि अपने पद को प्राप्त करने के लिए तथा इनसे सम्बन्धित रखने के लिए आवश्यक गुणों के लिए शासक को ईश्वर की अनुकम्पा पर ही निर्भर रहना पड़ता है। युद्ध में विजय की आशा की पूर्ति के लिए तो राजा को विशेष रूप से ईश्वर की कृपा पर ही निर्भर रहना पड़ता है। वास्तव में राजा की अधिकांश आवश्यकताओं की पूर्ति ईश्वर के वरदान के परिणामस्वरूप ही होती है। सच तो राजा स्वयं ईश्वर की ही प्रतिमूर्ति है। टाल्मी के प्रथम प्रश्न (जो पर्याप्त परिचित प्रतीत होता है) कि राजा अपने साम्राज्य को अन्त तक किस प्रकार अक्षुण्ण और सुरक्षित रख सकता है?' का उत्तर वे इस प्रकार देते हैं—ईश्वर की सतत श्रेष्ठता और सहनशीलता का अनुकरण करके क्योंकि सहिष्णुता के साथ मनुष्यों के प्रति वह सद्व्यवहार करके जिसके वे अधिकारी नहीं हैं आप उन्हें दुराचार से पश्चात्ताप की ओर अग्रसर कर सकते हैं। जिस प्रकार राजा ईश्वर का अनुकरण करता है उसी प्रकार उसकी प्रजा भी उसका अनुकरण करेगी। अतः राजा को चाहिए कि वह अपनी प्रजा के कल्याण के लिए उसी प्रकार चिन्ता करे और उनकी सुख सुविधा का ध्यान रखे जिस प्रकार ईश्वर समस्त मानव-जाति के लिए स्वास्थ्य एवं भरण-पोषण का समय से प्रबन्ध करता है और उसके कल्याण का सदैव ध्यान रखता है। (१९०) यही बात कई बार दोहराई जाती है जगत में जो भी अच्छाइयाँ हैं

उनका स्रोत ईश्वर और राजा होना ही हैं। टाल्मी तथा एक यूनानी दार्शनिक जो उस समय उपस्थित दिखाया गया है[1] यहूदियों द्वारा निरन्तर ईश्वर के उल्लेख से अपनी सहमति व्यक्त करते है। यहूदी आगन्तुक का कहना है कि राजा के लिए सर्वाधिक गर्व की बात यह है कि वह ईश्वर की उपासना उपहार और बलि से न करके अपने मन की शुद्धता से करता है (२३४), उसे सदैव यह स्मरण रखना चाहिए कि वह स्वयं एक मनुष्य है जो दूसरे मनुष्यों का नेतृत्व कर रहा है। साथ ही राजा को यह भी ध्यान में रखना चाहिए कि ईश्वर सदैव गर्वान्ध मनुष्यों का मद चूर कर देता है और दीन-दुखियों तथा नम्र मनुष्यों को ऊपर उठाता है (२६३)।

इन यहूदी विद्वानों के अनुसार राजा के लिए सबसे आवश्यक गुण उसकी मानवता (फिलान्थ्रोपिया) है (२६५)। दया तथा सहानुभूति के सामान्य अर्थ में आयिसाक्रेटीज तथा चौथी शताब्दी ई० पू० के वक्ताओं ने इस शब्द का प्रयोग किया था किन्तु इस युग में यूनानी राजतन्त्र के मूल स्वर के रूप में इस शब्द ने अधिक व्यापक महत्व प्राप्त कर लिया था। अतः अरिस्टियाज के लिए यह स्वाभाविक ही है कि वह टाल्मी से यह प्रश्न करवाता है कि एक राजा मानवता का गुण किस प्रकार अर्जित कर सकता है (२०८) इस प्रश्न के उत्तर में यहूदी मानव जीवन की कठिनाइयों और कष्टों की ओर संकेत करते हुए कहते हैं 'इनकी ओर ध्यान देते हुए श्रीमान स्वतः दया से द्रवित हो जायेंगे, और ईश्वर भी तो दया का सागर है।' शास्त्रीय युग के यूनानी जिन देवताओं की उपासना करते थे वे प्रायः निष्ठुर और निर्दय हुआ करते थे और उस युग में दूसरे मनुष्यों के प्रति करुणा की भावना रखना मनुष्य के कर्त्तव्य के अन्तर्गत नहीं आता था। यहूदी विचारधारा में इस प्रकार के विचार नये न थे, किन्तु राजनीतिक सिद्धान्त के रूप में मानववादिता के उदय का मुख्य कारण यहूदी प्रभाव न था। 'सिनिक' दार्शनिकों ने अपने समय के समाज के दोषों पर आघात करके इस सिद्धान्त का बीजारोपण किया था और सामाजिक कर्त्तव्यों के प्रति अपनी दृढ़ भावना (अध्याय १३) से पनेशस ने इस सिद्धान्त के विकास में सहायता दी। अरिस्टियाज के इस पत्र में 'सिनिक' दार्शनिकों और पनेशस की विचारधारा तथा यहूदी विचारधारा एक सूत्र में बँध जाती है—निश्चित उत्तर यह कम ही करता है किन्तु यह महत्वपूर्ण है कि जिन दो स्थानों पर उसने दिये हैं वे प्रायः उसके मानववादी सिद्धान्त पर ही प्रकाश डालते हैं। यहूदी तथा एक सौ ई० पू० के हेलनी—यूनानी दोनों यह उचित एवं सम्यक समझते थे कि निर्बल और पीड़ित के प्रति करुणा की भावना मानवीय कर्त्तव्य समझा

[1] २०१ Menedemus of Eritria जिसकी कोई रचनाएँ नहीं मिलती हैं और जो इसी समय का है।

जाय तथा मानवीय भावना की नवी और न्याय का अंग समझा जाय, उस न्याय का अंग जिसके अनुसार शासकों एवं अधिकारियों से अपने कर्त्तव्य के पालन की आशा की जाती थी। इसी पत्र में अरिस्टियास ने लिखा है कि राजाओं को विधि का अनुसरण इसलिए करना चाहिए कि वे अपने कर्त्तव्यों का नम्रता से पालन करते हुए दूसरे मनुष्यों के जीवन को सुखी बना सकें (२७९)। नम्रता तथा न्याय की इस परिधान में प्लेटो[1] ने पहचान सकता। उसके युग में मानववादिता विधि के अंग के रूप में नहीं स्वीकृत हो पायी थी। इसी पत्र के एक दूसरे अनुच्छेद (२४०) में राजा को यह परामर्श दिया जाता है कि यदि वह विधि के विरुद्ध न्याय करने से बच सकता है तो उसे सदैव ध्यान में रखना चाहिए कि 'मनुष्यों के जीवन की रक्षा करना' ही ईश्वर ने विधायक का उद्देश्य निर्धारित किया है।

जिस संविधान की कल्पना अरिस्टियास करता है उसमें राजा तथा उसके प्रमुख प्रजाजनों को पृथक करने वाला खाई अधिक चौड़ी नहीं है। राजा को साधारण जनता की पहुँच के बाहर भी नहीं रखा जाता और जेनोफन का 'सायरोपीडिया' (अध्याय ९) तथा कुछ अन्य लेखकों की रचनाओं में राजा को सामान्य जनता से दूर ऐश्वर्य और वैभव के जिस वातावरण में रखा जाता है उसके लिए भी अरिस्टियास के इस संविधान में कोई स्थान नहीं है। अरिस्टियास के इस पत्र में आदि से अंत तक राजा और प्रजा के बीच सद्भिच्छा का वातावरण है। टाल्मी फिलाडेल्फस के शासन काल में अथवा इस पत्र के लेखक के जीवन काल में[2] इस प्रकार का वातावरण था या नहीं इस सम्बन्ध में निश्चित रूप से कुछ कहना कठिन है। किन्तु इतना तो निश्चित है कि राजा

---

१ उदाहरणार्थ Laws xi ९३६ जहाँ प्लेटो ने यह कहा है कि निर्धन और क्षुधा-ग्रस्त व्यक्ति दया के पात्र उसी दशा में होते हैं जब वे सम्यक् आचरण करते हैं और कुछ मात्रा में अच्छाई प्रदर्शित करते हैं। किन्तु इतना वह भी स्वीकार करता है कि यह समाज का कर्त्तव्य है कि ऐसे लोगों को असहाय होने से बचाए। प्लेटो का विचार है कि साधारण तौर से सुव्यवस्थित राज्य भी इतना कर सकता है। अतः वह इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि किसी भी व्यक्ति के लिए भिक्षा मांगने के लिए कोई बहाना नहीं मिल सकता है। भिक्षा मांगने को वह अपराध समझता है। किन्तु सम्पत्ति पर आधारित समाज में भिक्षा अनिवार्य हो जाती है (Repub viii ५५२)।

२ यह वातावरण निश्चित रूप से मिस्र का था। F Cumont, L 'Egypte des Astrologues (१९३७), pp ३३-३८, Claire preaux, Les Grecs en Egypte pp ७९-८६।

तथा प्रजा के बीच मंत्री भाव अब राजतन्त्र के सिद्धान्त के अंग के रूप में स्वीकार कर लिया गया है। प्रेम और सदिच्छा (फिलिआ तथा इयूनाइया) अब वक्ताओं की जिह्वाओं पर सदा रहते हैं। राजा का यह भी राय दी जाता है कि वह विदेश-यात्राओं में अधिक समय न नष्ट करे अपने देश में रहना तथा अपने ही देश में मरना एक सदा नेक राजा का लक्षण बताया जाता है। ऐसे राजा को जो विदेश में अधिक समय व्यतीत करता है निर्धन लोग नहीं पसन्द करते और धनिक वर्ग (जिसे प्राय राजा के साथ विदेश जाना पड़ता है।) इस यात्रा को लान्छन के रूप में देखते हैं और ऐसा महसूस करते हैं कि उन्हें माना किसी अपराध के जुर्म में अपना देश छोड़ने के लिए बाध्य होना पड़ा। (२४९) विदेश-यात्रा के सम्बन्ध में यहूदी अनुवादकों को एक विचित्र प्रश्न (२५७) का उत्तर देना पड़ता है। उनसे पूछा जाता है कि 'राजा का स्वागत किस प्रकार होगा?' उत्तर में बताया जाता है कि राजा को चाहिए कि वह अत्यधिक ऊँचा उठने का प्रयास न करे और अपने को सामान्य लोगों के स्तर पर ही रखे[1] अपने को दूसरे लोगों के बराबर ही समझे। इसी प्रश्न के उत्तर में वे यह भी कहते हैं कि 'विनम्रता एक ऐसा गुण है जो ईश्वर को भी प्रिय है और विनम्र राजा अपनी प्रजा को भी प्रिय लगता है। (तुलना कीजिए अध्याय ११)।

इस प्रश्नोत्तरी के अन्तिम दो प्रश्न तथा उत्तर सम्पूर्ण रूप में उद्धरण के योग्य हैं क्योंकि इनमें लेखक ने उन दो प्रश्नों पर अपने विचारों का सारांश प्रस्तुत किया है जिनकी उसके समय में बहुत चर्चा होती थी। प्रश्न थे—कि राजा के पद का अधिकारी कौन हो सकता है और राजतन्त्र के क्या उद्देश्य हैं? यहूदी विद्वानों के सम्मुख पहला प्रश्न इस रूप में प्रस्तुत किया गया था क्या प्रजा के लिए सर्वोत्तम यह होगा कि उन्हीं में से एक नागरिक राजा के पद पर नियुक्त कर दिया जाय अथवा राजा का पद उसी व्यक्ति को दिया जाय जो जन्मना राजा हो? उत्तर था कि (इनमें से कोई नहीं, अपितु) जो प्रकृति से सर्वोत्तम हो। इस प्रश्न का उत्तर देने वाले यहूदी विद्वान् का कहना है कि अनुभव द्वारा यह ज्ञात होता है कि पतकला के आधार पर राज पद पाने वाले तथा राजा के पद पर पदोन्नत नागरिक दोनों प्राय अत्यधिक निर्मम एवं

---

२ इस सदर्भ में यही अर्थ प्रतीत होता है। किन्तु l'oos का अर्थ 'उचित' भी होता है और किसी राजा के सम्बन्ध में जब यह कहा जाता है कि वह लोगों के साथ उचित व्यवहार करेगा तो इसका यही अर्थ होता है कि यह उनके साथ अच्छा व्यवहार करेगा। इस प्रकार, आइसोस पासीन (१९१) 'न्याय के अन्तर्गत न जाकर मानववादिता के अन्तर्गत आता है, W Schubart, p १२ (इस अध्याय के अन्त में दी गयी टिप्पणी भी देखिए)।

निरंकुश सिद्ध हुए हैं। आगे चल कर वह कहता है कि शासन करने की योग्यता अच्छे चरित्र एवं अच्छी शिक्षा पर निर्भर करती है। टाल्मी महोदय! आप स्वयं एक महान सम्राट हैं किन्तु आप की ख्याति का कारण आपके साम्राज्य की सम्पत्ति नहीं है। आपकी ख्याति तो इसलिए है कि आप अच्छाई और दयालुता में सभी मनुष्यों से आगे हैं और इसका कारण यह है कि ईश्वर ने आपको अन्य व्यक्तियों की तुलना में इन गुणों को अधिक समय के लिए प्रदान किया है। इस प्रकार राजा की उपाधि का अधिकारी होने के लिए राजपद पर आसीन होना मात्र ही पर्याप्त नहीं समझा जाता। यह उपाधि तो वास्तव में एक विशिष्ट प्रकार के व्यक्तियों को ही दी जा सकती है। किन्तु इस सिद्धांत के कई रूप हो सकते थे। प्लेटो भी एक विशिष्ट प्रकार के व्यक्तियों को ही राजा अथवा शासक की उपाधि का अधिकारी मानता था। किन्तु अच्छाई और दयालुता न तो प्लेटो के राजगुण सम्पन्न व्यक्ति की विशेषताएँ थीं और न स्टोइक मतावलम्बियों के राजगुण सम्पन्न महात्मा की। दूसरा प्रश्न इस प्रकार था किसी राजा का सबसे बड़ा गुण क्या है? उत्तर था—प्रजाजन के लिए अनवरत शाश्वत शान्ति तथा न्यायालयों में अविलम्ब न्याय और कष्ट निवारण की व्यवस्था।[1]

अरिस्टियास के इन विचारों से मिलते-जुलते विचार हम फिलो की रचनाओं में ही मिलते हैं जो अरिस्टियास की भांति यहूदी था और अलेक्जेण्ड्रिया का रहने वाला था। किन्तु स्टोबियस (Stobaeus) राजनीति के विषय में कुछ प्राचीन रचनाओं के उद्धरण मिलते हैं जिनके रचना-काल एवं लेखक के सम्बन्ध में कुछ ज्ञात नहीं हो पाया। यद्यपि इन उद्धरणों के साथ लेखकों के नाम दिये गये हैं फिर भी ये नाम वस्तुतः काल्पनिक हैं और इन रचनाओं को अज्ञात लेखकों[2] की ही रचनाएँ समझना उचित होगा। सर्वप्रथम उद्धरण 'विधि और न्याय के सम्बन्ध में (On Law and Justice)' नामक रचना से है और उसके लेखक के रूप में प्लेटो के पाइथागोरसवादी मित्र आरकीटास (Archytas) का नाम दिया गया है। इसमें प्लेटो और अरिस्टाटल के ही विचार प्रतिध्वनित होते हैं और स्टोइकवाद का प्रभाव नहीं दिखाई देता। इन उद्धरणों में राजतंत्र की अपेक्षा विधि की ओर अधिक ध्यान दिया गया। किन्तु हमें यह भी ध्यान में रखना चाहिए कि इन रचनाओं का वही अंश हमारे

---

१ यह ज्ञात होता है कि इसका तात्पर्य यह है कि शासक में मिसोपोनीरिआ का गुण होना चाहिए जिसकी आवश्यकता सेना-नायकों को भी पड़ती है (२८०)। इसका अर्थ है 'अपराधियों को दण्डित करने की तत्परता।' W Schubart, p ८ n।

२ अध्याय के अंत में दी गयी टिप्पणी देखिए।

सम्मुख आ सका है जिसे सत्तनकर्ता ने अपने अभिप्राय का दृष्टि से उचित समझा। द्वारा विधि के शासन पर इस अर्थ में लागतन्त्र का प्रश्न नहीं उठता था। विधि और न्याय का जो कल्पना इन उद्धरणों में मिलती है वह इस युग की धारणा के ही अनुकूल है अर्थात् शासक और प्रजा के सम्बन्ध में ही विधि और न्याय की कल्पना की गयी। लेखक समाज को अलिखित विधि पर आधारित करता है और इस विधि को मनुष्यों द्वारा निर्मित लिखित विधि का जनक और अग्रज मानता है। लेखक का कहना है कि मानव-जीवन में विधि का वही महत्त्व है जो गाना गान और सुनने में स्वर साम्य का (८२)। इस उद्धरण में दो प्रकार की विधियों का उल्लेख किया गया है। एक विधि वह है जो निर्जीव होता है और लिखित विधि के रूप में हमारे सम्मुख आता है, दूसरे प्रकार की विधि सजीव विधि है जो राजा[1] के रूप में शासन करता है (विधि का महिमा के कारण ही राजा के पद को यथानियम प्राप्त होता है शासक विधि-पालक होता है, प्रजा स्वतन्त्र रहता है और समस्त समुदाय सुखी रहता है, (८३)। विधि की तीन आवश्यक विशेषताएँ बताया गयी। (१) विधि-व्यवस्था प्रकृति के अनुकूल है। यह तभी सम्भव हो सकेगा जब विधि-व्यवस्था प्राकृतिक न्याय का अनुसरण करेगा और जैसा कि इस उद्धरण में स्पष्ट किया जाता है प्राकृतिक न्याय का तात्पर्य 'समानुपातिक न्याय' है जो प्लेटो और अरिस्टाटेल का 'समानुपातिक समानता' का ही पर्याय है और जिसके अनुसार प्रत्येक व्यक्ति अपनी योग्यता के अनुसार ही सुविधा एवं अधिकार प्राप्त करता है, (२) विधि-व्यवस्था प्रभावशाली है। इसके लिए आवश्यक होगा कि जिनके लिए इस व्यवस्था का प्रयोग किया गया है वे इसे अनुकूल समय कर स्वीकार करते हैं। (३) विधि-व्यवस्था का उद्देश्य समस्त समुदाय का हित होना चाहिए, सम्राट् अथवा किसी विशेष नागरिक का नहीं। इस प्रसंग में लेखक ने भूमि और जलवायु का महत्त्वपूर्ण बताया है। सम्भवतः उसका ध्यान प्लेटो का 'लाज' की ओर था। धर्म और परिवार को भी विधि के अधीन रखा गया है (८४, ८६), क्योंकि लेखक का मत है कि विधि

---

१ अनुच्छेद अस्पष्ट है और लिखित तथा अलिखित विधि को पृथक भी नहीं रखा जाता है। किन्तु लेखक का आशय यह नहीं प्रतीत होता है कि 'राजा सजीव विधि है' यद्यपि Good enough महोदय को यही आशय दिखाई देता है। इसके विपरीत, प्रतीत यह होता है कि लेखक ने राजा और विधि को व्याख्या की है, विधि के रूप में राजा को नहीं और अलिखित किन्तु सजीव विधि जो स्वयं 'राजा' है और हम सब पर शासन करती है तथा लिखित अथवा निर्जीव विधि के अन्तर को स्पष्ट करने का प्रयास किया है। वास्तव में यह विधि की सजीव आत्मा तथा निर्जीव अक्षरों का अन्तर है।

मन्दिर अथवा प्रस्तर खण्डो में नहीं निवास करती उसका निवास स्थान तो नागरिकों के चरित्र में है। लेखक का विचार है कि सम्पूर्ण राज्य की व्यवस्था एक परिवार अथवा नागरिकों या सेना (वेतनिक सेना की भाति नहीं) की भाति इस ढग से की जाय कि इसे बाहरी सहायता की आवश्यकता न पड़े। इसका अभिप्राय यह नहीं है कि वाह्य देशों से किसी प्रकार का सम्पर्क ही न रखा जाय। इसका उद्देश्य तो राज्य की नैतिक एवं आध्यात्मिक आत्म निर्भरता को सुरक्षित रखना है। इस उद्देश्य की पूर्ति के हेतु यह आशा की जाती है कि विधि व्यवस्था द्वारा नागरिकों के जीवन को संयम और अनुशासन में रखने का प्रबन्ध भी किया जायगा। विधि की उपमा सूर्य से दी गयी (८७)। जो अपने वार्षिक परिभ्रमण में सम्पुष्टि और सम्वर्द्धन का समुचित वितरण करते हुए भी सभी ऋतुओं को समान अवधि प्रदान करता है। सूरज के अतिरिक्त विधि की उपमा के लिए संगीत का nome गडरिया (नोम्यूज) और यहाँ तक कि जियस के गुणों तक का सहारा लिया जाता है। पहले के अन्य लेखकों ने भी ऐसा किया। अच्छी विधि व्यवस्था और अच्छे चरित्र के लिए राजतन्त्र कुलीनतन्त्र और लोकतन्त्र की विशिष्टताओं के सम्मिश्रण के लिए तथा संविधान के विभिन्न अंगों का समुचित संतुलन (८५) करने के लिए स्पार्टा के संविधान की प्रशंसा भी की जाती है। लेखक दण्ड के रूप में आर्थिक दंड देने की प्रथा का विरोध करता है। उसका कहना है कि इस प्रकार के दण्ड सम्पत्ति का संचय करने में ही सहायक होते हैं। अधिकारों से वंचित करने तथा उसके परिणामस्वरूप होने वाले अपमान को वह कहीं अधिक प्रभावशाली मानता है (८३)। इसी रचना के एक अन्य खण्ड में यूनानी प्रभाव स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। इस खण्ड में उस परिचित सिद्धान्त का समर्थन किया गया है जिसके अनुसार शासक में न केवल ज्ञान एवं योग्यता को वांछनीय माना जाता है अपितु अमानवीय गुणों को भी आवश्यक समझा जाता है (२१८)। इस सिद्धान्त के समर्थन में जो तर्क प्रस्तुत किया गया उसमें विवेक एवं विचार का अभाव[1] दिखाई देता है। शासक और गडरिए की उपमा देते हुए लेखक यह कहता है कि एक गडरिए के लिए यह आवश्यक है कि वह भेड़ों का प्रेमी हो। विधि पर शासक की निर्भरता के सम्बन्ध में लेखक एक आप्त वचन प्रस्तुत करता है जिसमें यह कहा गया है कि सर्वोत्तम शासक वही है जो विधि के निकट रहता है और ऐसा शासक वही हो सकता है जो अपने हित की चिन्ता न करके अपने अधीन व्यक्तियों के हित के कार्यों में ही रत रहता है। उसी प्रकार जब विधि व्यवस्था स्वयं अपने लिए न होकर अपने अधीन व्यक्तियों के हित के लिए ही होनी है (२१९)।

---

१ प्लेटो के दृष्टिकोण के अनुसार Republic ३४३ B

तान अन्य तथाकथित पाइथागोरसवादी ग्रन्थों के उद्धरणों का सकलन भी स्टोबियस ने किया है। इनके लेखक डायाटोजेनीस (Diotogenes), स्थनाइडास (Sthenidas) एक्फ़न्टस[1] (Acphantus) थे। डायाटोजनीस का विषय धर्म और राजतन्त्र है। वह वस्तुत कूट आर्कीटास के कथन को उद्धृत करता है और कहता है कि विधि का निवास भवनों अथवा अभिलेखों में नहीं होता। इसका निवास स्थान नागरिकों का चरित्र है (३६)। इस प्रकार के कथन यूनानी राजनीतिक विचारधारा में आइसाक्रेटीज़ के समय से ही दोहराये जाते रहे हैं (अध्याय ७)। सेटपाल की भांति डायाटोजनीज़ भी इरटस (Artus) की कविता की प्रारम्भिक पंक्तियों का स्मरण कर सकता था। जिनोफन की सायरोपीडिया तथा प्लेटो और अरिस्टाटल की रचनाओं का प्रयोग भी डायोटाजनीस (Diotogenes) ने कई स्थानों पर किया है। एक अपूर्ण अनुच्छेद में वह राज्य के चार असम्भावित आधारों की व्याख्या करने का प्रयास भी करता है। (८०)। उसके अनुसार प्रकृति, विधि, कला तथा सयोग ही राज्य के चार सम्भावित आधार हो सकते हैं। इस अनुच्छेद की प्रमुख विशेषता यही प्रतीत होती है कि इसमें विधि (Nomos) को भी राज्य का एक पृथक् आधार माना जाता है। वस प्लेटो ने एक ऐसे सिद्धान्त का उल्लेख किया है। (Laws x ८८८ E) जिसके अनुसार सभी वस्तुओं को प्राकृतिक अथवा कृत्रिम या सायोगिक माना जाता है। यहां इस लेखक ने प्रकृति, कला और सयोग (Plato के सिद्धान्त के अनुसार प्राकृतिक, कृत्रिम एवं अनारक्षित) के साथ विधि को भी सयुक्त किया है। उसके अनुसार 'चरित्र पर आधारित राजनीतिक साम्य को उद्देश्य के रूप में स्वीकार करने वाले राज्यों का शासक और शिल्पी विधि ही है।' यह भी कूट-आर्कीटास के विचारों की पुनरावृत्ति ही प्रतीत होती है। राजतन्त्र विषयक खण्डों में लेखक ने इस बात पर जोर दिया है कि राजा का आचरण न्याय सगत एवं विधि के अनुकूल होना चाहिए। इसी खण्ड में विधि को न्याय का स्रोत बताया गया है, किन्तु विधि पर आधारित राजतन्त्र के सिद्धान्त के साथ-साथ पूर्ण एवं अनियन्त्रित राजतन्त्र का सिद्धान्त भी प्रस्तुत किया गया है। वास्तव में लेखक या कम-से-कम सकलनकर्ता का प्रयोजन इसी सिद्धान्त से है जिसमें राजा को विधि-पालक शासक के रूप में न देखकर सजीव विधि के रूप में देखा जाता है (२६३)। राजा के कार्यों के तीन मुख्य क्षेत्र बताये जाते हैं—न्याय, युद्ध और धर्म। इन तीनों क्षेत्रों से सम्बन्धित कार्यों के अतिरिक्त लेखक जन-कल्याण से सम्बन्धित कार्य का भी उल्लेख

[1] आर्कीटास की भांति एक्फ़न्टस भी एक विख्यात पाइथागोरसवादी विचारक था। इस अध्याय के अन्त में दी गयी टिप्पणी देखिए।

करता है और उसे न्याय और विधि का अंग मानता है (२६५)। राजा के गुणों की विशद व्याख्या भी की गयी है और उसे नामित मात्रा में धन संचित करने की अनुमति दी जाती है क्योंकि उदार दान के लिए राजा को धन की आवश्यकता पड़ती है। क्लीश्न ने सुइदस को भी यह अनुमति प्रदान की थी। किन्तु डायोटोजेनीस यह स्पष्ट कर देता है कि राजा की श्रेष्ठता का आधार सम्पत्ति नहीं होना चाहिए (इक्फान्टस अथवा सिपिया) की भाँति राजा की श्रेष्ठता का आधार उसके नैतिक गुण और शासन करने की उसकी योग्यता है (२६६)। जिन लोगों के ऊपर शासन करने के लिए उसे ईश्वर से आदेश मिला उनमें उसे वही तादात्म्य या साम्य स्थापित करना चाहिए जो एक अच्छे 'लायर' (यूनानी वाद्य-यन्त्र) के साम्यपूर्ण स्वरों में होता है। राजा को स्वयं प्रसन्नचित्त एवं सहज स्वभाव वाला होना चाहिए। किन्तु इसके साथ ही उसे यह स्पष्ट कर देना चाहिए (पुन सायरस की ही भाँति) कि वह किसी प्रकार भी अशोभनीय व्यवहार को क्षमा न कर सकेगा (२६७)। प्रजा के साथ इस प्रकार का सम्बन्ध स्थापित करने के लिए राजा का रोबदाब अच्छा कुशल या कठोर होना चाहिए। रोबदाब में उसे ईश्वर की शान या आन-बान का अनुसरण करना चाहिए। राजा को अपना मूल्यांकन सामान्य मनुष्यों के मानदण्ड से नहीं करना चाहिए। उसे चाहिए कि वह मानवोचित दुर्बलताओं से विलग होकर ईश्वर का नैकट्य प्राप्त करने का प्रयास करे। उसकी श्रेष्ठता (अच्छाई) के अन्तर्गत केवल दयालुता और औदार्य ही नहीं आते न्याय को भी राजा की अच्छाई का एक अंग माना जाता है। न्याय को दयालुता और औदार्य के साथ इस प्रकार संयुक्त करना अब कोई विचित्र बात नहीं लगती क्योंकि अरिस्टियाज पहले ही यह कर चुका था। डायटोजनीस का कहना है कि न्याय ही समुदाय की एकता के सूत्र में बाँधता है न्याय मानव आत्मा की एक ऐसी दशा है जो मनुष्य को अपने पड़ोसियों के प्रति आकृष्ट करती है। जिस प्रकार गति के लिए ताल है ध्वनि के लिए स्वर है उसी प्रकार समुदाय के लिए न्याय है। जब तक न्याय राजनीतिक समुदाय को एकता प्रदान करता रहता है तब तक यह शासकों और शासितों दोनों के हितों की रक्षा करता है (२६९)। देवताओं का विचार कर जियूज के उल्लेख के साथ यह उद्धरण समाप्त होता है। बताया जाता है कि देवताओं और मनुष्यों के जनक के रूप में जियूस विशालता और सज्जनता का उदाहरण प्रस्तुत करता है। वज्रपात उसकी कठोरता का प्रतीक है। इस उद्धरण के अनुसार राजतन्त्र ईश्वर की अनुकृति है (२७०)।

स्थनाइडाज के लघु खण्ड में राजा के लिए विशेषतया ईश्वर की बुद्धिमत्ता का अनुकरण करने का परामर्श मिलता है। ईश्वर से स्थनाइडाज का तात्पर्य देवताओं और मनुष्यों के जनक से है। (२७)। किन्तु स्पष्ट शब्दों में जियूस का नाम नहीं लिया जाता है क्योंकि इस रचना के सम्बन्ध में यह कहा जाता था कि वह सबका स्रष्टा और निर्माक

है और इसने सभी को समान रूप से विधि प्रदान की है। स्थनाइडास का कहना है कि 'बुद्धिमान् राजा और मनुष्य ईश्वर का वह अनुकरण करता तथा मन्त्र होगा' (२७१)। एक्फैन्टस की रचनाओं में सकलित उद्धरण अपेक्षाकृत अधिक बड़े हैं। यद्यपि इन उद्धरणों में भी ईश्वर का अनुकरण ही मुख्य विषय माना गया है तथापि एक्फैन्टस का राजा डायटोजीनीस के राजा के दयालु एवं योग्य सम्राट से भिन्न है। जहाँ डायटोजीनीस ने राजा के लिए सामान्य मानवीय स्तर से उच्च स्तरीय श्रेष्ठता प्राप्त करना आवश्यक बताया था वहाँ एक्फैन्टस के अनुसार यह उच्च स्तर राजत्व में निहित रहता है। उसका कहना है कि मानव शरीर धारण करने के कारण राजा की नश्वरता एक निर्विवाद तथ्य है किन्तु इसी के साथ यह भी निर्विवाद है कि राजा के स्वभाव में ईश्वरीय अंश विद्यमान रहता है। उनके अनुसार यह जगत की सामान्य प्रकृति का अंग है जिसमें यूकोसमियों (व्यवस्थित एवं शिष्ट आचरण) के उद्देश्य को सम्मुख रख कर ईश्वर ने स्वयं अपने को आदर्श मान कर राजा की सृष्टि की (२७२)। यूकोसमियों को एक्फैन्टस जगत की सम्यक् स्थिति की अवस्था मानता है। ईश्वर और राजा का सादृश्य साधारण मनुष्य तेज प्रकाश में ही देख सकते हैं और यह प्रकाश इतना तेज है कि अपवित्र और अयोग्य व्यक्ति इससे चकरा जाते हैं और बहाश हो जाते हैं (२७३)। इस लेखक के अनुसार राजतन्त्र विशुद्ध शासन है। यह भ्रष्ट और विकृत नहीं होता है। तथा मनुष्य अपने ईश्वरीय अंश के अनुपात में ही इसमें भाग ले सकता है। इस प्रकार के विशुद्ध राजतन्त्र को लेखक असम्भव नहीं मानता है पर्याप्त बल देकर वह कहता है[1] कि 'मेरी धारणा है कि पृथ्वी पर का राजा भी उन सभी गुणों को प्रदर्शित करने की क्षमता रखता है जो स्वर्ग में स्थित सम्राट् की विशेषताएँ बतायी जाती हैं। जिस प्रकार वह (राजा) स्वयं मनुष्यों के बीच बाहर से आया हुआ यात्री और अतिथि की भाँति है, उसी प्रकार उसके गुण भी ईश्वर की कृति हैं और ईश्वर से ही उसे प्राप्त होते हैं। (२७४–५) इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि ईश्वर ने अपनी अनुकम्पा से इस प्रकार के राजाओं को सम्भव बना दिया है किन्तु व्यवहार में शासन की आवश्यकता को वह लेखक भी स्वीकार करता है और यह भी मानता है कि यह सम्भव हो सकता है कि *मानवीय आवश्यकताओं ने मानवीय राज्यों को जन्म दिया हो* (प्लेटो Republic ii)। किन्तु उसके अनुसार सर्व प्रथम एवं सर्वाधिक आवश्यक साथ अथवा साझेदारी ईश्वर और राजा के बीच की है और ये दोनों आवश्यकताओं के परे हैं (२८५)। जिस समुदाय को हम नगर अथवा राज्य की संज्ञा देते हैं उसे ईश्वर और

---

१ 'Il a conscience de l'audace de son affirmation' (Delatte)

राजा को इस सार्वेदारी का अनुसरण करना चाहिए। जो साम्य और सद्भावना ईश्वर और राजा के पारस्परिक सम्बन्ध में है वही राज्य में भी विद्यमान होना चाहिए और राज्य को विधि-व्यवस्था एवं शासन का निर्देशन उसी साम्य एवं सद्भावना के उद्देश्य को सम्मुख रख कर करना चाहिए। एक सच्चा सम्राट अपने प्रजाजन के प्रति वही सदिच्छा रखेगा जो ईश्वर संसार तथा उसकी समस्त वस्तुओं के प्रति रखता है और प्रजाजन सम्राट के प्रति वही प्रेम रखें जो मनुष्य अपने पिता के प्रति रखता है (२८८)। स्नेह भय का नाश करता है और अनुकरण के लिए प्रेरणा प्रदान करता है। यदि राजा ईश्वर का अनुकरण करता है और उसकी प्रजा उसका अनुकरण करती है तो राजा के लिए न तो दरबारी काम काज की आवश्यकता पड़ेगी और न मनमाने फ़ुर्मान की ही। किन्तु वस्तुस्थिति को ध्यान में रखते हुए लेखक राजा के आदेश की आवश्यकता को स्वीकार करता है। ऐसा प्रतीत होता है कि साथ अथवा सार्वेदारी (कोइनोनिया) के अपने सिद्धान्त को समुदाय में सम्बन्धित शासनाय दर्शन के अनुरूप बनाने के लिए ही लेखक ने अन्तिम उद्धरण में समानता और स्वतन्त्रता के आदर्शों का प्रतिपादन किया है (२३८-९)। किन्तु इस उद्धरण के सन्दर्भ के सम्बन्ध में हमें कुछ भी नहीं ज्ञात होता है। जगत की बुद्धि के रूप में ईश्वर की कल्पना और राजा की ईश्वरीय अवधारणा का उल्लेख करते हुए यह अवतरण समाप्त होता है।

अलेक्ज़ेंडिया निवासी यहूदी फ़िलो (Philo) की रचनाओं में प्रारम्भिक ईसाई चर्च ने जो रुचि ली उसके कारण उसकी अधिकांश रचनाएँ सुरक्षित रह सकीं। उसका जीवन काल ईसा संवत के प्रारम्भ का काल है। ४१ ई० में जब वह एक शिष्ट मण्डल के नेता के रूप में सम्राट गायस (Gaius) के सम्मुख रोम में उपस्थित हुआ तो उसकी अवस्था ६० वर्ष के ऊपर थी। उसकी मातृ भाषा यूनानी थी और इसी में उसने रचनाएँ की। यहूदी धर्म-ग्रन्थ का अध्ययन उसने ७२ यहूदियों द्वारा अनूदित सेप्टुआजिंट (Septuagint) की सहायता से ही किया और अपने पूर्वगामी अरिस्टियाज़ की भाँति वह भी इस अनुवाद की कहानी प्रस्तुत करता है। यूनानी दर्शन का उसने अच्छा अध्ययन कर रखा था किन्तु भी अरिस्टियाज़ की तुलना में वह यूनानी राजनीतिक दर्शन की मुख्य धारा से दूर ही रहा। एक दूसरे अयूनानी सिसरो, जिसके राजनीतिक विचारों का विवेचन अध्याय १३ में किया जा चुका है की तुलना में तो फ़िलो यूनानी राजनीतिक विचारों की मुख्य धारा से और भी अधिक दूर था। सिसरो तथा फ़िलो के विचारों का तुलनात्मक अध्ययन शिक्षाप्रद है। सिसरो की अपेक्षा फ़िलो की प्रवृत्ति दर्शन की ओर अधिक थी। सिसरो की तुलना में वह अधिक अध्यवसायी भी था। साथ ही प्लेटो अरिस्टाटल अथवा पासिडोनियस की रचनाओं में से चयन करने तथा इनके विचारों को अपनी रचनाओं में सम्मिलित करने में वह सिसरो की भाँति ही प्रवीण

श्रेष्ठता' की खोज करने तथा उसे अर्जित करने के लिए शिक्षा की व्यवस्था करने तथा उस अवस्था को उत्पन्न करने का प्रयास किया था जो मानव जाति को निरंकुश शासकों और गुटों की अराजकता और अव्यवस्था (Hubris) से सुरक्षित रख सके उनके मस्तिष्क में इस प्रकार के विचार नहीं आ सकते थे। रोमन साम्राज्य के तत्त्वावधान में राजनीतिक एवं धार्मिक विचारों के समन्वय की जो प्रक्रिया दृष्टिगोचर हो रही थी प्राचीन लेखकों में केवल प्लेटो ही समझ सकता था। और वह भी उस प्रक्रिया में कोई विशेष उत्साह न दिखा सकता था जिसके आधार पर वह इस प्रक्रिया का समर्थन करे। किन्तु राजनीतिक चिंतन का शिलान्यास करने वाले प्लेटो तथा अरिस्टाटल की भाषा हम आज भी यूनानी राजतन्त्र अथवा रोमन साम्राज्य की भाषा की तुलना में कहीं अधिक वास्तविक प्रतीत होती है और प्लेटो का 'रिपब्लिक' तथा अरिस्टाटल का 'पालि-टिक्स' अपने संकुचित दृष्टिकोण एवं कुछ गम्भीर दोषों के होते हुए भी आज के युग में राजनीति शास्त्र के मध्यकालीन एवं आधुनिक आचार्यों की रचनाओं की भाँति ही अध्ययन करने के योग्य हैं। अर्थशास्त्र तथा समाजशास्त्र सार्वजनिक प्रशासन तथा निवारक औषधि शिक्षा तथा शिशु कल्याण के सम्बन्ध में हमारी धारणा और राजनीति के विविध अंगों के बारे में हमारा ज्ञान प्राचीन काल के इन मनीषियों की तुलना में अधिक स्पष्ट हो सकता है। इनसे सम्बन्धित विभिन्न समस्याओं का समाधान करने के हमारे साधन भी प्राचीन युग की तुलना में अधिक प्रभावोत्पादक हो सकते हैं। किन्तु प्राचीन युग के इन मनीषियों के प्रति जिन्होंने विभिन्न क्षेत्रों में ज्ञान एवं आविष्कार का मार्ग प्रशस्त किया हम विशेष रूप से ऋणी हैं और इनके आभार को निःसंकोच स्वीकार करते हैं।

अतिरिक्त टिप्पणियाँ और प्रसंग निर्देश

अध्याय १४

The Letter of Aristeas इस अध्याय में दिया गया संकेत P Wendland (Teubner १९१०) के संस्करण पर आधारित है।

The so-called Pythagorean Fragments in Stobaeus (स्टोबियस में तथाकथित पाइथागोरसवादी खंड) संकेतों का आधार Wachsmuth–Hense के १९०९ के संस्करण के चतुर्थ भाग का पृष्ठ क्रम है। इन उद्धरणों के रचनाकाल एवं प्रामाणिकता से सम्बन्धित प्रश्नों को ईसा की पाँचवीं शताब्दी के 'स्टोबी के जॉन (Johon of Stobi) से सम्बन्धित प्रश्नों से पूर्णतया पृथक नहीं किया जा सकता। इन उद्धरणों में से किसी एक को भी मैं उन ज्ञात अथवा अज्ञात लेखकों

रोमन साम्राज्य के यूनानी लेखक—जिन लेखकों का उल्लेख पहले किया जा चुका है उनकी सूची में Herodes Atticus का नाम भी जोड़ा जा सकता है। इसके नाम से दस पृष्ठों का एक निबन्ध सुरक्षित है जो संविधान से सम्बन्ध रखता है इसमें लेखक ने आइसाक्रेटीज पद्धति का अनुसरण किया है और चार सौ ई० पू० की बातों प्रस्तुत करने का आभास देता है। इसमें वह इस अंश तक सफल हो सका है कि E Drerup (Studien zur Geschiehte ii i Paderborn १९०८) ने यह समझ लिया कि इस निबन्ध का लेखक थेरामीनस (Theramenes) का समर्थक और समकालीन था और H T Wade-Gery (C Q *xxxix, १९४५) ने क्रिटियास को इस निबन्ध का रचयिता समझा। जो भी हो* इस निबन्ध की विषय वस्तु और नाम में कोई सम्बन्ध नहीं प्रतीत होता। एक दूसरी ओर अधिक विख्यात रचना—Dante's De Monarchia में भी यही दोष मिलता है और दान्ते की इस रचना के साथ रोमन साम्राज्य की राजनीतिक विचारधारा भी लुप्त हो जाती है।